पूज्यपाद पितृव्य

स्वर्गीय पं० श्रीकृष्ण मिश्र

के

चरणों

में

जिन्होंने मुझे इस योग्य बनाया कि

मैं

कुछ लिख सका।

विषयानुक्रमणिका

प्राक्कथन

महाकवि बाणभट्ट की कृति पर कुछ लिखना साहस का कार्य है— यह जानते हुए भी मैं केवल पाठकों, विशेषकर छात्रों, की आवश्यतताओं को ध्यान में रखकर ही महाश्वेता-वृत्तान्त के इस संस्करण को तैयार करने में प्रवृत्त हुआ। महाश्वेता-वृत्तान्त के मूलांश के मर्मज्ञान हेतु उसका हिन्दी अनुवाद एवं संस्कृत-व्याख्या अपेक्षित थी 'एतदर्थ मूल के नीचे संस्कृत व्याख्या तथा हिन्दी अनुवाद निबद्ध किया गया है। हिन्दी अनुवाद में इस बात का यथाशक्ति प्रयास किया गया है कि वह मूल के अनुसार एवं पूर्णतः स्पष्ट हो। हिन्दी-वाक्य-गठन शैली संस्कृत से भिन्न होती है, अतः हिन्दी के वाक्य-गठनशैली की दृष्टि से हिन्दी अनुवाद में कहीं-कहीं मूलांश के वाक्य-निबद्ध पद-क्रम को छोड़ना भी पड़ा है। मूल के लम्बे वाक्य को हिन्दी अनुवाद में कई वाक्यों में रखना पड़ा है। संस्कृत-टीका में मूल के प्रत्येक पद का ऐसा संस्कृत-पर्याय दिया गया है जो सुबोध हो। समस्त पदों का विग्रह करके उनके अर्थों को स्पष्ट किया गया है। आवश्यकतानुसार कोश-ग्रन्थों तथा अन्य ग्रन्थों के उद्धरण भी दिये गये हैं। यत्र-तत्र प्रयुक्त अलङ्कारों का उल्लेख भी कर दिया गया है। इस प्रकार महाश्वेता-वृत्तान्त के मूलांश को समझने में पाठकों को अवश्य अपेक्षित सहायता मिलेगी, ऐसी आशा है।

किसी ग्रन्थ के वास्तविक मर्म को समझने के लिए मूलांश का ज्ञानमात्र ही अपेक्षित नहीं होता, अपितु उसके रचयिता के व्यक्तित्व-कृतित्व आदि के विषय में भी सम्यक् ज्ञान अपेक्षित होता है। इस उद्देश्य की पूर्ति-हेतु ग्रन्थ के प्रारम्भ में आमुख को निबद्ध किया गया है। आमुख को तीन खण्डों में विभक्त किया गया है। उसके प्रथम खण्ड में संस्कृत गद्य-काव्य के संक्षिप्त विकास, बाणभट्ट की जीवनी-कृति, शैली, अलङ्कार, प्रकृति-वर्णन तथा भावपक्ष आदि के विषय में यथेष्ट प्रकाश डाला गया है। द्वितीय खण्ड में महाश्वेता-वृत्तान्त के कथासार, उसके महत्त्व तथा पात्रों के चरित्र-चित्रण का विवरण प्रस्तुत करके उसमें निबद्ध सूक्तियों के भावों को स्पष्ट किया गया है। आमुख के तृतीय खण्ड में भारतीय आलोचकों, पण्डितों अथवा कवियों द्वारा की गयी बाण विषयक प्रशस्तियों का सन्निवेश किया गया है। प्रशस्तियों के भाव को संक्षेप में स्पष्ट कर दिया गया है मुझे आशा है कि आमुख के तीनों खण्डों में निबद्ध सामग्री आलोचनात्मक प्रश्नों के समाधान में सहायक होगी।

इस संस्करण को तैयार करने में अनेक ग्रन्थों से सहायता ली गयी है। अतः उनके लेखकों के प्रति मैं अपना हार्दिक आभार प्रकट करता हूँ। अत्यधिक कार्यभार के

कारण, चाहते हुये भी, प्रस्तुत संस्करण में कुछ आवश्यक सामग्री का सन्निवेश न कर सका, इसका मुझे दुःख है। आशा है अगले संस्करण में उसका सन्निवेश हो जायगा।

महाश्वेता-वृत्तान्त की संस्कृत-व्याख्या लिखने में सुयोग्य अनुज श्री रामप्रसाद मिश्र, एम० ए०, व्याकरणाचार्य ने अमूल्य योगदान किया है अतः वे विशेषरूप से धन्यवाद के पात्र हैं। पाण्डुलिपि को तैयार करने में प्रिय शिष्य श्री तुलसीराम वर्मा, एम० ए०, श्री शंकरमणि त्रिपाठी, एम० ए० उत्तरार्द्ध तथा सु श्री सविता सिंह, बी० ए०, ने अथक परिश्रम किया है। अतः उन सबको आशीर्वाद देना अपना कर्तव्य समझता हूँ। भारतीय प्रकाशन, कानपुर के स्वामी ने स्वल्प समय में ही इस ग्रन्थ का प्रकाशन करके प्रशंसनीय कार्य किया है, तदर्थ वे धन्यवाद के अधिकारी हैं।

'गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव स्वभावतः' के अनुसार प्रस्तुत ग्रन्थ में त्रुटियों का होना नितान्त स्वाभाविक है। पाठकों, विशेषकर विद्वज्जनों, से मेरा विनम्र निवेदन है कि वे कृपया निःसङ्कोचभाव से त्रुटियों के विषय में मुझे अवगत कराकर अनुगृहीत करें एतद्विषयक उनके किसी भी सुझाव का स्वागत करूँगा।

गुरुपूर्णिमा —राजदेव मिश्र

वि० सं०-२०३३

फैजाबाद

आमुख

प्रथम खण्ड

संस्कृत-गद्य-साहित्य

संस्कृत-साहित्य के प्राचीनतम गद्य का दर्शन हमें कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तिरीय संहिता में उपलब्ध होता है। इसके अतिरिक्त अन्य संहिताओं में भी गद्य की स्थिति दृष्टिगोचर होती है अथर्ववेद का छठा भाग गद्यात्मक है। बाद में ब्राह्मण ग्रन्थों की रचना गद्य में ही हुई। इसी प्रकार आरण्यकों में भी गद्य की प्रचुरता विद्यमान है। इनमें वैदिक गद्य का विकसित रूप मिलता है। अनेक उपनिषदों की रचना भी गद्य में हुई है। उपनिषदों का गद्य सरल है। सूत्रों में ऐसे गद्य का प्रयोग हुआ है, जो बिना किसी टीका की सहायता से दुर्बोध है। महाभारत का संस्कृत-गद्य सर्वप्रथम हमारा ध्यान आकृष्ट करता है क्योंकि महाभारत का गद्य सुन्दर एवं सुरुचिपूर्ण है तथा उसमें अलंकारों का भी जहाँ-तहाँ स्वाभाविक प्रयोग हुआ है। इसी प्रकार व्याकरण, दर्शन आदि के ग्रन्थ भी प्रायः गद्य में हैं। शङ्कर, पतञ्जलि आदि किन्हीं भाष्यकारों ने तो अपने भाष्यग्रन्थों में अत्यन्त मनोरम, स्वाभाविक एवं रोचक गद्य का प्रयोग किया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि संस्कृत में गद्य का प्रयोग अति प्राचीनकाल से चला आ रहा है।

गद्य-काव्य की उत्पत्ति कब और कैसे हुई, यह कहना नितान्त कठिन है। यद्यपि गद्य-काव्य का सुसम्बद्ध तथा तथा विकसित रूप छठी शताब्दी से ही (सुबन्धु दण्डी, बाण आदि की रचनाओं में) मिलता है, पर यह मानना असङ्गत नहीं है कि गद्य-काव्य का प्रचलन उक्त समय के पहले से ही था। वेदकालीन गद्य तथा सूत्रादि-ग्रन्थों के गद्य में वह सौन्दर्य्य तथा भावपरिपूर्णता नहीं मिलती जो काव्यगत सौंदर्य्य के लिए अपेक्षित होती है। यही कारण है कि उसको गद्य के भीतर चाहे भले परिगणित कर लिया जाय पर काव्य के अन्तर्गत परिगणित नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार हम पञ्चतंत्र, हितोपदेश आदि ग्रन्थों को भी गद्य-काव्य के अन्तर्गत स्वीकार नहीं कर सकते। इन सब ग्रन्थों का लक्ष्य रसास्वादन न होकर नीतिबोध मात्र है। संस्कृत-गद्य-काव्यों में यद्यपि कथावस्तु लोककथाओं से ली गई परन्तु उनकी शैली पर पद्यकाव्यों का प्रभाव लक्षित होता है। गद्य-काव्य की व्यञ्जनाप्रणाली लोक-कथाओं से सर्वथा भिन्न है। दण्डी ने ओज को गद्य का प्राण माना है, जो समास बहुलता में रहता है 'ओजः समासभूयस्त्वमेतद् गद्यस्य जीवितम्'। इसी ओज गुण से गद्य-काव्य में एक विशेष प्रकार की प्रगाढ़ता आ जाती

है। संस्कृत गद्य-काव्यों में समास-बहुलता, अलङ्कारों का विशद प्रयोग तथा पौराणिक संकेतों की भरमार है। अलंकृत वर्णन शैली के कारण कथा भाग गौण हो गया है। और वर्णनप्राचुर्य आ गया है। इनमें प्रायः शृङ्गार रस की प्रधानता है। सर्वत्र कल्पना और पाण्डित्य का प्रदर्शन है।

कात्यायन ने (३०० ई० पू०) अपने वार्तिक में आख्यायिका का उल्लेख किया है। पतञ्जलि के महाभाष्य में तीन आख्यायिकाओं का नाम निर्देश है—'वासवदत्ता सुमनोत्तरा तथा भैमरथी'। बाणभट्ट ने अपने पूर्ववर्ती गद्य लेखकों में भट्टार हरिश्चन्द्र' का नाम आदर के साथ लिया है परन्तु उनकी कोई कृति अब तक नहीं मिली। खोजों द्वारा प्राप्त शिलालेखों में जिस अलकृत-समासबहुल गद्य शैली का दर्शन होता है, उसके द्वारा यह निःसङ्कोच स्वीकार किया जा सकता है कि सुबन्धु आदि उत्कृष्ट कोटि के गद्य-काव्यकारों से पहले ही गद्यकाव्य की अलंकृत शैली का प्रचार एवं प्रसार था। रुद्रदामन् के शिलालेख में उक्त शैली का सफल प्रयोग हुआ है। इस शिलालेख के पढ़ने से बाण की शैली का स्मरण हो आता है। हरिषेण की प्रयाग वाली प्रशस्ति में भी उत्कृष्ट कोटि की अलंकृत गद्य-शैली प्रयुक्त हुई है।

वस्तुतः गद्य-काव्य-कला का पूर्ण परिपाक सुबन्धु, बाण तथा दण्डी की रचनाओं में ही हुआ है। गद्य-काव्य के लेखकों में सुबन्धु (छठीं शताब्दी) का नाम सर्वप्रथम आता है और इनकी रचना 'वासवदत्ता' गद्य-काव्य का उत्कृष्ट नमूना है। इसमें कवि का उद्देश्य वर्णन है। इसका कथानक अलंकारों से लदा हुआ है। श्लेष की छटा दर्शनीय है पर शैली रोचक नहीं है।

दण्डी का समय संदिग्ध है। किन्हीं प्रमाणों के आधार पर उनका समय सातवीं शताब्दी के अन्त में तथा आठवीं के प्रारम्भ में मानना उचित है। उनकी तीन रचनायें कही जाती हैं—१. काव्यादर्श २. दशकुमारचरित ३. अवन्तिसुन्दरीकथा। तीसरी रचना, 'अवन्ति सुन्दरी कथा', संदिग्ध है। 'काव्यादर्श' अलङ्कार-शास्त्र का ग्रन्थ है और 'दशकुमारचरित' गद्य-काव्य है।

वास्तव में यदि विचार किया जाय तो यह कहा जा सकता है कि गद्य-काव्य-कला अपने उत्कृष्ट रूप में बाणभट्ट की रचनाओं में ही दिखाई देती है। उनकी जोड़ का दूसरा कोई कवि संस्कृत-गद्य-काव्य के क्षेत्र में नहीं हुआ। उनके पश्चात् भी गद्य-काव्य लिखे गये। धनपाल (१००० ई०) ने कादम्बरी से प्रभावित 'तिलक-मञ्जरी' की रचना की। वादीभ सिंह ने (१००० ई०) 'गद्य-चिन्तामणि' की सृष्टि की इसके बाद पं. अम्बिकादत्त व्यास ने (१८५८-१९०० ई०) 'शिवराज विजय' नामक काव्य को प्रस्तुत किया जिसका प्रकाशन १९०१ ई० में काशी से हुआ। इनकी शैली में दण्डी और बाण का अनुकरण दीख पड़ता है। संक्षेप में यही गद्य काव्य के विकास का इतिहास है।

उक्त विवेचन से इस निष्कर्ष पर पहुँचना सुगम है कि गद्यकाव्य-कला बाण आदि से सदियों पहले अस्तित्व में थी, पर वह सुबन्धु आदि लोक विश्रुत महाकवियों तक पहुँचने में किन-किन कवियों द्वारा अपने स्वरूप को विकसित कर सकी, यह कहना कठिन है। कुछ पाश्चात्य विद्वान् संस्कृत-गद्य-काव्य पर यूनानी गद्य-काव्य का प्रभाव मानते हैं। इसका बहुत कुछ कारण दोनों भाषाओं के गद्यकाव्यों में समानता का होना है, पर निश्चित प्रमाण के अभाव में निःसंदिग्ध रूप से कुछ कहना कठिन है।

संस्कृत-गद्य की प्राचीनता के विषय में किसी को आपत्ति नहीं हो सकती, पर पद्य की तुलना में, पूरे संस्कृत वाङ्मय में, गद्य का प्रयोग अत्यन्त स्वल्प हुआ है। ज्योतिष, वैद्यक तथा विज्ञान आदि के ग्रन्थों में गद्य का प्रयोग उचित था परन्तु वहाँ भी इसका प्रयोग नगण्य है। साहित्य के क्षेत्र में आख्यानों, नाटकों आदि में गद्य अवश्य प्रयुक्त हुआ पर उसके बावजूद भी गद्य का प्रयोग सीमित रहा। 'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति' 'गद्य ही कवियों की कसौटी है' इस कथन से पद्य की अपेक्षा गद्य की श्रेष्ठता स्वीकृति की गई है। इस प्रकार गद्य को पाण्डित्य की कसौटी मानना भी गद्य के प्रचुर प्रयोग में बाधक रहा। इसके अतिरिक्त पक्षपात के अनेक कारण रहे। पद्य द्वारा जिस प्रकार सङ्गीतमय भाव-सौन्दर्य्य की सृष्टि की जा सकती है, वह गद्य के द्वारा सम्भव नहीं। पद्य में कवि के लिए छन्द का बन्धन अवश्य रहता है पर वहाँ अक्षरादि की विरूपता की भी छूट रहती है। पद्य में कवि को अपनी अशक्ति को छिपाने का बहाना मिल जाता है पर गद्य में इन सब बातों के लिए कोई अवसर नहीं रहता। पद्य में जिन दुर्बलताओं के लिए आलोचक पद्यकार (कवि) को क्षमा कर सकता है गद्य में उन्हीं के कारण गद्यकार पर दोषारोपण भी हो सकता है। इन कारणों के बावजूद पद्य के प्रचुर प्रयोग में सबसे बड़ा कारण है पद्य को सुगमता से कण्ठस्थ किये जाने की सुविधा। प्राचीन-काल में कागज, प्रेस आदि की आज जैसी सुविधा न रहने के कारण कंठस्थ करना आवश्यक था (कण्ठे विद्या गण्ठे धनम्) और पद्य को जितनी सुगमता से याद किया जा सकता है उतनी गद्य को नहीं यही कारण है कि संसार के प्रायः सभी प्राचीन-साहित्य में पद्य का प्रयोग गद्य की अपेक्षा बहुलता से प्राप्त होता है। अतः उक्त कारणों से पद्य की अपेक्षा संस्कृत में भी गद्य का कम प्रयोग आश्चर्य-जनक नहीं है।

कथा एवं आख्यायिका

संस्कृत के आलङ्कारिकों के द्वारा काव्य रचना के लिये छन्द की अनिवार्यता स्वीकृत नहीं की गई। जिस प्रकार पद्य में काव्य की रचना हो सकती है उसी प्रकार गद्य में भी। कवित्व अपनी रसमयता, भाव-सौन्दर्य्य एवं अलौकिकता के कारण

गद्य एवं पद्य दोनों में सहृदय जन के हृदय में आनन्दानुभूति जगा सकता है। इसलिए आचार्यों ने संस्कृत-काव्य को तीन भागों में विभक्त किया है—१-गद्य २-पद्य ३-मिश्र (गद्यं-पद्यं च मिश्रं च काव्यं त्रिविधैव व्यवस्थितम्)। प्राचीन आलंकारिकों के ही सिद्धान्तानुसार गद्य-काव्य के पुनः प्रधानतः दो विभाग किये गये, जिन्हें 'कथा' और 'आख्यायिका' कहा जाता है। दोनों प्रकार की रचनायें भामह तथा दण्डी आदि से पूर्व विद्यमान थीं। आलंकारिकों ने दोनों के लक्षण प्रस्तुत किये हैं और उनमें पार्थक्य स्थापित करने का प्रयास भी किया है। भामह ने अपने 'काव्यालंकार' में कथा एवं आख्यायिका में निम्नलिखित भेद स्थिर किया है:—

१—आख्यायिका में कथा-वस्तु वास्तविक (ऐतिहासिक) होती है, कथा में कवि-कल्पनाप्रसूत।

२—आख्यायिका में कथा का वक्ता स्वयं नायक होता है, कथा में नायक के अतिरिक्त कोई और व्यक्ति होता है।

३—आख्यायिका के विभागों को उच्छ्वास कहा जाता है, कथा को उच्छ्वासों में विभक्त नहीं किया जाता।

४—आख्यायिका में भावी घटनाओं के सूचक कुछ पद्य होते हैं, जिन्हें वक्त्र तथा अपरवक्त्र छन्द में निबन्ध किया जाता है, कथा में ऐसा कोई नियम नहीं।

५—आख्यायिका की रचना संस्कृत में होती है, कथा संस्कृत अपभ्रंश में रची जा सकती है।

आख्यायिका में कन्याहरण, संग्राम, वियोग तथा विजय आदि का वर्णन रहता है, कथा में नहीं।

भामह का उक्त लक्षण किन लक्ष्य-ग्रन्थों पर आधारित है, यह कहना कठिन है। इन दोनों में स्थापित भेदक तत्त्व भी स्पष्ट नहीं है। साथ ही उक्त नियमों का अक्षरशः पालन संस्कृत-गद्य-लेखकों ने नहीं किया है। इसीलिये आचार्य दण्डीने वक्ता तथा शैली की दृष्टि से किये उक्त भेद का खण्डन किया है। बहुत कुछ सम्भव है दण्डी ने प्रमुख रूप से भामह के वर्गीकरण को लक्ष्य करके आलोचना की हो। दण्डी के अनुसार 'कहानी कहने वाला कोई नायक हो अथवा अन्य कोई, वह उच्छ्वासों में विभक्त हो या न हो, इन वस्तुओं की विभिन्नता से आख्यायिका तथा कथा में कोई मौलिक अन्तर नहीं'। उनके अनुसार वस्तुतः कथा और आख्यायिका गद्य-काव्य के दो नाम मात्र हैं:—'तत्कथाख्यायिकेत्येका जातिः संज्ञाद्वयाङ्किता'। दण्डी ने दोनों में एक ही भेदक तत्त्व को स्वीकार किया है और वह यह कि आख्या-

यिका की कथावस्तु ऐतिहासिक तथा प्रख्यात होती है, जब कि कथा की वस्तु कल्पित। 'अमरकोश' में भी दोनों की इसी प्रकार व्याख्या की गई है 'आख्यायिकोपलब्धार्था' 'प्रबन्धकल्पना कथा'। जहाँ तक बाणभट्ट के हर्षचरित तथा कादम्बरी का प्रश्न है, हर्षचरित को आख्यायिका तथा कादम्बरी को कथा के अन्तर्गत लिया जा सकता है। बाण ने स्वयं हर्षचरित को आख्यायिका 'करोम्याख्यायिकाम्भोधौ' तथा कादम्बरी को कथा 'धिया निबद्धेयमतिद्वयी कथा' कहा है। बाद के आचार्य रुद्रट ने, बहुत कुछ सम्भव है, कथा है और आख्यायिका की परिभाषा बाण की दोनों कृतियों को लक्ष्य करके ही दी हो। रुद्रट द्वारा कहा गया आख्यायिका का लक्षण हर्षचरित में तथा कथा का कादम्बरी में घटित हो जाता है।

बाणभट्ट

जीवनी—'कीर्तिर्यस्य स जीवति' को मानने वाले भारतीय विद्वानों, कलाकारों तथा मनीषियों ने अपनी कृतियों के स्थायित्व पर प्रगाढ़ आस्था रखकर अपनी जीवनी के विषय में कुछ नहीं लिखा। पर यह संस्कृत-साहित्य का परम सौभाग्य रहा कि बाणभट्ट ने हर्षचरित' के प्रथम तीन उच्छ्वासों तथा 'कादम्बरी' के प्रारम्भिक पद्यों में अपना तथा अपने वंश का परिचय दिया। यदि बाण ने भी अन्य कवियों की भांति अपने विषय में मौन धारण किया होता, तब तो हम लोग उनके जीवन के बारे में अनुमान करके ही रह जाते। हम बाण की कृतियों के लिए तो उनके ऋणी हैं ही, साथ ही हमें उनके उक्त कार्य के लिए भी उनका आभार स्वीकार करना चाहिये। बाण के पूर्वज सोनभद्र नदी के तट पर अवस्थित प्रीतिकूट नामक नगर में रहते थे। यह स्थान सम्भवतः बिहार प्रान्त में था। ये वात्स्यायन गोत्र के ब्राह्मण थे तथा इनका वंश प्राचीनकाल से अपने धर्माचरण तथा विद्याव्यसन के लिए विख्यात था। बाण के एक प्राचीन पूर्वज का नाम 'कुबेर' था। कुबेर एक बड़े कर्मकाण्डी एवं शास्त्रज्ञ ब्राह्मण थे! उनके पास सदा विद्याध्ययनार्थ आये हुए विद्यार्थियों की भीड़ रहती थी। विद्यार्थीगण सदा शङ्कित होकर यजुर्वेद तथा सामवेद का गान करते थे क्योंकि पिंजरों में रहने वाले तोते तथा मैंने (जो सकल वेदों के अभ्यासी थे) उन्हें टोकते थे। कुबेर के चार पुत्र हुए और उनमें पाशुपत सबसे छोटे थे। उनके पुत्र अर्थपति और अर्थपति के ग्यारह पुत्र हुये जिनमें चित्रभानु एक (आठवें) थे। चित्रभानु भी अपने पूर्वजों की भांति विद्वान् थे। यज्ञों से उत्पन्न धूमों द्वारा उनकी यशःपताका का विस्तार हुआ। उन्हीं चित्रभानु से (राजदेवी के गर्भ से) बाणभट्ट का जन्म हुआ।

दुर्भाग्यवश बाल्यावस्था में ही बाण को जननी-जनक-वियोग सहना पड़ा। माता तो बाल्यकाल में ही चल बसी। उनके पिता ने उनका लालन-पालन किया,

पर दैवदुर्विपाक से वे भी इनकी १४ वर्ष की अवस्था में इस असार संसार से सदा के लिये चल दिये। वाण के गुरु का नाम भर्वुशर्मा था जिनकी वन्दना वाण ने कादम्बरी के आमुख में की है। माता-पिता की मृत्यु के बाद बाण अपनी विपुल पैतृक सम्पत्ति के अधिकारी हुये। इस तरह देखा जाय तो बाण का जन्म एक ऐसे कुल में हुआ, जिस पर लक्ष्मी एवं सरस्वती दोनों की कृपा थी। किसी अच्छे अभिभावक के अभाव में बाण स्वच्छन्दचारी हो गये। परिणामस्वरूप उनका यौवन-काल अव्यवस्थित तथा उच्छृङ्खलित हो गया। संयोगवश उनकी मैत्री (सम्पर्क) कुछ ऐसे लोगों से हो गई, जिसके कारण उनके उच्छृङ्खल जीवन को और प्रोत्साहन मिला। वे अपने बुरे साथियों के साथ आखेट आदि व्यसनों में फँस गये। देशाटन का भूत उन पर सवार हो गया। अपने मित्रों के साथ उन्होंने देश के विभिन्न भागों की लम्बी यात्रा की। इनकी मित्र मण्डली में विभिन्न प्रकृति के लोग थे। मित्रों की एक बड़ी सूची हर्षचरित के प्रथम उच्छ्वास में दी गई है। इनके मित्रों की सूची देखर इनके स्वच्छन्दचारी एवं आमोद-प्रिय स्वभाव का अनुमान किया जा सकता है। उसमें कुछ साहित्यक लोग भी थे। ऐसे लोगों में लोकभाषा कवि ईशान, प्राकृति कवि वायुविकार आदि प्रमुख थे। बाण के पास अतुल वैभव था ही, अतः वे निश्चिन्त होकर भ्रमण में तत्पर रहे। अपने भ्रमण-काल में बाण ने पर्याप्त अनुभव प्राप्त किया। कई दरबारों को उन्होंने देखा। गुरुकुलों से सम्पर्क स्थापित किया, जिनमें उन्होंने विद्याध्ययन भी किया। उक्त काल में अनेक विद्वानों से उन्होंने वार्तालाप भी किया। अन्ततोगत्वा बाण प्रौढ़ सांसारिक अनुभव, उदार विचार तथा विकसित बुद्धि के साथ अपने घर वापस आये।

अनेक चुगुलखोरों ने तत्कालीन स्थाणीश्वर (थानेश्वर) नरेश श्रीहर्षवर्धन से बाण के बारे में चुगुली की थी, जिससे वे बाण पर अप्रसन्न थे। श्री हर्षवर्धन के छोटे भाई श्रीकृष्ण ने बाणभट्ट के हितलाभ से हर्षवर्धन से बाण की कुछ हिमायत की। एक दिन उन्होंने बाणभट्ट को राजदरवार में उपस्थित होने के लिये निमंत्रण भेजा। एक मित्र की भांति श्रीकृष्ण ने बाणभट्ट को इस बात के लिये भी सावधान किया कि वे तुरन्त राजा से मिलकर अपने ऊपर राजा की रुष्टता को दूर करें। निमन्त्रण स्वीकार कर बाण राज दरबार में उपस्थित हुये। पहले तो राजा ने उनकी उपेक्षा की तथा उनके उच्छृङ्खल जीवन के लिये 'महानयं भुजङ्गः' कह कर व्यंग्य किया। इसपर बाण ने विनम्रता के साथ अपनी कुलीनता एवं विद्यानुराग के प्रति राजा का ध्यान आकृष्ट किया। बाण ने अपने चरित्र आदि के बारे में राजा के सामने जो सफाई दी वह बाण के स्वाभिमानी होने का द्योतक है। बाद में बाण की प्रतिभा एवं विद्वत्ता पर मुग्ध होकर राजा ने बाण को अपने आश्रय में रख

लिया। वाण बहुत काल तक राजदरबार में रहे। घर लौटने पर तथा लोगों के कहने पर बाण ने हर्ष चरित का निर्माण किया। बस इतना ही हम बाण के बारे में जानते हैं।

वाण ने अपने अन्तिम जीवन के बारे में कुछ नहीं लिखा। जैसा कि सुविदित है, बाण कादम्बरी को पूर्ण किये बिना ही दिवङ्गत हो गये और बाद में उनके पुत्र भूषणभट्ट या पुलिन्द भट्ट ने कादम्बरी को पूर्ण किया। यही कादम्बरी का उत्तरार्ध है। इस बाण के पुत्र होने की बात सिद्ध होती है। पुलिन्दभट्ट के अलावा बाण के और कितने पुत्र थे, इस विषय में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। वाण भी अपने पुत्रों के बारे में मौन हैं, पर किम्बदन्तियों से बाण के एक और पुत्र होने की बात मालूम होती है।

किम्बदन्ती—(१) एक प्रसिद्ध किम्बदन्ती के अनुसार मृत्युशय्या पर पड़े बाण को अपनी अधूरी कादम्बरी को पूर्ण करने की चिन्ता बनी हुई थी। एतदर्थ उन्होंने अपने पुत्रों को बुलाया और उनकी साहित्यिक अभिरुचि एवं प्रतिभा की परीक्षा करने के लिये उनसे एक वाक्य का संस्कृत में अनुवाद करने को कहा। वाक्य था 'सूखा काठ आगे पड़ा है।' उनके एक पुत्र ने (शायद ज्योतिषी ने) उक्त वाक्य का 'शुष्कः काष्ठः तिष्ठ तिष्ठत्यग्रे' यह नीरस अनुवाद किया, पर दूसरे ने, जो एक साहित्यिक था, 'नीरसतरुरिह विलसति पुरतः', इस प्रकार बड़ा ही सरस अनुवाद किया। बाण ने, दूसरे की काव्यप्रतिभा देखकर, उसपर ही कादम्बरी को पूर्ण करने का भार सौंपा। उसी का नाम पुलिन्दभट्ट या भूषणभट्ट था।

(२) बाणभट्ट के बारे में एक और किम्बदन्ती प्रचलित है, जिसके अनुसार उनका विवाह महाकवि मयूर की पुत्री से हुआ था। एक बार मयूर अपने जामाता से मिलने प्रातःकाल उनके यहाँ गये। बाण की पत्नी रातभर मान किये थीं। पर सवेरा होने पर भी मान छोड़ने के लिये उद्यत न थीं। बाण अपनी मानिनी प्रियतमा को मनाने के लिये चेष्टाशील थे। उन्होंने इस प्रसङ्ग में अपने कवित्व का सहारा लिया और झट से एक पद्य की रचना कर सुनाना प्रारम्भ किया:—

'गतप्राया रात्रिः कृशतनुशशी शीर्यत इव,
प्रदीपोऽयं निद्रावशमुपगतो घूर्णत इव।
प्रणामान्तो मानस्त्यजसि न तथापि क्रुधमहो'

'रात्रि प्रायः बीत चुकी, चन्द्रमा क्षीण हो चला और यह दीपक जैसे रातभर जागने के कारण निद्रा के वशीभूत होकर ऊँघ रहा है, मेरे प्रणाम करने पर तुम्हारा

मान भङ्ग हो जाना चाहिये, किन्तु फिर भी तुम अपना क्रोध नहीं छोड़ती !'

उक्त तीन चरण ही वे सुना पाये थे कि मयूर आ गये और तीन चरणों को सुनते ही उन्होंने झट से अन्तिम चरण बना कर यों सुनायाः—

'कुचप्रत्यासत्त्या हृदयमपि ते चण्डि ! कठिनम् ।

'हे चण्डि ! कुचों के समीपवर्त्ती होने के कारण तुम्हारा हृदय भी कठोर हो गया है'। अपने ससुर के मुख से इस प्रकार अपने श्लोक की चरणपूर्ति सुनकर बाण क्रोधान्ध हो गये और उन्होंने क्रोधावेश में मयूर को कोढ़ी होने का शाप दे दिया। मयूर ने भी कुपित होकर बाण को अपने शाप का भाजन बनाया। बाण ने 'चण्डीशतक' की रचना कर शाप से मुक्ति पाई। ये किम्वदन्तियाँ कहाँ तक सत्य हैं, यह कहना कठिन है।

बाण के आविर्भाव के समय संस्कृत के अनेक आराधक तथा ख्यातिप्राप्त विद्वान् विद्यमान थे। 'सूर्यशतक' के रचयिता कवि मयूर तथा 'भक्तामरस्तोत्र' के निर्माता भक्त मानतुङ्ग इसी समय में हुये। गुजरात की राजधानी वलभी में राजा श्रीधरसेन के समय में 'भट्टिकाव्य' के कर्ता भट्टिस्वामी का प्रादुर्भाव उक्त काल में ही हुआ था। गौतम सूत्रों पर भाष्य लिखने वाले लब्धप्रतिष्ठ विद्वान् उद्योतकर ने इसी काल में अपने पाण्डित्य की कीर्त्ति फैलाई। बाण के कुछ काल बाद महाकवि दण्डी हुये। हर्षवर्धन के दरबार में मातङ्ग दिवाकर तथा धावक का नाम मिलता है। अतः बाण का समय संस्कृत साहित्य के लिये अपना एक विशेष महत्व रखता है।

काल—हर्षवर्धन के समकालीन होने से बाणभट्ट का समय सरलता से निश्चत किया जा सकता है। हर्षवर्धन के राज्याश्रय में जाने के पहले बाण नव युवक रहे होंगे, पर यह कहना सरल नहीं है कि हर्षवर्धन के राज्यकाल की प्रारम्भिक अवस्था में ही बाण का परिचय उनसे हुआ। जो कुछ हो बाण का समय हर्ष वर्धन के समय में (राज्याश्रय में) होने के कारण ईसा की ७वीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध माना जा सकता है। हर्षवर्धन का राज्याभिषेक ६०६ ई० में और उनका देहावसान ६४८ ई० में हुआ था। यह समय तत्कालीन प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेनसांग के लेखों से सिद्ध होता है।

बाण के उक्त काल में होने की पुष्टि अन्तरङ्ग एवं बहिरङ्ग प्रमाणों से भी होती है। ८वीं शताब्दी के वामन ने अपने ग्रन्थ में 'कादम्बरी' के कुछ अंशों को उद्धृत किया है। आनन्दवर्धन (८५० ई०) के 'ध्वन्यालोक' में बाणभट्ट की दोनों गद्यकृतियों का उल्लेख है। धनंजय ने (१००० ई०) 'दशरूपक' में बाण

का उल्लेख किया है—'यथा हि महाश्वेतावर्णनावसरे भट्टबाणस्य'। इसी प्रकार क्षेमेन्द्र, रुय्यक आदि ने बाण तथा उनकी कृतियों का उल्लेख किया है। इस तरह हम देखते हैं कि ८वीं शताब्दी से लेकर १२वीं शती तक के प्रमुख संस्कृत आचार्यों ने बाण की तथा उनकी रचनाओं की चर्चा की है। अतः बाण का उनके पूर्ववर्ती (अर्थात् ७वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में) होने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

यद्यपि बाणभट्ट ने हर्षचरित में अपना व्यक्तिगत इतिहास लिखा है पर समय का कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं किया है। उन्होंने प्रारम्भिक पद्यों में व्यास, वासवदत्ता भट्टार हरिश्चन्द्रः भास, कालिदास तथा बृहत्कथा आदि का नामोल्लेख किया है, जिनमें से कोई भी ७वीं शताब्दी के बाद का नहीं है। हर्षचरित्र में वर्णित हर्ष के पराक्रम आदि से इस बात की पुष्टि अवश्य होती है कि हर्ष का बाण के साथ सम्मिलन उनके राज्यकाल के उत्तरार्द्ध में हुआ।

अतः अन्तरङ्ग तथा बहिरङ्ग दोनों प्रमाणों के आधार पर बाण का ७वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में होना निश्चित है

कृतियाँ—बाण की निःसंदिग्ध गद्य-रचनायें केवल दो हैं—१-कादम्बरी २-हर्षचरित। इन दोनों के अतिरिक्त 'चण्डीशतक' तथा 'पार्वतीपरिणय' भी बाण की कृति माने जाते हैं। चंडीशतक सौ श्लोकों में निबद्ध एक स्तोत्र है। लोगों के कथनानुसार बाण ने मयूर कवि के शाप से छुटकारा पाने के लिए उसकी रचना की थी। 'पार्वतीपरिणय' एक नाटक है, जिसमें शङ्कर पार्वती के विवाह का कथानक बड़े रोचक ढंग से वर्णित है। इस नाटक को म० म० काणे महोदय बाण-कृति मानते हैं, पर डा० कीथ का मत इसके विरुद्ध है। उनका कहना है कि 'रचना और शैली दोनों की दृष्टि से पार्वतीपरिणय' की दुर्बलता के कारण आलोचक लोग उसे बाण की रचना नहीं मानते, और वास्तव में यह स्पष्ट है कि वामन भट्ट बाण ने १५वीं शताब्दी में उसकी रचना की थी'। इसके अतिरिक्त 'नलचम्पू' के टीकाकार चन्द्रपाल तथा गुण विजय-गणि ने 'मुकुटताडितक' नामक नाटक को बाणभट्ट की कृति माना है, पर उक्त उल्लेख के अतिरिक्त अन्यत्र कहीं उस ग्रन्थ की चर्चा नहीं है और न तो वह उपलब्ध ही हो सका है। सूक्ति-संग्रहों तथा अलंकार-ग्रन्थों में बाणभट्ट के नाम से अनेक सुन्दर पद्य मिलते हैं। क्षेमेन्द्र ने (औचित्यविचारचर्चा में) बाण का, कादम्बरी की विरहावस्था से सम्बद्ध, एक पद्य उद्धृत किया है। इन आधारों पर कुछ लोग पद्यबद्ध 'कादम्बरी' का अनुमान करते हैं, पर निश्चित प्रमाण के अभाव में बाण के पद्य ग्रन्थ के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। डा० कीथ ने रत्नावली को बाण की कृति मानने का खण्डन किया है।

हर्षचरित

'हर्षचरित' बाण की प्रथम कृति है और यह आख्यायिका है। डा० कीथ का (सं० साहित्य के इतिहास में) कहना है "हर्षचरित को आख्यायिका का पद दिया जाता है और अलंकार-शास्त्र के राजशेखर जैसे उत्तरकालीन लेखकों ने वास्तव में आख्यायिका के रूप के लिये उसे आदर्श स्वीकार किया है। उसका विभाग उच्छ्वासों में किया गया है। उसमें यत्र-तत्र पद्य भी पाए जाते हैं। उसका आख्याता, उसका नायक हर्ष नहीं तो कम से कम स्वयं उपनायक बाण है, जिनका इतिहास प्रथम दो और आधे उच्छ्वास में दिया गया है।" इसमें कुल ८ उच्छ्वास हैं। प्रथम उच्छ्वास के पद्यों में, व्यास, वासवदत्ता, भास, कालिदास आदि का उल्लेख है। प्रारम्भ के पूरे २ उच्छ्वासों में बाण ने अपनी संक्षिप्त जीवनी दी है। तीसरे उच्छ्वास में थोड़ा अपना वृतान्त कहने के उपरान्त वे हर्ष के चरित का वर्णन प्रारम्भ करते हैं, जो बाकी ५ उच्छ्वासों में चलता है। इस ग्रन्थ में ऐतिहासिक विषयपर गद्य-काव्य लिखने का प्रथम प्रयास किया गया है। कवि ने वर्णन तो हर्ष के इतिहास का किया है, पर उसे अलंकृत करने का भरसक प्रयास किया है। कवि की वर्णन शक्ति भी उसे काव्यत्व प्रदान करने में सहायक होती है। इसमें साधारणतः वीर रस की प्रधानता है, परन्तु मरणासन्न प्रभाकर वर्धन के चित्रण, यशोवती के विलाप तथा राज्यवर्धन के शोक आदि के स्थलों में करुण रस का भी अच्छा उन्मेष हुआ है। 'हर्षचरित' में हर्ष का सर्वाङ्गपूर्ण चरित अङ्कित नहीं हुआ है, इसीलिए कल्हण की कृति से उसकी तुलना नहीं की जा सकती। पर इतना तो निःसङ्कोच कहा जा सकता है कि 'हर्षचरित' अपने काल का राजनैतिक इतिहास भले न हो पर वह भारत के उस काल की सांस्कृतिक एवं सामाजिक स्थिति का चित्रण करने में नितान्त सक्षम है। तत्कालीन वेष-भूषा, आचार-विचार, राजसभा, जन्म-मरण के बाद के संस्कार, ब्राह्मणों के जीवन, कलाकारों की कलाओं आदि का उसमें सम्यक चित्रण है। उक्त दृष्टि से हर्षचरित का मूल्य अधिक है।

कादम्बरी

कादम्बरी बाण की दूसरी कृति है जिसको कथा की कोटि के गद्य-काव्य में माना जा सकता है। इसके पूर्व तथा उत्तर दो भाग हैं। पूर्वभाग समस्त ग्रन्थ का दो तिहाई भाग है, जिसकी रचना बाण ने स्वयं की है। उत्तर भाग एक तिहाई है। इसकी रचना, बाण के दिवंगत होने पर, उनके सुयोग्य पुत्र भूषण-भट्ट (पुलिन्द

भट्ट) ने की है। कादम्बरी की कथा में चन्द्रापीड तथा पुण्डरीक दोनों नायकों के तीन तीन जन्मों की कहानियाँ हैं।

कथा का सारांश—'आरम्भ में विदिशा के राजा शूद्रक के राजसीवैभव एवं प्रभाव का वर्णन है। उसके दरबार में एक सुन्दरी चाण्डाल-कन्या 'वैशम्पायन नामक शुक को लेकर उपस्थित होती है शुक की मनुष्य-वाणी सुनकर उसके वृत्तान्त के विषय में जानने की राजा की जिज्ञासा होती है। शुक राजा को विन्ध्याटवी में अपने जन्म से लेकर महर्षि जाबालि केआश्रम में पहुँचने तक की कथा सुनाता है। शुक के जन्म के विषय में महर्षि जाबालि ने जो कथा सुनाई, वह निम्नलिखित है:—

उज्जयिनी के राजा तारापीड तथा रानी विलासवती से चन्द्रापीड की उत्पत्ति हुई। उसी समय राजा के मन्त्री शुकनास के वैशम्पायन नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। उन दोनों की आपस में अच्छी मैत्री रही। युवराज-पद पर अभिषिक्त होने के बाद कुमार चन्द्रापीड वैशम्पायन के साथ दिग्विजय के लिये निकला। एक बार वह अपने घोड़े इन्द्रायुध पर सवार होकर, एक किन्नर-मिथुन का पीछा करता हुआ, एक परम रमणीय सरोवर (अच्छोद) पर जा पहुँचा। वहाँ उसे एक बहुत मधुर सङ्गीत-ध्वनि सुनाई दी। वह ध्वनि से आकृष्ट होकर शिवालय में पहुँचा, जहाँ उसे एक अत्यन्त शुभ्रवर्णा, परम सुन्दरी कुमारी का दर्शन हुआ, जिसका नाम महाश्वेता था। परिचय होने पर जब चन्द्रापीड ने उससे कुमारी अवस्था में ही तपस्या करने का कारण पूछा, तो उसने अपना वृत्तान्त कह सुनाया। वृत्तान्तानुसार महाश्वेता एक गन्धर्व कन्या थी। वह एक दिन अपनी माता के साथ स्नान करने के लिये गई, जहाँ वह पुण्डरीक नामक तपस्वी के प्रेम-पाश में बंध गई। पुण्डरीक भी उस पर आकृष्ट हो गया, पर वह मिलन के पूर्व विरह-वेदनावश परलोकगामी हो गया। इसके बाद महाश्वेता अपने प्रियतम के भावी मिलन की आशा में, तपस्विनी का रूप धारण कर, शिव का व्रत करने लगी। महाश्वेता की सखी कादम्बरी ने अपनी सखी की समवेदना में कौमार्यव्रत धारण करने का निश्चय किया। महाश्वेता चन्द्रापीड को लेकर कादम्बरी के पास गई। वहाँ पर प्रथम मिलन में ही चन्द्रापीड तथा कादम्बरी का एक दूसरे से प्रेम हो गया। अपने पिता (तारापीड) द्वारा वापसी का आदेश पाने पर चन्द्रापीड को विवश होकर वापस होना पड़ा। यहीं कादम्बरी का पूर्वार्ध समाप्त होता है। वैशम्पायन वहीं रुक गया। बहुत दिनों के बाद भी जब वैशम्पायन लौट कर नहीं आया, तो चन्द्रापीड को घबड़ाहट हुई और वह वैशम्पायन की तलाश में पुनः लौट पड़ा।

महाश्वेता ने चन्द्रापीड को बताया कि वैशम्पायन मुझपर आसक्त होकर मुझसे प्रेम प्रस्ताव करने लगा, इसपर मैंने उसको शुक होने का शाप दे दिया। उसी समय वैशम्पायन की मृत्यु हो गई। चन्द्रापीड अपने मित्र की मृत्यु से संतप्त होकर दिवंगत हो गया। इसी अवसर पर कादम्बरी वहाँ आई और अपने प्रियतम को दिवंगत देख, विलाप करती हुई, मृत्यु के लिये उद्यत होने ही जा रही थी कि आकाश-वाणी ने उसे मिलन की आशा बंधाकर वैसा करने से रोका। चन्द्रापीड का शरीर मृत्यु के बाद भी निर्विकार बना रहा। जब चन्द्रापीड के माता-पिता को वह दुःखद समाचार मिला, तो वे लोग भी वहां पहुँचे। जाबालि की कथा यहीं समाप्त होती है।

जाबालि से अपने पूर्वजन्म का वृत्तान्त जानकर शुक के हृदय में महाश्वेता के प्रति अपने पूर्व-प्रेम की स्मृति हो आई और वह आतुर हो आश्रम से उड़ा, किन्तु एक चाण्डाल ने उसे पकड़ लिया। इसके बाद चाण्डाल कन्या ने सोने के पिंजरे में उसे डाल दिया और उसी के द्वारा शूद्रक के दरबार में वह लाया गया। यहीं पर शुक की कथा समाप्त होती है। आगे का वृत्तान्त वह नहीं जानता। इसके बाद चाण्डाल कन्या ने शेष वृत्तान्त बताया। वह चाण्डाल कन्या ही लक्ष्मी के रूप में पुण्डरीक की माता है। शुक अपने पूर्वजन्म में वैशम्पायन तथा वैशम्पायन अपने पूर्वजन्म में पुण्डरीक था। इसी प्रकार शूद्रक अपने पूर्वजन्म में चन्द्रापीड तथा चन्द्रापीड अपने पूर्वजन्म में चन्द्रमा था। वृत्तान्त सुनाने के बाद चाण्डालकन्या (लक्ष्मी) अन्तर्धान हो गई। शाप की अवधि समाप्त होने के कारण शूद्रक तथा शुक का शरीर-पात हो गया। चन्द्रापीड का शव जीवित हो उठा तथा पुण्डरीक चन्द्रमण्डल से निकल कर महाश्वेता के पास आ गया। अन्त में पुण्डरीक से महाश्वेता का तथा चन्द्रापीड से कादम्बरी का सुखद मिलन हुआ और वे नानाविध सुखोपभोग करते हुये अपना जीवन बिताने लगे। यही कादम्बरी की कथा का सारांश है।

कथा का स्रोत—किन्हीं विद्वानों के मतानुसार कादम्बरी की कथा गुणाढ्य की बृहत्कथा पर आधारित है। सम्भव है बृहत्कथा के अन्तर्गत मन्दरिकोपाख्यान इसका मूल हो। शाप तथा पुनर्जन्म की रूढ़ियों का आश्रय बृहत्कथा में लिया गया है तथा एक कथा के अन्दर दूसरी कथा के कहने की पद्धति भी बृहत्कथा में अपनाई गई है। ये सब बातें कादम्बरी में भी मिलती हैं। बाणभट्ट बृहत्कथा से परिचित अवश्य थे। हर्षचरित के प्रारम्भ में उन्होंने बृहत्कथा का उल्लेख किया है—'हरलीलेव नो कस्य विस्मयाय बृहत्कथा'। जो कुछ हो यदि बृहत्कथा को ही कादम्बरी-कथा का (अंशतः) आधार

माना जाय तो भी हमें यह कहने में सङ्कोच नहीं कि बाणभट्ट की अनुपम वर्णन शैली, उदात्त अलङ्कार-योजना, गम्भीर प्रेम की अभिव्यक्ति एवं कल्पना की भव्य योजना, ये सब उनके ही सरस एवं व्यापक हृदय की उपज हैं। बाण में जिस ढंग की अलौकिक कल्पनाशक्ति एवं प्रतिभा है, उसे देखते हुये यह भी सम्भव है कि उन्होंने कादम्बरी की कथा का निर्माण एकदम कल्पना के आधार पर ही किया हो।

कादम्बरी का वैशिष्ट्य—कादम्बरी बाण की अनुपम रचना तो है ही, साथ ही वह संस्कृत-गद्य-साहित्य के क्षेत्र में भी बेजोड़ है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, कादम्बरी गद्यकाव्य के कथा-भेद के अन्तर्गत आती है। बाण ने भी कादम्बरी को कथा कहा है पर उस अर्थ में नहीं जिसमें बृहत्कथा आदि का परिगणन होता है। कादम्बरी में बाण ने भारतीय संस्कृति के पुनर्जन्मवाद का आश्रय लिया है। इसके प्रमुख पात्र केवल एक जन्म से सम्बर्द्धन होकर तीन-तीन जन्मों से सम्बद्ध हैं। कादम्बरी का नायक चन्द्रापीड तथा पुण्डरीक दोनों तीन जन्मों में हमारे सामने हैं। उन लोगों को, जिनकी आस्था पुनर्जन्म में नहीं है, बाण की कादम्बरी एक अनर्गल प्रलाप ही जान पड़ती है, पर जिन्हें पुनर्जन्म में आस्था है और जो भारतीय जीवन पद्धति एवं वैचारिक भित्ति को समझते हैं, उन्हें कादम्बरी कथा पर कुछ भी आश्चर्य नहीं होता। यहाँ पर डा० कीथ का कहना (सं० सा० के इतिहास में) सर्वथा उपयुक्त है—"वास्तव में, यह एक विचित्र कहानी है, और उन लोगों के प्रति जिनको पुनर्जन्म में अथवा इस मर्त्यजीवन के अनन्तर पुनर्मिलन में भी विश्वास नहीं है, इसकी प्ररोचना गम्भीर रूप से अवश्य ही कम हो जानी चाहिए। उनको यह सारी कथा, निकम्मी नहीं तो, असङ्गत अद्भुत कथा के रूप में ही प्रतीत होती है, जिसके आकर्षण से हीन पात्र एक अवास्तविक वातावरण में ही रहते हैं। परन्तु भारतीय विश्वास की दृष्टि से वस्तुस्थिति बिल्कुल भिन्न है। कथा को हम औचित्य के साथ मानवीय प्रेम की कोमलता, दैवी आश्वासन की कृपा, मृत्युजनित शोक और कारुण्य, और प्रेम के प्रति अविचल सचाई के परिणाम स्वरूप मृत्यु के पश्चात् पुनर्मिलन की स्थिर आशा से परिपूर्ण मान सकते हैं।" मेरी समझ से आलोचकों के लिये डा० कीथ का कथन पर्याप्त होगा।

इसी पुनर्जन्मवाद ने कादम्बरी में चित्रित प्रणय को एक गम्भीरता तथा उदात्तता प्रदान की है। महाश्वेता पुण्डरीक के मिलन की आशा में अच्छोद सरोवर के पास तपस्या करती हुई तथा अपनी विरहव्यथामयी घड़ियों को गिनती हुई करुणामय जीवन व्यतीत करती है। चन्द्रापीड के मरने के बाद उसके प्रेमपाश में बँधी कादम्बरी इसलिये आत्महत्या नहीं करती क्योंकि दिव्यज्योति ने उसके प्रियतम् के भावी मिलन की आशा बँधाई है।

इसके साथ ही बाण ने कादम्बरी में अतिमानवीय पात्रों को भी मानवयोनि में लाकर उनकी श्रेष्ठता का प्रतिपादन किया है। चन्द्रलोक, गन्धर्वलोक आदि के पात्र मत्यलोक में आकर प्रणय की भूमिका को अपने अलौकिक सम्पर्क से पावन बनाते हैं। चन्द्रमा तथा पुण्डरीक जैसे दिव्यपात्र पुनर्जन्म की मान्यताके कारण मर्त्यलोक की योनियों में जन्म ग्रहण करते हैं। मनुष्य की भाँति बोलता शुक, महात्मा जाबालि का त्रिकालदर्शित्व, गन्धर्व, किन्नर एवं अप्सराओं आदि की योजना, पुनर्जन्म आदि ये सभी बातें लोक कथाओं में रूढ़िग्रस्त थीं, जिनका प्रयोग कादम्बरी में हुआ। कथा में चन्द्रमा तथा पुण्डरीक के आश्चर्यजनक वृत्त (आकाश-वाणी आदि) भारतीय विचारधारा के अन्तर्गत ही आते हैं।

कथा के भीतर कथा कहने की प्रथा भी लोक कथाओं की पुरानी परम्परा के अन्तर्गत है, जिसका आधार कादम्बरी में लिया गया। शूद्रक की सभा में शुक-कथा के अन्तर्गत जाबालिकथा फिर उसी के भीतर महाश्वेता-वृत्तान्त आदि उपकथायें कही गई हैं। कथा के अन्तर्गत उपकथा की योजना से कथावस्तु के समझने में कुछ जटिलता अवश्य आ गई है पर कथा में कुतूहलता का अभाव नहीं है, यह बाणभट्ट की विशेषता है। कथा पढ़ते समय पाठक की उत्सुकता बढ़ती ही जाती है। कादम्बरी की प्रधान नायिका कादम्बरी है, जिसकी कथा मध्य में आती है। महाश्वेता की प्रणय कथा कादम्बरी कथा की पूरक बनकर आई है। शूद्रक की सभा में आये शुक की कथा में ही अन्य सारी कथायें गुँथती चली जाती हैं और अन्त में रहस्योद्घाटन होता है।

कादम्बरी का प्रधान रस शृङ्गार है जिसका चित्रण सर्वत्र पावन एवं निर्दोष है। कादम्बरी के नायक चन्द्रापीड तथा नायिका कादम्बरी के साथ ही अन्य पात्रों का भी चित्रण अच्छी प्रकार हुआ है। शूद्रक तारापीड, अमात्य शुकनास, विलासवती पत्रलेखा, महाश्वेता, पुण्डरीक, कपिञ्जल आदि पात्र अच्छी प्रकार चित्रित हैं।

कादम्बरी में जिस प्रकार की वर्णन विविधता दृष्टिगोचर होती है वैसी पूरे संस्कृत वाङ्मय में कहीं नहीं उपलब्ध होती। कहीं पर विन्ध्याटवी का भयावह वर्णन है, कहीं जावालि के परम शान्त तथा पावन आश्रम की शोभा का वर्णन है। शूद्रक जैसे परम वैभव शाली नृपतियों के राजसी वैभव के वर्णन जिस प्रकार बाण की वर्णन शक्ति की दुन्दुभि बजाते हैं, उसी प्रकार अच्छोद-सरोवर, कादम्बरी, महाश्वेता आदि के वर्णन भी पाठकों के हृदय में अपूर्व चमत्कृति का सर्जन करते हैं।

कुछ लोगों ने कादम्बरी को प्रेम-काव्य माना है, उनका यह मानना ठीक है क्योंकि इसमें दो प्रणयी युगल-कादम्बरी-चन्द्रापीड तथा महाश्वेता–पुण्डरीक–की प्रणय कहानी प्रमुख रूप से चित्रित है। कथा का अन्त भी प्रेम की सफलता में होता है। परन्तु यहाँ यह स्मरणीय है कि कादम्बरी गाथासप्तशती की भाँति स्वच्छन्दप्रेम की

वर्णना नहीं है, जिसमें प्रेम का स्वरूप उच्छृङ्खलित एवं अमर्यादित है। इसी प्रकार कादम्बरी के प्रेम की तुलना दशकुमारचरित में चित्रित प्रेम से भी नहीं की जा सकती। कादम्बरी का प्रेम मर्यादित तथा गम्भीर है। यही कारण है कि उसके पात्र परस्पर अनुरक्त होते हुये भी विवाह के पूर्व एक दूसरे से किसी भी प्रकार का शारीरिक सम्बन्ध नहीं रखते।

जो लोग कादम्बरी को आधुनिक कहानी के रूप में देखने तथा उसको उसी की कसौटी पर कसने का प्रयास करेंगे, उन्हे अवश्य निराश होना पड़ेगा। इस प्रकार के आलोचकों को इतना तो समझ ही लेना चाहिये कि कादम्बरी वस्तुतः काव्य है। इसलिये उसको पञ्चतन्त्र आदि की श्रेणी में रखकर परीक्षित करना औचित्य से परे है। बाण ने कादम्बरी में रसपरिपाक का ही लक्ष्य सामने रखा है। कादम्बरी का महत्व उसके कथानक, चरित्रचित्रण आदि में उतना नहीं है जितना कि कवित्व एवं रसमयता में। प्रकृति-चित्रण अलंकारों की योजना, सभी कवित्व के वातावरण की सृष्टि में ही निबद्ध जान पड़ते हैं।

वस्तुतः कादम्बरी एक ऐसी प्रणयगाथा है, जिसमें कवित्व एवं रसमयता अपनी चरम सीमा पर पहुँच कर जनमानस का सैकड़ों वर्षों से आह्लाद कर रही है। बाण की कादम्बरी रस-परिपाक के कारण सहृदयों के लिये उस कोमल नवोढा वधू के समान है जो रस विभोर हो स्वयमेव शय्या की ओर अग्रसर होती है। यही कारण है कि कादम्बरी सदा से लोकप्रिय रही। बाणतनय भूषण भट्ट का निम्नांकित कथन यथार्थ की ही भित्ति पर आधारित है जो अपनी सत्यता की सिद्धि के लिये सहस्रों गवाहों को मुक्तकंठ से गवाही देने के लिये बाध्य कर देता है—

'कादम्बरीरसभरे समस्त एव, मत्तो न किञ्चिदपि चेतयते जनोऽयम्' ॥

सचमुच कादम्बरी कुछ ऐसी ही विलक्षण सृष्टि है जो रसिकजनों को हठात् रस-विभोर कर देती है, जिससे वे कादम्बरी (मदिरा) के पान से मत्त की भांति बेसुध हो जाते हैं।

शैली—राजशेखर के मतानुसार बाणभट्ट की शैली पाञ्चाली है। अर्थ (वर्ण्यविषय) के अनुरूप शब्दों की योजना को ही पाञ्चाली रीति कहते हैं— (शब्दार्थयोः समो गुम्फः पाञ्चाली रीतिरिष्यते)। वर्णनीय विषय यदि कठोर है तो कवि उसके अनुसार क्लिष्ट भाषा का प्रयोग करता है और यदि विषय कोमल है तो उसकी भाषा में कोमलता रहती है। विन्ध्याटवी आदि की भयानकता के वर्णन में कवि ने कठोर भाषा का प्रयोग किया है—"क्वचित् प्रलयवेलेव महावराहदंष्ट्रासमुत्खातधरणिमण्डला, क्वचिदुद्धृत्तमृगपतिनादभीतेव कण्टकिता"। इसके विपरीत वसन्त एवं कामिनी के रूप आदि के वर्णन में कवि ने अत्यन्त कोमल वर्णों का प्रयोग किया है—'विकसन्मुकुलपरिमलपुञ्जितालिजालञ्जुसिञ्जितसुभगसहकारेषु"।

वर्णनात्मक स्थलों में बाण कई प्रकार की शैली का प्रयोग करते हैं। भावप्रधान तथा मार्मिक विषयों के वर्णन में उन्होंने ऐसी सशक्त शैली का प्रयोग किया है जिसमें समासों का प्रायः अभाव है। वाक्य छोटे-छोटे हैं तथा विशेषण पदों की न्यूनता है। ऐसे अवसरों पर उनकी शैली बड़ी प्रभावपूर्ण है। पुण्डरीक की भर्त्सना करता हुआ कपिञ्जल कहता है—"सखे पुण्डरीक नैतदनुरूपं भवतः। क्षुद्रजनक्षुण्ण एष मार्गः। धैर्यधना हि साधवः।" उपदेश आदि के स्थलों में भी प्रायः ऐसी ही शैली प्रयुक्त हुई है, जो समास विहीन, गतिशील एवं प्रवाहपूर्ण है। जैसे शुकनास के उपदेश में लक्ष्मी के विषय में कहा गया है—"न परिचयं रक्षति। नाभिजनमीक्षते। न रूपमालोकयते।" कपिञ्जल महाश्वेता आदि के विलाप में भी इसी शैली का दर्शन होता है।

किन्तु इसके विपरीत राजसी वैभव, रमणी के रूप तथा प्राकृतिक वर्णनों बाण ने अलंकृत, आडम्बरपूर्ण लम्बे-लम्बे समासों से भरी एवं श्लिष्ट वाक्यावली का प्रयोग किया है। ऐसी शैली को 'उत्कलिका' कहा जाता है और यह बाण की निजी सफलता है। इस शैली के प्रयोग में बाण को जैसी सफलता मिली वैसी संस्कृत-साहित्य में किसी को भी नहीं मिली। इस शैली का दर्शन शूद्रक, जाबालि-आश्रम, महर्षि जाबालि, उज्जयिनी, विन्ध्याटवी, अच्छोदसरोवर, महाश्वेता तथा कादम्बरी आदि के वर्णनों में किया जा सकता है। ऐसे वर्णनों में उनकी अलंकार-योजना, कल्पना-प्रसूत मौलिक अर्थों की उद्भावना तथा शब्द सम्पत्ति का स्वरूप दर्शनीय है। इस शैली के द्वारा बाण अपने पात्रों का जैसा चित्र प्रस्तुत करते हैं उसकी तुलना (संस्कृत-साहित्य में) कठिन है। वे एक ही वाक्य में पूरा चित्र उपस्थित करने की कोशिश करते हैं। महाश्वेता का लम्बा वर्णन केवल एक वाक्य में किया गया है। नारी-रूप के वर्णन में तो बाण बेजोड़ हैं। चाण्डाल-कन्या, रानी विलासवती, पत्रलेखा, महाश्वेता तथा कादम्बरी का उन्होंने ऐसा चित्र खींचा है जो पाठकों की आँखों के सामने नाचने लगता है। तपस्विनी महाश्वेता का वर्णन अत्यन्त आकर्षक तथा सजीव है—'त्रयीमिव कलियुगध्वस्तधर्मशोकगृहीतवनवासम्,' 'देहवतीमिव मुनिजनध्यानसम्पदम्,' 'धर्महृदयादिव निर्गताम्'। महाश्वेता के धवल वर्ण (गौरवर्ण) को चित्रित करने में तो कवि ने अपनी कल्पना की बाजी ही लगा दी और आकाश पाताल को एक कर अन्त में उसे धवलिमा की चरम सीमा घोषित कर दिया (इयत्तामिव धवलिम्नः)।

बाण का संस्कृत भाषा पर अपूर्व अधिकार है। उनके पास शब्दों का अक्षय भण्डार है। ऐसा लगता है जैसे (वर्णन के समय) उनका शब्द-कोष रिक्त ही नहीं होता। जिस स्थल में वे जिस प्रकार की शब्दावली प्रयुक्त करना चाहते हैं, वहाँ उनके सामने झटिति शब्दों की लाइन हाजिर हो जाती है। शब्द तो मानो क्रीतदास

होकर उनके पीछे दौड़ते हैं। सर्वत्र पदों का नया विन्यास ही दृष्टिगोचर होता है। यही कारण है कि उनमें कथित-पदता दोष नहीं मिलता। रसभावमयी तथा अभिराम स्वर, वर्ण एवं पदों से संवलित होकर बाण की वाणी किसका मन नहीं हर लेती। यदि धर्मदास ने उनकी प्रशंसा की तो आश्चर्य ही क्या ?—

रुचिरस्वरवर्णपदा रसभाववती जगन्मनो हरति।
सा किं तरुणी ? नहि नहि वाणी बाणस्य मधुरशीलस्य ॥

अलंकार—बाणभट्ट ने अपने विविध वर्णनों को सजीव तथा प्रभाव पूर्ण बनाने के लिये नानाविध अलंकारों का प्रयोग किया है। उपमा, उत्प्रेक्षा, श्लेष, विरोधाभास, परिसंख्या, यमक, अनुप्रास आदि अलंकारों का प्रयोग उन्होंने सफलता के साथ किया है। बाण के द्वारा प्रयुक्त श्लेष जुही की माला में गुँथे गये चम्पक के पुष्पों के सदृश होते हैं—'निरन्तरश्लेषघनासुजातयो महास्रजश्चम्पककुड्मलैरिव'। उनके अनुप्रास-प्रयोग से भाषा में एक अपूर्व स्वरमाधुर्य की सृष्टि, होती है—'मधुकरकुलकलङ्ककालीकृतकालेयककुसुमकुड्मलेपु'। बाणभट्ट परिसंख्या के प्रयोग में सिद्धहस्त हैं। इस क्षेत्र में तो उनकी तुलना शायद ही कोई कर सके। रशनोपमा का एक मनोहारी उदाहरण दे देना उचित होगा—'क्रमेण च कृतं मे वपुषि, वसन्त इव मधुमासेन, मधुमास इव नवपल्लवेन, नवपल्लव इव कुसुमेन, कुसुम इव मधुकरेण, मधुकर इव मदेन, नवयौवनेन पदम्'। बाण ने अलङ्कारों का प्रयोग केवल क्रीडा के लिये ही नहीं किया है, अपितु उनका प्रयोग मनोवैज्ञानिक भित्ति पर हुआ। अलङ्कारों के द्वारा वे अपने वर्ण्य विषयके वास्तविक चित्र को प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करते हैं। 'दक्षिणेन चक्षुषा सस्पृहमापिबन्तीव, किमपि याचमानेव, 'त्वदायत्तास्मि' इति वदन्तीव, अभिमुखं हृदयमर्पयन्तीव' स्तम्भितेव, लिखितेव, उत्कीर्णेव इत्यादि स्थलों में उत्प्रेक्षा का मनोवैज्ञानिक प्रयोग अत्यन्त चारु है।

प्रकृति-वर्णन—बाण प्रकृति के महान् अनुरागी हैं। प्रकृति का उन्होंने सूक्ष्मातिसूक्ष्म निरीक्षण किया है। संस्कृत के कालिदास जैसे महाकवि यदि प्रकृति के कोमल रूप के पक्षपाती हैं, तो भवभूति जैसे गम्भीर प्रकृति के महाकवि उसके कठोर रूप के अनुरागी हैं, पर यह बाण की महती विशेषता है कि उन्होंने प्रकृति के उभय (मधुर तथा भयावह)रूपों का सुविशद तथा सजीव वर्णन किया है। कवि ने अपने प्रकृति वर्णन को मनोहारी एवं आकर्षक बनाने के लिये अनेक अलङ्कारों का सहारा लिया है। कवि के प्रकृति वर्णन की छटा के लिये कादम्बरी के विन्ध्याटवी, जाबालि-आश्रम, अच्छोद सरोवर, महाश्वेता का निवास स्थान, शाल्मली वृक्ष आदि के वर्णनों को देखना आवश्यक है। विन्ध्याटवी के, 'क्वचित्समरभूमिरिव शरशतनिचिता' 'क्वचिदवनिपतिद्वारभूमिरिव वेत्रलताशत-दुःप्रवेशा' इन स्थलों में एक ओर जहाँ उनकी भीषणता आँखों के सामने नाचने

लगती है, ठीक दूसरी ओर जाबालि का शान्तिमय आश्रम पाठकों के मन में पावनता का संचार करता है ! उक्त प्राकृतिक स्थलों में सूर्योदय, सन्ध्या, चन्द्रोदय आदि के रमणीय वर्णन कुछ क्षण के लिये पाठकों के हृदय को आलोडित कर देते हैं । जाबालि आश्रम के सन्ध्यावर्णन का एक उदाहरण देना पर्याप्त होगा—'अनेन च समयेन परिणतो दिवसः स्नानोत्थितेन मुनिजनेनार्धविधिमुपपादयता यः क्षितितले दत्तस्तमम्बरतलगतः साक्षादिव रक्तचन्दनाङ्गरागं रविरुदवहत्' बाण के प्राकृतिक वर्णनों की यह विशेषता है कि वे प्राकृतिक दृश्यों में मानवीय व्यापारों का आरोप करते हैं । जाबालि-आश्रम के सन्ध्यावर्णन में उन्होंने अप्रस्तुतो का चयन आश्रम से ही किया है । प्रकृति के विभिन्न व्यापारों में मानवीय क्रियाओं एवं भावों को ऐसा मिलाया गया है कि प्रकृति में एक अनोखी चेतनता का प्रादुर्भाव हो गया है—'अचिरप्रोषिते सवितरि शोकविधुरा कमलमुकुलकमण्डलुधारिणी ··· ·· कमलिनी दिनपतिसमागमव्रतमिवाचरत्' । यहाँ कमलिनी को वियोगिनी बनाकर नायक के मिलन के लिये तपस्या कराना बाणभट्ट की विशेषता है ।

भावपक्ष—सच्चा कवि वही है जो चेतनप्राणी के अन्तस्तल में पैठकर उसके अन्तर्गत उठने वाले विविध भावों का अपने प्रातिभचक्षु से दर्शन करे, फिर अपनी कलात्मक चातुरी से उसका सजीव वर्णन करे । कवि के लिये दर्शन एवं वर्णन दोनों अपेक्षित है । इसीलिये कहा गया है—'दर्शनाद् वर्णनाच्चाथ रूढा लोके कविश्रुतिः' । बाणभट्ट के लिये भी उक्त बात अक्षरशः सत्य है । बाण के अनुपम शब्दभंडार, अलंकृतशैली, अलौकिक कल्पनावैभव, उक्ति वैचित्र्य आदि की प्रशंसा तो अनेकानेक कवियों ने मुक्तकण्ठ से की, पर बाण का महत्त्व केवल उक्त कारणों से ही नहीं है । उनका वैशिष्ट्य इस अर्थ में भी कम नहीं है कि वे मानव मन के अन्तराल में घुसकर तद्गत भावों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन करते हैं, फिर अपनी कला से (वर्णन कर) उनमें एक अपूर्व सजीवता लाते हैं, जिससे पाठक रसद्रवित होकर अलौकिक आनन्द की सरिता में अवगाहन करने लगता है । हर्षचरित तथा कादम्बरी में अनेक स्थल ऐसे हैं जहाँ कवि ने अपनी विलक्षण अन्तर्दृष्टि का परिचय दिया है, जो मानव की सूक्ष्म गुत्थी को भी समझने में नितान्त सक्षम है । मृत्युशय्या पर पड़े प्रभाकरवर्धन को देखने पर हर्ष की मनोदशा का वर्णन तो कवि ने किया ही है, साथ ही अत्यन्त रुग्णावस्था में स्थित होते हुये भी अपने पुत्र की दुर्बलता देखकर 'वत्स ! कृशोऽसि' यह पूछने के उपरान्त फिर उद्दामदाहज्वरदग्धोऽपि दह्ये खल्वहमधिकतरमनेनायुष्मदाधिना । निशितमिव शस्त्रं तक्ष्णोति मां त्वदीयतनिमा', यह कहना, प्रभाकरवर्धन के उस वात्सल्यप्रेम एवं पुत्रानुराग के बन्धन का द्योतक है जिसका अपलाप मृत्युशय्या पर पड़ा हुआ भी अकिञ्चन मानव नहीं कर सकता । इसी प्रकार कादम्बरीमें चन्द्रापीड़

की उत्पत्ति पर उनके माता पिता के कोमल भावों का बड़ा ही सजीव चित्रण हुआ है। पुण्डरीक के प्रथम दर्शन से महाश्वेता के तथा चन्द्रापीड के प्रथम मिलन के बाद कादम्बरी के प्रेमी हृदय में जितनी प्रकार की भावलहरियाँ तरङ्गित हुईं, उनका बड़ा ही स्निग्ध तथा हृदयावर्जक चित्रण कवि ने प्रस्तुत किया है। पुण्डरीक से दूसरी बार मिलने के कारण तरलिका से महाश्वेता का 'तरलिके! कथय कथं स त्वया दृष्टः, किमभिहितासि तेन......' यह पूछना उसके विरहविधुर एवं प्रेमातुर हृदय का अभिव्यञ्जक है। इसी प्रकार महाश्वेता तथा कादम्बरी के विलाप आदि के अवसर पर भी कवि ने अपनी अलौकिक भावपर्यवेक्षण शक्ति का परिचय दिया है।

बाण के दोष—ऊपर के विवेचन से बाण की शैली की विशेषता का आभास मिलता है। उन्होंने अपनी शैली को शक्तिशाली तथा प्रभावपूर्ण बनाने के लिये भरसक प्रयास किया है और इसमें संदेह नहीं कि बाण को अपने उद्देश्य पूर्ण सफलता भी मिली है। पर उक्त गुणों एवं विशेषताओं के बावजूद भी बाण की शैली को सर्वथा निर्दोष नहीं कहा जा सकता। कहीं-कहीं उनके वर्णन बहुत लम्बे हो गये हैं और उनमें अनावश्यक बातों के चित्रण पर अधिक बल दिया गया है लम्बे वर्णनों के स्थलों में उन्होंने लम्बे-लम्बे समासों एवं क्लिष्ट वाक्यावली का प्रयोग किया है। पौराणिक सन्दर्भों की भी यत्र-तत्र भरमार है। महाश्वेता के वर्णन में कवि ने केवल महाश्वेता की विशेषता बतलाने के लिये ८७ विशेषणों का प्रयोग किया है इस वर्णन-विस्तार के कारण कथाप्रवाह कुछ क्षण के लिये अवरुद्ध हो जाता है तथा समासों एवं पौराणिक सन्दर्भों से एक प्रकार की दुरूहता सी आ जाती है। सन्तुलन की दृष्टि से ऐसे वर्णन अनपेक्षित हैं। इसी प्रकार प्राकृतिक वर्णन के स्थलों से बाण ने पौराणिक तथा शास्त्रीय ज्ञान को भी प्रकट किया है, जिससे ये वर्णन जितना उनके पाण्डित्य का बोध कराते हैं उतना प्राकृतिक दृश्यों के वास्तविक बिम्ब का नहीं। इसके साथ ही कथा के भीतर कथा की योजना से कथावस्तु को स्मरण रखने में पाठकों को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। किस अवसर पर 'कौन कह रहा है और कौन सुन रहा है' इस बात को ठीक ढंग से समझ पाने में पाठक को सदा अपनी स्मृति की शरण में जाना पड़ता है। कादम्बरी की नायिका कादम्बरी कथा के मध्य में आती है जो अनपेक्षित इन सब कारणों से अनेक पश्चिमी विद्वानों ने बाण के ऊपर अनावश्यक विस्तार, दुर्बोधता आदि का आरोप किया है। वेबर ने तो बाण के गद्य की उपमा एक ऐसे जङ्गल से दी है जिसमें लंबे-लंबे वाक्यों के भयानक जन्तु विराजते हैं। इसके ठीक विपरीत अनेक भारतीय आलोचकों ने बाण की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। इस प्रसङ्ग में हम केवल इतना ही कहना चाहते हैं कि

बाणभट्ट के बारे में उक्त आरोप पूर्णतः न सही, अंशतः तो सत्य ही हैं, पर बाणभट्ट में कल्पनाशक्ति, शब्दसम्पत्ति, वर्णनशक्ति, अलङ्कारों के प्रयोग की क्षमता, शास्त्रीय ज्ञान आदि इतनी प्रचुर मात्रा में हैं कि उक्त दोष स्वतः छिप जाते हैं। समास आदि के स्थलों में पश्चिमी आलोचकों के द्वारा लगाये गये दोष एकदम यथार्थ नहीं हैं। बाण में गुणों की इतनी प्रचुरता है कि उन गुणों में उनके स्वल्प दोषों का कहीं पता ही नहीं चलता। 'एको हि दोषो गुणसन्निपाते......' के अनुसार वे (दोष) अपना अस्तित्व ही खो देते हैं। कोई भी लेखक या कवि अपने समय में प्रचलित रूढ़ियों एवं आदर्शों से प्रभावित हुये बिना नहीं रह सकता। उस समय गद्य में समास-बहुलता को गुण माना जाता था। इसी प्रकार पौराणिक संकेतों का होना भी अत्यन्त अस्वाभाविक नहीं है। वस्तुतः दोष किसमें नहीं होता! जब स्वयं विधाता की सृष्टि ही दोषमयी तब मानव के विषय में कहना ही क्या? इतने पर भी यदि किसी को बाण में सर्वथा दोष ही दिखाई देता हो तो उसकी दोषमयी दृष्टि पर आश्चर्य प्रकट करने के सिवा दूसरा किया ही क्या जा सकता है।

बाण तथा सुबन्धु—दोनों गद्यकाव्य के उत्कृष्ट कवि हैं, पर एक ही क्षेत्र में रचना करने के बावजूद भी दोनों की शैली में महान् अन्तर है। साथ ही दोनों की काव्य प्रतिभा को भी हम समानस्तर पर नहीं रख सकते। सुबन्धु की गद्य-शैली समास-प्रधान गौडी शैली का उदाहरण है, जिसमें अनुप्रास, अतिशयोक्ति आदि अलङ्कारों की बहुलता है। इसके विपरीत बाणभट्ट की शैली पाञ्चाली है। बाणभट्ट ने अपनी शैली को अलङ्कारों से सजाने का प्रयास किया है पर उन्होंने काव्यसौष्ठव, कथावस्तु, रसमयता एवं चरित्रचित्रण का भी लक्ष्य अपने सामने रखा है, परन्तु सुबन्धु चित्रकाव्य लिखने के ही चक्कर में रह जाते हैं श्लेष को दोनों ने अपनाया है, पर दोनों के श्लेष-प्रयोग में अन्तर है। बाण का श्लेषप्रयोग औचित्य की सीमा का उल्लघंन नहीं करता, पर सुबन्धु का श्लेष के प्रति महान् आग्रह है। वे श्लेष के आगे कथावस्तु, रससिद्धि, पात्रचित्रण आदि सबको भूल जाते हैं। उनका तो आग्रह-'प्रत्यक्षर श्लेष ' का है। इसी आग्रह के कारण उनके श्लेष-प्रयोग में गति नहीं है, प्रत्युत दुरूहता है। बाण में जिस ढंग की कल्पनाशक्ति एवं वर्णन-प्रतिभा है वैसी सुबन्धु में नहीं है। सुबन्धु की शैली में बाण जैसा सौष्ठव, प्रसाद एवं माधुर्य नहीं है, आडम्बर, कृत्रिमता एवं गति-शैथिल्य ही अधिक है।

बाण तथा दण्डी—कवि दण्डी की आलोचकों ने प्रशंसा की है। दण्डी के के पदलालित्य की तो लोग प्रशंसा करते नहीं थकते—'दण्डिनः पदलालित्यम्'। इनकी गद्य-शैली मनोरम वैदर्भी है। बाण की शैली में जो रसमयता, भावपूर्णता, समासबहुलता एवं ओजस्विता है वह दण्डी की शैली में नहीं है, फिर भी दण्डी का पदलालित्य

अवश्यमेव सराहनीय है। व्याकरण के प्रयोग में बाण सिद्ध हस्त हैं पर दण्डी नहीं। बाण ने कादम्बरी में एक मर्यादित एवं गम्भीर प्रेम का चित्रण किया है परन्तु दण्डी का प्रेम चित्रण आदर्श, गम्भीरता एवं नैतिकता से परे है, उसमें यौवनकालिक उद्दाम प्रेम का ही चित्रण हुआ है।

संस्कृत साहित्य में बाण का स्थान—

जहाँ तक संस्कृत-साहित्य में बाण-भट्ट के स्थान का प्रश्न है, उसके विषय में यह तो निःसङ्कोच कहा जा सकता है कि बाणभट्ट कुछ इने-गिने महाकवियों में से एक हैं। महाकवि कालिदास जिस प्रकार पद्यकाव्य एवं नाटक के क्षेत्र में सर्वोपरि स्थान रखते हैं, उसी प्रकार गद्य-काव्य के क्षेत्र में बाणभट्ट निस्सन्देह सर्वोत्कृष्ट स्थान के भागी हैं। गद्यकाव्य के अन्य दो उत्कृष्ट कवि (सुबन्धु तथा दण्डी) बाण की समकक्षता में नहीं आ सकते। बाणभट्ट के पश्चात् भी गद्यकाव्य लिखे गये, पर उनमें प्रायशः बाण का ही अनुकरण हुआ। अतः परवर्ती गद्यकाव्य के लेखकों से बाण की तुलना करना हास्यास्पद ही है। बाणभट्ट में हृदयपक्ष एवं कलापक्ष दोनों अपनी चरम सीमा को पहुँचे हैं। इन दोनों अनुपम गुणों के साथ ही उनमें सांसारिक अनुभव एवं शास्त्रीय पाण्डित्य का अपूर्व समन्वय है। चाहे कल्पना का क्षेत्र हो अथवा वस्तु वर्णन का, चाहे प्रकृति वर्णन हो अथवा मानव हृदय के सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति, उन्नत चरित्रों की सृष्टि हो अथवा आदर्श प्रेम की स्थापना, सर्वत्र बाणभट्ट की अबाध गति है। 'शब्दार्थौ काव्यम्' कहा गया है। बाणभट्ट में दोनों की अतुल सम्पत्ति है। वे 'अपारे काव्यसंसारे कविरेकः प्रजापतिः' इस कथन को सिद्ध करते हैं। उनका शब्दभंडार इतना है। कि सर्वत्र जैसा अर्थ वैसा ही शब्द मिलेगा। यदि उनकी सर्वातिशायिनी एवं सर्वव्यापिनी प्रतिभा को देखकर किसी ने बाणोच्छिष्टं जगत् सर्वम्' कहा तो अनुचित ही क्या? गद्य-काव्य में ही नहीं, पूरे संस्कृत साहित्य में कालिदास के बाद बहुश्रुत एवं सर्वतोमुखी प्रतिभा वाला यदि कोई महाकवि हुआ तो वह बाणभट्ट ही। न केवल संस्कृत-साहित्य में अपितु विश्व-साहित्य में बाणभट्ट निस्सन्देह उच्च स्थान पाने के योग्य हैं।

द्वितीय खण्ड

(१) महाश्वेता-वृत्तान्त का कथासार

उज्जयिनी नरेश तारापीड का पुत्र चन्द्रापीड एक बार अपने साथी वैशम्पायन के साथ दिग्विजय के लिए निकला। वह कई वर्षों तक घूमता रहा। एक दिन मृगया के प्रसङ्ग में एक किन्नर जोड़े का पीछा करता हुआ वह अच्छोद सरोवर पर जा पहुँचा। वहाँ उसे दूर से आती हुई सङ्गीतध्वनि सुनाई दी। ध्वनि कहाँ से आ रही है, इस बात की खोज में वह एक शिवमन्दिर में पहुँचा, जहाँ भगवान् शङ्कर की चतुर्मुखी

मूर्ति स्थापित थी। वहाँ उसने, मूर्ति की दक्षिण दिशा में उत्तर की ओर मुख करके बैठी हुई, महाश्वेता नाम की गन्धर्व कन्या को देखा, जो तपस्विनी के वेश में, पाशुपत व्रत में तल्लीन थी। चन्द्रापीड ने महाश्वेता से अपना वृत्तान्त सुनाने की प्रार्थना की। महाश्वेता ने पहले तो आनाकानी की, पर राजकुमार के आग्रह पर अपना वृत्तान्त बताना प्रारम्भ किया—'मैं एक गन्धर्व कन्या हूँ। मेरी माता का नाम गौरी तथा पिता का नाम हंस है। एक बार वसन्त के दिनों में मैं अपनी माता के साथ अच्छोद सरोवर में स्नान करने के लिए आई। वहाँ घूमती हुई मैंने एक ऐसी मधुर सुगन्ध का अनुभव किया जो अलौकिक ही हो सकती थी, क्योंकि मर्त्य-लोक के पुष्पों में वैसी गन्ध नहीं होती। पता लगाने के लिये मैंने उस सुगन्ध का अनुसरण किया। थोड़ी दूर पर एक युवक तपस्वी का दर्शन हुआ, जो कामदेव की भाँति सुन्दर था। उसके साथ उसका एक मित्र भी था। उसने (पुण्डरीक नामक तपस्वी ने) अपने कान में एक सुगन्धपूर्ण कुसुम-मञ्जरी धारण कर रखी थी। उसको देखते ही मेरे हृदय में उसके प्रति असीम अनुराग जाग्रत हो उठा। मैंने समीप जाकर उसके मित्र (कपिञ्जल) से उसका परिचय पूछा। साथ ही कुसुममञ्जरी के बारे में भी प्रश्न किया। कपिञ्जल ने बताया कि वह श्वेतकेतु ऋषि का पुत्र तपस्वी पुण्डरीक है और उसको यह मञ्जरी नन्दन-वन की देवी ने प्रदान की है। जिस समय मैं कपिञ्जल से बात कर रही थी, उसी समय पुण्डरीक ने मेरे पास आकर अपनी कुसुम-मञ्जरी मेरे कान में पहना दी। मेरे कपोलों के स्पर्शमात्र से ही उसके शरीर में रोमांच हो आया तथा उसका शरीर कांपने लगा। उसके हाथ से रुद्राक्ष की माला गिर पड़ी, फिर भी वह जान न सका। मैंने गिरी हुई अक्षमाला को उठाकर अपने गले में आदर के साथ पहन लिया। इसी बीच छत्रग्राहिणी ने स्नान के लिये बुलाया और मैं स्नान के लिए चल पड़ी। कपिञ्जल ने अपने मित्र को कामाभिभूत देखकर (उसको) बहुत भला बुरा कहा। पुण्डरीक ने मुझसे अपनी अक्षमाला मांगी पर मैंने उसके हाथ में माला के बदले अपना हार (एकावली) रख दिया। इसके बाद में किसी तरह अपने घर आई। मैं पुण्डरीक के विरह में विकल थी, इसलिये उसी का चिन्तन करती हुई कुमारियों के अन्तःपुर के प्रासाद में बैठी रही। इसी बीच तरलिका नामक दासी ने आकर मुझे पुण्डरीक का वल्कल पर लिखा हुआ एक प्रेम पत्र दिया। पत्र को देखते ही मेरे हृदय में काम की वेदना और तीव्र हो उठी। मैंने किसी तरह पूरा दिन बिताया, इसी बीच कपिंजल मेरे पास आया और उसने मेरे वियोग में विह्वल पुण्डरीक की दशा का वर्णन किया। उसी समय मेरी माता के आने का समाचार सुनकर वह अपने मित्र की प्राण रक्षा के लिये प्रार्थना करके चला गया। मेरे मन में माता-पिता की मर्यादा का ध्यान, कन्या के लिये उचित लज्जा का भाव तथा पुण्डरीक के प्रति प्रगाढ़ एवं अटूट

अनुराग, इनका परस्पर संघर्ष होने लगा। अन्त में प्रेम ही विजयी हुआ। फलस्वरूप में तरलिका के साथ अपने प्रियतम से मिलने के लिये चल पड़ी। कुछ दूर जाने पर मुझे कपिंजल के रोने की आवाज सुनाई दी। मैं डर गई और ज्योंही समीप पहुँची, वहाँ दिवंगत पुण्डरीक के शव का आलिङ्गन करते हुये कपिञ्जल को देखा। मेरे ऊपर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा। अभागिनी मैं नानाविध विलाप करती हुई रोने लगी।" ऐसा कहकर महाश्वेता अचेत हो गई। किसी प्रकार होश में आने पर फिर उसने कहा—'मैंने मरने के लिये तरलिका को चिता बनाने का आदेश दिया। इसी बीच चन्द्रमण्डल से एक दिव्याकृति वाला पुरुष उतरकर पुण्डरीक के मृत शरीर को उठा ले गया। कपिञ्जल भी उसका पीछा करता हुआ चला गया। तरलिका ने मुझे बताया कि जाते हुये दिव्य पुरुष ने मुझे प्रियतम-मिलन का आश्वासन दिया है, उसी आश्वासन के आधार पर मैंने रात बिताने के बाद, प्रातःस्नान आदि करके, भगवान् शङ्कर का आश्रय ग्रहण किया। तभी से मैं प्रतिदिन शिव की आराधना करती हुई (प्रियतम मिलन की आशा में) इसी गुफा में तरलिका के साथ रह रही हूँ।' यह कहती हुई महाश्वेता अपना मुख ढँक कर रोने लगी। संक्षेप में यही महाश्वेता वृत्तान्त का सार है।

(२) महाश्वेता-वृत्तान्त का महत्त्व

महाश्वेता वृत्तान्त कादम्बरी के उन स्थलों में से एक है, जिनके कारण कादम्बरी अपनी रसमयता एवं भाव-प्रवणता से रसिकों को हठात् रसविभोर बना देती है। प्रारम्भ में महाश्वेता का लम्बा वर्णन है, जिसमें महाकवि की कल्पना शक्ति, सूक्ष्म निरीक्षण-दृष्टि, वर्णन की भव्यता एवं नये-नये शब्दों की राशि देखकर पाठक आश्चर्य-चकित हो जाता है। महाश्वेता के रूप वर्णन में कवि को आकाश से लेकर पाताल तक के रूप स्मरण हो जाते हैं, फलस्वरूप कवि अगणित उपमानों का समूह लाकर खड़ा कर देता है। इसी तरह पुण्डरीक का वर्णन भी अतीव चारु एवं आह्लादकर है।

महाश्वेता-वृत्तान्त की सबसे बड़ी विशेषता है उसका मनोवैज्ञानिक चित्रण। पुण्डरीक का प्रथम दर्शन होने पर कोमल हृदया कुमारी महाश्वेता के अन्तराल में उठने वाली उत्कण्ठापूर्ण भावनायें तथा सात्त्विकभाव जिस अलौकिक ढङ्ग से वर्णित हैं देखते ही बनता है। एक कुमारी के कोमल हृदय पर अनुराग का अनोखा प्रभाव किस प्रकार पड़ता है, उसका वर्णन जिस ढङ्ग से कवि ने किया है, वह एक ओर तो उसकी काव्यप्रतिभा का द्योतक है ही, साथ ही उसकी अद्भुत मनोवैज्ञानिक सूझ का भी परिचायक है। महाश्वेता के अन्तःकरण में उद्भूत मूकभावों को मानो कवि ने अपनी कलाचातुरी से वाणी प्रदान कर दी है। रागोद्बोध होने के बाद

महाश्वेता के कोमल हृदय पर अवसर पाकर कामदेव का प्रहार होता है और वह बेसुध हो तड़पने लगती है। कुमारी होने के नाते कुल परम्परागत लज्जा, माता-पिता की मर्यादा एवं प्रियतम के प्रति प्रगाढ़ अनुराग, इन सबका सङ्घर्ष उसके विकल मन में होता है। इन सबका चित्रण बाण ने अपूर्व ढङ्ग से किया है। मानव-मन के सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावों के चित्रण में बाण पटु हैं, और इसका दर्शन हमें महाश्वेता के प्राथमिक अनुराग में होता है। जिस समय महाश्वेता के हृदय में पुण्डरीक के प्रति प्रेमभाव जागृत हुआ, ठीक उसी समय पुण्डरीक के हृदय में भी उठने वाली कामवासना का चित्रण बड़ा सजीव है।

महाश्वेता-वृत्तान्त का दूसरा स्थल विप्रलम्भ शृङ्गार का है जो पुण्डरीक के दिवंगत होने पर 'कपिञ्जल तथा महाश्वेता के विलाप में देखा जा सकता है। प्रियतम के वियोग में बिलखती महाश्वेता किसको अधीर नहीं बना देती? महाश्वेता के विलाप में न केवल प्रणयपरतन्त्रा, प्रियतमवियोगिनी महाश्वेता का ही करुण क्रन्दन है, प्रत्युत उसमें वियोग विकल समस्त चेतनप्राणी के करुण-क्रन्दन की प्रतिध्वनि है। पर यहाँ पर स्मरणीय है कि यद्यपि महाश्वेता-वृत्तान्त में प्रेम का मादकतामय चित्र ही उपस्थित हुआ है पर कपिञ्जल द्वारा पुण्डरीक को दी जाने वाली भर्त्सना इस बात के लिए प्रमाण है कि बाण सर्वथा उच्छृङ्खल, वासनामय तथा उद्दाम प्रेम के पक्षपाती नहीं हैं।

३ महाश्वेता-वृत्तान्त के पात्र

पुण्डरीक—पुण्डरीक एक तरह से कादम्बरी का उपनायक है। वह महर्षि श्वेतकेतु का पुत्र तथा महाश्वेता का आराध्य प्रेमी है। अपने पूर्व जन्मों में वह उज्जयिनी के मंत्री शुकनास का पुत्र वैशम्पायन तथा शापवश वैशम्पायन शुक के रूप में आ चुका है। महाश्वेता की भांति उसका भी नाम अन्वर्थक है। पुण्डरीक से उत्पत्ति होने के कारण ही उसका नाम पुण्डरीक पड़ा। पुण्डरीक दिव्ययोनि का प्राणी है। उसका रूप-लावण्य एवं व्यक्तित्व इतना प्रभावशाली है कि उसके दर्शन-मात्र से महाश्वेता जैसी सर्वगुणसम्पन्ना एवं पावनहृदया बाला भी हठात् आकृष्ट हो जाती है। उसके स्वरूप का वर्णन करती हुई महाश्वेता स्वयं कहती है—'अलङ्कार-मिव ब्रह्मचर्यस्य, यौवनमिव धर्मस्य, विलासमिव सरस्वत्याः स्वयंवर-पतिमिव सर्वविद्यानाम्, संकेतस्थानमिवसर्व श्रुतीनाम्, अतिमनोहरम्, ···मुनिकुमारकमपश्यम्,।

पुण्डरीक एक तपस्वी युवक है। तपस्या के कारण उसका शरीर अतीव क्षीण हो गया है, फिर भी तपश्चर्याजनित शारीरिक-दौर्बल्य उसके रूप-लावण्य का अपहरण करने में असमर्थ है—'रूपापहारिणि क्लेशबहुले तपसि वर्तमानस्येदं लावण्यम्'।

सचमुच उसके रूप का निर्माण करने में ब्रह्मा तभी समर्थ हो सके, जब उन्होंने अखिल जगत् के नेत्रों को आह्लादित करने वाले शशिबिम्ब एवं लक्ष्मी के विलास-स्थान कमल का निर्माण कर पूर्वाभ्यास कर लिया—'मन्येचसकलजगन्नयनानन्दकरं शशिबिम्बं विरचयता कौशलाभ्यास एव कृतः'। वह तेज में सूर्य को भी पराजित करने वाला (आत्मतेजसा विजित्य सवितारम्), आन्तरिक ज्ञान से मोहान्धकार का नाश करने वाला (अन्तर्ज्ञाननिराकृतस्य मोहान्धकारस्य) तथा रूप-सम्पत्ति में कामदेव को भी तिरस्कृत करने वाला (तदाकारातिरिक्तरूपराशिः...मकरकेतुरुत्पादितः) है। यद्यपि महाश्वेता उसके प्रति अत्यन्त आकृष्ट हो जाती है, फिर भी वह उसकी तपश्चर्या और तेजस्विता से भयभीत हो जाती है—अदूरकोपा हि मुनिजनप्रकृतिः।'

तपस्वी होते हुये भी वह महाश्वेता के दर्शन-मात्र से कामाभिभूत होकर उसी प्रकार अधीर हो उठता है जिस प्रकार पवन के द्वारा प्रदीप। उसकी अधीरता सीमा का भी उल्लङ्घन कर जाती है और कामजनित कम्पन के कारण हाथ से गिरी हुई अक्षमाला को भी वह नहीं जान पाता है। एक तपस्वी युवक का इस प्रकार कामाभिभूत होना कथमपि उचित नहीं। साथ ही एक अपरिचित लड़की को अपने हाथ से कुसुम मञ्जरी को पहनाना भी अमर्यादित है। पुण्डरीक के चरित्र की यह दुर्बलता है। कपिञ्जल के द्वारा की गई 'सखे पुण्डरीक ? नैतदनुरूपं भवतः। क्षुद्रजनक्षुण्ण एव मार्गः' इत्यादि भर्त्सना इस बात का प्रमाण है।

यद्यपि महाश्वेता की आकृति के दर्शन-मात्र से ही, उसके प्रति, पुण्डरीक के हृदय में अनुराग का उद्भव होता है परन्तु उसके प्रेम में बाह्यपक्ष का ही प्राबल्य नहीं है, उसमें गाम्भीर्य है, सचाई है, निष्कपटता है। यही कारण है कि तरलिका के हाथों वह प्रेम-पत्र भेजकर, 'मे मानसजन्मास्त्वया दूरं नीतः' इस कथन द्वारा अपनी वास्तविक स्थिति का उल्लेख करता हुआ प्रणय-निवेदन करता है। अपने मानसिक भावों के प्रति उसकी आस्था इस ऊँचाई तक पहुँची है कि अपने मित्र कपिञ्जल के 'सखे पुण्डरीक ! कथय किमिदम्' ऐसा पूछने पर अपने हृद्‌गत भावों को वह अतीव सरलता एवं स्वाभाविकता से प्रकट करता है—'सखे कपिञ्जल ! विदितवृत्तान्तोऽपि किं मां पृच्छसि ?'। कपिञ्जल द्वारा प्रश्नों की झड़ी लगा देने पर वह अपनी परवशता एवं मानसिक स्थिति को स्पष्ट शब्दों में बताता है—'सखे ! किं बहुनोक्तेन। सर्वथास्वस्थोऽसि...सुखमुपदिश्यते परस्य...ज्वलतीव शरीरम्। अपने मित्र के प्रति पुण्डरीक की यह सचाई वस्तुतः श्लाघ्य है। कपिञ्जल के द्वारा अथक प्रयास करने पर भी जब महाश्वेता का मिलन नहीं हो पाता है तब वह (अपनी) प्रियतमा के असह्य वियोग के कारण अपने पार्थिव शरीर से बिछुड़ते प्राणों को रोक पाता। यह पुण्डरीक के अविचल प्रेम का द्योतक है।

इस तरह कादम्बरी में पुण्डरीक का चरित्र एक ओर तो तेजस्विता, दिव्यता, अलौकिकता तथा प्रभावशालिता से समन्वित होकर चित्रित है और दूसरी ओर आदर्श प्रेम, निष्कपट मैत्री एवं सहृदयता से ओत-प्रोत होकर अङ्कित है।

महाश्वेता—महाश्वेता के पिता का नाम हंस तथा माता का नाम गौरी है। हंस गन्धर्वकुल का अधिपति है। उन दोनों की गोद में उत्पन्न होने के कारण महाश्वेता की दिव्य-रूपता स्वतः सिद्ध है। महाश्वेता का नाम 'यथा नाम तथा गुणः' इस उक्ति को चरितार्थ करता है। महाश्वेता स्वयं कहती है—'अवाप्ते च दशमे अहनि कृतयथोचितसमाचारो महाश्वेतेति यथार्थमेव नाम कृतवान्।' उसके धवल गुण का वर्णन करने के लिये कवि त्रैलोक्य के समस्त सम्भावित उपमानों को निबद्ध करता है—'श्वेतद्वीपलक्ष्मीमिव···', 'शुक्लपक्षपरम्परामिव पुञ्जीकृताम्', 'सर्वहंसैरिव धवलतया कृतसंविभागम्', 'आविर्भूतां ज्योत्स्नामिव···', 'चन्द्रमण्डलादिवोत्कीर्णम्', और अन्त में थककर उसको 'इयत्तामिव धवलिम्नः' (धवलिमा की चरम सीमा) घोषित करता है। उसका व्यक्तित्व इतना पावन है कि उसको देखकर ऐसा लगता है मानो मुनिजन की ध्यान-सम्पत्ति देह धारण किये हो—'देहवतीमिव मुनिजनध्यानसम्पदम्', गौरी की मनःशुद्धि जैसे शरीर धारिणी हो—गौरींमनःशुद्धिमिव कृतदेहपरिग्रहाम्', धर्म के हृदय से जैसे निकली हो 'धर्महृदयादिव निर्गताम्'।

महाश्वेता के व्यक्तित्व की यह विशेषता है कि उसकी आकृति के दर्शनमात्र से ही दर्शक उसकी दिव्यता के विषय में निःसंदिग्ध हो जाता है। तभी तो उसको देखते ही चन्द्रापीड कहता है—'नहि मे संशीतिरस्याः दिव्यतां प्रति। आकृतिरेवानुमापयति अमानुषताम्। अतिमहानयमवकाशः आश्चर्याणाम्।'

महाश्वेता एक कुलीन कन्या है अतः वह उच्चकुल के अनुरूप शिष्टाचार को भी जानती है! अतिथि होने के नाते अपरिचित होने पर भी चन्द्रापीड को वह स्वागतमतिथये···' कहकर अपनी कुटिया में ले जाती है और उसका यथाविधि स्वागत करती है। चन्द्रापीड जब उसकी तपश्चर्या के विषय में पूछता है तो उसे असीम कष्ट होता है फिर भी वह अपने सम्मानित अतिथि को निराश नहीं करना चाहती और अपना वृत्तान्त कह सुनाती है।

वह इतनी भावुक है कि पुण्डरीक के रूप-लावण्य पर मुग्ध होकर सर्वथा परवश हो जाती है। वह अपनी कुमारी होने की स्थिति एवं कुल-मर्यादा को अच्छी प्रकार समझती है पर अपनी इन्द्रियों को नियंत्रित करने में सर्वथा असमर्थ है—'हा! हा! किमिदमसांप्रतमतिह्रेपणमकुलकुमारीजनोचितमिदं मया प्रस्तुम्'। इस दृष्टि से महाश्वेता का मादकतामय चित्र ही उपस्थित हुआ है। मदन से आक्रान्त होकर

वह पुण्डरीक के द्वारा कुसुम-मञ्जरी के पहनाने के अनौचित्य को भी नहीं समझ पाती। अपनी माता के साथ अच्छोद सरोवर में स्नान करने आती है और स्नान के साथ ही अपने इष्ट-देव को अपना हृदय-समर्पित कर लौटती है। पुण्डरीक के प्रेम-पत्र को पाकर उसका मदन-विकार और भी बढ़ जाता है। अपने प्रियतम के विषय में अत्यन्त उत्सुकता के साथ तरलिका से बातें करती हुई वह अपने क्षणों को बिताती है। दासी होने पर भी तरलिका की अभिन्न-हृदया सखी की भांति मानती है। कपिञ्जल से वह कहती है—भगवन्! अव्यतिरिक्तेयमच्छरीरात्।' यह महाश्वेता की महत्ता है।

पुण्डरीक के प्रति उसका प्रेम अविचल है पर साथ ही वह सापेक्ष है। वह पुण्डरीक को भी अपनी ओर आकृष्ट करना चाहती है। एक शान्तात्मा एवं सांसारिक विषय-वासना से सर्वथा रहित मुनि के साथ संबंध कराने के कारण वह कामदेव की भर्त्सना करती है, परन्तु जब वह कपिञ्जल एवं तरलिका के द्वारा अपने प्रति पुण्डरीक की आसक्ति को भी जान लेती है तब कामदेव की प्रशंसा करती हुई अपने को सौभाग्यशालिनी मानती है—'दिष्ट्या तावदयमनङ्गो मामिव तमप्यनुबध्नाति'।

कुमारी होने के नाते उसके मन में अनेक सङ्कल्प-विकल्प, ऊहापोह उठते हैं पर वह अपने कुल, शील, माता-पिता, मर्यादा, आत्महत्या–सभी की अवहेलना कर पुण्डरीक से मिलने के लिये प्रस्थान करती है। उसकी रहन-सहन, वेष-भूषा आदि सभी उसके वियोग-विधुर हृदय की व्यथा को सूचित करते हैं। उसका हृदय इतना पावन एवं स्वच्छ है कि उसमें प्रियतम से संबंधित सारी भावी मङ्गल एवं अमङ्गल घटनायें प्रतिबिम्बित हो जाती हैं। प्रियतम से मिलने के लिये प्रस्थान के समय, दाहिने नयन के स्फुरण से, जिस अमङ्गल की आशङ्का उसके हृदय में स्फुरित हुई उसकी परिणति प्रियतममरण-रूप वज्राघात के रूप में हुई। अपने आराध्य प्रियतम को मरणावस्था में पाकर उसकी मूक वेदना विलाप के रूपमें साकार हो उठती है। प्रियतम के वियोग में उसको न तो माता एवं पिता से प्रयोजन है—किमम्बया किं वा तातेन?) और न तो बन्धुओं और परिजनों से ही—(किं बन्धुभिः, किं परिजनेन?) वह भी चिता पर अपने पार्थिव शरीर को सदा के लिये भस्मीभूत कर देना चाहती है, पर आकाशवाणी द्वारा 'वत्से! महाश्वेते! न परित्याज्यास्त्वया प्राणाः। पुनरपि तवानेन सह भविष्यति समागमः', इस प्रकार पुनर्मिलन की आशा बँधाये जाने पर, प्रियतम मिलन की प्रतीक्षा में, भगवान् भूतनाथ की परिचर्या करती हुई, जीवन के क्षणों को बिताती है। इससे बढ़कर उसके प्रेम की सचाई का और क्या प्रमाण हो सकता है?

महाश्वेता यद्यपि उद्दाम प्रेम से उन्मत्त प्रेमिका के रूप में ही चित्रित है तथापि उसके प्रेम की अविचलता एवं गम्भीरता तथा हृदय की निष्कपटता उसे प्रणय की उच्च-भूमि में ला बिठाती है। वह हृदय की अविचल भावना से ओत-प्रोत, तपस्या की ज्वाला से तप्त होकर निष्कलुष एवं पावन तथा जन्मजन्मान्तर के सौहार्द-भाव से संवलित प्रेम की उस दिव्यता को प्राप्त करती है जिसके कारण वह कादम्बरी के पाठकों के आकर्षण का हठात् केन्द्रबिंदु बन जाती है।

कपिञ्जल—वह पुण्डरीक का सखा एवं एक मुनिकुमार है। उसकी अवस्था पुण्डरीक जैसी ही है। उसमें मुनियों की स्वाभाविक सरलता है। महाश्वेता जब उससे पुण्डरीक के विषय में पूछती है तो वह हँसता हुआ कहता है—'बाले! किमनेन पृष्टेन प्रयोजनम्। अथ कौतुकमावेदयामि। श्रूयताम्!' वह पुण्डरीक का अभिन्न-हृदय मित्र है इसलिये 'पापान्निवारयति योजयते हिताय' मित्र के इस लक्षणानुसार (वह) महाश्वेता के प्रति पुण्डरीक के धैर्य-स्खलन को अनुचित समझकर कुपित हो जाता है और कहता है—'सखे पुण्डरीक! नैतदनुरूपं भवतः...।'

पुण्डरीक के प्रति उसका प्रेम-भाव इस सीमा पर पहुँचा है कि वह जब इस बात को जान लेता है कि मेरा मित्र पुण्डरीक महाश्वेता के प्रति सर्वतोभावेन आकृष्ट हो गया है और उसको किसी प्रकार विचलित नहीं किया जा सकता, तो वह तपस्वी होते हुये भी अपने मित्र के प्राण-रक्षार्थ महाश्वेता के पास जाने में भी नहीं हिचकता। वह इस बात को मानता है कि अपने प्राणों का परित्याग करके भी मित्र के प्राणों की रक्षा करनी चाहिये (प्राणपरित्यागेनापि रक्षणीयाः सुहृदसवः)।

पुण्डरीक के मरने पर, उसके लिये, सारा संसार शून्य हो जाता है। वह अशरण होकर अपने जीवन को निरर्थक समझता है—'कथय त्वदृते क्व गच्छामि।' वस्तुतः वह पुण्डरीक के जीवन-मरण का साथी है। इस प्रकार कपिञ्जल का एक आदर्श सच्चे मित्र के रूप में चित्रित है।

तरलिका—तरलिका महाश्वेता की प्रिय दासी है। उसे ही छत्रग्राहिणी एवं ताम्बूलकरङ्कवाहिनी भी कहा गया है। महाश्वेता उसको अपनी अभिन्न-हृदया सखी की भाँति मानती है और अपने हृदय के सारे भावों को उससे निःसङ्कोच प्रकट करती है। वह सदैव महाश्वेता के साथ छाया की भांति रहती है। अपनी स्वामिनी की स्वार्थ-सिद्धि के लिये हर प्रकार से प्रस्तुत रहती है। अभिसरण के समय महाश्वेता के साथ रहकर उसके प्राणों की रक्षा करती है और प्रियतम-मिलन की आशा में तपश्चर्या करती हुई अपनी स्वामिनी के साथ तपस्विनी का जीवन बिताती है। सचमुच तरलिका एक शिष्ट, कर्त्तव्य-परायण एवं आज्ञाकारिणी आदर्श दासी के रूप में हमारे सामने आती है।

(४) महाश्वेता-वृत्तान्त के सुभाषित

१—अहो जगति जन्तूनामसमर्थितोपनतान्यापतन्ति वृत्तान्तान्तराणि।

'अहो ! संसार में प्राणियों के सामने अतर्कित रूप से उपलब्ध बहुत से दूसरे वृत्तान्त सहसा आ जाते हैं।'

२—अणुरप्युपचारपरिग्रहः प्रणयमारोपयति।

'समय का लघुअंश भी एक स्थान में रहने से परिचय की उत्पत्ति कर देता है।'

३—अहोदुर्निवारता व्यसनोपनिपातानाम्।

अहो ! विपत्तियों के आक्रमण (कितने) दुर्निवारणीय होते हैं।

४—अहोरूपातिशयनिष्पादनोपकरणकोषस्याक्षीणता विधातुः।

अहो ! ब्रह्मा के असाधारण सौन्दर्य-निर्माण के साधन-भण्डार में कमी कभी नहीं होती।

५—अदूरकोपा हि मुनिजनप्रकृतिः

मुनियों के स्वभाव में क्रोध पास ही रहता है।

६—अयत्नेनैव खलूपहासास्पदतामीश्वरो नयति जनम्।

ईश्वर बिना प्रयत्न के ही मनुष्य को उपहासास्पद बना देता है।

७—अतिक्रान्तान्यपि सङ्कीर्त्यमानानि अनुभवसमां वेदनामुपजनयन्ति सुहृज्जनस्य दुःखानि।

'क्यों कि बीते हुए भी, प्रियजनों के विश्वास वचनों से युक्त मित्रों के दुःख जब कहे जाते हैं तब वे अनुभव की भाँति ही वेदना को उत्पन्न करते हैं।'

८—आशया हि किमिव न क्रियते।

'आशा से क्या नहीं किया जाता ?

९—एवं च नामातिमूढं हृदयमङ्गनाजनस्य।

अंगनाओं का हृदय तो यों ही अत्यन्त मूढ़ होता है

१०—एवं नामायमतिदुर्विषहवेगो मकरकेतुः।

'इस कामदेव का वेग अत्यन्त दुःसह है।'

११—कालो हि गुणाश्च दुर्निवारतामारोपयन्ति मदनस्य सर्वथा।

काल (वसन्तादि) और गुण (सौन्दर्यादि) सब प्रकार से कामदेव को दुर्निवारणीय बना देते हैं।

१२—का वा सुखाशा साधुजननिन्दितेष्वेवंविधेषु प्राकृतजनबहुमतेषु विषयेषु भवतः।

'सज्जनों द्वारा निन्दित (तथा) साधारण जनों के द्वारा सम्मानित इस प्रकार के विषयों में आप को किस सुख की आशा है?'

१३—किं वा तस्य दुःसाध्यमपरम्।

'उसके लिए क्या दुष्कर है।'

१४—क्वायं हरिण इव वनवासनिरतः स्वभावमुग्धो जनः। क्व च विविधविलासरसराशिर्गन्धर्वराजपुत्री महाश्वेता।

'कहाँ वनवास में निरत, स्वभाव से मुग्ध हरिण के समान यह पुण्डरीक और कहाँ नाना-प्रकार के विलासों (विभ्रमों) की राशि-गन्धर्व-राजपुत्री महाश्वेता ?

१५—जनयति हि प्रभुप्रसादलवोऽपि प्रागल्भ्यमधीरप्रकृतेः।

'स्वामी की प्रसन्नता का कण भी अधीर स्वभाव वाले जन को धृष्टता को उत्पन्न कर देता है।'

१६—तथापि सुहृदा सुहृदसन्मार्गप्रवृत्तो यावच्छक्तितः सर्वात्मना निवारणीयः।

'एक मित्र को अपनी शक्ति भर, हर एक प्रकार से, असत् मार्ग पर जाते हुए अपने मित्र को रोकना चाहिए।

१७—दुरुपपादेष्वर्थेष्वयमवज्ञया विचरति।

'यह काम दुष्कर विषयों में भी अवहेलना पूर्वक प्रवृत्त होता है।'

१८—धैर्यधना हि साधवः।

सज्जन धैर्य के धनी होते हैं।

१९—न हि क्षुद्रनिर्घातपाताभिहता चलति वसुधा।

'पृथ्वी तुच्छ प्रहार-पात से प्रताड़ित हो कर नहीं काँपती।

२०—न हि किंचिन्न क्रियते ह्रिया

लज्जा से कुछ भी किया जा सकता है!

२१—नास्ति खल्वसाध्यं नाम भगवतो मनोभुवः।

कामदेव के लिए कुछ भी दुष्कर नहीं है।

२२—नास्ति खल्वसाध्यं नाम तपसाम्।

तपस्या के लिए कुछ भी असाध्य नहीं है।

२३—नायं केनाऽपि प्रतिकूलयितुं शक्यते।

इसे कोई रोक नहीं सकता।

२४—प्राणपरित्यागेनापि रक्षणीयाः सुहृदसवः।

प्राण का परित्याग करके भी मित्र के प्राणों की रक्षा करनी चाहिये।

२५—प्रायेण चैवंविधा दिव्याः स्वप्नेप्यविसंवादिन्यो भवन्त्याकृतयः।

प्रायः ऐसे दिव्य आकार वाले स्वप्न में भी असत्य नहीं बोलते।

२६—वलवती हि द्वन्द्वानां प्रवृत्तिः।

द्वन्द्वों की प्रवृत्ति निश्चय रूप से बलवती होती है।

२७—प्रियतमाभिसरणप्रवृत्तस्य जनस्य किमिव कृत्यं बाह्येन परिजनेन।

प्रियतम के निकट अभिसार करने के लिए प्रवृत्त जन को किसी बाहरी परिजन से क्या प्रयोजन ?

२८—मूढो हि मदनेनायास्यते।

निश्चित रूप से मूर्ख ही कामदेव द्वारा पीड़ित होता है।

२९—यस्य चेन्द्रियाणि सन्ति मनो वा विद्यते···स खलूपदेशमर्हति।

वह व्यक्ति उपदेश देने के योग्य होता है, जिसकी इन्द्रियाँ (समर्थ) हों, अथवा जिसका चित्त स्थिर हो, जो भला बुरा देखता हो, सुनता हो अथवा सुनी बात को समझता हो तथा जो शुभ एवं अशुभ की विवेचना में समर्थ हो।

३०—सततमतिगर्हितेनाकृत्येनापि रक्षणीयान्मन्यन्ते सुहृदसून् साधवः।

'सज्जन सदा अतिगर्हित एवं अकरणीय कार्य करके भी मित्र के प्राणों की रक्षा करना ठीक समझते हैं।

३१—सर्वथा न हि किंचिदस्य दुर्घटं दुष्करमनायत्तमकर्त्तव्यं वा जगति।

कामदेव के लिये इस संसार में (कोई भी वस्तु) सर्वतोभावेन दुःसाध्य, कठिन अनधीन तथा अकरणीय नहीं है।

३२—सर्वथा न कंचन स्पृशन्ति शरीरधर्माणमुपतापाः

क्लेश किस शरीरधारी का स्पर्श नहीं करते ?

३३—सर्वथा दुर्लभं यौवनमस्खलितम्।

सब प्रकार से अखण्डित यौवन (इस संसार में) दुर्लभ है।

३४—सुखमुपदिश्यते परस्य।

दूसरे को सरलता से उपदेश दिया जा सकता है।

३५—स्वल्पाप्येकदेशावस्थाने कालकला परिचयमुत्पादयति।

समय का लघुअंश भी एक स्थान में रहने से परिचय की उत्पत्ति कर देता है।

३६—स खलु धर्मबुद्ध्या विषलतावनं सिञ्चति कुवलयमालेति···मूढो विषयोपभोगेष्वनिष्टानुबन्धिषु यः सुखबुद्धिमारोपयति।

जो मूढ अनिष्टोत्पादक (परिणाम में क्लेशकर) विषयों के उपभोग में सुख की अभिलाषा करता है। (एक तरह से) वह (मूर्ख) निश्चय ही धर्म समझ कर विषलता को सींचता है। नील कमल की माला जान कर तलवार का आलिङ्गन करता है, कृष्णागुरु (काकतुण्ड) लेखा समझ कर काले सर्प का स्पर्श करता है, रत्न मान कर जलते हुए अङ्गार को छूता है, कमल कन्द समझ कर दुष्ट हाँथी के दाँत को उखाड़ता है।

तृतीयखण्ड

बाण की प्रशस्तियाँ

१—बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम् । —कस्यचित्

समस्त काव्य-जगत् बाण का उच्छिष्ट (जूठन) है ।

२—सहर्षचरितारब्धाद्भुतकादम्बरी-कथा ।
बाणस्य वाण्यनार्येव स्वच्छन्दा भ्रमति क्षितौ ॥ —राजशेखरः

हर्षचरित से आरम्भ हुई, अद्भुत कादम्बरी-कथा से विभूषित बाण की वाणी अनार्या (रमणी) की भाँति स्वच्छन्दतापूर्वक पृथ्वी पर भ्रमण करती है ।

३—जाता शिखण्डिनी प्राग्यथा शिखण्डी तथावगच्छामि ।
प्रागल्भ्यमधिकमाप्तुं वाणी बाणो बभूवेति ॥—गोवर्धनाचार्यः

मेरी समझ से प्राचीन काल में जिस प्रकार शिखण्डनी ने अत्यधिक गौरव प्राप्त करने के लिए शिखण्डी के रूप में जन्म लिया था, उसी प्रकार अत्यधिक प्रगल्भता प्राप्त करने-हेतु वाणी (सरस्वती) ने बाण के रूप में अवतार लिया ।

४—रुचिरस्वरवर्णपदा रसभाववती जगन्मनो हरति ।
सा किं तरुणी ! नहिं नहिं वाणी बाणस्य मधुरशीलस्य ॥ —धर्मदासः

रुचिर स्वर, वर्ण तथा पद वाली, रस एवं भाव से ओत-प्रोत वह संसार के लोगों के मन को हर लेती है । तो क्या वह कोई तरुणी है ? नहीं, नहीं वह माधुर्यगुण-प्रवण बाण की वाणी है ।

५—वागीपाणिपरामृष्टवीणानिक्वाणहारिणीम् ।
भावयन्ति कथं वान्ये भट्टबाणस्य भारतीम् ॥ —गङ्गादेवी

वाणी (सरस्वती) के करकमलों से निनादित वीणा की मधुर ध्वनि को भी तिरस्कृत करने वाली बाणभट्ट की वाणी का रसास्वादन दूसरे लोग (अरसिक जन) कैसे कर सकते हैं ?

६—शश्वद्बाणद्वितीयेन नमदाकारधारिणा ।
धनुषेव गुणाढ्येन निःशेषो रञ्जितो जनः ॥ —त्रिविक्रमभट्टः

महाकवि बाणभट्टसहित अगर्वित आकार वाले गुणाढ्य कवि ने सभी लोगों (रसिकों) को वैसे ही अनुरञ्जित किया, जिस प्रकार निरन्तर बाणसहित, वक्र आकार धारी एवं प्रत्यञ्चायुक्त धनुष सभी (शत्रुजनों) को रक्तरञ्जित कर देता है ।

७—युक्तं कादम्बरीं श्रुत्वा कवयो मौनमाश्रिताः।
बाणध्वनावनध्यायो भवतीति स्मृतिर्यतः॥ —कीर्तिकौमुद्याम्

कादम्बरी-कथा को सुनकर कवियों का मौन धारण उचित ही है क्योंकि बाण की ध्वनि सुनायी पड़ने पर अनध्याय का विधान है।

८—केवलोऽपि स्फुरन् बाणः करोति विमदान् कवीन्।
किं पुनः क्लृप्तसंधानपुलिन्द कृतसंन्निधिः॥ —धनपालः

स्फुरणशील बाण अकेले ही कवियों का मद दूर कर देता है। यदि शर-संधान किए हुए पुलिन्दों का साहचर्य हो तो फिर क्या कहना?

९—श्लेषे केचन शब्दगुम्फविषये केचिद्रसे चापरे-
ऽलङ्कारे कतिचित्सदर्थविषये चान्ये कथावर्णने।
आः सर्वत्र गभीरधीरकविताविन्ध्याटवीचातुरी-
सञ्चारी कविकुम्भिकुम्भभिदुरो बाणस्तु पञ्चाननः॥ —श्रीचन्द्रदेवः

कुछ कवि श्लेष-योजना में, कुछ शब्दों के गुम्फन में, कुछ रसाभिव्यञ्जना में, कुछ अलङ्कार विधान में, कुछ सदर्थाभिव्यक्ति में और कुछ कथावर्णन में दक्ष हैं। किन्तु बाण तो गम्भीर धीर कविता रूपी विन्ध्याटवी में चातुरी से सर्वत्र घूमने वाले, कवि रूपी हाथियों के गण्डस्थलों को विदीर्ण करने वाले सिंह हैं।

१०—हृदि लग्नेन बाणेन यन्मदोऽपि पदक्रमः।
भवेत्कविकुरङ्गाणां चापलं तत्र कारणम्॥ —त्रिलोचनः

जिस प्रकार मर्मस्थल में बाण से आहत होने पर भी मृग धीरे-धीरे पग बढ़ाते ही रहते हैं, उसी प्रकार हृदय में बाणभट्ट के प्रतिष्ठित होने पर भी कविगण कुछ न कुछ पद-रचना किया ही करते हैं। इसमे मृगों की भाँति कवियों की चपलता ही कारण है।

११—शब्दार्थयोः समो गुम्फः पाञ्चालीरीतिरिष्यते।
शीलाभट्टारिकायाचि बाणोक्तिषु च सा यदि॥ —राजशेखरः

अर्थ (वर्णनीय विषय) के अनुरूप शब्दों की योजना को ही पाञ्चाली रीति कहते हैं। वह पाञ्चाली रीति या तो बाण की उक्तियों में (रचनाओं में) दृष्टिगोचर होती है अथवा शीलाभट्टारिका की वाणी में।

१२—सुबन्धुर्बाणभट्टश्च कविराज इति त्रयः।
वक्रोक्तिमार्गनिपुणाश्चतुर्थो विद्यते न वा॥ —राघवपाण्डवीये

सुबन्धु, बाणभट्ट एवं कविराज ये ही तीन कवि वक्रोक्तिमार्ग में निपुण हैं। इनके अतिरिक्त चौथा कोई भी कवि ऐसा नहीं है जो उसके मार्ग में सिद्धहस्त हो।

१३—बाणः कवीनामिह चक्रवर्ती। —सोऽढलः

बाण कवियों के सम्राट हैं।

१४—कादम्बरीरसज्ञानामाहारोऽपि न रोचते। —कस्यचित्

जिस प्रकार कादम्बरी (मदिरा) का रसपान करने पर भोजन भी नहीं अच्छा लगता उसी प्रकार बाणकृत कादम्बरी का रसास्वादन करने वाले को भोजनादि की भी सुधि नहीं रहती।



महाकविबाणभट्टविरचिता

कादम्बरी

[महाश्वेता-वृत्तान्तः]

तस्य च दक्षिणां मूर्तिमाश्रित्याभिमुखीमासीनाम्, उपरचितब्रह्मासनाम्, अतिविस्तारिणा सर्वदिङ्मुखप्लावकेन प्रलयविप्लुतक्षीरपयोधिपयःपूरपाण्डुरेणातिदीर्घकालसंचितेन तपोराशिनेवविसर्पतापादपान्तरैस्त्रिस्रोतो-

---

नत्वाहं शारदां देवीं कृत्वा च गुरुवन्दनाम् ।
शारदानामिकां व्याख्यां कुर्वे भावार्थबोधिकाम् ॥

संस्कृत-व्याख्या—तस्य = शिवस्य, दक्षिणां = दक्षिणाभिमुखीं, मूर्तिम् = प्रतिमाम्, आश्रित्य = अवलम्ब्य, अभिमुखीम् = सम्मुखीम्, आसीनाम् = उपविष्टाम्, 'कन्यकां ददर्श' इति दूरस्थक्रियया अन्वयः, सर्वाणि द्वितीयैकवचनान्तानि स्त्रीलिङ्ग पदानि 'कन्यकाम्' इति विशेष्यपदस्य विशेषणानि सन्ति, उपरचितब्रह्मासनाम् = उपरचितं निर्मितं ब्रह्मासनं ध्यानासनं यया सा ताम् कमलासनोपविष्टामिति यावत्, अतिविस्तारिणा = अतिशयप्रसरणशीलेन, सर्वदिङ्मुखप्लावकेन = सर्वेषां समेषां दिङ्मुखानाम् आशामुखानां प्लावकेन आच्छादकेन, प्रलयविप्लुतक्षीरपयोधिपयःपूरपाण्डुरेण = प्रलये कल्पावसानकाले विप्लुतः विवृद्धः यः क्षीरपयोधिः क्षीरसागरः तस्य पयसां जलानां पूरः प्रवाहः तद्वत् पाण्डुरेण श्वेतवर्णेन (लुप्तोपमा), अतिदीर्घकालसञ्चितेन = अतिदीर्घः यः कालः समयः तेन सञ्चितेन एकत्रीकृतेन, तपोराशिनेव = तपः समूहेन, इव, (उत्प्रेक्षा) विसर्पता = प्रसरता, पादपान्तरैः = वृक्षाणाम् अन्तरालभागैः, पिण्डीभूय = समूहीभूय, त्रिस्रोतोजलनिभेन = त्रीणि स्रोतांसि प्रवाहाः यस्याः तस्याः त्रिपथगायाः जलनिभेन सलिलसदृशेन (आर्थी उपमा),

---

हिन्दी-अनुवाद—(चन्द्रापीड ने) उसकी (शिव की) दक्षिणामूर्ति के सामने ब्रह्मासन लगाकर बैठी हुई एवं पाशुपत-व्रत धारण करने वाली (एक) कन्या को देखा। प्रलयकाल में उद्वेलित क्षीरसागर के जल-प्रवाह की भाँति उज्ज्वल, चिरकाल से संचित तथा सर्वत्र फैलती हुई (मानो) तपस्या की राशि की तरह, वृक्षों के बीच (रुकने के कारण) एकत्र होकर बहते हुये (मानो) गङ्गा जल की भांति, अपने अति विस्तृत

जलनिभेन पिण्डीभूय वहतेव देहप्रभावितानेनसगिरिकाननं दन्तमयमिव तं प्रदेशं कुर्वतीम्, अन्यथैव धवलयन्तीं कैलासगिरिम्, अन्तर्द्रष्टुरपि लोचनपथप्रविष्टेन श्वेतिमानमिव मनोनयन्तीम्, अतिधवलप्रभापरिगतदेहतया स्फटिकगृहगतामिव दुग्धसलिलमग्नामिव विमलचेलांशुकान्तरितामिवादर्शतलसंक्रान्तामिव शरदभ्रपटलतिरस्कृतामिवापरिस्फुटविभाव्यमानावयवाम्, पञ्चमहाभूतमयमपहाय द्रव्यात्मकमङ्गनिष्पादनोपकरणकलापं धवलगुणेनेव

वहतेव = वहनशीलेन, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), देहप्रभावितानेन = देहस्य प्रभायाः कान्तेः वितानेन विस्तारेण, सगिरिकाननं = पर्वतवनसहितं, तं = पूर्वोक्तं, प्रदेशं = स्थानं (शिवसिद्धायतनम्), दन्तमयमिव = हस्तिदन्तिनिर्मितम्, इव, कुर्वतीं = विदधतीम् (उत्प्रेक्षा), अन्यथैव = भिन्नरीत्या, एव, कैलासगिरिं = कैलासनामकं पर्वत, धवलयन्तीं = शुक्लतां प्रापयन्तीं (प्रतीयमानां क्रियोत्प्रेक्षा), द्रष्टुरपि = विलोकयितुः जनस्य, अपि, अन्तः = शरीराभ्यन्तरे, लोचनपथप्रविष्टेन = नयनमध्यमार्गप्राप्तेन (देहप्रभावितानेन), मनः = मानसं, 'स्वान्तं हृन्मानसं मनः' इत्यमरः, श्वेतिमानम् = धवलिमानं, नयन्तीमिव = प्रापयन्तीम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), अतिधवलप्रभापरिगतदेहतया = अतिधवला अतिशुभ्रा या प्रभा कान्तिः तया परिगतः सर्वतः व्याप्तः देहः शरीरं यस्याः तस्याः भावः तत्ता तया, स्फटिकगृहगतामिव = स्फटिकः चन्द्रकान्तः (मणिः) तस्य गृहं भवनं गतां प्राप्ताम्, इव, दुग्धसलिलमग्नामिव = दुग्धस्य क्षीरस्य सलिले उदके मग्नां ब्रुडिताम्, इव, विमलचेलांशुकान्तरितामिव = विमलं स्वच्छं यत् चेलांशुकं सूक्ष्मवस्त्रविशेषः तेन अन्तरितां सर्वतः आच्छादिताम्, इव आदर्शतलसंक्रान्तामिव = आदर्शः मुकुरः 'दर्पणे मुकुरादर्शौ' इत्यमरः, तस्य तले संक्रान्तां प्रतिबिम्बिताम्, इव, शरदभ्रपटलतिरस्कृतामिव = शरत् घनात्ययः तस्याः अभ्राणां मेघानां पटलानि वृन्दानि तैः तिरस्कृताम् अन्तर्हिताम्, इव (सर्वत्र क्रियोत्प्रेक्षा), अपरिस्फुटविभाव्यमानावयवाम् = अपरिस्फुटं अव्यक्तं यथा स्यात् तथा विभाव्यमानाः ज्ञायमानाः अवयवाः अङ्गानि यस्याः तां, पञ्चमहाभूतमयं = पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशरूपं, द्रव्यात्मकं = द्रव्यस्वरूपम्, अङ्गनिष्पादनोपकरणकलापम् = अङ्गनिष्पादने शरीररचनायां यानि उपकरणानि साधनानि तेषां कलापं राशिम्, अपहाय = त्यक्त्वा, केवलेन = एकेन, धवलगुणेन = श्वेतगुणेन, उत्पादितामिव = निर्मिताम्, इव

एवं सारी दिशाओं को आच्छादित करने वाली शारीरिक प्रभा के विस्तार से मानो वह (महाश्वेता) वनपर्वत के साथ उस प्रदेश को हाथी के दांत से निर्मित की तरह कर रही थी। (अपनी देहप्रभा से) वह कैलाश पर्वत को एक दूसरे ही प्रकार से धवल बना रही थी। मानो वह नेत्र मार्ग से घुसकर दर्शकों के भी अन्तस्तल को शुभ्र बना रही थी। अत्यन्त धवल वर्ण की कान्ति से उसका शरीर व्याप्त था, जिससे

केवलेनोत्पादिताम्, दक्षाध्वरक्रियामिवोद्धतगणकचग्रहभयोपसेवितत्र्यम्बकाम्, रतिमिव मदनदेहनिमित्तं हरप्रसादनार्थमागृहीतहराराधनाम्, क्षीरोदधिदेवतामिव सहवासपरिचितहरचन्द्रलेखोत्कण्ठाकृष्टाम्, इन्दुमूर्तिमिव स्वर्भानुभयकृतत्रिनयनशरणगमनाम्, ऐरावतदेहच्छविमिव गजाजिनावगुण्ठनोत्कण्ठितशितिकण्ठचिन्तितोपनताम्, पशुपतिदक्षिणमुखहासच्छविमिव

(क्रियोत्प्रेक्षा), उद्धतगणकचग्रहभयोपसेवितत्र्यम्बकाम् = उद्धताः बलेन गर्विताः ये गणाः प्रमथादयः तैः यः कचानां केशानां ग्रहः आकर्षणं तस्मात् यद् भयं भीतिः तेन उपसेवितः रक्षार्थम् आश्रितः त्र्यम्बकः शिवः यया (अध्वरक्रियया) तादृशीं, दक्षाध्वरक्रियामिव—दक्षस्य तदाख्यप्रजापतेः अध्वरक्रिया यज्ञकर्म ताम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), मदनदेहनिमित्तं = कामशरीरप्राप्त्यर्थं, हरप्रसादनार्थम् = हरस्य त्रिलोचनस्य प्रसादनार्थं प्रसन्नताप्राप्त्यर्थम्, आगृहीतहराराधनाम् = आगृहीता स्वीकृता हरस्य शिवस्य आराधना उपासना यया सा तां, रतिमिव = कामपत्नीम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), सहवासपरिचितहरचन्द्रलेखोत्कण्ठाकृष्टां = सहवासेन क्षीरोदे मन्थनात् पूर्वम् एकत्र अवस्थित्या परिचिता प्राप्तपरिचया या हरस्य महेशस्य चन्द्रलेखा मस्तकस्था शशिकला तस्यां या उत्कण्ठा दर्शनोत्सुकता तया आकृष्टाम् आकर्षितां, क्षीरोदधिदेवतामिव = क्षीरोदधेः क्षीरसागरस्य देवताम् अधिष्ठात्रीं देवीम्, इव, स्वर्भानुभयकृतत्रिनयनशरणगमनां = स्वर्भानुः राहुः 'तमस्तु राहुः स्वर्भानुः सैंहिकेयो विधुन्तुदः' इत्यमरः, तस्मात् यद् भयं त्रासः तेन कृतं विहितं त्रिनयनस्य त्रिलोचनस्य शिवस्य शरणगमनं शरणापन्नत्वं यया ताम्, इन्दुमूर्तिमिव = चन्द्रमूर्तिम्, इव (द्रव्योत्प्रेक्षा), गजाजिनावगुण्ठनोत्कण्ठितशितिकण्ठचिन्तितोपनतां = गजस्य हस्तिनः अजिनं चर्म तेन अवगुण्ठने आच्छादने उत्कण्ठितः गजचर्मप्रेम्णा उत्सुकः यः शितिकण्ठः शिवः तस्य चिन्तितेन अपेक्षया उपनतां प्राप्तां (अथवा चिन्तितं समीहितम् उपनतं पूरितं यया ताम्), ऐरावतदेहच्छविमिव = ऐरावतः सुरपतेः श्वेतगजः तस्य देहच्छविम् तनुप्रभाम्, इव, विद्यमानां, (गुणोत्प्रेक्षा), बहिः = स्वस्थानात् मुखात् च बाह्यदेशे निर्गत्य = निःसृत्य, कृतावस्थानां = कृतं विहितम् अवस्थानं स्थितिः यया तां, पशुपतिदक्षिणमुखहासच्छविमिव = पशुपतेः शिवस्य 'शम्भुरीशः पशुपतिः' इत्यमरः, दक्षिणमुखस्य यः हासः हास्यं तस्य छविम् शोभाम्,

उसके अङ्ग प्रत्यङ्ग स्पष्ट रूप से दिखलाई नहीं देते थे मानो वह स्फटिक मणि के घर में बैठी हो, (या) क्षीरोदक में डूबी हो, (या) श्वेत चीनी रेशम से ढँकी हो, (या) दर्पण में प्रतिबिम्बित हो, (अथवा) शरत्काल के मेघ में छिपी हो। उसकी रचना मानो अङ्ग निर्माण के द्रव्यात्मक पांच महाभूतों के साधनसमूह को छोड़कर केवल धवल गुण से ही हुई थी। उद्धत शिवगणों द्वारा केश-ग्रह के भयसे दक्ष की यज्ञ-क्रिया ही मानो (आत्मरक्षार्थ) शिव की आरा-

बहिर्निर्गत्य कृतावस्थानाम् , शरीरिणीमिव रुद्रोद्धूलनभूतिम् , आविर्भूतां ज्योत्स्नामिव हरकण्ठान्धकारविघट्टनोद्यमप्राप्ताम् , गौरीमनःशुद्धिमिव कृतदेहपरिग्रहाम् , कार्तिकेयकौमारव्रतक्रियामिव मूर्तिमतीम् , गिरीशवृषभदेहद्युतिमिव पृथगवस्थिताम् , आयतनतरुकुसुमसमृद्धिमिव शङ्कराभ्यर्चनाय स्वयमुद्यताम् . पितामहतपःसिद्धिमिव महीतलमवतीर्णाम् , आदियुगप्रजापतिकीर्तिमिव सप्तलोकभ्रमणखेदविश्रान्ताम् , त्रयीमिव कलियुगध्वस्तधर्मशोकगृहीत-

---

इव (गुणोत्प्रेक्षा), **शरीरिणीं** = देहधारिणीं, **रुद्रोद्धूलनभूतिम्** = रुद्रस्य शिवस्य उद्धूलनं देहविलेपनं तस्य भूतिं भस्म इव (जात्युत्प्रेक्षा), **हरकण्ठान्धकारविघट्टनोद्यमप्राप्ताम्** = हरस्य नीलकण्ठस्य कण्ठे गले यः अन्धकारः तम सदृशकृष्णवर्णः तस्य विघट्टनम् अपसारणं तत्र यः उद्यमः उद्योगः तेन प्राप्तां लब्धां,**ज्योत्स्नामिव** = प्रभाम्,इव, **आविर्भूतां**=प्रकटीभूतां (गुणोत्प्रेक्षा), **कृतदेहपरिग्रहां** = कृतः विहितः देहस्य शरीरस्य परिग्रहः स्वीकारः यया तां, **गौरीमनः शुद्धिमिव** = गौर्याः पार्वत्याः मनशुद्धिं चित्तपवित्रताम् , इव (गुणोत्प्रेक्षा), **मूर्तिमतीं** = शरीरधारिणीं, **कार्तिकेयकौमारव्रतक्रियामिव** = कार्तिकेयस्य षडाननस्य यत कौमारं शैशवं व्रतं तपस्यादिकं तस्य क्रियां कर्मानुष्ठानम् , इव (सुकृतस्य श्वेतता कविसमयानुकूला), **पृथगवस्थितां** = शरीराद् बहिर्निर्गत्य विद्यमानां, **गिरीशवृषभदेहद्युतिमिव** = गिरीशः शिवः तस्य वृषभः नन्दीनाम्ना-विश्रुतः तस्य देहद्युतिम् शरीरस्य कान्तिम् , इव (गुणोत्प्रेक्षा), **शङ्कराभ्यर्चनाय** = शं करोति इति शङ्करः शिवः तस्य अभ्यर्चनं समाराधनं तस्मै, **स्वयम्** = आत्मना, **उद्यताम्** = उद्योगयुक्ताम् , **आयतनतरुकुसुमसमृद्धिमिव** = आयतनस्य पूर्ववर्णित-शिवसिद्धायतनस्य (शिवालयस्य) तरूणां वृक्षाणां यानि कुसुमानि पुष्पाणि तेषां समृद्धिम् सम्पदम् , इव (जात्युत्प्रेक्षा), **महीतलम्** = पृथिवीतलम् , **अवतीर्णां** = कृतावतारां, **पितामहतपःसिद्धिमिव** = पितामहः ब्रह्मा 'ब्रह्मात्मभूः सुरज्येष्ठः परमेष्ठी पितामहः' इत्यमरः, तस्य तपसः तपस्यायाः सिद्धिं सफलताम्, इव (गुणोत्प्रेक्षा), **सप्तलोकभ्रमणखेदविश्रान्ताम्** = सप्तसु 'भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यम्' इति सञ्ज्ञावत्सु सप्तसंख्याकेषु लोकेषु भुवनेषु 'जगती लोकोविष्टपं भुवनं जगत्' इत्यमरः, यत् भ्रमणं पर्यटनं तेन यः खेदः श्रमः तेन विश्रान्तां विश्रामाय निषण्णाम् , **आदियुगप्रजापतिकीर्तिमिव** = आदियुगे कृतयुगे यः प्रजापतिः विधाता तस्य (अथवा ये प्रजापतयः मरीच्यादयः तेषां) कीर्तिम् , इव (गुणोत्प्रेक्षा), **कलियुगध्वस्तधर्म-**

चना करने आई हो; जैसे कामदेव के (भस्मीभूत) देह को पुनः प्राप्त करने की इच्छा से रति ही शिव की पूजा में तत्पर हो, (क्षीर समुद्र में) एक साथ रहने से चिरपरिचित शिवजी के ललाट में स्थित चन्द्रकला से मिलने की उत्कण्ठावश मानो क्षीर-समुद्र की अधिष्ठात्री देवी ही आकृष्ट हो; राहु के भय से त्रस्त चन्द्रमूर्ति मानो शंकर की शरण में आई हो; गज चर्म ओढ़ने की इच्छा रखने वाले शिव की इच्छा मात्र से मानो

वनवासाम्, आगामिकृतयुगबीजकलामिव प्रमदारूपेणावस्थिताम्, देहवतीमिव मुनिजनध्यानसम्पदम्, अमरगजवीथीमिवाभ्रगङ्गाभ्यागमवेगपतिताम्, कैलासश्रियमिव दशमुखोन्मूलनक्षोभनिपतिताम्, श्वेतद्वीपलक्ष्मीमिवान्यद्वीपावलोकनकूतूहलागताम्, काशकुसुमविकासकान्तिमिव शरत्समयमुदीक्षमाणाम्; शेषशरीरच्छायामिव रसातलमपहाय निर्गताम्, मुसलायुधदेहप्रभा-

शोकगृहीतवनवासां = कलियुगेन कलियुगे वा ध्वस्तः दूरीकृतः यः धर्मः तस्मात् यः शोकः पीडा तेन गृहीतः स्वीकृतः वनवासः अरण्यनिवासः यया तां, त्रयीमिव = ऋग्यजुःसामरूपां वेदत्रयीम्, इव, प्रमदारूपेण = नारीरूपेण, अवस्थितम् = कृतावस्थानाम्, आगामिकृतयुगबीजकलामिव = आगामिनः भाविनः कृतयुगस्य सत्ययुगस्य बीजकलामिव आदिकारणमात्राम्, इव (उत्प्रेक्षा), सुकृतमयस्य कृतयुगस्य श्वेतत्वात् तस्य बीजेऽपि श्वेतत्वं कल्पितम्, देहवतीम् = शरीरिणीं, मुनिजनध्यानसम्पदं = मुनिजनानां ऋषिजनानां ध्यानसम्पदं ध्यानसम्पत्तिम्, इव (गुणोत्प्रेक्षा), अभ्रगङ्गाभ्यागमवेगपतिताम् = अभ्रगङ्गा आकाशगङ्गा तस्याः अभ्यागमस्य सम्मुखगमनस्य वेगेन पतितां सुरलोकात् विच्युताम्, अमरगजवीथीमिव = अमरगजानां देवहस्तिनाम् (ऐरावतप्रभृतीनाम्) वीथीम्, पङ्क्तिम्, इव, (जात्युत्प्रेक्षा) दशमुखोन्मूलनक्षोभनिपतितां = दशमुखः रावणः तेन यद् उन्मूलनम् उत्पाटनं तस्मात् यः क्षोभः त्रासः तस्मात् निपतितां स्खलितां, कैलासश्रियमिव = कैलासशोभाम् 'लक्ष्मीः श्रीशोभासम्पत् प्रियङ्गुषु' इति हैमः, इव, अन्यद्वीपावलोकनकुतूहलागताम् = अन्येषां द्वीपानां द्वीपान्तराणाम् अवलोकनाय वीक्षणाय यत् कुतूहलम् औत्सुक्यं तेन आगताम् उपस्थितां, श्वेतद्वीपलक्ष्मीमिव = श्वेतद्वीपशोभाम्, इव (उत्प्रेक्षा), शरत्समयम् = शरत् घनात्ययः तस्याः समयः कालः तम्, उदीक्षमाणां = प्रतीक्षमाणां, काशकुसुमविकासकान्तिमिव = काशस्य इक्षुगन्धायाः 'काशमस्त्रियाम् इक्षुगन्धा पोटगलः' इत्यमरः, कुसुमानां विकासस्य विकासनस्य कान्तिः प्रभाताम्, इव (उत्प्रेक्षा), रसातलम् = पातालम् 'अधोभुवनपातालबलिसद्मरसातलम्' इत्यमरः, अपहाय = त्यक्त्वा, निर्गतां = बहिः आगतां, शेषशरीरच्छायामिव = शेषः नागराजः तस्य शरीरच्छायां वपुःकान्तिम् 'छाया सूर्यप्रियाकान्तिः' इत्यमरः, इव = (गुणोत्प्रेक्षा),

ऐरावत हाथी की देह प्रभा ही उपस्थित हो। महादेव के दक्षिण मुख की हास्य-शोभा ही मानो बाहर निकल कर बैठी हो, (या) रुद्र के शरीर में मला जाने वाला भस्म ही मानो शरीर धारण किये हो, (या) शंकर के कण्ठ में स्थित अन्धकार (विष की नीलिमा) को दूर करने के लिये उद्यम से प्राप्त चांदनी ही मानो आविर्भूत हो, (या) पार्वती की मानसिक शुद्धि जैसे शरीरधारिणी हो; (या) वह मानो स्वामी कार्तिकेय की कुमारावस्था की मूर्त्तिमती तपश्चर्या हो, (या) शंकर के बैल की देह-प्रभा मानो बाहर आकर स्थित हो। (उसे देखकर ऐसा लगता था) मानो

मिव मधुमदविघूर्णनायासविगलिताम्, शुक्लपक्षपरम्परामिव पुञ्जीकृताम्, सर्वहंसैरिव धवलतया कृतसंविभागाम्, धर्महृदयादिव निर्गताम्, शङ्खादिवोत्कीर्णाम्, मुक्ताफलादिवाकृष्टाम्, मृणालैरिव विरचितावयवाम्, दन्तदलैरिव घटिताम्, इन्दुकरकूर्चकैरिव प्रक्षालिताम्, वर्णसुधाच्छटाभिरिवाच्छुरिताम्, अमृतफेनपिण्डैरिव पाण्डुरीकृताम्, पारदरसधाराभिरिव धौताम्, रजत-

मधुमदविघूर्णनायासविगलितां = मधुमदेन मदिरापानजनितमत्ततया यत् विघूर्णनं पर्यन्ततः भ्रमणं तदायासेन तत्परिश्रमेण विगलितां शरीरात् विच्युतां, मुसलायुधदेहप्रभामिव = मुसलम् आयुधं यस्य सः मुसलायुधः बलरामः तस्य देहप्रभा शरीरकान्तिः ताम्, इव (गुणोत्प्रेक्षा), पुञ्जीभूतां = राशीकृतां, शुक्लपक्षपरम्परामिव = शुक्लपक्षाणां सितपक्षाणां परम्परा: सन्ततिः ताम्, इव (जात्युत्प्रेक्षा), धवलतया = श्वेततया, सर्वहंसै = सकलहंसैः, कृतसंविभागां = कृतः विहितः संविभागः विभज्य अर्पणं यस्यै तां (विभागोऽपि क्रियारूपः अतः अत्र क्रियोत्प्रेक्षा), धर्महृदयात् = धर्मः पुण्यं तस्य हृदयात् मानसात् 'स्वान्तं हृन्मानसं मनः' इत्यमरः निर्गतां = बहिर्भूताम्, इव, (क्रियोत्प्रेक्षा), शङ्खात् = कम्बोः, उत्कीर्णाम् = उत्कीर्यनिर्मिताम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), मुक्ताफलात् = मौक्तिकात्, आकृष्टाम् = आकर्षिताम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), मृणालैः = बिसैः 'मृणालं बिसम्' इत्यमरः, विरचितावयवाम् = विरचिताः विहिताः अवयवाः अङ्गानि यस्याः, ताम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), दन्तदलैः = दन्ताः करिमुखरदनाः तेषां दलैः समूहैः, घटिताम् = निर्मिताम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), इन्दुकरकूर्चकैः = इन्दोः सुधांशोः कराः किरणाः एव कूर्चकाः तूलिकाः तैः, प्रक्षालिताम् = धौताम्, इव (रूपकं क्रियोत्प्रेक्षा च), वर्णसुधाच्छटाभिः = वर्णा शुक्लवर्णकारिणी या सुधा धवललेपनद्रव्यं तस्याः छटाभिः बिन्दुभिः, आच्छुरितां सर्वतः लिप्ताम्, इव, अमृतफेनपिण्डैः = पीयूषफेनसमूहैः, पाण्डुरीकृतम् = धवलीकृताम्, इव, पारदरसधाराभिः = पारदः रसेन्द्रः तस्य यः रसः द्रवः तस्य धाराभिः, धौताम् = प्रक्षालिताम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), रजतद्रवेण =

शिवाराधन के लिये सिद्धायतन (मन्दिर) के वृक्षों की कुसुम-समृद्धि ही स्वयं उद्यत हो, (या) ब्रह्मा की तपः सिद्धि जैसे पृथिवी पर उतरी हो; (या) सातों लोकों में भ्रमण के परिश्रम से श्रान्त सत्ययुग के प्रजापति की कीर्ति जैसे विश्राम कर रही हो, (या) कलियुग में धर्म के नष्ट हो जाने के कारण शोकाकुल वेदत्रयी (ऋक्, यजुः, साम) मानो वनवास को स्वीकार किये हो, (या) आगामी कृतयुग की बीज-कला जैसे नारी-रूप में अवस्थित हो, (या) मुनि-गण की ध्यान सम्पत्ति जैसे देह धारिणी हो, (या) आकाश गंगा के आगमन के वेग से गिरी हुई मानो देवों की (श्वेत) गज-पंक्ति हो (या) कैलाश की श्री मानो दशानन के उन्मूलन भय से गिरी हो, (या) श्वेतद्वीप की लक्ष्मी जैसे अन्य द्वीपों के देखने के कुतूहल से आई हो, (या)

द्रवेणेव निर्मृष्टाम्, चन्द्रमण्डलादिवोत्कीर्णाम्, कुटजकुन्दसिन्धुवारकुसुमच्छविभिरिवोल्लासिताम्, इयत्तामिव धवलिम्नः, स्कन्धावलम्बिनीभिरुदयतटगतादर्कबिम्बादुद्धृत्य बालरश्मिप्रभाभिरिव निर्मिताभिरुन्मिषत्तडित्तरलतेजस्ताम्राभिरचिरस्नानावस्थितविरलवारिकणतया प्रणामलग्नपशुपतिचरणभस्मचूर्णाभिरिव जटाभिरुद्भासितशिरोभागाम्, जटापाशग्रथितमुत्तमाङ्गेन

रोचनेन, निर्मृष्टाम् = प्रोञ्छिताम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), चन्द्रमण्डलात् = इन्दुबिम्बात्, उत्कीर्णाम् = उत्कीर्य कृष्टाम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), कुटजकुन्दसिन्धुवारकुसुमछविभिः = कुटजः गिरिमल्लिका "कुटजः शक्रोवत्सको गिरिमल्लिका" इत्यमरः, कुन्दः माध्यं सिन्धुवारः निर्गुण्डी तेषां कुसुमानां छविभिः कान्तिभिः। उल्लासिताम् = उद्भासिताम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), धवलिम्नः = श्वेततायाः, इयत्तामिव = इदं प्रमाणम् अस्य इति इयान् तस्य भावः इयत्ता चरमसीमा ताम्, इव (गुणोत्प्रेक्षा), अतः परं तृतीयाबहुवचनान्तपदानि 'जटाभिः' इत्यस्य विशेषणानि, स्कन्धावलम्बिनीभि = स्कन्धे स्कन्धदेशे अवलम्बिनीभिः = लम्बमानाभिः, उदयतटगतात् = उदयाचलशिखरारूढात्, अर्कबिम्बात् = रविमण्डलात्, उद्धृत्य = निःसार्य, बालरश्मिप्रभाभिः = अभिनवमयूखकान्तिभिः निर्मिताभिः = विरचिताभिः, इव (क्रियोत्प्रेक्षा) उन्मिषत्तडित्तरलतेजस्ताम्राभिः = उन्मिषन्ती प्रस्फुरन्ती या तडित् विद्युत् तस्याः यत् तरलं चञ्चलं तेजः दीप्तिः 'तेजः प्रभावे दीप्तौ च बले शुक्रेऽपि' इत्यमरः, तद्वत् ताम्राभिः ताम्रवर्णाभिः (लुप्तोपमा), अचिरस्नानावस्थितविरलवारिकणतया = अचिरं त्वरितं यत् स्नानं मज्जनं तस्मात् अवस्थिताः अभ्यन्तरे संसक्ताः विरलाः स्वल्पाः ये वारिकणाः जलबिन्दवः तेषां भावः तत्ता तया, प्रणामलग्नपशुपतिचरणभस्मचूर्णाभिरिव = प्रणामे प्रणतिकाले लग्नानि संसक्तानि पशुपतेः शिवस्य चरणयोः पादयोः भस्मचूर्णानि विभूतिक्षोदाः यासु (जटासु) ताभिः, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), जटाभिः = सटाभिः, उद्भासितशिरोभागाम् = उद्भासितः विद्योतितः शिरोभागः उत्तमाङ्गदेशः यस्याः ताम्, जटापाशग्रथितं = जटापाशे जटाजूटे ग्रथितं गुम्फितं

काश कुसुमों की विकास-शोभा जैसे शरत्काल की प्रतीक्षा कर रही हो, (या) शेषनाग के शरीर की कान्ति जैसे रसातल छोड़कर आई हो, (या) बलराम के शरीर की प्रभा मानो मदिरा के मद-वश होने वाले देहभ्रमण से उत्पन्न थकावट के कारण नीचे गिरी हो, (या) शुक्ल-पक्ष की राशि (पंक्ति) मानो एकत्र हो। (उसकी) धवलता (गोराई) से (ऐसा लगता था) मानो सारे हंसों ने अपनी धवलता को विभक्त कर (उसे दे दी हो) वह मानो धर्म के हृदय से निकली हो, (या) जैसे शङ्ख से उत्कीर्ण हो (खोदकर निकाली गई हो), (या) मोतियों से जैसे खींची गई हो। मृणाल खण्डों से मानो उसके अङ्गों का निर्माण हुआ हो। गजदन्तों से जैसे बनी हो, (या) चन्द्र किरणरूप कूँची द्वारा मानो प्रक्षालित हो, (या) चूने की सफेदी से

मणिमयं नामाङ्कमीश्वरचरणद्वयमुद्वहन्तीम्, रविरथतुरगखुरक्षुण्णनक्षत्रक्षोदविशदेन भस्मनालंकृतललाटपट्टिकाम्, शिखरशिलाश्लिष्टशशाङ्ककलामिव शैलराजमेखलाम्, अतुलभक्तिप्रसाधितया लक्ष्यीकृतलिङ्गयाद्वितीययेव पुण्डरीकमालया दृष्ट्या सम्भावयन्तीं भूतनाथम्, अनवरतगीतपरिस्फुरिताधरपुटवशादतिशुचिभिः शुद्धहृदयमयूखैरिव गीतगुणैरिव स्वरैरिव स्तुतिवर्णैरिव

मणिमयं रत्ननिर्मितं, **नामाङ्कं** = नाम्नः अङ्कं यस्मिन् तथोक्तम्, **ईश्वरचरणद्वयम्** = ईश्वरस्य महादेवस्य चरणद्वयं पादद्वयम् (पादद्वयप्रतिमामिति भावः), उत्तमाङ्गेन = शिरसा, **उद्वहन्तीं** = धारयन्तीं, **रविरथतुरगखुरक्षुण्णनक्षत्रक्षोदविशदेन** = रवेः सूर्यस्य यः रथः स्यन्दनं तस्य ये तुरगाः अश्वाः तेषां खुरैः शफैः क्षुण्णानाम् अवदारितानां नक्षत्राणां तारकाणां यः क्षोदः चूर्णः तद्वत् विशदेन धवलेन, **भस्मना** = विभूत्या, **अलङ्कृतललाटपट्टिकाम्** = अलङ्कृता विभूषिता ललाटपट्टिका भालस्थलं यस्याः ताम्, (अतएव) **शिखरशिलाश्लिष्टशशाङ्ककलां** = शिखरः अद्रिशृङ्गः 'शिखरोऽस्त्री द्रुमाग्रे चाद्रिशृङ्गपुलकाग्रयोः' इति मेदिनी, तस्य शिलाया पाषाणेन आश्लिष्टा लग्ना शशाङ्कस्य चन्द्रमसः कला लेखा यस्याः तां, **शैलराजस्य** = हिमालयस्य, **मेखलां** = मध्यभागम्, इव स्थिताम् इति यावत्, (पदार्थहेतुकं काव्यलिङ्ग द्रव्योत्प्रेक्षा च) **अतुलभक्तिप्रसाधितया** = अतुला अद्वितीया या भक्तिः आराधना तया प्रसाधितया अलङ्कृतया प्रसन्नया वा, **लक्ष्यीकृतलिङ्गया** = लक्ष्यीकृतं ध्यानावलम्बनीकृतं लिङ्गं शिवमूर्तिः यया तया (अनिमेषदृष्ट्या विहितशिवदर्शनया इति भावः) **द्वितीयया** = अपरया, **पुण्डरीकमालया** = श्वेतकमलपङ्क्त्या, इव, **दृष्ट्या** = निरीक्षणेन, **भूतनाथं** = महेश्वरं, **सम्भावयन्तीम्** = अर्चयन्तीम् (जात्युत्प्रेक्षा), दशनांशून् विशेषयति—**अनवरतगीतपरिस्फुरिताधरपुटवशात्** = अनवरतं सततं यत् गीतं गानं तेन परिस्फुरितं स्पन्दितं यत् अधरपुटम् ओष्ठद्वयम् 'ओष्ठाधरौ तु रदनच्छदौ दशनवाससी' इत्यमरः, तद्वशात्, **मुखात्** = वदनात्, **निष्पतद्भिः** = बहिर्गच्छद्भिः = **अतिशुचिभिः** = नितान्तस्वच्छैः, **शुद्धहृदयमयूखैरिव** = शुद्धहृदयस्य पवित्रमनसः मयूखैः किरणैः, इव, **मूर्तिमद्भिः** = शरीरधारिभिः, **गीतगुणैरिव** = गानमाधुर्यादिभिः, इव, **स्वरैरिव** = षड्जादिभिः सङ्गीतस्वरैः इव, **स्तुतिवर्णैरिव** = स्तवनाक्षरैः, इव,

मानो लिप्त हो, (या) अमृत के फेनपिण्डों से जैसे श्वेत बनाई गई हो, (या) जैसे पारे की रस-धारा से धोई गई हो, (या) चाँदी के रस से मानो पोंछी गई हो, (या) चन्द्रमण्डल से मानो उत्कीर्ण हो, (या) जैसे वह कुटज, कुन्द तथा सिन्धुवार (निर्गुण्डी) के फूलों की शोभा से उल्लासित हो, (इस तरह) वह धवलिमा (गोराई) की सीमा प्रतीत हो रही थी। चमकती हुई बिजली के चंचल तेज के समान ताम्र-वर्ण एवं कन्धे तक लटकने वाली जटाओं से उसका शिरोभाग सुशोभित था, मानो उदयाचल पर पहुँचे हये सूर्यमण्डल से निकाली गई बालकिरणों की कान्ति से ही उनका (जटाओं का)

मूर्तिमद्भिर्मुखान्निष्पतद्भिर्दशनांशुभिः पुनरिव स्नपयन्तीं गौरीपतिम्, अतिविमलैश्च वेदार्थैरिव साक्षात्पितामहमुखादाकृष्टैर्गायत्रीवर्णैरिव ग्रथनतामुपगतैर्नारायणनाभिपुण्डरीकवीजैरिवोद्धृतैः सप्तर्षिभिरिव करस्पर्शपूतमात्मानमिच्छद्भिस्तारकारूपेणागतैरामलकीफलस्थूलैर्मुक्ताफलैरुपरचितेनाक्षवलयेनाधिष्ठितकण्ठभागाम्, परिवेषपरिगतचन्द्रमण्डलामिव पौर्णमासीनिशाम्, अधो-

दशनांशुभिः = दन्तमयूखैः, पुनः = भूयः (अपि), गौरीपतिं = महेशं, स्नपयन्तीं = स्नपनं विदधतीम्—इव (उत्प्रेक्षा), इतः परं सर्वाणि तृतीयाबहुवचनान्तानि पदानि मुक्ताफलैः इत्यस्यविशेषणानि—साक्षात् = अव्यवधानात्, पितामहमुखात् = पितामहः विधाता तस्य मुखात् आननात्, आकृष्टैः = आकर्षितैः, अतिविमलैः = नितान्तनिर्मलैः, वेदार्थैरिव = वेदाः ऋक्प्रभृतयः तेषाम् अर्थैः अभिधेयैः, इव, ग्रथनतां = संयुक्तताम्, उपगतैः = प्राप्तैः, गायत्रीवर्णैरिव = गायत्री = मन्त्रविशेषः तस्य वर्णैः अक्षरैः, इव (जात्युत्प्रेक्षा), उद्धृतैः = उत्खातैः, नारायणनाभिपुण्डरीकबीजैरिव = नारायणः विष्णुः तस्य नाभिपुण्डरीकस्य नाभिकमलस्य बीजैः उत्पत्तिनिदानभूतैः ('कमलगट्टा' इति नाम्ना प्रसिद्धैः), इव, आत्मानं = स्वं, करस्पर्शपूतम् = करस्पर्शेन (जपकाले महाश्वेतायाः) हस्तसंश्लेषेण पूतं पवित्रम्, इच्छद्भिः — अभिलषद्भिः, तारकारूपेण = नक्षत्ररूपेण, आगतैः = (तस्याः करे) सम्प्राप्तैः, सप्तर्षिभिरिव = मरीचिप्रभृतिभिः, इव (जात्युत्प्रेक्षा), आमलकीफलस्थूलैः = आमलक्याः धात्र्याः फलानि तद्वत् स्थूलैः बृहदाकारैः, मुक्ताफलैः = मौक्तिकैः, उपरचितेन = निर्मितेन, अक्षवलयेन = जपमालिकया, अधिष्ठितकण्ठभागाम् = अधिष्ठितः आश्रितः कण्ठभागः गलप्रान्तः यस्याः सा ताम् (अतएव), परिवेषपरिगतचन्द्रमण्डलाम् = परिवेषः परिधिः तेन परिगतं परिवृतं चन्द्रमण्डलं सुधाकरबिम्बं यस्यां सा ताम्, पौर्णमासीनिशाम् = पूर्णिमारात्रिम्, इव (लुप्तोपमा), स्तनयुगलं विशेष-

---

निर्माण हुआ था, तत्काल स्नान करने के कारण उनमें कहीं-कहीं पानी की बूँदें दिखाई दे रही थीं, मानो पशुपति के चरणों में प्रणाम करने से उनकी विभूति लग गई हो। वह अपने जटापाश में गुँथे हुये शिव के नामांकित तथा मणिनिर्मित दोनों चरणों को धारण कर रही थी। सूर्य के रथ में जुते घोड़ों के खुरों से विदीर्ण नक्षत्रों के चूर्ण की तरह उज्ज्वल भस्म से उसका ललाट-देश सुशोभित था, (इसलिये) वह शिखर के शिलाखण्ड (चट्टान में जटिल चन्द्रकला से युक्त हिमाचल की मेखला के समान दिखलाई दे रही थी। अतुलित भक्ति से सज्जित तथा शिव को एकटक देखने वाली अपनी दृष्टि से वह शिव की आराधना कर रही थी, मानो (वहाँ) श्वेत कमलों की दूसरी माला उपस्थित हो। लगातार गाने से हिलते हुए ओठों के कारण मुख से निकलती हुई दन्त किरणों से मानो वह शंकर को पुनः स्नान करा रही थीं, वे दन्त-किरणें मानो उसके शुद्ध

मुखहरशिरःकपालमण्डलाकारेण मोक्षद्वारकलशकान्तिना स्तनयुगलेनैकहंस-मिथुनसनाथामिवश्वेतगङ्गाम्, गौरीसिंहसटामयेनेव चामररुचिराकृतिना स्तन-युगलमध्यनिबद्धग्रन्थिना कल्पतरुलतावल्कलेन कृतोत्तरीय कृत्याम्, अयुग्म-लोचनसकाशात्प्रसादलब्धेन चूडामणिचन्द्रमयूखजालेनेव मण्डलीकृतेन ब्रह्मसूत्रेण पवित्रीकृतकायाम्, आप्रपदीनेन च स्वभावसितेनापि ब्रह्मासन-बन्धोत्तानचरणतलप्रभापरिष्वङ्गाल्लोहितायमानेन दुकूलपटेन प्रावृतनित-

यति–अधोमुखहरशिरःकपालमण्डलाकारेण = अधोमुखं यत् हरस्य कपालिनःशिवस्य शिरसि स्थितं कपालं नरमुण्डं तद्वत् मण्डलाकारेण वर्तुलाकृत्या (तथा), मोक्षद्वारकलश-कान्तिना = मोक्षः अपवर्गः तस्य द्वारे स्थापितौ यौ कलशौ मङ्गलघटौ तयोः कान्तिरिव कान्तिः प्रभा यस्य तथाभूतेन, स्तनयुगलेन = कुचद्वयेन, एकहंसमिथुन-सनाथाम् = एकेन अद्वितीयेन हंसयोः मरालयोः मिथुनेन युगलेन सनाथां विभूषितां, श्वेतगङ्गाम्, इव (अत्र हंसद्वयेन कुचयोः, गङ्गया च कन्यकायाः साम्यात् श्रौती उपमा ततः पूर्वं लुप्तोपमा) अतोऽग्रे तृतीयैकवचनान्तानि पदानिलतावल्कलेनेति पदस्य विशेषणानि गौरीसिंहसटामयेनेव = गौरी पार्वती तस्याः वाहनीभूतः यः सिंहः शार्दूलः तस्य या सटा जटा, सटाजटाकेसरयोः इति मेदिनी, तन्मयेन तद्विरचितेन, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), चामररुचिराकृतिना = चामरस्य बालव्यजनस्य इव रुचिरा मनोहरा आकृतिः स्वरूपम् यस्य तेन (लुप्तोपमा), स्तनयुगलम-ध्यनिबद्धग्रन्थिना = स्तनयोः कुचयोः युगलं द्वयं तस्य मध्ये अन्तराले निबद्धः आबद्धः ग्रन्थिः यस्य तेन, कल्पतरुलतावल्कलेन = कल्पतरुः देववृक्षः तस्य लता व्रततिः तस्याः वल्कलेन त्वचा, कृतोत्तरीयकृत्याम् = कृतं सम्पादितम् उत्तरीयस्य उपसंव्यानस्य कृत्यं कर्म यया ताम्, अयुग्मलोचनसकाशात् = अयुग्मलोचनः त्रिलोचनः तस्य सकाशात् समीपात्, प्रसादलब्धेन = प्रसादः अनुग्रहः तेन लब्धेन प्राप्तेन, चूडामणि चन्द्रमयूखजालेनेव = चूडामणीभूतः यः चन्द्रः सुधाकरः तस्य मयूखानां किरणानां जालेन समूहेन, इव (जात्युत्प्रेक्षा), मण्डलीकृतेन = वर्तुलीकृतेन, ब्रह्मसूत्रेण = यज्ञोपवीतेन, पवित्रीकृतकायाम् = पवित्रीकृतः पावनीकृतः कायः शरीरं यस्याः सा ताम्, अथ दुकूलपटं विशेषयति—आप्रपदीनेन = पादस्य अग्रं प्रपदं तन्मर्यादी-कृत्य आप्रपदीनं तेन चरणतलपर्यन्तव्यापकेन च, स्वभावसितेन = स्वभावतः निसर्गतः सितेन धवलेन, अपि, ब्रह्मासनबन्धोत्तानचरणतलप्रभापरिष्वङ्गात् = ब्रह्मासनं कमलासनं तस्य यः बन्धः रचना तेन उत्ताने ऊर्ध्ववदने ये चरणतले पादतले तयोः प्रभा कान्तिः तस्याः परिष्वङ्गात् सम्पर्कात्, लोहितायमानेन = अरुणायमानेन दुकूलपटेन = क्षौमवस्त्रेण प्रावृतनितम्बाम = प्रावृतः समाच्छादितः

हृदय की रश्मियाँ हों, गायन के मूर्त्तिमान् (माधुर्यादिगुण) हों; मूर्तिमती स्वरलहरी हों, स्तुति के मूर्तिमान् वर्ण हों। वह आँवले के फल के सदृश बड़े-बड़े मोतियों के दाने से

स्वाम्, यौवनेनापि स्वकालोपसर्पिनिर्विकारविनीतेन शिष्येणेवोपास्यमानाम्, लावण्येनापि कृतपुण्येनेव स्वच्छात्मना परिगृहीताम्, रूपेणापि रुचिरलोचनेन विगतचापलेनायतनमृगेणेव निषेविताम्, उत्सङ्गगता च स्वसुतामिव सूक्ष्मशङ्खखण्डिकाङ्गुलीयकपूरिताङ्गुलिना त्रिपुण्ड्रकावशेषभस्मपाण्डुरेण प्रकोष्ठब-

नितम्बः जघनभागः यस्याः ताम् (श्वेतस्यापि वस्त्रस्य अरुणरूपप्राप्त्या तद्गुणालङ्कारः), स्वकालोपसर्पिनिर्विकारविनीतेन = स्वकाले उपयुक्तसमये (सेवाकाले च) उपसर्पति समीपम् आयाति इति एवं शीलेन निर्विकारं कामविकाररहितं (क्रोधादिरहितं) यथा स्यात् तथा विनीतेन = विनयशीलेन, यौवनेन = तारुण्येन, शिष्येणेव = शासितुं योग्यः शिष्यः छात्रः तेन, इव, उपास्यमानां = सेव्यमानां (पूर्णोपमा), स्वच्छात्मना = निर्मलेन (कामादिशून्येन), कृतपुण्येनेव = कृतं पुण्यं येनतेन सुकृतिना, इव, लावण्येन = सौन्दर्येण, अपि, परिगृहीताम् = आश्रिताम् (क्रियोत्प्रेक्षा), रुचिरलोचनेन = रुचिरेमनोहरे लोचने नयने यस्य तेन (पक्षे-रुचिरं सुन्दरं लोचनं दर्शनं यस्य यत्र वा तेन) विगतचापलेन = विगतं दूरीभूतं चापलं चञ्चलता यस्मात् तेन, आयतनमृगेणेव = आश्रमहरिणेन, इव, रूपेण = सौन्दर्येण, निषेविताम् आश्रिताम् (पूर्णोपमा) महाश्वेतायाः दक्षिणकरेण वीणास्फालनं वर्णयति—इतः तृतीयैकवचनान्तानि पदानि 'दक्षिणकरेण' इत्यस्य विशेषणानि—सूक्ष्मशङ्खखण्डिकाङ्गुलीयकपूरिताङ्गुलिना = सूक्ष्माः अस्थूलाः याः शङ्खस्य 'कम्बोः शङ्खः स्यात् कम्बुरस्त्रियौ' इत्यमरः खण्डिकाः शकलाः तासाम् अङ्गुलीयकैः अङ्गुलिभूषणैः पूरिताः भरिताः (अलङ्कृताः) अङ्गुलयः यस्य तेन, त्रिपुण्ड्रकावशेषभस्मपाण्डुरेण = त्रिपुण्ड्रम् तदाख्यतिलकम् "वक्रा ललाटगास्तिस्रोभस्मरेखा त्रिपुण्ड्रकम्" इति हारावली, तस्मात् अवशेषं शिष्टं यत् भस्म विभूतिः तेन पाण्डुरेण श्वेतेन, प्रकोष्ठबद्धशङ्खखण्डकेन = प्रकोष्ठे मणिबन्धभागे बद्धः संसक्तः शङ्खस्य खण्डकः क्षुद्रशकलः यस्य तेन, नखमयूख-

बनाई गई अक्ष-माला को गले में पहने थी, वे (मुक्ताफल) मानो ब्रह्मा के मुख से निकले वेदों के अत्यन्त निर्मल अर्थ हों, (या) गुंथे हुए गायत्री के वर्ण हों, (या) भगवान् विष्णु के नाभि कमल से निकाले गये बीज हों, (या) हाथ के स्पर्श से अपने को पवित्र बनाने की इच्छा रखने वाले सप्तर्षि ही मानो नक्षत्रों का रूप धारण किये हों। (उस माला को धारण करने से) वह (कन्या) परिवेष में घिरे हुए चन्द्रमा से युक्त पूर्णिमा की रात्रि की भाँति (सुन्दर) प्रतीत होती थी। शिवजी के शिरोभाग के अधोमुख नरमुण्ड की तरह गोल तथा मोक्ष के द्वार पर रखे (दो) कलश के सदृश कान्तिसम्पन्न दो स्तनों से वह हंसों के एक जोड़े से अलंकृत श्वेतगङ्गा की भाँति दिखाई दे रही थी। चँवर के समान सुन्दर आकृति वाले तथा दोनों स्तनों के बीच में बँधी गाँठ से युक्त कल्पतरु के वल्कल से, जो पार्वती के सिंह की जटा से मानो निर्मित था, उत्तरीय (दुपट्टे) का काम ले रही थी। वह मण्डलाकार

द्धशङ्खखण्डकेन नखमयूखदन्तुरतया गृहीतदन्तकोणेनेव दन्तमयीं दक्षिणकरेण वीणामास्फालयन्तीम्, प्रत्यक्षामिव गन्धर्वविद्याम्, मणिमण्डपिकास्तम्भलग्नाभिरात्मानुरूपाभिः सहचरीभिरिव सवीणाभिः प्रतिमाभिरुपेताम्, स्नपनार्द्रलिङ्गसंक्रान्तप्रतिबिम्बतयातिप्रबलभक्त्याराधितस्य हृदयमिव प्रविष्टां हरस्य, हारलेखयेव प्राप्तकण्ठयोगया ग्रहपङ्क्त्येव ध्रुवप्रतिबद्धयाकृद्धयेव रक्तमुख-

दन्तुरतया = नखानां कररुहाणां मयूखैः रश्मिभिः दन्तुरतया उच्चतया (अतः) गृहीतदन्तकोणेनेव = गृहीतः धृतः दन्तकोणः हस्तिदन्तविरचितं वीणावादनसाधनं येन तादृशेन, इव, अवगम्यमानेन इति शेषः द्वयोस्तुकोणोवीणादेर्वादनं सारिका च सा इति शब्दार्णवः, दक्षिणकरेण = दक्षिणः वामेतरः करः हस्तः तेन, उत्सङ्गगतां = क्रोडस्थिता, स्वसुताम् = स्वस्य आत्मनः सुतां कन्यकाम्, इव, दन्तमयीं = गजदन्तमयीं, वीणां = वल्लकीम्, आस्फालयन्तीं = वादयन्तीम् (अत्र पूर्णोपमा, पदार्थहेतुककाव्यलिङ्गं गुणक्रियोत्प्रेक्षा च, सर्वेषामङ्गाङ्गितया सङ्करश्च), प्रत्यक्षां = लोचनगोचरीभूतां (मूर्तिमतीं), गन्धर्वविद्यां = देवगायकविद्याम्, इव, इतः परं तृतीयाबहुवचनान्तानि पदानि 'प्रतिमाभिः, इत्यस्य विशेषणानि, मणिमण्डपिकास्तम्भलग्नाभिः = मणिभिः रत्नैः निर्मिता या मण्डपिका चतुष्किका तस्याः स्तम्भेषु लग्नाभिः प्रतिबिम्बिताभिः, सवीणाभिः = सवल्लकीभिः, आत्मानुरूपाभिः = स्वसदृशीभिः, सहचरीभिरिव = (पूजार्थमागताभिः) वयस्याभिः इव, प्रतिमाभिः = प्रतिच्छायाभिः, उपेतां = युक्तां (उपमा), स्नपनार्द्रलिङ्गसङ्क्रान्तप्रतिबिम्बतया = स्नपनेन अभिषेकेण आर्द्रं क्लिन्नं यत् लिङ्गं शिवलिङ्गं तत्र संक्रान्तं अन्तः प्रविष्टं प्रतिबिम्बं प्रतिच्छाया यस्याः तस्याः भावः तत्ता तया, अतिप्रबलभक्त्या = अतिप्रबला अत्युत्कटा या भक्तिः श्रद्धा तया, आराधितस्य = सेवितस्य, हरस्य = शिवस्य, हृदयं = स्वान्तं, प्रविष्टां = कृतप्रवेशाम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा) गीतिं विशेषयति—अग्रे तृतीयैकवचनान्तानि स्त्रीलिङ्गपदानि 'गीत्या' इति पदस्य विशेषणानि, प्राप्तकण्ठयोगया = प्राप्तः लब्धः कण्ठेन गलेन योगः सम्बन्धः यया तया, हारलेखयेव = मौक्तिकमालया इव (गीतिपक्षे–कण्ठयोगशब्दः गीतशास्त्रप्रसिद्धः रागावस्थाविशेषवाची) ध्रुवप्रतिबद्धया = ध्रुवः गानाङ्गविशेषः, यथा— "उत्तमः षट्पदः प्रोक्तो, मध्यमः पञ्चमः स्मृतः। कनिष्ठश्च चतुर्भिः स्यात् ध्रुव कोऽयं मयोदितः" इति सङ्गीतदामोदरम्, तेन प्रतिबद्धया नियमितया (पक्षे-ध्रुवःउत्तानपादपुत्र ध्रुवसंज्ञकतारकः तेन प्रतिबद्धया संयतया), ग्रहपङ्क्त्येव = ग्रहाणां नक्षत्राणां पङ्क्त्या वीथ्या, इव, ग्रहमण्डलस्य ध्रुवनक्षत्रबन्धनमुक्तं यथा—"भचक्रं ध्रुवयोर्बद्धमाक्षिप्तं प्रवहानिलैः। पर्येत्यजस्रं तन्नद्धा ग्रहकक्षा यथाक्रमम् ॥," रक्तमुखवर्णया = रक्तः

यज्ञोपवीत से अपने शरीर को पवित्र कर रही थी, मानो (वह) भगवान् शिव के प्रसाद रूप में प्राप्त उनके ललाटस्थित चन्द्रमा का रश्मिजाल हो। उसके पादाग्र तक लटकने वाले तथा स्वभाव से धवल होने पर भी ब्रह्मासन के कारण उत्तान

वर्णया मत्तयेव घूर्णितमन्द्रतारयोन्मत्तयेवानेककृततालया, मीमांसयेवानेक-भावनानुविद्धया गीत्या देवं विरूपाक्षमुपवीणयन्तीम् ; अतिमधुरगीतावकृष्टै-र्ध्यानमिवाभ्यस्यद्भिर्निश्चलकर्णपुटैर्मृगवराहवानरवारणशरभसिंहप्रभृतिभिर्वन-चरैराबद्धमण्डलैराकर्ण्यमानगीतानुविद्धविपञ्चीघोषाम् ,अमरापगामिव नभसोऽ-

श्रीरागादिसमन्विताः मुखवर्णाः मुखोच्चारितवर्णाः यस्यां तया (पक्षे—रक्तः क्रोधवशात् लोहितः मुखस्य वर्णः यस्याः तया), क्रुद्धयेव = कुपितया प्रमदया, इव, घूर्णित-मन्द्रतारया = घूर्णिताः मण्डपिकार्यन्तरे सर्वत्र प्रसृताः मन्द्राः उरःस्थलभवाः (मृदवः) ताराः शिरोभागजाताः (उच्चाः) स्वराः यस्यां तया (पक्षे—घूर्णिते मदवशात् चपले मन्द्रे अलसे तारे कनीनिके यस्याः तया) मत्तयेव = मदविह्वलया (नार्या), इव, अनेककृततालया अनेके बहवः कृताः गायनसमयेविहिताः तालाः गीतकालक्रिया-मानरूपाः यस्यां तया 'तालः करतलेऽङ्गुष्ठमध्यमाभ्यां च संमिते। गीतकालक्रिया-माने······॥' इति विश्वः, (पक्षे-अनेके कृताः तालाः करतलध्वनयः यया तया) उन्मत्तयेव = उन्मादग्रस्तया (स्त्रिया), इव, अनेकभावनानुविद्धया = अनेकाभिः बह्वीभिः भावनाभिः मूर्च्छनाभिः (सङ्गीतशास्त्रोक्ताभिः) अनुविद्धया युक्तया (पक्षे—अनेकया द्विविधया भावनया शब्दनिष्ठया अर्थनिष्ठया च अनुविद्धया)—"भावना-नाम भवितुर्भवनानुकूलो भावयितुर्व्यापारविशेषः। सा च द्विविधा······॥" इति लौगाक्षिभास्करः, मीमांसयेव = आचार्यजैमिनिप्रणीतया पूर्वमीमांसया, इव, गीत्या = गानेन, विरूपाक्षं = विरूपाणि अक्षीणि (सूर्यचन्द्राग्निरूपाणि) यस्य तं त्रिलोचनं (शिवं), देवम् = महादेवम् , उपवीणयन्तीम् = वीणया उपगायन्तीम् (अत्र हारलतयेत्यारभ्य अत्रपर्यन्तं श्लेषानुप्राणिता मालोपमा)—अतः परं तृतीयाबहु-वचनान्तानि पदानि 'वनचरैः' , इत्यस्य विशेषणानि—अतिमधुरगीतावकृष्टैः = अतिमधुरेण निरतिशयमाधुर्यसमन्वितेन गीतेन गायनेन अवकृष्टैः आकर्षितैः, आबद्ध-मण्डलैः = आबद्धं (गीतश्रवणपरवशतया) रचितं मण्डलं वर्तुलाकारेण अवस्थानं यैः तैः, (तथा) निश्चलकर्णपुटैः = निश्चलानि स्पन्दरहितानि कर्णपुटानि श्रोत्र-युगलानि येषां तैः (अतएव) ध्यानं = चित्तवृत्तिनिरोधम् , अभ्यसद्भिः = अभ्यासं कुर्वद्भिः, इव, मृगवराहवानरवारणशरभसिंहप्रभृतिभिः = मृगाः हरिणाः वराहाः शूकराः वानराः कपयः वारणाः गजाः शरभाः अष्टपादाः (सिंहघातकाः जन्तुविषेषाः) सिंहाः शार्दूलाः एते प्रभृतयः आद्याः येषां तैः, वनचरैः = वन्यजन्तुभिः, आकर्ण्य-मानगीतानुविद्धविपञ्चीघोषाम् = आकर्ण्यमानः श्रूयमाणः गीतानुविद्धः गायन-संसक्तः विपञ्ची सप्ततन्त्रीविभूषितवीणा, "विपञ्ची सा तु तन्त्रीभिः सप्तभिः परिवादिनी" इत्यमरः, तस्याः घोषः मधुरध्वनिः यस्याः (कन्यकायाः) ताम् , नभसः = दिवः,

चरण-तल की प्रभा के सम्पर्क से लोहित रेशमी वस्त्र से अपने नितम्बों को ढँक रखा था। अपने समय से आये हुए निर्विकार एवं विनीत शिष्य की भाँति यौवन के द्वारा

वतीर्णाम्, दीक्षितवाचमिवाप्राकृताम्, त्रिपुरारिशरशलाकामिव तेजोमयीम्, पीतामृतामिव विगततृष्णाम्, ईशानशिरः शशिकलामिवानुपजातरागाम्, अमथितोदधिजलसम्पदमिवान्तः प्रसन्नाम्, असमस्तपदवृत्तिमिवाद्वन्द्वाम्, बौद्धबुद्धिमिव निरालम्बनाम्, वैदेहीमिव प्राप्तज्योतिःप्रवे-

अवतीर्णाम् = आगताम्, **अमरापगां** = देवनदीम्, इव विद्यमानाम्, (द्रव्योत्प्रेक्षा), **दीक्षितवाचमिव** = दीक्षितस्य यागादौ प्रवर्तमानस्य वाचम् वाणीम्, इव, यागादौ दीक्षितस्य प्राकृतभाषाव्यवहारः निषिद्धः, **अप्राकृताम्** = दिव्यां (पक्षे—प्राकृतभाषारहितां = संस्कृताम्,), **त्रिपुरारिशरशलाकामिव** = त्रिपुरारिः त्रिपुरान्तकः (महादेवः) तस्य शरशलाकां बाणयष्टिकाम्, इव, **तेजोमयीं** = तेजः प्रचुराम्, **पीतामृतामिव** = पीतम् आस्वादितम् अमृतं सुधा यया ताम्, इव, **विगततृष्णाम्** = विगता दूरीभूता तृष्णा विषयलोभः यस्याः ताम् (पक्षे-तृष्णा पिपासा), **ईशानशिरःशशिकलामिव** = ईशानः शिवः तस्य शिरसः मूर्ध्नः या शशिकला चन्द्रकला तामिव, **अनुपजातरागाम्** = अनुपजातः अनुद्भूतः रागः विषयानुरागः (पक्षे-लौहित्यं) यस्याः सा ताम् (विरक्ताम् इति भावः)—शिवशिरसि स्थितायां शशिकलायां उदयास्तभावयोः अभावात् लौहित्यं न जायते इति तात्पर्यम्, **अमथितोदधिजलसम्पदमिव** = अमथितस्य अविलोडितस्य उदधेः सागरस्य जलसम्पदम् सलिलसम्पत्तिम्, इव, **अन्तः** = मनसि, **प्रसन्नां** = निर्मलां—सांसारिकरागद्वेषादिविकारशून्यामिति भावः (पक्षे-अन्तः जलप्रवाहमध्ये प्रसन्नां निर्मलां अनाविलाम्) **असमस्तपदवृत्तिमिव** = असमस्ता समासरहिता या पदवृत्तिः कैशिक्यादिः तामिव, **अद्वन्द्वाम्** = सुखदुःखादिद्वन्द्वरहिताम् (पक्षे-अद्वन्द्वाम् द्वन्द्वसमासरहिताम्), **बौद्धबुद्धिमिव** = बौद्धाः बुद्धानुगामिनः तेषां बुद्धिं ज्ञानम्, इव, **निरालम्बनां** = निर्गतं दूरीभूतम् आलम्बनं संसारासक्तिः यस्याः ताम् (पक्षे–निरालम्बनां निराश्रयाम्), **वैदेहीमिव** = विदेहस्य अपत्यं स्त्री वैदेही सीता ताम्, इव, **प्राप्तज्योतिःप्रवेशाम्** = प्राप्तः ज्योतिषि परमात्मनि प्रवेशः यया ताम् (पक्षे–सतीत्वपरीक्षणाय प्राप्तः ज्योतिषि अग्नौ प्रवेशः यया ताम्),

भी वह उपस्थित थी; जैसे पुण्यार्जन किये हुए निर्मल लावण्य से भी वह परिगृहीत थी। सुन्दर नयन वाले तथा चंचलता से विहीन आश्रम के मृग के सदृश रूप से भी वह सेवित थी। वह अपने दाहिने हाथ से गोद में बैठी अपनी पुत्री की भाँति दन्तमयी वीणा बजा रही थी। उसका हाथ शंख के छोटे टुकड़ों से निर्मित मुद्रिकाओं से भरी अँगुलियों से युक्त, त्रिपुण्ड्र लगाने से बचे हुए भस्म से धवल तथा मणि-बन्ध (कलाई) में बँधे हुए शङ्ख के टुकड़े से समन्वित एवं नख-प्रभा की प्रखरता से मानो हस्ति-दन्त से निर्मित नकी से वह मानो मूर्तिमती गन्धर्व विद्या हो। मण्डप के मणिस्तम्भों में पड़ती हुई छाया-मूर्त्तियों से, जो मानो वीणा बजाती हुई आत्मानुरूप सहचरी सखियाँ हों, वह उपेत थी। स्नान कराने से भींगे हुए शिव-लिङ्ग में प्रतिबिम्ब पड़ने

शाम्, द्यूतकलाकुशलामिव वशीकृताक्षहृदयाम्, महीमिव जलभृतदेहाम्, हिमसमयदिनमुखलक्ष्मीमिव परिपीतभास्करातपाम्, आर्यामिव समुपात्तयतिगणोचितमात्राम्, आलिखितामिवाचलावस्थानाम्, अंशुमयीमिव तनु-

द्यूतकलाकुशलामिव = द्यूतकला दुरोदर क्रीडा तत्र कुशलां प्रवीणाम्, इव, वशीकृताक्षहृदयाम् = वशीकृतानि स्वायत्तीकृतानि अक्षाणि इन्द्रियाणि हृदयं मनः च यया ताम् (पक्षे—वशीकृतम् अक्षहृदयम् द्यूतक्रीडारहस्यम् अथवा वशीकृतम् अक्षैः पाशैः हृदयं यस्याः ताम्), महीमिव = पृथिवीम्, इव, जलभृतदेहाम् = जलेन भृतं धृतं पुष्टं वा देहं शरीरं यया ताम् 'भृञ् धारणपोषणयोः' (पक्षे—जलेन भृतम् आवेष्टितम् देहं यस्याः ताम्)—सा केवल जलपानेनैव देहं धारयति न तु अन्नादिना इति भावः, हिमसमयदिनमुखलक्ष्मीमिव = हिमसमयः शीतकालः तस्य दिनमुखं प्रभातं तस्य लक्ष्मीं शोभाम्, इव, परिपीतभास्करातपाम् = परिपीतः व्रतानुरोधात् गृहीतः भास्करस्य सूर्यस्य आतपः "यया ताम्। 'तपस्विनां सूर्यातपग्रहण महाफलाय" इति श्रुतेः (पक्षे—परिपीतः हिमैः मन्दीकृतः भास्करातपः सूर्यस्य उष्णता यया ताम्), आर्यामिव आर्या (छन्दोविशेषः)—"यस्याः पादे प्रथमे द्वादशमात्रास्तथा तृतीयेऽपि। अष्टादश द्वितीये चतुर्थ के पञ्चदश सार्या ॥" इतिलक्षणलक्षिता ताम्, इव, समुपात्तयतिगणोचितमात्राम् = समुपात्ता स्वीकृता यतिगणस्य वशीकृतेन्द्रियस्य तपस्विवर्गस्य उचिता योग्या मात्रा तपसः उपकरणं (दण्डकमण्डल्वादिकम्) यया ताम् (पक्षे—समुपात्ता गृहीता यतिः विश्रामस्थानं गणाः 'यमाताराजभानसलगम्' इत्यादिना सङ्केतिताः यगणादयः तेषाम् उचिता योग्या मात्रा उच्चारणकालः च यया ताम्), आलिखितामिव = चित्रगताम्, इव, अचलावस्थानाम् = अचले पर्वते अवस्थानं स्थितिः यस्याः ताम् (पक्षे—अचलं निश्चलम् अवस्थानम् अवस्थितिः यस्याः ताम्), अंशुमयीमिव = तेजोमयीम्, इव, तनुच्छायानुलिप्तभूतलाम् = तनुः शरीरं तस्य

के कारण मानो वह अत्यधिक भक्ति से पूजित शिव के हृदय में प्रविष्ट हो। वह शिव की स्तुति गीति गा रही थी, वह गीति कण्ठ में पहने गए हार की तरह उसके कण्ठ में संलग्न थी, ध्रुव से सम्बद्ध ग्रहपंक्ति की भाँति वह गीति ध्रुव (ध्रुपद) से बंधी हुई थी; रक्तमुख-वर्ण वाली कुपिता नारी की तरह वह गीति भी राग-युक्त वर्ण वाली थी; अलस तथा चंचल पुतलियों वाली मदोन्मत्त नारी की तरह वह गीति भी मन्द्र तथा तार संगीत स्वर समन्वित थी; अनेक प्रकार की तालियाँ बजाती मदोन्मत्त नारी की भाँति वह गीति भी अनेक ताल से युक्त थी, अनेक भावनाओं (शाब्दी तथा आर्थी) से अनुविद्ध मीमांसा के समान वह गीति भी विविध भावनाओं [मूर्च्छनाओं] से सें समन्वित थी। उसके अति मधुर गीत से आकृष्ट (अतएव) मंडलाकार रूप से (चारों ओर) स्थित मृग, सूकर, वानर, हाथी, शरभ तथा सिंह आदि वन्य-पशु निश्चल कर्ण-पुट से गीत के साथ (बजती हुई) वीणा की ध्वनि सुन रहे थे

च्छायानुलिप्तभूतलाम् , निर्ममां निरहङ्कारां निर्मत्सराम् , अमानुषाकृतिं दिव्यत्वादपरिज्ञायमानवयःप्रमाणामप्यष्टादशवर्षदेशीयामिवोपलक्ष्यमाणां प्रतिपन्नपाशुपतव्रतां कन्यकां ददर्श ।

छाया दीप्तिः तया अनुलिप्तं व्याप्तं भूतलं पृथिवीतलं यया ताम्, (दीक्षितवाचमित्यतः आरभ्य अत्र यावत् श्लेषानुप्राणिता पूर्णोपमा), निर्ममां = ममतारहितां (विरक्ताम्), निरहङ्कारां = निरभिमानां, निर्मत्सराम् = अन्यशुभद्वेषः मत्सरः तेन रहिताम्, 'मत्सरोऽन्यशुभद्वेषेतद्वत् कृपणयोस्त्रिषु' इत्यमरः, अमानुषाकृतिं = न वर्तते मानुषस्य आकृतिःस्वरूपं यस्याः सा ताम्—अलौकिकरूपवतीमिति भावः, दिव्यत्वात् = दिव्यरूपत्वात्, अपरिज्ञायमानवयःप्रमाणामपि = अपरिज्ञायमानम् अनिश्चीयमानं वयसः आयुषः प्रमाणं वर्षगणनयामानं यस्याः सा ताम्, (तथाभूताम्) अपि, अष्टादशवर्षदेऽशीयामिव = किञ्चिन्न्यूनाष्टादशवर्षीयाम्, इव— 'ईषदसमाप्तौ कल्पब्देश्यदेशीयरः' इति सूत्रेण अष्टादशवर्षशब्दात् 'देशीयर्' प्रत्ययः, उपलक्ष्यमाणां = प्रतीयमानां, प्रतिपन्नपाशुपतव्रतां = प्रतिपन्नं गृहीतं पाशुपतं शिवसम्बन्धिव्रतं यया ताम्, कन्यकाम् = महाश्वेतेति नाम्नीं कुमारीं, ददर्श = अवलोकयामास चन्द्रापीडः इति शेषः ।

मानो वे ध्यान का अभ्यास कर रहे हों। वह आकाश से उतरी हुई स्वर्ग की गङ्गा के समान थी, (या) (यज्ञ में) दीक्षित व्यक्ति की संस्कृत वाणी की भाँति (दिव्य) थी। वह त्रिपुरारि (महादेव) के बाणशलाका की तरह तेजोमयी (और) अमृत-पान से जलपिपासा रहित की भाँति सब तृष्णाओं से रहित थी। शम्भु के ललाटस्थित रक्तिमा-विहीन चन्द्रकला की तरह वह राग (विषयासक्ति) से रहित थी। बिना मथे गये समुद्र की जलसम्पत्ति (जल-वैभव) की तरह उसका अन्तःकरण प्रसन्न (काम-विकार से रहित) था। (द्वन्द्व) समास से रहित पद-वृत्ति की भाँति वह भी सुख-दुःखादि द्वन्द्वों से रहित थी। आलम्बन (विषय) रहित बौद्धों के ज्ञान की तरह वह भी आसक्ति रहित थी। अग्नि में प्रविष्ट वैदेही की भाँति वह भी परब्रह्म में प्रविष्ट थी। पाश-विद्या को अपने अधीन कर लेने वाली द्यूत-कला में कुशल नारी के समान वह भी हृदय तथा इन्द्रियों को वश में करने वाली थी। जल से परिवेष्टित देह वाली पृथिवी की भाँति वह जल-मात्र से शरीर धारण करने वाली थी। सूर्य की उष्णता का हरण करने वाली शीत काल की प्रातःशोभा के समान वह सूर्य-प्रकाश को पीने वाली थी। यति और गणों के उपयुक्त मात्राओं से युक्त आर्या छन्द की भाँति वह मुनिजनों के योग्य सम्पत्ति (दण्ड-कमण्डलु आदि) से युक्त थी। निश्चल भाव से स्थिर चित्रित मूर्ति की तरह वह पर्वत पर स्थिर रहती थी। (अपने) शारीरिक तेज से भूतल को रंजित कर देने वाली तेजोमयी मूर्ति के समान वह भी (अपनी) शारीरिक-द्युति से पृथिवी को व्याप्त कर रही थी। वह ममता, अहंकार तथा मत्सरता

ततोऽवतीर्य तरुशाखायां बद्ध्वा तुरङ्गमुपसृत्य भगवते भक्त्या प्रणम्य त्रिलोचनाय तामेव दिव्ययोषितमनिमेषपक्ष्मणां निश्चलनिबद्धलक्ष्येण चक्षुषा पुनर्निरूपयामास। उदपादि चास्य तस्या रूपसम्पदा कान्त्या प्रशान्त्या चाविर्भूतविस्मयस्य मनसि "अहो जगति जन्तूनामसमर्थितोपनतान्यापतन्ति वृत्तान्तान्तराणि। तथा हि-मयामृगयायां यदृच्छया निरर्थकमनुबध्नता तुरङ्गमुखमिथुनमयमतिमनोहरो मानवानामगम्यो दिव्यजनसंचरणोचितः प्रदेशो वीक्षितः। अत्र च सलिलमन्वेषमाणेन हृदयहारि सिद्धजनोपसृष्टजलं सरो

ततः = कन्यकादर्शनानन्तरं, अवतीर्य = अश्वात् अवतरणं विधाय, तरुशाखायां = तरोः वृक्षस्य शाखायां, तुरङ्गम् = अश्वं बद्ध्वा = संयम्य, उपसृत्य = समीपं गत्वा, भगवते = ऐश्वर्यशालिने, त्रिलोचनाय = शिवाय, भक्त्या = श्रद्धया, प्रणम्य = नमस्कृत्य, ताम् = पूर्वोक्ताम्, एव, दिव्ययोषितं = दिव्यरमणीम्, अनिमेषपक्ष्मणा = अनिमेषं निमेषरहितं पक्ष्म नेत्रलोम यस्य तेन, निश्चलनिबद्धलक्ष्येण = निश्चलं स्थिरं यथा स्यात् तथा निबद्धं विहितं लक्ष्यं दृष्टिः येन तेन, चक्षुषा = नयनेन, पुनः = भूयः, निरूपयामास = पूर्णतः विलोकयामास। तस्याः = कन्यकायाः, रूपसम्पदा = सौन्दर्य्यसम्पत्त्या, कान्त्या = दीप्त्या, प्रशान्त्या = परमशान्त्या, च, आविर्भूतविस्मयस्य = आविर्भूतः जातः विस्मयः आश्चर्यं यस्य तस्य तथा भूतस्य, अस्य = चन्द्रापीडस्य, मनसि = हृदये, उदपादि = उत्पन्नः अयं विचारः इतिशेषः, "अहो ? = आश्चर्यं, जगति = संसारे, जन्तूनां = प्राणिनाम्, असमर्थितोपनतानि = अतर्कितप्राप्तानि, वृत्तान्तान्तराणि = विविधाः वृत्तान्ताः, आपतन्ति = समागच्छन्ति। तथाहि, मया = चन्द्रापीडेन, मृगयायाम् = आखेटे, यदृच्छया = स्वेच्छया, निरर्थकं = निष्प्रयोजनं, तुरङ्गमुखमिथुनम् = किन्नरयुगलम्, अनुबध्नता = अनुसरता, अयम् = एषः (दृश्यमानः), अतिमनोहरः = नितान्तरमणीयः, मानवानाम् = मनुष्याणाम्, अगम्यः = अप्राप्यः, दिव्यजनसंचरणोचितः = दिव्यजनानां किन्नरादीनां संचरणोचितः भ्रमणयोग्यः प्रदेशः भूभागः, वीक्षितः = अवलोकितः। अत्र = अस्मिन् प्रदेशे, च सलिला = जलम्, अन्वेषमाणेन = मार्गयता देवयोनिविशेषैः (मया), हृदयहारि = मनोहरं, सिद्धजनोपसृष्टजलम् = सिद्धजनैः "विद्याधरोऽप्सरोयक्षरक्षोगन्धर्वकिन्नराः। पिशाचोगुह्यकः सिद्धो, भूतोऽमी-देवयोनयः॥" इत्यमरः, उपसृष्टं सेवितं जलं यस्य तत्, सरः = अच्छोदाभिधानं

से विहीन थी। उसकी आकृति अलौकिक थी। (उसके) दिव्य रूप के कारण उसकी आयु का सही ज्ञान नहीं होता था, फिर भी उसकी वय अठारह वर्ष के लगभग जान पड़ती थी।

इसके बाद घोड़े से उतर कर तथा उसे वृक्ष की शाखा में बाँध कर (एवं) समीप जाकर चन्द्रापीड ने भक्तिपूर्वक भगवान् शंकर को प्रणाम किया और

दृष्टम्। तत्तीरलेखाविश्रान्तेन चामानुषं गीतमाकर्णितम्। तच्चानुसरता मानुषदुर्लभदर्शना दिव्यकन्यकेयमालोकिता। नहि मे संशीतिरस्या दिव्यतां प्रति। आकृतिरेवानुमापयत्यमानुषताम्। कुतश्च मर्त्यलोके संभूतिरेवंविधानां गन्धर्वध्वनिविशेषाणाम्। तद्यदि मे सहसा, दर्शनपथान्नापयाति, नारोहति वा कैलासशिखरम्, नोत्पतति वा गगनतलम्, ततः 'का त्वम्, किमभिधाना वा,

तडागं, दृष्टम् = विलोकितम्। तत्तीरलेखाविश्रान्तेन = तस्य सरसः तीरलेखायां तटपङ्क्त्यां विश्रान्तेन कृतविश्रामेण (मया), अमानुषं = दिव्यं, गीतम् = गानम्, आकर्णितम् = श्रुतम्। तत् = गानं च, अनुसरता = अनुगच्छता, मानुषदुर्लभदर्शना = मानुषाणां मनुष्याणां (कृते) दुर्लभं दुष्प्राप्यं दर्शनम् अवलोकनं यस्याः सा, इयं = पुरोवर्तिनी, दिव्यकन्यका = दिव्यकन्या, आलोकिता = वीक्षिता। अस्याः = सम्मुखस्थितायाः कन्यकायाः, दिव्यताम् = अलौकिकतां, प्रति, मे = मम (चन्द्रापीडस्य), नहि = नैव, संशीति = संशयः (विद्यते)। कथं न संशीतिः इत्याह–आकृतिः = आकारः, एव = अवधारणे, अमानुषताम् = अस्याः दिव्यताम्, अनुमापयति = अनुमितिं कारयति। एवं विधानाम् = एतादृशानां, गन्धर्वध्वनिविशेषाणाम् = गन्धर्वाः देवगायकाः तेषां ध्वनेः नादस्य विशेषाणां मन्द्रादीनाम्, संभूतिः = उत्पत्तिः, मर्त्यलोके = पृथिवीतले, कुतः = कस्मात्, च। तत = तस्मात् हेतोः, यदि = चेत्, (इयं) मे = मम, दर्शनपथात् = दृष्टिमार्गात्, सहसा = झटिति, न = नहि, अपयाति = अपगच्छति, वा = अथवा, कैलासशिखरं = कैलासशृङ्गं, नारोहति = आरोहणं न करोति, वा, गगनतलम् = आकाशतलं, नोत्पतति = न उद्गच्छति, ततः तावत्, 'का त्वम्?, किमभिधाना =

टकटकी बाँधकर अपलक नयनों से उस दिव्य रमणी को ही पुनः देखने लगा। उसकी सौन्दर्य्य-सम्पत्ति, कान्ति एवं परम शान्ति से विस्मित उसके मन में विचार उत्पन्न हुआ, "अहो! संसार में प्राणियों के सामने अतर्कित रूप से उपलब्ध बहुत से दूसरे वृत्तान्त सहसा आ जाते हैं। क्योंकि शिकार के सिलसिले में स्वेच्छा से किन्नरजोड़े का व्यर्थ ही पीछा करते हुये मैंने अत्यन्त मनोहारी, मानवों की पहुँच के बाहर तथा दिव्य प्राणियों के भ्रमण योग्य इस प्रदेश को देखा। फिर यहाँ पानी की खोज करतें हुये (मुझे) मनोहारी तथा सिद्धजनों से सेवित जलवाला तालाब दिखलाई पड़ा। उसके किनारे विश्राम करते हुये मैंने दिव्य गीत सुना। उसका (गीत का) अनुसरण करते हुए (मैंने) मनुष्यों के लिए दर्शन-दुर्लभ इस कन्या को देखा। इसकी दिव्यता के विषय में मुझे थोड़ा भी सन्देह नहीं है, क्योंकि (इसकी) आकृति ही (इसकी) देवरूपता का अनुमान करा रही है। इस प्रकार की विशिष्ट गन्धर्वध्वनि की उत्पत्ति मर्त्यलोक में कहाँ से हो सकती है? इसलिये यदि यह सहसा ही मेरी दृष्टि से ओझल नहीं हो जाती, अथवा कैलाश के शिखर पर चढ़ नहीं जाती,

किमर्थं वा प्रथमे वयसि प्रतिपन्ना व्रतम्', इति सर्वमेतदेनामुपसृत्य पृच्छामि। अतिमहानयमवकाश आश्चर्याणाम्'' इत्यवधार्य तस्यामेव स्फटिकमण्डपिकायामन्यतमं स्तम्भमाश्रित्य समुपविष्टो गीतसमाप्त्यवसरं प्रतीक्षमाणस्तस्थौ।

अथ गीतावसाने मूकीभूतवीणा प्रशान्तमधुकररुतेव कुमुदिनी सा कन्यका समुत्थाय प्रदक्षिणीकृत्य कृतहरप्रणामा परिवृत्य स्वभावधवलया तपःप्रभाव-

किंनाम्नी वा ? किमर्थं = कस्मै प्रयोजनाय, प्रथमे = कौमारे, वयसि = अवस्थायां, व्रतम् = नियमं, प्रतिपन्ना = समारब्धवती ?' इति = एवं सर्वम् = अखिलम्, एनां = कन्यकाम्, उपसृत्य = समीपं गत्वा, पृच्छामि = प्रश्नं करोमि। आश्चर्याणां = विस्मयानाम्, अतिमहान् = सर्वातिशायी, अयम् = अवकाशः = स्थानम्, महाश्चर्याणां स्थानमियं कन्या इति भावः।' इति = पूर्वचिन्तितम्, अवधार्य = मनसि निश्चित्य, तस्यामेव = पूर्ववर्णितायामेव स्फटिकमण्डपिकायाम्, अन्यतमम् = एकतमं, स्तम्भं = स्थूणाम्, आश्रित्य = अवलम्ब्य, समुपविष्टः = निषण्णः, गीतसमाप्त्यवसरं = गीतस्य गानस्य समाप्तेः अवसानस्य अवसरं कालं, प्रतीक्षमाणः = प्रतीक्षां कुर्वाणः, तस्थौ = स्थितः।

अथ = अनन्तरं, गीतावसाने = गानसमाप्तौ, मूकीभूतवीणा = मूकीभूता मौनं गता वीणा वल्लकी यस्याः सा, (अतएव) प्रशान्तमधुकररुता = प्रशान्तं शान्तिं प्राप्तं मधुकराणां भ्रमराणां रुतं गुञ्जनं यस्यां तथाभूता, कुमुदिनी = नलिनी इव, सा = पूर्ववर्णिता, कन्यका = महाश्वेता, समुत्थाय = उत्थानं कृत्वा, प्रदक्षिणीकृत्य = प्रदक्षिणां विधाय, कृतहरप्रणामा = कृतः विहितः हराय शिवाय प्रणामः प्रणतिः यया सा, परिवृत्य = परावर्तनं कृत्वा, स्वभावधवलया = स्वभावतः निसर्गतः धवलया शुभ्रया, तपःप्रभावप्रगल्भया = तपसः तपश्चर्यायाः प्रभावेण माहात्म्येन

आकाश में उड़ नहीं जाती, तो मैं 'तुम कौन हो ? या तुम्हारा नाम क्या है ! अथवा किस लिए तुमने युवावस्था में व्रत (पाशुपतव्रत) स्वीकार किया है ?' यह सब इसके समीप जाकर पूछूँगा। आश्चर्यों के लिये यह (कन्या) बहुत बड़ा है।'' ऐसा निश्चय कर (वह) उसी स्फटिक-मण्डप के एक खंभे का सहारा लेकर बैठ गया तथा गीत-समाप्ति के अवसर की प्रतीक्षा करता हुआ (वहीं) अवस्थित रहा।

इसके अनन्तर गीत के समाप्त हो जाने पर भौंरों के मधुर गुञ्जन से रहित कुमुदिनी की भाँति निःशब्द वीणा को धारण करने वाली उस कन्या ने उठकर प्रदक्षिणा के बाद शंकर को प्रणाम किया तथा पीछे घूमकर (अपनी) स्वभावतः धवल एवं तपस्या के प्रभाव से प्रौढ़ दृष्टि से मानो (चन्द्रापीड को) आश्वासन देती हुई, पुण्यों से स्पर्श करती हुई, तीर्थ-जलों से प्रक्षालन करती हुई, तपस्या से पावन बनाती हुई, निर्मलता का सम्पादन करती हुई, वरदान का उपपादन (विधान) करती हुई, पवित्रता की प्राप्ति कराती हुई, चन्द्रापीड से बोली—"अभ्यागत का स्वागत है !

प्रगल्भया दृष्ट्या समाश्वासयन्तीव, पुण्यैरिव स्पृशन्ती, तीर्थजलैरिव प्रक्षालयन्ती, तपोभिरिव पावयन्ती, शुद्धिमिव कुर्वाणा, वरप्रदानमिवोपपादयन्ती, पवित्रतामिव नयन्ती, चन्द्रापीडमाबभाषे, 'स्वागतमतिथये, कथमिमां भूमिमनुप्राप्तो महाभागस्तदुत्तिष्ठागम्यतामनुभूयतामतिथिसत्कारः' इति। एवमुक्तस्तु तया सम्भाषणमात्रेणैवानुगृहीतमात्मानं मन्यमान उत्थाय भक्त्या कृतप्रणामः, 'भगवति यथाज्ञापयसि' इत्यभिधाय दर्शितविनयः शिष्य इव तां व्रजन्ती-

प्रगल्भया प्रौढ्या, दृष्ट्या = अवलोकनेन, समाश्वासयन्तीव = आश्वासनं विदधती, इव, पुण्यैः = सुकृतैः, स्पृशन्ती = स्पर्शं कुर्वाणा, इव, तीर्थजलैः = तीर्थसलिलैः, प्रक्षालयन्ती = मार्जयन्ती इव, तपोभिः = तपस्याभिः, पावयन्ती = पवित्रयन्ती इव, शुद्धिं = निर्मलतां, कुर्वाणा = विदधाना इव, वरप्रदानम् = अभीष्टदानम्, उपपादयन्ती = सम्पादयन्ती इव. पवित्रता = पावनतां, नयन्ती = प्रापयन्ती इव, चन्द्रापीडम् = स्वसम्मुखीनं तारापीडयुतम् आबभाषे = उवाच। कुमुदिनीव इत्यत्र उपमा, समाश्वासयन्तीव इत्यतः आरभ्य नयन्तीवेति यावत् क्रियोत्प्रेक्षा, मिथोऽनपेक्षतया च संसृष्टिः। "अतिथये = अभ्यागताय, स्वागतम् = शुभागमनम् ('स्वागतम्' इति शब्दस्य प्रयोगे सम्बोध्यमाने चतुर्थी अपि प्रयुज्यते यथा—"स्वागतं देव्यैः" मालवि०, अनेन चन्द्रापीडं प्रति महाश्वेताकृतं अभिवादनमेव व्यक्तम्), महाभागः = महान् भागः यस्य सः (महानुभावः) इमाम् = एतां, भूमिं = प्रदेशं, कथं = केनप्रकारेण, अनुप्राप्तः = समागतः? तत् = तस्मात्, उत्तिष्ठ = उत्थानं विधीयताम्, आगम्यताम् = मया सहेति शेषः, अतिथिसत्कारः = आतिथ्यम्. अनुभूयताम् = अनुभवविषयीक्रियताम्' इति। तया = कन्यकया, एवम् = इत्थम्, उक्तः = कथितः, (चन्द्रापीडः) तु सम्भाषणमात्रेणैव = केवलसलापेनैव, आत्मानं = स्वम्, अनुगृहीतं = कृपापात्रं, मन्यमानः = अवगच्छन्, उत्थाय = उत्थानंविधाय, भक्त्या = श्रद्धया, कृतप्रणामः = कृतः विहितः प्रणामः नमस्कारः येन सः, भगवति = देवि। यथा = येन विधिना, आज्ञापयसि = आदिशसि', तथैव करोमि इति शेषः, इति = एवम्, अभिधाय = उक्त्वा, दर्शितविनयः = दर्शितः प्रकाशितः विनयः विनम्रता येन सः (शिष्यचन्द्रापीडयोर्विशेषणम्), शिष्यः = छात्रः, इव = यथा, व्रजन्तीं =

महाभाग यहाँ कैसे पहुँचे! तो उठिये, आइये अतिथि-सत्कार का अनुभव करिये।' उसके ऐसा कहने पर केवल सम्भाषण से ही अपने को अनुगृहीत मानते हुये, (चन्द्रापीड ने) उठकर उसको भक्तिपूर्वक प्रणाम किया तथा 'देवी! आपकी जैसी आज्ञा', यह कहकर (वह) जाती हुई उसके पीछे-पीछे विनीत शिष्य की भाँति चला। जाते हुये उसके (मन में) निश्चय किया—"अरे! यह मुझे देखकर अन्तर्हित नहीं हुई, अतः कुतूहल वश मेरे हृदय में प्रश्न करने की अभिलाषा ने स्थान बना लिया। तपस्वियों के लिये दुर्लभ एवं दिव्य रूप वाली इस कन्या का (मेरे प्रति)

मनुवव्राज । व्रजंश्च समर्थयामास, 'हन्त तावन्नेयं मां दृष्ट्वा तिरोभूता, कृतं हि मे कुतूहलेन प्रश्नाशया हृदि पदम् । यथा चेयमस्यास्तपस्विजनदुर्लभदिव्यरूपाया अपि दाक्षिण्यातिशया प्रतिपत्तिरभिजाता विभाव्यते तथा सम्भावयामि नियतमियखिलमात्मोदन्तमभ्यर्थ्यमाना मया कथयिष्यति' इति । एवं च कृतमतिः पदशतमात्रमिव गत्वा निरन्तरैर्दिवापि रजनीसमयमिव दर्शयद्भिस्तमालतरुभिरन्धकारितपुरोभागाम्, उत्फुल्लकुसुमेषु लतानिकुञ्जेषु

गच्छन्तीं तां = कन्यकाम्, अनुवव्राज = अनुससार (पूर्णोपमा) । व्रजन् = कन्यकामनुगच्छन्, च समर्थयामास = मनसि निश्चयं चकार—हन्त ! = हर्षबोधकमव्ययम्, "हन्त हर्षेऽनुकम्पायां वाक्यारम्भविषादयोः" इत्यमरः, इयम् = एषा दिव्यकन्यका, तावत् = आदौ, मां = चन्द्रापीडं, दृष्ट्वा = विलोक्य, न = नहि, तिरोभूता = अन्तर्हिता, (अतः) हि = तस्मात्, कुतूहलेन = कौतुकेन, प्रश्नाशया = पृच्छाभिलाषेण, मे = मम, हृदि = मनसि, पदम् = स्थानं, कृतम् = विहितम् (अहं पिपृच्छुर भवम् इति (भावः) । तपस्विजनदुर्लभदिव्यरूपायाः = तपस्विजनानां मुनिजनानां दुर्लभं दुष्प्राप्यं दिव्यम् अलौकिकम् रूपं सौन्दर्यं यस्याः तस्याः अपि, अस्याः = कन्यकायाः, यथा = येन प्रकारेण, च, इयम् = एषा, दाक्षिण्यातिशया = दक्षिणस्य भावः दाक्षिण्यम् औदार्यं तस्य अतिशयः अधिकता यस्यां तादृशी, प्रतिपत्तिः = अतिथिसत्कारप्रवृत्तिः, अभिजाता = समुत्पन्ना, विभाव्यते = लक्ष्यते, तथा = तेन प्रकारेण, सम्भावयामि = सम्भावनां करोमि, (यत्) मया = चन्द्रापीडेन, अभ्यर्थ्यमाना = प्रार्थ्यमाना, इयम् = एषा, नियतं = निश्चितम्, अखिलम् = सम्पूर्णम्, आत्मोदन्तम् = आत्मनः स्वस्य उदन्तं वृत्तान्तं, कथयिष्यति = वदिष्यति" इति । एवं = पूर्वोक्तप्रकारेण, च = इतरेतरयोगे, कृतमतिः = कृता विहिता मतिः बुद्धिः येन तथाभूतः, पदशतमात्रमिव = किञ्चिदध्वानमतिक्रम्येति भावः, गत्वा = यात्वा, "गुहामद्राक्षीत्"—इति दूरस्थक्रियया सम्बन्धः, अत्र द्वितीयैकवचनान्तानि स्त्रीलिङ्गपदानि 'गुहाम्' इति पदस्य विशेषणानि निरन्तरैः = सघनैः, (अतएव) दिवापि = दिवसे अपि, रजनीसमयम् = रात्रिकालम्, दर्शयद्भिः = प्रकाशयद्भिः, इव, तमालतरुभिः = तापिच्छवृक्षैः, अन्धकारितपुरोभागाम् = अन्धकारितः उत्पादितान्धकारः पुरोभागः अग्रप्रदेशः यस्याः ताम्, उत्फुल्लकुसुमेषु = उत्फुल्लानि विकसितानि कुसुमानि पुष्पाणि येषु तेषु तादृशेषु, लतानिकुञ्जेषु = लतामण्डपेषु, मन्द्रं

उदारताधिक्य से परिपूर्ण जैसा शिष्टाचार परिलक्षित होता है, उससे ऐसी संभावना करता हूँ कि मेरे निवेदन करने पर निश्चय ही यह अपना पूरा वृत्तान्त कह देगी' और इस प्रकार विचार करने वाले (चन्द्रापीड ने) केवल सौ पग जाने पर ही (एक) कन्दरा देखी । उसका अग्रभाग दिन में भी मानो रात्रि-काल उपस्थित करने वाले सघन तमाल वृक्षों के कारण अन्धकारपूर्ण था (तथा) विकसित कुसुमों से भरे

कुजतां मन्द्रं मदमत्तमधुलिहां विरुतिभिर्मुखरीकृतपर्यन्ताम् , अतिदूरपातिनीनां च धवलशिलातलप्रतिघातोत्पतनफेनिलानामपां प्रस्रवणैरुत्कोटिग्रावविटङ्कविपाट्यमानैरुच्चरद्ध्वनिभिरवशीर्यमाणतुषारशिशिरसीकरासारैराबध्यमाननीहाराम् ,हिमहारहरहासधवलैश्चोभयतः क्षरद्भिर्निर्झरैर्द्वारावलम्बितचलच्चामरकलापामिवोपलक्ष्यमाणाम्,अन्तःस्थापितमणिकमण्डलुमण्डलाम् ,एकान्तावलम्बित-

=गम्भीरं यथा स्यात्तथा, कूजतां = गुञ्जनं कुर्वताम्, मदमत्तमधुलिहाम् = मदमत्ताः मदोन्मत्ताः ये मधुलिहः भ्रमराः तेषां, विरुतिभिः = झङ्कारै, मुखरीकृतपर्यन्ताम् = मुखरीकृतः वाचलीकृतः पर्यन्तः प्रान्तदेशः यस्याः ताम्, अतिदूरपातिनीनाम् = अतिदूरात् पतितुं शीलं यासां तासाम्, धवलशिलातलप्रतिघातोत्पतनफेनिलानाम् = धवलानि श्वेतानि यानि शिलातलानि प्रस्तरतलानि तेषु यः प्रतिघातः प्रतिस्खलन तस्मात् यत् उत्पतनम् उच्छलनं तेन फेनिलानां फेनयुक्तानाम्, अपां = जलानाम् (प्रस्रवणैः इति पदेनान्वयः) उत्कोटिग्रावविटङ्कविपाट्यमानैः = उत्कोटयः उन्नताग्राः ये ग्रावाणः पाषाणखण्डाः तेषां विटङ्काः शिरोभागाः तैः विपाट्यमानैः विदार्यमाणैः, उच्चरद्ध्वनिभिः = उच्चरन्तः स्खलनात् मुखराः ध्वनयः शब्दाः येषु तैः, अवशीर्यमाणतुषारशिशिरसीकरासारैः = अवशीर्यमाणाः प्रस्तरखण्डेषु पतनात् जर्जरिताः सन्तः तुषारवत् हिमवत् "अवश्यायस्तु नीहारस्तुषारस्तुहिनं हिममित्यमरः" शिशिराः शीतलाः शीकराः जलकणाः तेषाम् आसारः वेगवान् वर्षः येषां तैः, प्रस्रवणैः = निर्झरैः, आबध्यमाननीहाराम् = आबध्यमानाः उत्पाद्यमानाः नीहाराः जलकणाः यस्यां ताम् (स्वभावोक्तिः), पूर्वत्र तृतीयाबहुवचनान्तपदानि 'प्रस्रवणैः' इत्यस्य विशेषणानि–हिमहारहरहासधवलैः = हिमं तुहिनं हारः मुक्तामाला हरस्य शिवस्य हासः स्मितम् तद्वत् धवलाः श्वेताः तैः, च = इतरेतरयोगे, उभयतः = द्वारपार्श्वयुगले, क्षरद्भिः = प्रस्रवद्भिः, निर्झरैः = प्रस्रवणैः,द्वारावलम्बितचलच्चामरकलापामिव = द्वारे द्वारदेशे अवलम्बितः आश्रितः चलन् स्पन्दन् चामराणां बालव्यजनानां कलापः समूहः यस्याः ताम्, इव,उपलक्ष्यमाणां = दृश्यमानां (जात्युत्प्रेक्षा), अन्तःस्थापितमणिकमण्डलुमण्डलाम् = अन्तः अभ्यन्तरे स्थापितं न्यस्तं मणिनिर्मितकमण्डलूनां कुण्डिकानां मण्डलं समूहः यस्यां ताम्, एकान्तावलम्बितयोगपट्टिकाम् = एकान्ते एकभागे अवलम्बिता योगपट्टिका योगकालिकपरिधानविशेषः यस्याः तां (भावसमाधिकाले सन्यासिभिः धृतं वस्त्रं यत्

लताकुञ्जों में गम्भीर स्वर से गुञ्जन करने वाले मतवाले भ्रमरों के कूजन से (उसका) प्रान्त भाग मुखरित था। अत्यन्त दूर से गिरने वाले तथा धवल शिलाओं से टकराकर उछलने के कारण फेनमय जलों के झरने से उस गुफा मे नीहार भरी जा रही थी। (वे झरने) ऊपर की ओर उभड़ी कोर वाले पत्थरों की नोक से विदीर्ण, जोरों से शब्द करने वाले तथा खण्ड-खण्ड हुये वर्फ के समान शीतल जलकणों के वर्षण वाले थे। (उस गुहा के) दोनों

योगपट्टिकाम्, विशाखिकाशिखरनिबद्धनालिकेरीफलवल्कलमयधौतोपानद्युगोपेताम्, अवशीर्णाङ्गभस्मधूसरवल्कलशयनीयसनाथैकदेशाम्, इन्दुमण्डलेनेव टङ्कोत्कीर्णेन शङ्खमयेन भिक्षाकपालेनाधिष्ठिताम्, सन्निहितभस्मालाबुकां गुहामद्राक्षीत्। तस्याश्च द्वारि शिलातले समुपविष्टो वल्कलशयनशिरोभागविन्यस्तवीणां ततः पर्णपुटेन निर्झरादागृहीतमर्घसलिलमादाय तां कन्यकां

पृष्ठभागात् जानुपर्यन्तं शरीरमाच्छादयति तस्य 'योगपट्टिका' इति नाम), विशाखिकाशिखरनिबद्धनालिकेरीफलवल्कलमयधौतोपानद्युगोपेताम् = विशाखिका शिक्या (छींका--सिकहर इति हिन्दी) तस्याः शिखरे उपरिभागे निबद्धं संयतं नालिकेरीफलस्य लाङ्गलीफलस्य वल्कलमयं वृक्ष त्वग्विरचितं धौतं प्रक्षालितं यद् उपानहोः पादुकयोः युगलं द्वयं तेन उपेतां युक्ताम्, अवशीर्णाङ्गभस्मधूसरवल्कलशयनीयसनाथैकदेशाम् = अवशीर्णं स्खलितं यत् अङ्गभस्म देहविभूतिः तेन धूसरं मलिनं यत् वल्कलशयनीयं वल्कलमयी शय्या तेन सनाथः युक्तः ("शिलातलसनाथो लतामण्डपः"—विक्रमो०) एकदेशः एकभागः यस्याः ताम्, इन्दुमण्डलेनेव = चन्द्रबिम्बेन इव, टङ्कोत्कीर्णेन = टङ्कः प्रस्तरविदारकयन्त्रविशेषः हिन्दी भाषायां टाँकी-छीनी इति प्रसिद्धः) तेन उत्कीर्णम् उत्कारितं तेन, शङ्खमयेन = कम्बुदलरचितेन, भिक्षाकपालेन = भिक्षापात्रेण, अधिष्ठिताम् = आश्रिताम् (अत्रोपमा), सन्निहितभस्मालाबुकाम् = सन्निहिता निकटवर्तिनी भस्मनः विभूतेः (स्थापनार्थं) अलाबुका तुम्बिका यस्यां ताम्, गुहाम् = कन्दराम्, अद्राक्षीत् = विलोकयामास। तस्याः = कन्दरायाः, च, द्वारि = द्वारदेशे, शिलातले = प्रस्तरखण्डोपरि, समुपविष्टः = निषण्णः (चन्द्रापीडः) 'अब्रवीत्' इति क्रियया अन्वयः, वल्कलशयनशिरोभागविन्यस्तवीणाम् = वल्कलस्य तरुत्वचः यत् शयनं शय्या तस्य शिरोभागे मूर्धप्रान्ते विन्यस्ता संस्थापिता वीणा वल्लकी यया ताम्, ततः = वीणास्थापनानन्तरं, पर्णपुटेन = द्रोणेन, निर्झरात् = पूर्ववर्णितप्रस्रवणात्, आगृहीतम् = आनीतम्, अर्घसलिलम् = अर्घ्यजलम्, आदाय = गृहीत्वा, समुपस्थितां = समागतां, तां कन्यकां = महाश्वेताम्, "अलमतियन्त्रणया = मम सत्काराय

और हिम, हार (मुक्ताकलाप) एवं शङ्कर के हास्य के समान धवल वर्ण के बहने वाले झरनों से (ऐसा लगता था) मानो वह द्वार पर लटकने वाले चञ्चल चँवर समूह से युक्त थी। उसके भीतर अनेक मणिमय कमण्डलु थे तथा कोने में योग-पट्टिका लटक रही थी। सिकहर के ऊपर नारियल की जटा से निर्मित प्रक्षालित जूतों का जोड़ा रखा हुआ था। एक ओर उसके (महाश्वेता के) अङ्ग से गिरी हुई भस्म से धूसर वर्ण (मैली) वल्कल शय्या बिछी थी। (उसमें) टाँकी (छीनी) से काटकर बनाये गये चन्द्रमण्डल के समान शङ्ख-निर्मित भिक्षा का पात्र रखा था (तथा) समीप ही भस्म रखने के लिये एक तुम्बी रखी थी।

समुपस्थिताम् 'अलमतियन्त्रणया, कृतमतिप्रसादेन, भगवति, प्रसीद विमुच्यतामयमत्यादरः, त्वदीयमालोकनमपि सर्वपापप्रशमनमघमर्षणमिव पवित्रीकरणायालम्, आस्यताम्'' इत्यब्रवीत्। अनुबध्यमानश्च तया तां सर्वामतिथिसपर्यामतिदूरावनतेन शिरसा सप्रश्रयं प्रतिजग्राह।

कृतातिथ्यया च तया द्वितीयशिलातलोपविष्टया क्षणमिव तूष्णीं स्थित्वा क्रमेण परिपृष्टो दिग्विजयादारभ्य किन्नरमिथुनानुसरणप्रसङ्गेनागमनमात्मनः

अतिकष्टं मा कार्षीः, 'मास्म मालं च वारणे' इत्यमरः, अतिप्रसादेन अत्यन्तानुग्रहेण, कृतं = सृतम्, भगवति = तेजोमयि देवि !. प्रसीद = प्रसन्ना भव, अयम् = एषः, अत्यादरः = अतिसम्मानभावः, विमुच्यताम् = परित्यज्यताम्, त्वदीयं = भवदीयं, आलोकनं = दर्शनम्, अपि, सर्वपापप्रशमनम् = सर्वेषां पापानाम् दुष्कर्मणाम् प्रशमनम् विनाशकम्, अघमर्षणमिव = एतन्नामकं सूक्तमिव, पवित्रीकरणाय = पावनीकरणाय, अलं = पर्याप्तम्, आस्यताम् = उपविश्यताम्'', इति = एवम् अब्रवीत् = उवाच। तया = कन्यकया, अनुबध्यमानः = अनुरुध्यमानः च पुनः, तां = कन्यकया प्रस्तुतां, सर्वां = निखिलाम्, अतिथिसपर्याम् = अभ्यागतसत्कारम्, अतिदूरावनतेन = अतिविनतेन, शिरसा = मूर्ध्ना, सप्रश्रयं = सविनयं प्रतिजग्राह = स्वीचकार।

कृतातिथ्यया = कृतं सम्पादितम् आतिथ्यम् अतिथिसत्कारः यया तया, द्वितीयशिलातलोपविष्टया = द्वितीये अपरे शिलातले पाषाणतले उपविष्टया आसीनया, च = समुच्चये, तया = कन्यकया, क्षणमिव = क्षणमात्रमिव, अल्पकालमिति यावत् अत्र क्षणशब्दः न पारिभाषिकः त्रिंशत्कलापरिमितसमयवाची अपितु अल्पकालरूपेऽर्थे लाक्षणिकः, तूष्णीं = मौनं, स्थित्वा = अवस्थाय, क्रमेण परिपृष्टः कृतप्रश्नः (चन्द्रापीडः) दिग्विजयादारभ्य = आदिग्विजयात्, किन्नरमिथुनानुसरणप्रसङ्गेन

उस गुफा के द्वार पर स्थित शिलापर बैठा हुआ चन्द्रापीड वल्कल-शय्या के सिरहाने (अपनी) वीणा को रख चुकने के बाद पत्ते के दोनों में अर्घ्यजल लेकर उपस्थित उस कन्या से बोला—"अधिक कष्ट न करिये! आपने बड़ी कृपा की, देवि! आप प्रसन्न हों, (मेरे प्रति) इस अत्यन्त आदर-बुद्धि का परित्याग करें, आपका दर्शन भी, समस्त पापों के विनाशक अघमर्षण सूत्र की भाँति पवित्र करने के लिये पर्याप्त है, (अतएव) आप बैठ जाइये।" (चन्द्रापीड ने) उसके अनुरोध पर, समस्त अतिथि-सत्कार को, अत्यन्त दूर से शिर झुकाकर विनीत भाव से ग्रहण किया।

अतिथि-सत्कार करके दूसरी शिला पर बैठी हुई उस कन्या ने क्षणभर चुप रहकर (जब) क्रमशः चन्द्रापीड से (उसका वृत्तान्त) पूछा, (तब) उसने

सर्वमाचचक्षे। विदितसकलवृत्तान्ता चोत्थाय सा कन्यका भिक्षाकपालमादाय तेषामायतनतरूणां तलेषु विचचार। अचिरेण तस्याः स्वयंपतितैः फलैरपूर्यत भिक्षाभाजनम्। आगत्य च तेषां फलानामुपयोगाय नियुक्तवती चन्द्रापीडम्। आसीच्च तस्य चेतसि, "नास्ति खल्वसाध्यं नाम तपसाम्। किमतः परमाश्चर्यं यत्र व्यपगतचेतना अपि सचेतना इवास्यै भगवत्यै समतिसृजन्तः फलान्यात्मानुग्रहमुपपादयन्ति वनस्पतयः। चित्रमिदमालोकितमस्माभिरदृष्टपूर्वम्"।

=किन्नरमिथुनस्य किन्नरयुगलस्य यत् अनुसरणम् अनुगमनं तस्य प्रसङ्गेन वशेन, आत्मनः=स्वस्य, सर्वमागमनं=तत्रागमनंयावत् सर्वं वृत्तान्तमिति भावः, आचचक्षे =जगाद। विदितसकलवृत्तान्ता=विदितः ज्ञातः सकलः अखिलः वृत्तान्तः उदन्तः यया सा, उत्थाय, सा कन्यका महाश्वेता भिक्षाकपालम्=भिक्षाभाजनम्, आदाय=गृहीत्वा, तेषां=पुरतः स्थितानाम्, आयतनतरूणाम्=शिवसिद्धायतन-वृक्षाणां, तलेषु=अधः प्रान्तेषु, "अधः स्वरूपयोरस्त्री तलम्" इत्यमरः, विचचार =भ्रमणंचकार। अचिरेण=अल्पसमयेनैव, स्वयम्=अनायासेन, पतितैः= स्रस्तैः, फलैः, तस्याः=कन्यकायाः, भिक्षाभाजनम्=भिक्षापात्रम्, अपूर्यत= परिपूरितमभूत्। आगत्य=ततः निवृत्य, तेषाम्=आनीतानां फलानाम्, उपयोगाय =ग्रहणाय, चन्द्रापीडं, नियुक्तवती=प्रेरयामास। तस्य=(दृष्टमहाश्वेताप्रभावस्य) चन्द्रापीडस्य च, मनसि=चेतसि, आसीत=अभूत्, विचारः इतिशेषः, 'खलु= निश्चयेन, तपसां=तपश्चर्याणाम्, असाध्यम्=अशक्यं, नाम, नास्ति=न विद्यते, तपसा सर्वं साध्यम्, इति भावः अतः अस्मात्, परम=अधिकम्, किम् आश्चर्यम् =चित्रम्, यत्र=यस्मिन् प्रदेशे, व्यपगतचेतनाः=व्यपगता दूरीभूता चेतना चैतन्यं येषां तादृशाः, अपि, सचेतनाः=चैतन्यवन्तः इव, अस्यै=पुरोवर्तिन्यै, भगवत्यै= देव्यै, फलानि, समतिसृजन्तः=प्रयच्छन्तः, वनस्पतयः=वृक्षाः, आत्मानुग्रहम् =स्वकृपाम्, उपपादयन्ति=सम्पादयन्ति। अत्र विशेषेणसामान्यसमर्थनरूपः अर्थान्तरन्यासः। अस्माभिः, अदृष्टपूर्वम्=अनवलोकितपूर्वम्, इदम्=एतत्सर्वम्,

दिग्विजय से लेकर किन्नर-मिथुन के अनुसरण प्रसङ्ग और वहाँ अपने आने तक का सारा वृत्तान्त कह सुनाया। सारे वृत्तान्त से अवगत हो वह (कन्या) उठकर तथा भिक्षा-पात्र लेकर मन्दिर के उन वृक्षों के नीचे घूमने लगी। स्वल्पकाल में ही उसका भिक्षा-पात्र स्वयं गिरे हुये फलों से भर गया। (वहाँ से) आकर (उसने) चन्द्रापीड को उन फलों का उपयोग करने के लिये प्रेरित किया। उसके (चन्द्रापीड के) मन में विचार आया—"तपस्या के लिये (कुछ भी) असाध्य (अशक्य) नहीं है। जहाँ अचेतन वृक्ष भी सचेतन (प्राणी) की भाँति इस भगवती को फल देते हुये अपना अनुग्रह प्रकट करते हैं, इससे अधिक आश्चर्य और क्या होगा? हमने तो यह अदृष्ट पूर्व आश्चर्य देखा।" इस

इत्यधिकतरोपजातविस्मयश्चोत्थाय तमेव प्रदेशमिन्द्रायुधमानीय व्यपनीतपर्याणं नातिदूरे संयम्य निर्झरजलनिर्वर्तितस्नानविधिस्तान्यमृतरसस्वादून्युपभुज्य फलानि पीत्वा च तुषारशिशिरं प्रस्रवणजलमुपस्पृश्यैकान्ते तावदवतस्थे यावत्तथापि कन्यकया कृतोजलफलमूलमयेष्वाहारेषु प्रणयः।

इति परिसमापिताहारां निर्वर्तितसन्ध्योचिताचारां शिलातले विश्रब्ध-

---

चित्रम् = आश्चर्यम्, आलोकितम् = दृष्टम्।' इति = एवम्, अधिकतरोपजातविस्मयः = अधिकतरः अतिमहान् उपजातः समुत्पन्नः विस्मयः आश्चर्यं यस्य सः (चन्द्रापीडः), उत्थाय = उत्थानं विधाय, तमेव = महाश्वेताधिष्ठितमेव, प्रदेशं = भागं, व्यपनीतपर्याणं = व्यपनीतं अपसारितं पर्याणं वल्गा यस्य तम्, इन्द्रायुधम् = तन्नामकं स्वकीयम् अश्वम्, आनीय, नातिदूरे = समीपे, संयम्य = बद्ध्वा, निर्झरजलनिर्वर्तितस्नानविधिः = निर्झरस्य प्रस्रवणस्य जलेन वारिणा निर्वर्तितः विहितः स्नानस्य मज्जनस्य विधिः विधानं येन सः तथाभूतः, तानि = कन्यकानीतानि, अमृतरसस्वादूनि = अमृतं सुधा तस्य रसः द्रवः तद्वत् स्वादूनि आस्वाद्यानि, फलानि, उपभुज्य = भुक्त्वा, तुषारशिशिरं = तुषारः तुहिनं तद्वत् शिशिरं शीतं, प्रस्रवणजलं = प्रस्रवणस्य निर्झरस्य जलं तोयं, पीत्वा = निपीय, उपस्पृश्य = आचम्य, च, एकान्ते = रहसि, तावत् = तावत्कालम्, अवतस्थे = तस्थौ, यावत् = यावत्कालम्, तया = अतुलप्रभावया, कन्यकया = महाश्वेतया (स्वीकृततपोव्रतया, जलफलमूलमयेषु = जलफलमूलरूपेषु, आहारेषु = भोजनेषु, प्रणयः = समादरः, कृतः = विहितः, जलफलमूलरूपभोजनं कृतमिति भावः।

इति = एवं, परिसमापिताहारां = परिसमापितः परिसमाप्तिं नीतः आहारः' भोजनं यया सा ताम्, निर्वर्तितसन्ध्योचिताचाराम् = निर्वर्तितः सुसम्पादितः सन्ध्योचिताचारः सायंकालोचितः विधिः यया सा ताम्, कृतसन्ध्यावन्दनादिक्रियाम् इति भावः, शिलातले = पाषाणखण्डोपरि, विश्रब्धम् = विश्वस्त यथा स्यात्तथा,

---

प्रकार और अधिक विस्मयान्वित हो चन्द्रापीड उठा और उसी स्थान पर इन्द्रायुध को लाकर एवं पर्याण (चारजामा) उतार कर उसे समीप में ही बाँध दिया। (इसके बाद) उसने झरने के जल से स्नान-कार्य का सम्पादन किया और अमृत के समान स्वादिष्ट फलों को खाकर तथा हिम के समान शीतल झरने का जल पीकर आचमन करने के बाद एकान्त में तब तक बैठा रहा, जब तक उस कन्या ने भी जल, फल एवं मूल (कन्दमूल) वाले आहार से स्नेह न कर लिया (अर्थात् भोजन न कर लिया)।

इस प्रकार भोजन समाप्त कर चुकने के बाद जब वह सायंकाल के उपयुक्त आचार को सम्पन्न कर चुकी (और) शिलातल पर विश्वस्त भाव से बैठ गई (तब) उसके समीप

मुपविष्टां निभृतमुपसृत्य नातिदूरे समुपविश्य मुहूर्तमिव स्थित्वा चन्द्रापीडः सविनयमवादीत्—"भगवति, त्वत्प्रसादप्राप्तिप्रोत्साहितेन कुतूहलेनाकुलीक्रियमाणो मानुषतासुलभो लघिमा बलादनिच्छन्तमपि मां प्रश्नकर्मणि नियोजयति। जनयति हि प्रभुप्रसादलवोऽपि प्रागल्भ्यमधीरप्रकृतेः। स्वल्पाप्येकदेशावस्थाने कालकला परिचयमुत्पादयति। अणुरप्युपचारपरिग्रहः प्रणयमारोपयति। तद्यदि नातिखेदकरमिव ततः कथनेनात्मानमनुग्राह्यमिच्छामि।

उपविष्टां = निषण्णां, निभृतं = निःशब्दं यथा स्यात् तथा, उपसृत्य = समीपं गत्वा, नातिदूरे = समीपे, समुपविश्य = आस्थाय, मुहूर्तमिव = क्षणमिव, स्थित्वा = स्थितः भूत्वा, चन्द्रापीडः. सविनयं = विनयेन सहितं यथा स्यात् तथा, अवादीत् = अवोचत्—'भगवति = देवि ! त्वत्प्रसादप्राप्तिप्रोत्साहितेन = त्वत्प्रसादः त्वदनुग्रहः तस्य प्राप्त्या लाभेन प्रोत्साहितं प्रगुणीकृतं तेन, कुतूहलेन = कौतुकेन, आकुलीक्रियमाणः = व्याकुलतां नीयमानः, मानुषतासुलभः = मानुषस्य भावः मानुषता नरत्वं तस्मिन् सुलभः सहजभावेन प्राप्यः, लघिमा = लघुता, अनिच्छन्तम् = अनभिलषन्तम्, अपि, मां = चन्द्रापीड, बलात् = हठात्, प्रश्नकर्मणि पृच्छाव्यापारे, नियोजयति = व्यापारयति। हि = यतः, प्रभुप्रसादलवोऽपि = प्रभुः स्वामी तस्य प्रसादः प्रसन्नता तस्य लवः लेशः अपि, अधीरप्रकृतेः = अधीराचञ्चला प्रकृतिः स्वभावः यस्य तस्य (माहशस्य), प्रागल्भ्यम् = प्रगल्भस्य भावः कर्म वा प्रागल्भ्यम् धृष्टतां, जनयति = उत्पादयति अत्र अप्रस्तुतप्रशंसा। एकदेशावस्थाने = एकदेशावस्थितौ, स्वल्पा = स्तोका, अपि, कालकला = कालस्य समयस्य कला अंशः, परिचयम् = संस्तवम् "संस्तवः स्यात् परिचयः" इत्यमरः, उत्पादयति = जनयति। अणुरपि = अल्पः अपि, उपचारपरिग्रहः = उपचारः सत्कारः तस्य परिग्रहः अङ्गीकरणम्, प्रणयम् = स्नेहम्, आरोपयति = उपस्थापयति भवत्या अतिथिसत्कारस्वीकार एव प्रणये हेतुः इतिः भावः (अप्रस्तुतप्रशंसा)। तत् = तस्मात्, यदि = चेत्, नातिखेदकरमिव = नातिक्लेशकरम्, इव, ततः=तदा, कथनेन = मज्जिज्ञास्य स्ववृत्तान्तवर्णनेन, आत्मानं = (श्रोतुमिच्छु) स्वम्, अनुग्राह्यम् = भवदनुग्रहविषयं

चुपचाप पहुँच कर, समीप में बैठकर तथा क्षणभर स्थिर हो चन्द्रापीड ने विनय पूर्वक कहा—'देवि ! तुम्हारी कृपा की प्राप्ति से उत्साहित कुतूहल (कौतुक) से आकुल मानव-सुलभ लघुता, न चाहते हुये भी मुझको हठात् प्रश्नकार्य में प्रेरित कर रही है। स्वामी की प्रसन्नता (कृपा) का कण भी अधीर स्वभाव वाले जन की धृष्टता को उत्पन्न कर देता है। समय का लघु अंश भी एक स्थान में रहने से परिचय की उत्पत्ति कर देता है। उपचार की स्वल्प भी स्वीकृति स्नेह का आरोप करती है। इसलिए यदि [आपको] अधिक क्लेशकर न हो तो आपके [वृत्तान्त के] कथन से मैं अपने को अनुगृहीत बनाने की इच्छा करता हूँ। आपके दर्शन-कारण से

अतिमहत्खलु भवद्दर्शनात्प्रभृति मे कौतुकमस्मिन्विषये। कतरन्मरुतामृषीणां गन्धर्वाणां गुह्यकानामप्सरसां वा कुलमनुगृहीतं भगवत्या जन्मना। किमर्थं वास्मिन्कुसुमसुकुमारे नवे वयसि व्रतग्रहणम्। क्वेदं वयः। क्वेयमाकृतिः। क्व चायं लावण्यातिशयः। क्वेयमिन्द्रियाणामुपशान्तिः। तदद्भुतमिव मे प्रतिभाति। किंनिमित्तं वानेकसिद्धसाध्यसंबाधानि सुरलोकसुलभान्यपहाय

कर्तुम्, इच्छामि = समीहे। भवद्दर्शनात् प्रभृति = भवत्याः अवलोकनात् आरभ्य, अस्मिन् विषये = अस्मिन् प्रश्ने, खलु = निश्चयेन, मे = मम, अतिमहत् = विपुलं, कौतुकम = कौतूहलम्। प्रश्नविषयं वर्णयन्नाह—मरुतां = देवानाम्, ऋषीणां = मुनीनां, गन्धर्वाणां = देवगायकानां, 'गुह्यकानाम् = यक्षाणाम्, अप्सरसां = उर्वशी-प्रभृतीनां, वा = अथवा (अस्य सर्वत्रान्वयः), कतरत् = कतमत्, कुलं = वंशः, भगवत्या = देव्या, जन्मना = उत्पत्त्या, अनुगृहीतम = प्रसादीकृतम्, किमर्थं = कस्मै प्रयोजनाय, वा = अथवा, अस्मिन् = एतस्मिन कुसुमसुकुमारे = पुष्पवत् अतिकोमले, नवे = नूतने, वयसि = अवस्थायाम्, व्रतग्रहणम् = व्रतस्य तपश्चर्यादि-नियमस्य ग्रहणम् अङ्गीकरणम्। क्व = कुत्र, इदं = एतत्, वयः = आयुः (नव-यौवनम्)। क्व = कुत्र, इयं = लोचनगोचरा, आकृतिः = आकारः। क्च = कुत्र च, अयं = दिव्यतामुपगतः लोकविमोहनः, लावण्यातिशयः = लावण्यम् असाधारण-सौन्दर्यम्—"मुक्ताफलेषुच्छायायास्तरलत्वमिवान्तरा। प्रतिभाति यदङ्गेषु तल्लावण्यमितीरितम्॥" इत्यादिना प्रतिपादितम् तस्य अतिशयः आधिक्यम्, क्व, इयम् = एषा (असामयिकी), इन्द्रियाणां = करणानाम्, उपशान्तिः = स्वस्वभोग्यविषयोपशमः। अत्र विषमालङ्कारः, उभयपक्षे विरुद्धसंयोजनात्—द्रष्टव्यः—"क्व सूर्यप्रभवोवंशः क्व चाल्पविषया मतिः"—रघुवंशम्। तद् = पूर्वोक्तं (विरुद्धसंयोजनम्), मे = जिज्ञासोः चन्द्रापीडस्य, अद्भुतमिव = आश्चर्यवत्, प्रतिभाति = प्रतीयते। अनेकसिद्ध-साध्यसंबाधानि = अनेके ये सिद्धाः विश्वावसुप्रभृतय देवयोनिविशेषाः—"विद्याधराप्सरो-यक्ष-रक्षो-गन्धर्व-किन्नराः। पिशाचो गुह्यकः सिद्धो-भूतोऽमी देवयोनयः" इत्यमरः साध्याः द्वादशभेदात्मकाः गणदेवताः—"आदित्यविश्व-वसवस्तुषिता भास्वरानिलाः! महाराजिकसाध्याश्च रुद्राश्च गणदेवताः" इत्यमरः, तैः सम्बाधानि सङ्कुलानि, सुरलोकसुलभानि = देवलोकसुप्राप्याणि, दिव्याश्रमपदानि = दिव्या-

ही इस [प्रश्न के] विषय में मुझे बड़ा कूतूहल है। आपने अपने जन्म से, मरुतों (देवों) ऋषियों, गन्धर्वों, गुह्यकों अथवा अप्सराओं के किस कुल को अनुगृहीत किया है? अथवा पुष्प-सदृश सुकुमार इस नवीन वय (उम्र) में किसलिए [यह आपका] व्रत-ग्रहण है? कहाँ यह वय? कहाँ यह आकृति? कहाँ यह असाधारण सौन्दर्य? और कहाँ यह इन्द्रियों की प्रशान्ति? यह सब मुझे अद्भूत सा लगता है। अथवा अनेक सिद्धों और साध्यों से संकुल (भरे हुये) देवलोक-सुलभ दिव्य आश्रम-स्थलों

दिव्याश्रमपदान्येकाकिनी वनमिदममानुषमधिवससि। कश्चायं प्रकारो यत्तैरेव पञ्चभिर्महाभूतैरारब्धमीदृशीं धवलतां धत्ते शरीरम्। नेदमस्माभिरन्यत्र दृष्टश्रुतपूर्वम्। अपनयतु नः कौतुकम्। आवेदयतु भवती सर्वम्।" इत्येवमभिहिता सा किमप्यन्तर्ध्यायन्ती तूष्णीं मुहूर्तमिव स्थित्वा निःश्वस्य स्थूलस्थूलैरन्तर्गतहृदयशुद्धिमिवादाय निर्गच्छद्भिः, इन्द्रियप्रसादमिव वर्षद्भिः, तपारसनिस्यन्दमिव स्रवद्भिः, लोचनविषयं धवलिमानमिव द्रवीकृत्य पात-

श्रमस्थानानि, अपहाय = परित्यज्य, किंनिमित्तं = कस्मै प्रयोजनाय, एकाकिनी = अद्वितीया, इदम् = एतत्, अमानुषं = मानवविहीनं, वनम् = काननम्, अधिवससि = निवससि, "उपान्वध्याङ्वसः" इति कर्मसंज्ञा। कश्च = अज्ञातश्च, अयम् = एषः, प्रकारः = विशेषः, यत्, तैः = प्रसिद्धैः एव, पञ्चभिः = पञ्चसंख्यापरिगणितैः, महाभूतैः = पृथिवी-जल-तेजो-वाय्वाकाशैः, आरब्धम् = विरचितम्, ते = भवत्याः, (इदं) शरीरं = वपुः, ईदृशीं = दिव्याम् अनुपमेयाञ्च, धवलतां = श्वेतिमानं, धत्ते = दधाति। अस्माभिः = लौकिकैः जनैः, इदं = धवलताधारणरूपं वैलक्षण्यम्, अन्यत्र = भवतीं विहाय अन्यस्मिन् प्राणिनि, न दृष्टश्रुतपूर्वम् = न पूर्वम् अवलोकितम् न वा कस्यचित् मुखात् आकर्णितम्। नः = अस्माकम्, कौतुकम् = कौतूहलम्, अपनयतु = दूरीकरोतु। भवती = महोदया, सर्वं = निखिलं स्ववृत्तान्तम्, आवेदयतु = कथयतु।" इत्येवम् = अनेनप्रकारेण, अभिहिता = चन्द्रापीडेन उक्ता, सा = दिव्यकन्यका, किमपि = अनिर्वचनीयम्, अन्तः = मनसि, ध्यायन्ती = चिन्तयन्ती, मुहूर्तमिव = क्षणमिव तूष्णीं = मौनम्, स्थित्वा = आस्थाय, निःश्वस्य = दीर्घश्वासान् उन्मुच्य, 'रोदितुमारेभे' इति दूरस्थक्रियया अन्वयः, इतः परं तृतीयाबहुवचनान्तानि पदानि 'अश्रुभिः' इति विशेष्यस्य विशेषणानि—स्थूलस्थूलैः = पृथुलपृथुलैः-अन्तर्गतहृदयशुद्धिम् = अन्तः अभ्यन्तरे गतां स्थितं हृदयस्य मानसस्य शुद्धिं निर्मलताम्, आदाय = गृहीत्वा, निर्गच्छद्भिः = निःसरद्भिः, इव, इन्द्रियप्रसादम् = इन्द्रियाणां करणानां प्रसादः प्रसन्नता तम्, वर्षद्भिः = वर्षणं कुर्वद्भिः, इव, तपोरसनिस्यन्दम् = तपांसि एव रसाः द्रवाः तेषां निस्यन्दम् धाराम्, स्रवद्भिः = क्षरद्भिः, इव, लोचनविषयम् = नेत्रसम्बन्धिनं, धवलिमानं = श्वेतिमानम्, द्रवीकृत्य = रसीकृत्य, पातयद्भिः = स्रावयद्भिः, इव,

को छोड़कर (तुम) अकेली इस निर्जन-वन में किसलिये निवास कर रही हो? और यह कौन सा प्रकार है कि उन्हीं पाँच महाभूतों से रचित (यह आपका) शरीर ऐसी (अलौकिक) धवलता धारण कर रहा है? हमने अन्यत्र ऐसा (वैलक्षण्य) पहले न देखा है और न सुना (ही) है। हमारा कुतूहल दूर करिये। आप सब (वृत्तान्त) बतायें।" ऐसा कहने पर मन में कुछ सोचती हुई, क्षणभर चुप रहकर (तथा) लम्बी साँसें लेकर आँसुओं से भरे (संकुचित) हुये नयनों वाली

यद्भिः, अच्छाच्छैः, अमलकपोलस्थलस्खलितैः अवशीर्णहारमुक्ताफलतरलपातैः, अनुबद्धविन्दुभिः, वल्कलावृतकुचशिखरजर्जरितसीकरैः, अश्रुभिरामीलितलोचना निःशब्दं रोदितुमारेभे।

तां च प्ररुदितां दृष्ट्वा चन्द्रापीडस्तत्क्षणमचिन्तयत्, "अहोदुर्निवारता, व्यसनोपनिपातानां यदीदृशीमप्याकृतिमनभिभवनीयामात्मीयां कुर्वन्ति।

अच्छाच्छैः = नितान्तस्वच्छैः, अमलकपोलस्थलस्खलितैः = अमलं निर्मलम् यत् कपोलस्थलं तत्र स्खलितैः पतितैः, अवशीर्णहारमुक्ताफलतरलपातैः = अवशीर्णः त्रुटितः यः हारः मुक्तामाला तस्य मुक्ताफलानि तद्वत् तरलः कम्पनः पातः येषां तैः, अनुबद्धविन्दुभिः = अनुबद्धाः परस्परसंसक्ताः विन्दवः अश्रुकणाः येषां तैः, वल्कलावृतकुचशिखरजर्जरितसीकरैः = वल्कलेन वृक्षत्वचा आवृतौ आच्छन्नौ यौ कुचौ स्तनौ तयोः शिखराभ्यां अग्रभागाभ्यां जर्जरिताः (कुचकाठिन्यवशात्) चूर्णिताः सीकराः कणाः येषां तैः, अश्रुभिः = नेत्रजलैः, आमीलितलोचना = आमीलिते सङ्कुचिते लोचने नयने यस्याः सा, निःशब्दं = तूष्णीं यथा स्यात् तथा, रोदितुम् = आक्रन्दितुम्, आरेभे = प्रारब्धवती। इह 'हृदयशुद्धिमिवादाय निर्गच्छद्भिः' इत्यारभ्य 'द्रवीकृत्य पातयद्भिः' इति यावत् क्रियोत्प्रेक्षा, 'मुक्ताफलतरलपातैः' इत्यत्र च उपमा।

तां = पूर्ववर्णितां कन्यकां, च = अपि च, प्ररुदितां = रोदनं कुर्वन्तीं, दृष्ट्वा = विलोक्य, चन्द्रापीडः, तत्क्षणं = तस्मिन् काले, अचिन्तयत् = चिन्तितवान्, "अहो = आश्चर्ये ? व्यसनोपनिपातानां = व्यसनानि दुःखानि तेषाम् उपनिपातानाम् आक्रमणानां, दुर्निवारता = दुर्हेयता, यद् = यतः, अनभिभवनीयां = परैः अभिभवितुमयोग्यां, ईदृशीम् = एवंविधाम्, आकृतिम् = आकारम्, आत्मीयाम् = आत्माधीनां, कुर्वन्ति। कंचन = कंचित् अपि, शरीरधर्माणम् = शरीर-

---

उसने (महाश्वेता ने) निःशब्द रोना प्रारम्भ कर दिया। (उसके) आँसू हृदय की आन्तरिक शुद्धि को मानो लेकर निकल रहे थे, इन्द्रियों की प्रसन्नता की जैसे वर्षा कर रहे थे, मानो तपरूपी रस की धारा बहा रहे थे, नेत्र की धवलिमा को रस बना कर मानो गिरा रहे थे। वे बड़े-बड़े, अति स्वच्छ, निर्मल कपोलों पर होकर लुढ़कने वाले, टूटे हार (से विगलित) मोतियों की भाँति कम्पन के साथ गिरने वाले, अविच्छिन्न रूप से (उत्पन्न) अश्रु-कणों से युक्त तथा वल्कल से ढँके हुये स्तन के अग्रभाग से (टकराने के कारण) जर्जरित कण वाले थे।

उसे रोती हुई देखकर चन्द्रापीड ने उस समय सोचा—"अहो विपत्तियों के आक्रमण (कितने) दुर्निवारणीय होते हैं, जो इस प्रकार की अपराजेय आकृति को भी (अपने) अधीन कर लेते हैं। (संतापकारी) क्लेश किस शरीरधारी का सर्वथा

सर्वथा नन कंचन स्पृशन्ति शरीरधर्माणमुपतापाः। बलवती हि द्वन्द्वानां प्रवृत्तिः। इदमपरमधिकतरमुपजनितमतिमहन्मनसि मे कौतुकमस्या बाष्पसलिलपातेन। न ह्यल्पीयसा शोककारणेन क्षेत्रीक्रियन्त एवंविधा मूर्तयः। न हि क्षुद्रनिर्घातपाताभिहता चलति वसुधा''। इति संवर्धितकुतूहलश्च शोकस्मरणहेतुतामुपगतमपराधिनमिवात्मानमवगच्छन्नुत्थाय प्रस्रवणादञ्जलिना मुखप्रक्षालनोदकमुपनिन्ये। सा तु तदनुरोधादविच्छिन्नबाष्पजलधारासन्तानापि किञ्चि-

धारिणम्, उपतापाः = सांसारिकक्लेशाः, सर्वथा = सर्वतः, न स्पृशन्ति = न आश्लिषन्ति (न पीडयन्ति इति भावः), इति न, अर्थात् उपतापाः शरीरधर्माणम् स्पृशन्ति एव, "द्वौ नञौ प्रकृतमर्थं सूचयतः" इति न्यायानुरोधेन अत्र द्वौ नञौ प्रयुक्तौ। हि = निश्चयं, द्वन्द्वानां = सुखदुःखादीनां, प्रवृत्तिः = प्रवर्तनं, बलवती = बलिष्ठा। इदम् = एतत्, मे = मम, मनसि = अन्तःकरणे, अपरम् = अन्यत्, अधिकतरम् = पूर्वस्मात् अधिकम्, अतिमहत, कौतुकम् = कुतूहलम्, अस्याः = कन्यकायाः, वाष्पसलिलपातेन = वाष्पसलिलम् अश्रुजलम् तस्य पातेन पतनेन, उपजनितम् = समुत्पन्नम्, हि = यतः अल्पीयसा = स्वल्पेन, शोककारणेन = शोकः दुःख तस्य कारणेन हेतुना, एवंविधाः = दिव्यप्रभावशालिन्यः, मूर्तयः = शरीराणि, न क्षेत्रीक्रियन्ते = न आश्रयीक्रियन्ते। हि = निश्चये, क्षुद्रनिर्घातपाताभिहता = क्षुद्रः साधारणः यः निर्घातः प्रहारः तस्य पातेन पतनेन अभिहता ताडिता (सती), वसुधा = वसुमती, न चलति = न कम्पते।' इति = इत्थं, संवर्धितकुतूहलः = संवर्धितं प्रवर्धितं कुतूहलं कौतुकं यस्य सः, च = समुच्चये, शोकस्मरणहेतुताम् = (कन्यकायाः यः) शोकः मानसिकसन्तापः तस्य स्मरणं स्मृतिः तत्र हेतुताम् कारणताम्, उपगतम् = सम्प्राप्तम्, (अतः) अपराधिनम् = अपराधकर्तारम्, इव = यथा, आत्मानं = स्वम्, अवगच्छन् = जानन्, उत्थाय = उत्थानं कृत्वा, प्रस्रवणात् = (समीपस्थात्) निर्झरात्, अञ्जलिना = करपुटेन, मुखप्रक्षालनोदकम् = (कुमार्याः) मुखस्य प्रक्षालनाय मार्जनाय उदकं वारि, उपनिन्ये = आनीतवान्। सा = कन्यका, तु = वाक्यालङ्कारे, तदनुरोधात् = चन्द्रापीडस्य आग्रहवशात्, अविच्छिन्नवाष्पजलधारासन्तानापि — अविच्छिन्नं सततप्रवाहि यत वाष्पजलम् अश्रुजलं तस्य धारा आसारः तस्याः सन्तानः समूहः यस्या सा अपि, किञ्चित् कषायितोदरे = किञ्चित्

स्पर्श नहीं करते ? (सुख-दुःखादि) द्वन्द्वों की प्रवृत्ति निश्चय रूप से बलवती होती है। इसके अश्रुपात ने मेरे मन में पहले से भी अधिक इस दूसरे कौतुक को उत्पन्न कर दिया। निश्चय ही इस प्रकार की मूर्तियाँ (लोग) स्वल्प शोक के कारण का आश्रय नहीं बनती। पृथिवी तुच्छ प्रहार-पात से ताड़ित होकर नहीं काँपती।" इस प्रकार बढ़े हुये कुतूहल से युक्त (चन्द्रापीड) अपने को शोक-स्मरण का कारण होने से अपराधी जैसा मानता हुआ उठकर झरने से मुख-प्रक्षालन के लिये

त्कषायितोदरे प्रक्षाल्य लोचने वल्कलोपान्तेन वदनमपमृज्य दीर्घमुष्णं च निःश्वस्य शनैः प्रत्यवादीत्, "राजपुत्र, किमनेनातिनिर्घृणहृदयाया मम मन्दभाग्यायाः पापाया जन्मनः प्रभृति वैराग्यवृत्तान्तेन्नाश्रवणीयेन श्रुतेन। तथापि यदि महत्कुतूहलम् तत्कथयामि। श्रूयताम्।

एतत्प्रायेण कल्याणाभिनिवेशिनः श्रुतिविषयमापतितमेव यथा विबुधसद्मन्यप्सरसो नाम कन्यकाः सन्ति। तासां चतुर्दश कुलानि। एकं भगवतः

ईषत् कषायितं रक्तम् अश्रुपातात् इति शेषः' उदरम् अभ्यन्तरं ययोः ते, लोचने = नेत्रे, प्रक्षाल्य = प्रमृज्य, वल्कलोपान्तेन = वल्कलस्य (धृतस्य) वृक्षत्वचः उपान्तेन अञ्चलेन, वदनम् = मुखम्, अपमृज्य = मार्जनं विधाय, दीर्घम् = आयतम्, उष्णं = तप्तं च, निःश्वस्य = निःश्वासं विधाय, शनैः = मन्दस्वरेण, प्रत्यवादीत् = प्रत्यवोचत्—"राजपुत्र ! = राजकुमार !, अतिनिर्घृणहृदयायाः = अतिनिर्घृणंनिर्दयतमं हृदयं मनः यस्याः, तस्याः मन्दभाग्यायाः = मन्दं हीनं भाग्यं भागधेयं यस्याः सा तस्याः. पापायाः = पापिष्ठायाः, मम, जन्मनःप्रभृति = उत्पत्तेः आरभ्य, अश्रवणीयेन = श्रोतुम् अयोग्येन, वैराग्यवृत्तान्तेन = वैराग्यस्य समाचारेण, अनेन = एतेन, श्रुतेन = श्रवणेन, किम् = कः लाभः ? तथापि = लाभे असत्यपि, यदि = चेत्, महत् कुतूहलं = कौतूहलं, तत् कथयामि, श्रूयताम् = आकर्ण्यताम्, भवता इतिशेषः।

कल्याणाभिनिवेशिनः = कल्याणे श्रेयसि अभिनिवेशः आग्रहः यस्य तस्य (भवतः), प्रायेण = प्रायशः, एतत् = इदं, श्रुतिविषयम् = कर्णगोचरम्, आपतितम् = समागतम्, एव = निश्चयेऽर्थे, यथा, (तुलनीयम्—"विदितं खलु ते यथा स्मरः, क्षणमप्युत्सहते न मां विना"—कुमार० ४।३६) विबुधसद्मनि = विबुधाः देवाः तेषां सद्मनि धाम्नि स्वर्गे इत्यर्थः, अप्सरसः, नाम = कोमलामन्त्रणे, कन्यकाः = कुमार्यः, सन्ति = वर्तन्ते। तासाम् = अप्सरसां, चतुर्दश, कुलानि = वंशाः (सन्ति)। (तत्र) एकं, भगवत = ऐश्वर्यशालिनः, कमलयोनेः

अञ्जलि में जल ले आया। निरन्तर अश्रुओं की धारा से युक्त भी वह उसके (चन्द्रापीड के) अनुरोध से भीतर कुछ लाल हुये (अपने) नेत्र को धोकर तथा वल्कल के किनारे से मुख को पोंछ कर लम्बी एवं गरम साँस ले धीरे-धीरे बोली—"राजकुमार ! नितान्त निर्दयहृदया एवं मन्दभाग्यवाली मुझ जैसी पापिनी के जन्म से लेकर वैराग्य तक के अश्रवणीय (सुनने के अयोग्य) इस वृत्तान्त को सुनने से क्या लाभ ? फिर भी यदि बहुत बड़ा कुतूहल है तो कहती हूँ। सुनिये।"

कल्याण के प्रति आग्रह रखने वाले आपने तो प्रायः यह सुना ही होगा कि देव लोक में अप्सरा नाम की कन्यायें हैं। उनके चौदह कुल हैं। एक भगवान्

कमलयोनेर्मनसः समुत्पन्नम्। अन्यद्वेदेभ्यः सम्भूतम्। अन्यदग्नेरुद्भूतम्। अन्यत्पवनात्प्रसूतम्। अन्यदमृतान्मथ्यमानाद् उत्थितम्, अन्यज्जलाज्जातम्। अन्यदर्ककिरणेभ्यो निर्गतम्। अन्यत्सोमरश्मिभ्यो निष्पतितम्। अन्यद्भूमेरुद्भूतम्। अन्यत्सौदामनीभ्यः प्रवृत्तम्। अन्यन्मृत्युना निर्मितम्। अपरं मकरकेतुनासमुत्पादितम्। अन्यत्तु दक्षस्य प्रजापतेरतिप्रभूतानां कन्यकानां मध्ये द्वे सुते मुनिररिष्टा च बभूवतुस्ताभ्यां गन्धर्वैः कुलद्वयं जातम्। एवमेतान्येकत्र चतुर्दश कुलानि। गन्धर्वाणां तु दक्षात्मजाद्वितयसम्भवं तदेवं कुलद्वयं जातम्।

=कमलं योनिः उत्पत्तिस्थानं यस्य तस्य ब्रह्मणः, मनसः=स्वान्तात्, समुत्पन्नम्=जातम्। अन्यत=अपरं, (द्वितीयं) वेदेभ्यः=श्रुतिभ्यः, सम्भूतम्=उत्पन्नम्। अन्यत्=इतरत् (तृतीयम्), अग्नेः=पावकात्, उद्भूतं=प्रकटितम्। अन्यत्=चतुर्थं, पवनात्=वायोः, प्रसूतं=जातम्। अन्यत्=पञ्चमं, मथ्यमानात्=विलोड्यमानात्, अमृतात्=पीयूषात्, उत्थितं=जातम्। अन्यत्=षष्ठं जलात्=वारिणः, जातं=समुत्पन्नम्। अन्यत=सप्तमम्, अर्ककिरणेभ्यः=अर्कः सूर्यः तस्य किरणेभ्यः रश्मिभ्यः, निर्गतम्=निःसृतम्। अन्यत्=अष्टमं, सोमरश्मिभ्यः=सुधांशुकिरणेभ्यः, निष्पतितम्=च्युतम्। अन्यत्=नवमं, भूमेः=वसुधायाः, उद्भूतम्=प्रकटितम् अन्यत्=दशमं, सौदामनीभ्यः=विद्युद्भ्यः, प्रवृत्तम्=प्रवर्तितम्। अन्यत्=एकादशं, मृत्युना=अन्तकेन, निर्मितं=रचितम् अपरं=द्वादशं, मकरकेतुना=मीनकेतनेन कामेन, समुत्पादितं=प्रकटीकृतं। दक्षस्य=तदाख्यस्य, प्रजापतेः, अतिप्रभूतानां=बहुसंख्याकानां, कन्यकानां=दुहितॄणां, मध्ये, द्वे सुते=द्वे कन्यके, मुनिः, अरिष्टा, च, बभूवतुः=जन्मलेभाते, ताभ्यां=कन्यकाभ्यां, गन्धर्वैः=देवगायकैः, सह=साकं, (सङ्गमनात्), अन्यत्=अपरं, कुलद्वयं = त्रयोदशं चतुर्दशं च कुलं, जातं=समुत्पन्नम्। एवम=अनेनप्रकारेण, एतानि=पूर्वकथितानि, एकत्र=(सङ्कलनेन) चतुर्दश कुलानि। दक्षात्मजाद्वितयसम्भवं=दक्षस्य प्रजापतेः आत्मजाद्वितयात् मुन्यरिष्टानामकात् कन्याद्वयात् सम्भवं जातम्, तदेव=पूर्वोक्तमेव, कुलद्वयं=वंशद्वितयं, जातम्=

ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न हुआ। दूसरा वेदों से उद्भूत हुआ। अन्य (तीसरा) अग्नि से प्रकट हुआ। इतर (चौथा) पवन से उत्पन्न हुआ अन्य (पाँचवाँ) मथे जाते हुए अमृत से प्रादुर्भूत हुआ। अन्य (छठा) जल से जायमान हुआ। अन्य (सातवाँ) सूर्य की किरणों से बाहर निकला। अपर (आठवाँ) चन्द्र किरणों से च्युत हुआ। अन्य (नवाँ) पृथिवी से प्रकट हुआ। अन्य (दसवाँ) विद्युत् से प्रवर्तित हुआ। अन्य (ग्यारहवाँ) मृत्यु के द्वारा निर्मित हुआ। अन्य (बारहवाँ) कामदेव के द्वारा उत्पन्न हुआ। दक्ष प्रजापति की बहुत-सी कन्याओं

अत्र मुनेस्तनयश्चित्रसेनादीनां पञ्चदशानां भ्रातॄणामधिको गुणैः षोडशश्चित्ररथो नाम समुत्पन्नः। स किल सकलत्रिभुवनप्रख्यातपराक्रमो भगवता समस्तसुरमौलिमालालालितचरणनलिनेनाखण्डलेन सुहृच्छब्देनोपबृंहितप्रभावः सर्वेषां गन्धर्वाणामाधिपत्यमसिलतामरीचिनिचयमेचकितेन बाहुना समुपार्जितं शैशव एवाप्तवान्। इतश्च नातिदूरे तस्यास्माद्भारतवर्षादुत्तरेणानन्तरे किंपुरुषनाम्नि वर्षे वर्षपर्वतो हेमकूटो नाम निवासः। तत्र तद्भुजयुगपरिपालितान्यनेकानि गन्धर्वशतसहस्राणि प्रतिवसन्ति। तेनैव चेदं चैत्ररथं नामातिमनोहरं

भूतम्। अत्र = कुलद्वयमध्ये, मुनेः = एतन्नाम्न्याः दक्षपुत्र्याः; चित्रसेनादीनां = चित्रसेनः आदिः प्रथमः येषां ते तेषां, पञ्चदशानां, भ्रातॄणां = सोदराणां, गुणैः = शुभलक्षणैः शौर्यादिभिः, अधिकः = श्रेष्ठः षोडशः चित्ररथः नाम, समुत्पन्नः = जातः। सः = चित्ररथः, किल = प्रसिद्धौ, सकलत्रिभुवनप्रख्यातपराक्रमः = सकले सम्पूर्णे त्रिभुवने लोकत्रये प्रख्यातः प्रसिद्धः पराक्रमः शौर्यं यस्य सः, समस्त सुर मौलिमालालालितचरणनलिनेन = समस्ताः अशेषाः ये सुराः देवाः तेषां मौलिमालया किरीटपङ्क्त्या लालितं प्रणामकाले सादरमभिवन्दितं चरणनलिनं पादकमलं यस्य तेन, भगवता, आखण्डलेन = इन्द्रेण, सुहृच्छब्देन=मित्रशब्दप्रयोगेण (मित्रेति सम्बोधनेन इति भावः) उपबृंहितप्रभावः = उपबृंहितः परिवर्धितः प्रभावः प्रतापः यस्य सः, असिलतामरीचिनिचयमेचकितेन = असिलता खड्गलता तस्याः मरीचयः रश्मयः तेषां निचयः निकरः तेन मेचकितेन श्यामलितेन. बाहुना = भुजेन, समुपार्जितं = लब्धं, सर्वेषां = समेषां, गन्धर्वाणां = देवयोनिविशेषाणाम्, आधिपत्यं = प्रभुत्वम्, शैशवे = बाल्येवयसि, एव = निश्चये, आप्तवान् = प्राप्तवान्। इतः = अस्मात् स्थानात्, च = समुच्चये, नातिदूरे = समीपे, अस्मात् भारतवर्षात्, उत्तरेणानन्तरे = अव्यवहितोत्तरभागे, किम्पुरुषनाम्नि = किम्पुरुषसंज्ञके, वर्षे = क्षेत्रे, वर्षपर्वतः = देशविभाजकगिरिः, हेमकूटोनाम = हेमकूटाभिधानः, तस्य = चित्ररथस्य, निवासः = वसतिस्थानं (वर्तते)। तत्र = हेमकूटे, तद्भुजयुगपरिपालितानि = तस्य चित्ररथस्य भुजयुगलेन बाहुयुगलेन परिपालितानि संरक्षितानि, अनेकानि = बहूनि, गन्धर्वशतसहस्राणि = गन्धर्वाणां देवगायकानां शतसहस्राणि शतानि सहस्राणि, प्रतिवसन्ति = निवसन्ति। तेनैव = चित्ररथेनैव, च = समुच्चये, इदं = परितः दृश्यमानं, चैत्ररथं नाम = (चित्ररथस्य इदम् इति अन्वर्थकमेव) एतत्संज्ञकम्, अतिमनोहरम् = अतिसुन्दरं, काननं = वनम्, (उपवनं) निर्मितम्

में मुनि और अरिष्ट नाम की दो कन्यायें (उत्पन्न) हुई, उनसे गन्धर्वों के सम्पर्क से दूसरे दो कुल (तेरहवाँ और चौदहवाँ) उत्पन्न हुये। इस प्रकार सब मिलाकर चौदह कुल हुये। दक्ष की दो पुत्रियों (मुनि और अरिष्टा) से उत्पन्न वे ही दो

काननं निर्मितम्। इदं चाच्छोदाभिधानमतिमहत्सरः खानितम्। अयं च भवानीपतिरुपरचितो भगवान्। अरिष्टायास्तु पुत्रस्तुम्बुरुप्रभृतीनां सोदर्याणां षण्णां ज्येष्ठो हंसो नाम जगद्विदितो गन्धर्वस्तस्मिन्द्वितीये गन्धर्वकुले गन्धर्वराजेन चित्ररथेनैवाभिषिक्तो बाल एव राज्यपदमासादितवान्। अपरिमितगन्धर्वबलपरिवारस्य तस्यापि स एव गिरिरधिवासः। यत्तु तत्सोममयूखसम्भूतानामप्सरसां कुलं तस्मात्किरणजलानुसारगलितेन सकलेनेव

=विरचितम्। इदं च=एतत् च, अतिमहत्=सुविस्तृतं, अच्छोदाभिधानम्=अच्छोदनामकं, सरः=तडाग, खानितम्=निर्मापितम्। अयं च=शिवसिद्धायतने प्रतिष्ठितः च भगवान भवानीपतिः=गौरीनाथः (शिवमूर्तिः), उपरचितः=प्रतिष्ठापितः। काव्यप्रकाशानुसारेण तु 'भवानीपतिः' इति प्रयोगः विरुद्धमतिकृत्' इति दोषमुपस्थापयति, यतो हि ततः 'भवस्य स्त्री भवानी, तस्याः पतिः'' इति उपपतिरूप विरुद्धार्थप्रतीतिः जायते 'भवः एव पतिः' इत्यर्थो न उद्भवति। अरिष्टायाः=अपरायाः दक्षसुतायाः, तुम्बुरप्रभृतीनां=तुम्बुर्वादीनां, षण्णां=षट्सङ्ख्याकानां, सोदर्याणां=समानम् उदरं येषां तेषां (सहोदराणां), ज्येष्ठः=प्रथमः, हंसः नामपुत्रः=हंसनामासुतः तु जगद्विदितः=जगति संसारे विदितः ख्यातः गन्धर्वः=सुरगायकः, तस्मिन्, द्वितीये=अपरे, गन्धर्वकुले=गन्धर्ववंशे, गन्धर्वराजेन=गन्धर्वाणां राजा तेन, चित्ररथेन=मुनेः विश्रुतेन सुतेन, अभिषिक्तः अभिषेकविषयीकृतेः, बाल एव=शिशुः एव, राज्यपदम्=आधिपत्यम्, आसादितवान्=प्राप्तवान् अपरिमितगन्धर्वबलपरिवारस्य=अपरिमितम् असख्येयं गन्धर्वबलं गन्धर्वसैन्यं परिवारः परिजनः यस्य तथाभूतस्य, तस्यापि=हंसस्य अपि, सः=सीमा विभाजकः, गिरिः=हेमकूटपर्वतः एव, अधिवासः=निवासस्थलम्। यत्तु, तत्=पूर्वोक्तं, सोममयूखसम्भूतानां=चन्द्रकिरणोत्पन्नानाम् अप्सरसां, कुलं=वंशः, तस्मात्=ततः, (''कन्यका प्रसूता'' इति अग्रेणान्वयः, इतः प्रथमैकवचनान्तानि स्त्रीलिङ्ग पदानि ''कन्यका'' इति पदस्य विशेषणानि), किरणजलानुसारगलितेन=किरणजलम् अमृतं तस्य अनुसारः अनुसरणं तेन गलितेन स्यन्दितेन, सकलेन=अशेषेण,

कुल गन्धर्वों के हुये। इस प्रदेश में मुनि को, चित्रसेन आदि (अन्य) पन्द्रह भाइयों से अधिक गुणी, चित्ररथ नामक सोलहवाँ पुत्र उत्पन्न हुआ। त्रिलोक में विख्यात पराक्रम वाले, अखिल देवों की किरीट पंक्ति से पूजित चरण-कमल, भगवान् इन्द्र के द्वारा मित्र के संबोधन से उसका (चित्ररथ का) प्रभाव बढ़ा हुआ था, (इसलिए) उसने खड्ग-लता की किरणों के समूह से श्यामवर्ण वाली (अपनी) भुजाओं से अर्जित सकल गन्धर्वों के प्रभुत्व को शैशवावस्था में ही प्राप्त कर लिया। यहाँ से थोड़ी ही दूर पर, इस भारत वर्ष के उत्तर में (स्थित), किं पुरुष नामक क्षेत्र में, हेमकूट नामक वर्ष पर्वत उसका निवास स्थान है। वहाँ उसकी दोनों

रजनिकरकलाकलापलावण्येन निर्मितात्रिभुवननयनाभिरामा भगवती द्वितीयेव गौरी गौरीतिनाम्ना हिमकरकिरणावदातवर्णा कन्यका प्रसूता । तां च द्वितीयगन्धर्वकुलाधिपतिर्हंसो मन्दाकिनीमिव क्षीरसागरः प्रणयिनीमकरोत् । सा तु भगवता मकरकेतनेनेव रतिः, शरत्समयेनेव कमलिनी, हंसेन

रजनिकरकलाकलापलावण्येन = रजनिकरः चन्द्रः तस्य कलानां षोडशांशानां यः कलापः समूहः तस्य लावण्येन सौन्दर्येण, निर्मिता = विरचिता, त्रिभुवननयनाभिरामा = त्रयाणां भुवनानां समाहारः त्रिभुवनं तस्य (त्रिभुवननिवासिनः लोकस्य) नयनानां नेत्राणां कृते अभिरामा मनोहरा, द्वितीया = अपरा, भगवती गौरीव = देवी पार्वती इव, हिमकरकिरणावदातवर्णा = हिमकरः शीतांशुः तस्य किरणाः रश्मयः, तद्वत् अवदातः गौरः वर्णः यस्याः सा एवं विधा, गौरीतिनाम्ना=एतत्संज्ञया (प्रसिद्धा इतिशेषः), कन्यका = सुता, प्रसूता = जाता । अत्र "लावण्येन निर्मितेव इत्यत्र क्रियोत्प्रेक्षा, 'द्वितीयेवगौरी' इत्यत्र द्रव्योत्प्रेक्षा, "हिमकरकिरणा······" इत्यत्र च लुप्तोपमा । तां = गौरीं, च, द्वितीयागन्धर्वकुलाधिपतिः = द्वितीयम् अपरम् यत् गन्धर्वाणां कुलं वंशः तस्य अधिपतिः राजा, हंसः = हंसनामा, क्षीरसागरः = क्षीराब्धिः मन्दाकिनीम् = आकाशगङ्गाम्, इव = यथा, प्रणयिनीम् = वल्लभाम्, अकरोत् = कृतवान् । श्रौती उपमा, सा तु = गौरी तु, हंसेन = हंसनामकगन्धर्वराजेन (सह),

---

भुजाओं से परिपालित लाखों गन्धर्व निवास करते हैं । उसी ने अति मनोहारी इस चैत्ररथ नामक उपवन का निर्माण किया है तथा इस महान् अच्छोद सरोवर को खुदवाया है एवं (उसी ने) इन भवानीपति भगवान् शङ्कर को प्रतिष्ठित किया है । उस द्वितीय गन्धर्व-कुल में (उत्पन्न) अरिष्टा के पुत्र हंस नामक गन्धर्व ने, जो तुम्बुरु आदि (अपने) छः सहोदर भाइयों में ज्येष्ठ (तथा) लोकविश्रुत था, गन्धर्व राज चित्ररथ के द्वारा अभिषिक्त होकर बाल्यावस्था में ही राज्य-पद प्राप्त कर लिया । अनन्त गन्धर्वों के अपरिमित सैन्य-परिवार वाले उसका भी (हंस का) वही (हेमकूट) पर्वत निवास-स्थल है । चन्द्रकिरणों से उत्पन्न अप्सराओं का जो कुल था, उससे गौरी नामक कन्या उत्पन्न हुई, वह मानो अमृत से गलकर निकले हुए चन्द्रकला समूह के समस्त लावण्य से निर्मित, त्रिलोक के नेत्रों को सुन्दर लगने वाली दूसरी भगवती गौरी के समान (रूपवती) तथा चन्द्रकिरणों की भांति गौरवर्ण वाली थी । दूसरे गन्धर्व कुल के अधिपति हंस ने उस कन्या (गौरी) को (उसी प्रकार) प्रणयिनी बनाया, (जिस प्रकार) क्षीर-सागर ने मन्दाकिनी को (अपनी प्रणयिनी बनाया) । जैसे कामदेव से मिलकर रति एवं शरत्काल से (संयुक्त होकर) कमलिनी (शोभित) होती है, (उसी

संयोजिता सदृशसमागमोपजनितामतिमहतीं मुदमुपगतवती। निखिलान्तःपुरस्वामिनी च तस्याभवत्।

तयोश्च तादृशयोर्महात्मनोरहमीदृशी विगतलक्षणा शोकाय केवलमनेकदुःखसहस्रभाजनमेकैवात्मजा समुत्पन्ना। तातस्त्वनपत्यतया सुतजन्मातिरिक्तेन महोत्सवेन मज्जन्माभिनन्दितवान्। अवाप्ते च दशमेऽहनि कृतयथोचितसमाचारो महाश्वेतेति यथार्थमेव नाम कृतवान्। साहं पितृभवने बाल-

---

संयोजिता = सम्बन्धं प्रापिता, मकरकेतनेन = मन्मथेन (संयोजिता) रतिः, इव, शरत्समयेन = शरत्कालेन (संयोजिता) कमलिनी = सरोजिनी इव, सदृशसमागमोपजनिताम्=सदृशेन अनुरूपेण यः समागमः सम्बन्धः तेन उपजनिताम् उत्पादिताम्, अतिमहतीं = गरीयसीं,मुदं = हर्षम्, उपगतवती = प्राप्तवती। तस्य=हंसस्य, निखिलान्तःपुरस्वामिनी = निखिलस्य समस्तस्य अन्तःपुरस्य अवरोधस्य स्वामिनी पट्टमहिषी, च = समुच्चये, अभवत् = अभूत् (उपमा)।

च = अपि च, तादृशयोः = पूर्ववर्णितप्रभावविशिष्टयोः, तयोः = हंसगौर्योः, महात्मनोः = महानुभावयोः, अहम् = भवत्सम्मुखीना, ईदृशी = एतादृशी, विगतलक्षणा = विगतं लुप्तं लक्षणं शुभलक्षणं यस्याः सा एवम्भूता, केवलं शोकाय = क्लेशाय, अनेकदुःखसहस्रभाजनम् = अनेकानि विविधानि (दैहिक-दैविक-भौतिकानि) यानि दुःखानि कष्टानि तेषां सहस्राणि तेषां भाजनं पात्रम्, एकैव = एकाकिनी एव, आत्मजा = दुहिता, समुत्पन्ना = जाता। तातः = जनकः, तु, अनपत्यतया = अनपत्यस्य भावः अनपत्यता अपुत्रत्वं तया (मदतिरिक्त सन्तानरहित तयेत्यर्थः), सुतजन्मातिरिक्तेन = सुतस्य पुत्रस्य जन्मनः प्रसूतेः, (अपि) अतिरिक्तेन अधिकेन, महोत्सवेन = महानन्देन, मज्जन्म = मम उत्पत्तिम्, अभिनन्दितवान्। अवाप्ते = सम्प्राप्ते, च, दशमे = (उत्पत्तेः) दशमे, अहनि = दिवसे, कृतयथोचितसमाचारः = कृतः विहितः यथोचितः यथायोग्यः समाचारः धार्मिकक्रियाकलापः येन सः तथाभूतः, महाश्वेता = महती चासौ श्वेता इति, यथार्थम् = अर्थानुगतम्, एव = अवधारणे, नाम = संज्ञां, चकार = कृतवान्। "पुत्रस्य = जातस्य, दशमेऽहनि पिता नाम विदध्यात्। द्व्यक्षरं चतुरक्षरं वा नाम कृतं कुर्यान्न तद्धितमिति॥" पातञ्जलमहाभाष्योक्तिः ध्यातव्या। साहम् = एतादृशी अहं, (महाश्वेता) पितृभवने = तातगृहे,

---

प्रकार) हंस से संयोजित (विवाहित) होकर उसने सदृश समागम से उत्पन्न अत्यन्त आनन्द को प्राप्त किया तथा अन्तःपुर की स्वामिनी बन गई।

उस प्रकार के (उक्त) दोनों (हंस तथा गौरी) महात्माओं के यहाँ, मैं ऐसी शुभ लक्षणों से विहीन, सहस्रों दुःखों की पात्र, केवल शोक (देने) के लिए, अकेली ही पुत्री उत्पन्न हुई। निःसन्तान होने के कारण पिता ने पुत्र-जन्म से भी अधिक महोत्सव के द्वारा मेरे जन्म का अभिनन्दन किया। दसवें दिन के आने पर

तया कलमधुरप्रलापिनी वीणेव गन्धर्वाणामङ्कादङ्कं सञ्चरन्त्यविदितस्नेहशोकायासमनोहरं शैशवमतिनीतवती। क्रमेण च कृतं मे वपुषि, वसन्त इव मधुमासेन, मधुमास इव नवपल्लवेन, नवपल्लव इव कुसुमेन, कुसुम इव मधुकरेण, मधुकर इव मदेन, नवयौवनेन पदम्।'

अथ विजृम्भमाणनवनलिनवनेषु, अकठोरचूतकलिकाकलापकृतकामुकोत्क-

बालतया = बालस्य भावः कर्म वा बालता शिशुता तया, कलमधुरप्रलापिनी = कलं मनोहरम् अव्यक्तं मधुरं कोमलं च प्रलपितुं वदितुं शीलं यस्याः सा, वीणेव = वल्लकी इव, (विशेषणमिदमुभयान्वयि) गन्धर्वाणाम्, अङ्कादङ्कं = क्रोडात् क्रोडं, सञ्चरन्ती = खेलन्ती, अविदितस्नेहशोकायासमनोहरम् = अविदितः बालभावतया अज्ञातः स्नेहस्य प्रेम्णः शोकस्य शुचः च यः आयासः प्रयासः तेन, मनोहरं = हृदयावर्जकं, शैशवम् = बालभावम्, अतिनीतवती = अतिक्रान्तवती। क्रमेण = क्रमशः, च = समुच्चये, मे = मम, वपुषि = शरीरे "नवयौवनेन पदं कृतम्" इति वाक्यम्—इतः तृतीयान्तानि पदानि 'नवयौवनेन' इत्यस्य उपमानानि सप्तम्यन्तानि च 'वपुषि' इत्यस्य। कस्मिन् केन इव पदं कृतमित्याह—वसन्ते = सुरभौ, मधुमासेन = चैत्रमासेन इव, मधुमासे (च), नवपल्लवेन = नूतन किसलयेन इव, नवपल्लवे (च) कुसुमेन पुष्पेण इव, कुसुमे मधुकरेण = मधुपेन, मधुकरे (च) (पुष्परसपानात्) मदेन = मादेन "मादो मदे" इत्यमरः, नवयौवनेन = नूतनतारुण्येन, पदं = स्थानं, कृतं = विहितम्। अत्र तुलनीयम्—"अपाङ्गयोः केवलमस्य दीर्घयोः, शनैः शनैः श्यामिकया कृतं पदम्" कुमार०। अत्र भोजराजमते रशनोपमा, साहित्यदर्पणकारमते च मालोपमा बोध्या।

अथमधुमासदिवसान् वर्णयति—अत्र सप्तमी बहुवचनान्तानि पदानि 'मधुमासदिवसेषु' इत्यस्य विशेषणानि। 'अथ···मधुमासदिवसेषु···स्नातुमभ्यागमम्' इति वाक्यम्। अथ= अनन्तरं, विजृम्भमाणनवनलिनवनेषु=विजृम्भमाणानि विकसन्ति नवानि नूतनानि नलिनानां कमलानां वनानि विपिनानि येषु(मधुमासदिवसेषु) तेषु, अकठोरचूतकलिकाकलापकृतकामुकोत्कलिकेषु=अकठोराः अतिकोमलाः याः चूतानाम् आम्राणां कलिकाः मञ्जर्यः।

यथोचित आचार का सम्पादन करने वाले (पिता ने) 'महाश्वेता' यह अन्वर्थक ही नाम रखा। मैंने शिशुभाव से कल (अस्फुट अथवा मनोज्ञ) एवं मधुर बोलने वाली वीणा की तरह गन्धर्वों के (एक) अङ्क (गोद) से (दूसरे) अङ्क में घूमती (खेलती) हुई, स्नेह एवं शोक के आयास को न जानने से मनोहर (अपने) शैशव को, पिता के घर में बिताया। (जिस प्रकार) क्रम से वसंत में मधुमास (चैत्रमास) मधुमास में नूतन किसलय, नूतन किसलयों में कुसुम, कुसुमों में भ्रमर एवं भ्रमरों में मद का आगमन होता है, (उसी प्रकार) नवयौवन ने मेरे शरीर में स्थान बनाया।

लिकेषु, कोमलमलयमारुतावतारतरङ्गितानङ्गध्वजांशुकेषु, मदकलितकामिनी-गण्डूषसीधुसेकपुलकितबकुलेषु, मधुकरकुलकलङ्ककालीकृतकालेयककुसुमकुड्मलेषु, अशोकतरुताडनारणितरमणीमणिनूपुरझङ्कारसहस्रमुखरेषु, विकसन्मुकुलपरिमलपुञ्जितालिजालमञ्जुसिञ्जितसुभगसहकारेषु, अविरलकुसुमधूलि-

तासां कलापेन समूहेन कृता विहिता कामुकानां कामिनां पुरुषाणाम् उत्कलिका उत्कण्ठा येषु तेषु, (जाता नोत्कलिकलिकेत्यादि अमरुकशतकपद्यं द्रष्टव्यम्) कोमलमलयमारुतावतारतरङ्गितानङ्गध्वजांशुकेषु = कोमलः अतीव सुकुमारः (मन्दं मन्दं सञ्चरणशीलः) यः मलयमारुतः मलयपवनः तस्य अवतारः शुभागमनं तेन तरङ्गितानि उर्मिवत् प्रस्फुरितानि यानि अनङ्गस्य मदनस्य ध्वजः पताका तस्य अंशुकानि वसनानि येषु तेषु, (पुरा वसन्ते अनङ्गपूजनम् अनङ्गध्वजोत्थापनादिकं प्रचलितम् आसीत्), मदकलितकामिनीगण्डूषसीधुसेकपुलकितबकुलेषु = मदेन मद्यपानजनितमत्ततया यौवनमदेन वा कलिताः युक्ताः याः कामिन्यः प्रमदाः तासां गण्डूषसीधूनां चुलकमद्यानां सेकेन सिञ्चनेन पुलकिताः जातरोमाञ्चाः (उत्पन्न कुड्मलाः) बकुलाः केसरवृक्षाः येषु तेषु, "स्त्रीणां स्पर्शात् प्रियङ्गुर्विकसति बकुलः सीधुगण्डूषसेकात्" इत्याद्यभियुक्तोक्तिः, मधुकरकुलकलङ्ककालीकृतकालेयककुसुमकुड्मलेषु=मधुकराः भ्रमराःतेषां कुलं समूहः एव कलङ्कः कृष्णता तेन कालीकृतानि श्यामीकृतानि कालेयकानां जायकानां (दारुहरिद्रावृक्षाणां) कुसुमानां पुष्पाणां कुड्मलानि कोरकाः येषु तेषु ('मधुकर कुलकलङ्कः' इत्यत्र रूपकम्, अखिले पदे अनुप्रासः), अशोकतरुताडना–रणितरमणीमणिनूपुरझङ्कारसहस्रमुखरेषु = अशोकतरुषु अशोकवृक्षेषु ताडनाभिः चरणप्रहारैः रणितानि झङ्कृतानि रमणीनां विलासिनीनां यानि मणिनूपुराणि मणिनिर्मितमञ्जीराणि "पादाङ्गदं तुलाकोटिर्मञ्जीरो नूपुरोऽस्त्रियाम्" इत्यमरः तेषां झङ्काराः निनादाः तेषां सहस्रेण मुखरेषु शब्दायमानेषु, विकसन्मुकुलपरिमलपुञ्जितालिजालमञ्जुसिञ्जितसुभगसहकारेषु= विकसन्ति प्रस्फुटन्ति यानि मुकुलानि कुड्मलानि तेषां परिमलः आमोदः तेन पुञ्जितम् एकत्रितं यद् अलिजालं मिलिन्दवृन्दं तस्य यत् मञ्जु हृदयहारि सिञ्जितं तेन सुभगेषु सुन्दरेषु सहकारेषु आम्रतरुषु, 'आम्रश्चूतो रसालोऽसौ सहकारोऽतिसौरभः" इत्यमरः वृत्त्यनुप्रासः), अविरलकुसुमधूलिबालुकापुलिनधवलितधरातलेषु = अविरलानि सान्द्राणि यानि कुसुमानि पुष्पाणि तेषां धूलयः परागाः ते एव बालुकानां सिकताकणानां पुलिनं तटं तेन धवलितं श्वेतीकृतं धरातलं क्षितितलं येषु

तदनन्तर समस्त जीवलोक को आनन्द देने वाले मधुमास के दिनों में एक दिन मैं (अपनी) माता के साथ मधुमास से परिवर्धित शोभा वाले, विकसित नये कमल, कुमुद, इन्दीवर और कल्हार से समन्वित इस अच्छोद सरोवर में स्नान करने के लिए आई। (मधुमास के दिनों में) नये कमल वन प्रस्फुटित हो रहे थे,

बालुकापुलिनधवलितधरातलेषु, मधुमदविडम्बितमधुकरकदम्बकसंवाह्यमानलतादोलेषु उत्फुल्लपल्लवलवलीलीयमानमत्तकोकिलोल्लासितमधुसीकरोद्दामदुर्दिनेषु, प्रोषितजनजायाजीवोपहारहृष्टमन्मथास्फालितचापरवभयस्फुटितपथिकहृदयरुधिरार्द्रमार्गेषु, अविरतपतत्कुसुमशरपतत्रिपत्रसूत्कारबधिरीकृतदिङ्मुखेषु, दिवापि प्रवृत्तान्तर्मदनरागान्धाभिसारिकासार्थसंकुलेषु, उद्वेलरतिरस-

तेषु, मधुमदविडम्बितमधुकरकदम्बकसंवाह्यमानलतादोलेषु = मधुमदेन पुष्परसपानजनितमत्ततया विडम्बिताः विह्वलीकृताः ये मधुकराः भ्रमराः तेषां कदम्बकेन समूहेन संवाह्यमानाः इतस्ततः सञ्चाल्यमानाः याः लताः वल्ल्यः ताः एव दोला प्रेङ्खा तेषु, ('लतादोलेषु' इत्यत्र रूपकम्), उत्फुल्लपल्लवलवलीलीयमानमत्तकोकिलोल्लासितमधुसीकरोद्दामदुर्दिनेषु = उत्फुल्लानि स्फुटितानि पल्लवानि किसलयानि यासां तासु लवलीसु लताविशेषेषु लीयमानाः गुप्तभावेन संतिष्ठमानाः ये मत्तकोकिलाः मधुमासजनितमदयुक्ताः पिकाः तैः उल्लासितैः बहिः प्रापितैः मधुसीकरैः पुष्परसबिन्दुभिः उद्दामं नितान्तं दुर्दिनं वृष्टिः येषु तेषु, प्रोषितजनजायाजीवोपहारहृष्टमन्मथास्फालितचापरवभयस्फुटितपथिकहृदयरुधिरार्द्रमार्गेषु = प्रोषिताः प्रवासं गताः ये जनाः लोकाः तेषां जायाः कामिन्यः तासां जीवाः प्राणाः तेषाम् उपहारः उपायनं तेन हृष्टः प्रसन्नः यः मन्मथः मनसिजः तेन आस्फालितस्य आकर्षितस्य चापस्य धनुषः यः रवः निनादः तस्मात् यत् भयं भीतिः तेन स्फुटितानि विशीर्णानि पथिकानां पान्थानां यानि हृदयानि उरांसि तेषां रुधिरेण रक्तेन आर्द्राणि क्लिन्नानि मार्गाः (वियोगिनां) पन्थानः येषु तेषु, (अतिशयोक्तिः), अविरतपतत्कुसुमशरपतत्रिपत्रसूत्कारबधिरकृतदिङ्मुखेषु = अविरतं निरन्तरं पतन्तः विरहिणः प्रति धावन्तः कुसुमशरस्य कामस्य ये पतत्रिणः बाणाः तेषां पत्राणां पुङ्खानां "पत्रं तु वाहने पर्णे स्यात् पक्षे शरपक्षिणोः" इति मेदिनी, सूत्कारेण 'सूत्-सूत्' इति ध्वनिना बधिरीकृतानि सर्वतः परिपूरितानि इति भावः दिङ्मुखानि आशामुखानि येषु तेषु (अत्रापि अतिशयोक्तिः), दिवापि = दिने अपि, प्रवृत्तान्तर्मदनरागान्धाभिसारिकासार्थसङ्कुलेषु = प्रवृत्तः सञ्जातः अन्तः मनसि यः मदनरागः कामासक्तिः तेन अन्धाः व्यग्राः याः अभिसारिकाः अभिसरणशीलाः कामिन्यः तासां सार्थः समूहः तेन सङ्कुलेषु व्याप्तेषु-अभिसारिकालक्षणमेवमुक्तं साहित्यदर्पणकृता—

"अभिसारयते कान्तं या मन्मथवशंवदा।
स्वयं वाभिसरत्येषा धीरैरुक्ताभिसारिका॥"

उद्वेलरतिरससागरपूरप्लावितेषु = उद्गतः वेलाम् उद्वेल उन्मर्यादः रतिरसः

कोमल आम की कलिकाओं का समूह (गुच्छा) कामियों को उत्कण्ठित कर रहा था; सुकुमार मलय पवन के आगमन से कामदेव की पताका के वस्त्र संचालित हो (फहरा) रहे थे; मदभरी रमणियों की मुख-मदिरा के सिंचन से बकुल (वृक्ष)

सागरपूरप्लावितेषु, सकलजीवलोकहृदयानन्ददायकेषु, मधुमासदिवसेष्वेकदाहमम्बया सह मधुमासविस्तारितशोभं प्रोत्फुल्लनवनलिनकुमुदकुवलयकल्हारमिदमच्छोदं सरः स्नातुमभ्यागमम्। अत्र च स्नानार्थमागतया भगवत्या पार्वत्या तटशिलातलेषु विलिखितानि सभृङ्गिरिटीनि पांशुनिमग्नकृशपदमण्ड-

शृङ्गारः स एव अगाधत्वात् सागरः समुद्रः तस्य पूरः प्लवः तेन प्लावितेषु आच्छादितेषु (रूपकम्), सकलजीवलोकहृदयानन्ददायकेषु = सकलाः समस्ताः ये जीवलोकाः प्राणिनः तेषां हृदयानन्ददायकेषु चित्तानन्दप्रदेषु, मधुमासदिवसेषु=मधुमासः वसन्तकालः तस्य दिवसेषु दिनेषु, एकदा = एकस्मिन् दिवसे, अहम् = महाश्वेता, अम्बया = जनन्या, सह = साकं, मधुमासविस्तारितशोभं = मधुमासेन चैत्रमासेन विस्तारिता परिवर्धिता शोभा छविः यस्य तत्, प्रोत्फुल्लनवनलिनकुमुदकुवलयकल्हारम् = प्रोत्फुल्लानि स्फुटानि नवानि नूतनानि नलिनानि कमलानि कुमुदानि श्वेतकमलानि कुवलयानि नीलोत्पलानि कल्हाराणि सौगन्धिकानि (सान्ध्ये स्फुटनशीलानि) च यत्र तत्, इदम् = एतत्, अच्छोदं, सरः = तडागं, स्नातुम् = स्नानं कर्तुम्, अभ्यागमम् = समागतवती। 'सिते कुमुदकैरवे,' 'स्यादुत्पलं कुवलयं' 'सौगन्धिकं तु कल्हारम्' इत्यमरः। अत्र = अच्छोदसरः प्रदेशे, च स्नानार्थम् = प्लवनाय, आगतया = (पूर्वस्मिन् काले) प्राप्तया, भगवत्या = देव्या, पार्वत्या = गौर्या, तटशिलातलेषु = तटे तीरे यानि शिलातलानि प्रस्तरखण्डानि तेषु, विलिखितानि = आलिखितानि, सभृङ्गिरिटीनि = भृङ्गिरिटिः शिवगणविशेषः तेन सहितानि युक्तानि, पांशुनिमग्नकृशपदमण्डलानुमितमुनिजनप्र-

पुलकित (हो रहे) थे; मधुकर-कुल रूपी कलङ्क (कालिमा) से काली बनायी गयी कालेयक (जायक) की पुष्प कलियाँ (भरी हुई) थीं; अशोक वृक्षों पर चरण-प्रहार से शब्दायमान रमणियों के मणि नुपूरों की सहस्रों झङ्कारों से (दिशायें) मुखरित थीं, खिलते हुये (आम्र के) बौरों की गन्ध से एकत्रित भ्रमर-समूह के मंजु गुँजन से आम्र-वृक्ष मनोहर (लग रहे) थे; सघन कुसुमों के पराग रूप बालुका-पुलिन से धरातल धवलित (हो रहा) था; पुष्प-रस के पान से विह्वल भ्रमरों से लता-झूले हिलाये जा रहे थे, विकसित पल्लव वाली लवली लता में घुसते हुए मतवाले कोकिलों के द्वारा बिखेरी गई मधु की बूँदों से प्रचण्ड दुर्दिन (सा) बन रहा था; प्रवासी जनों की पत्नियों के जीवनोपहार से प्रसन्न कामदेव के द्वारा आस्फालित (चढ़ाये गये) धनुष के शब्द-भय से पथिकों के विदीर्ण हृदय के रुधिरों से मार्ग गीले हो रहे थे; लगातार गिरने वाले कामदेव के बाणों के पंखों के सूत्कार (सनसनाहट) से दिशायें बधिर (परिपूरित) हो रही थीं, दिन में भी हृदय में उत्पन्न कामासक्ति से व्यग्र अभिसारिकासमूह से (पथ) व्याप्त थे; उद्वेलित (बढ़े हुये) शृङ्गार रूपी

लानुमितमुनिजनप्रणामप्रदक्षिणानि त्र्यम्बकप्रतिबिम्बकानि वन्दमाना, भ्रमरभरभुग्नगर्भकेसरजर्जरकुसुमोपहाररम्योऽयं लतामण्डपः, परभृतनखकोटिपाटितकुड्मलनालविवरगलितमधुनिकरधारः सुपुष्पितोऽयं सहकारतरुः, उन्मदमयूरकुलकलकलभीतभुजङ्गमुक्ततला शिशिरेयं चन्दनवीथिका, विकचकुसुमपुञ्जपात-

णामप्रदक्षिणानि = पांशुः सिकतासमूहः तत्र निमग्नैः ब्रुडितैः अतएवः कृशैः अस्थूलैः पदमण्डलैः चरणचिह्न समूहैः अनुमिते अनुमानविषयीकृते मुनिजनानां ऋषीणां प्रणामप्रदक्षिणे नमस्कारपरिभ्रमणे येषां तानि, त्र्यम्बकप्रतिबिम्बकानि = त्र्यम्बकः त्रिलोचनः तस्य प्रतिबिम्बकानि प्रतिमूर्तीः, वन्दमाना = नमस्कुर्वन्ती, (अहं महाश्वेता) 'सह सखी जनेन व्यचरम्' इति अग्रेणान्वयः, इतः महाश्वेताकृतं वनोद्देशदर्शनवर्णनम्— **भ्रमरभरभुग्नगर्भकेसरजर्जरकुसुमोपहाररम्यः** = भ्रमराः द्विरेफाः तेषां भरेण भारेण भुग्नः ईषत् कुटिलः गर्भकेसराः मध्यभागकिञ्जल्काः येषां तैः जर्जराणि विशीर्णानि यानि कुसुमानि तेषाम् उपहारेण उपायनेन रम्यः मनोहरः, **अयम्** = एषः, **लतामण्डपः** = लतानिकुञ्जः, **परभृतनखकोटिपाटितकुड्मलनालविवरविगलितमधुनिकरधारः** = परभृताः कोकिलाः तेषां नखकोट्या नखराग्रभागेन पाटितानि भिन्नानि कुड्मलानां मुकुलानां नालानि काण्डाः तेषां विवराणि छिद्राणि तेभ्यः विगलिता निःसृता मधुनिकरस्य रससमूहस्य धारा लेखा यस्मिन् सः, **अयम्** = एषः, **सुपुष्पितः** = सम्यक् कुसुमितः, **सहकारतरुः** = सहकारस्य आम्रस्य तरुः वृक्षः, **उन्मदमयूरकुलकलकलभीतभुजङ्गमुक्ततला** = उन्मदाः मदोन्मत्ताः ये मयूराः शिखिनः तेषां कुलं समूहः तस्य कलकलैः कोलाहलैः भीताः संत्रस्ताः ये भुजङ्गाः सर्पाः तैः मुक्तं भयात् त्यक्तं तलं निम्नप्रदेशः यस्याः सा तथाभूता, **शिशिरा** = शीतला, **इयं** = सम्मुखीना, **चन्दनस्य** = मलयजस्य, **वीथिका** = पंक्तिः, **विकच-कुसुमपुञ्जपातसूचितवनदेवताप्रेङ्खोलनशोभना** = विकचानि विकसितानि कुसुमानि पुष्पाणि तेषां पुञ्जः राशिः तस्य पातेन पतनेन सूचितं ज्ञापित वनदेवतायाः काननाधिष्ठातृदेव्याः यत् प्रेङ्खोलनं दोलनं तेन शोभना

सागर के प्रवाह से (सब) प्लावित हो रहे थे। वहाँ पर (अच्छोदसरोवर में) स्नान के लिए आई हुई भगवती पार्वती के द्वारा तीरवर्तिनी शिलाओं पर आलेखित भृङ्गरीटि (शिव गण) के साथ त्रिलोचन की प्रतिमूर्तियों की, जिनके (समीप की) बालुकाओं पर पड़े हुए पतले चरण-चिह्नों के समूह से (उनके प्रति) तपस्वियों के द्वारा किए गए प्रणाम एवं प्रदक्षिणा का अनुमान होता था, वन्दना करती, हुई, यह मधुकरों के भार से जर्जरित गर्भ केसर (होने के कारण) विशीर्ण पुष्पों के उपहार से रमणीय लता-मण्डप है, कोकिल के नखों से विदीर्ण मुकुल-काण्डों (कलियों के डण्ठल) के छिद्रों से विगलित (निःसृत) रसधारा से युक्त तथा सुपुष्पित यह आम्र-वृक्ष है, मतवाले मयूरों के कोलाहल से भयभीत सर्पों से परित्यक्त

सूचितवनदेवताप्रेङ्खोलनशोभनेयं लतादोला, बहलकुसुमरजःपटलमग्नकलहंसपदलेखमतिरमणीयमिदं तीरतरुतलमिति स्निग्धमनोहरतरोद्देशदर्शनलोभाक्षिप्तहृदया सह सखीजनेन व्यचरम् ।

एकस्मिंश्च प्रदेशे झटिति वनानिलेनोपनीतम्, निर्भरविकसितेऽपि काननेऽभिभूतान्यकुसुमपरिमलम्, विसर्पन्तम्, अतिसुरभितयानुलिम्पन्तमिव तर्पयन्तमिव पूरयन्तमिव घ्राणेन्द्रियम्, अहमहमिकया मधुकरकुलैरनुबध्यमा-

मनोज्ञा, इयम् = एषा (दृश्यमाना) लतादोला = वल्लीप्रेङ्खा, बहलकुसुमरजःपटलमग्नकलहंसपदलेखम् = बहलं समधिकं यत् कुसुमरजः पुष्परागः तस्य पटलं समूहः तस्मिन् मग्ना लीना कलहंसानां कादम्बानां पदलेखाः चरणचिह्नानि यस्मिन् तादृशम्, अतिरमणीयम् = सर्वथा मनोहारि, इदम्, तीरतरुतलम् = तटवर्तिवृक्षाणाम् अधोभागः, इति = अनेन प्रकारेण स्निग्धमनोहरतरोद्देशदर्शनलोभाक्षिप्तहृदया = स्निग्धः सघनः—तुलनीयं 'स्निग्धच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु'—मेघदूतम्, मनोहरतरः नितान्तं हृदयावर्जकः यः उद्देशः वनैकदेशः तस्य दर्शनलोभात् अवलोकनतृष्णावशात् आक्षिप्तं वशीकृतं हृद्यं मनः यस्याः तादृशी (अहं), सखीजनेन वयस्यागणेन, समं = सह, व्यचरम् = विचरणं कृतवती ।

एकस्मिन् प्रदेशे च = वनोद्देशस्य एकस्मिन् भागे च, "कुसुमगन्धमजिघ्रम्" इति क्रियया अन्वयः, इतः द्वितीयैकवचनान्तानि पदानि 'कुसुमगन्धम्' इत्यस्य विशेषणानि—वनानिलेन = अरण्यपवनेन, झटिति = सहसा, उपनीतम् = आनीतं, निर्भरविकसितेऽपि = निर्भरम् अत्यन्तं विकसितेऽपि प्रस्फुटिते अपि, कानने = अरण्ये, अभिभूतान्यकुसुमपरिमलम् = अभिभूतः अतिक्रान्तः अन्यकुसुमानाम् इतरपुष्पाणां परिमलः सौरभं येनतम्, विसर्पन्तं = परितः प्रसरन्तम्, अतिसुरभितया = अत्यन्त सौगन्ध्यवशात्, घ्राणेन्द्रियं = नासिकाम्, अनुलिम्पन्तमिव = व्याप्नुवन्तम्, इव, तर्पयन्तमिव = तृप्तिं जनयन्तम्, इव, पूरयन्तमिव = परिपूर्णं कुर्वन्तम्, इव (अत्र स्थलत्रयेक्रियोत्प्रेक्षा), अहमहमिकया = "अहं पूर्वम्, अहं पूर्वम्" इति बुद्धिः अहमहमिका तया, मधुकरकुलैः = मिलिन्दवृन्दैः, अनुबध्यमानम् =

यह शीतल चन्दन-वीथिका है, विकसित पुष्प-पुंज के गिरने से सूचित (होनेवाले) वन-देवियों के झूलने से सुन्दर यह लताओं का झूला है, पुष्पों के अत्यधिक पराग में कलहंसों की पड़ी हुई पदपंक्ति वाला अतिरमणीय यह तीरवर्ती वृक्षों का तल है, इस प्रकार स्निग्ध एवं अतिमनोहर वन-प्रदेश के दर्शन-लोभ से आकृष्ट चित्तवाली (मैं) अपनी सखियों के साथ विचरण करती रही ।

मैंने एक स्थान में वन-वात के द्वारा शीघ्रता से लाई गई कुसुम-गन्ध को सूँघा, वह, उपवन के पूर्णरूप से विकसित होने पर भी, दूसरे पुष्पों की गन्ध को दबा देने वाली थी,

नम्, अनाघ्रातपूर्वम्, अमानुषलोकोचित्तं कुसुमगन्धमभ्यजिघ्रम्। कुतोऽय-मित्युपारूढकुतूहला चाहं मुकुलितलोचना तेन कुसुमगन्धेन मधुकरीवाकृष्य-माणा कौतुकतरलाभ्यधिकतरोपजातमणिनूपुरझङ्काराकृष्टसरःकलहंसानि कति-त्पदानि गत्वा हरहुताशनेन्धनीकृतमदनशोकविधुरं वसन्तमिव तपस्यन्तम्, अखिलमण्डलप्राप्त्यर्थमीशानशिरःशशाङ्कमिव धृतव्रतम्, अयुग्मलोचनं वशी-

---

अनुगम्यमानम्, अनाघ्रातपूर्वम् = अजिघ्रितपूर्वम्, अमानुषलोकोचितम् = अमा-नुषलोकस्य देवलोकस्य उचितं योग्यम् (मानवलोकायोग्यमिति भावः), कुसुमगन्धं = पुष्पसौरभम्, अभ्यजिघ्रम = आघ्रातवती । कुतः = कस्मात्, अयं = गन्धः (आयाति इति शेषः), इति = इत्थम्, उपारूढकुतूहला = उपारूढं समुपजातं कुतूहलं कौतुकं यस्याः सा, च, अहं = महाश्वेता, मुकुलितलोचना = मुकुलिते आनन्दातिरेकेण ईषत् उन्मीलिते लोचने नयने यस्याः सा, तेन = अलौकिकेन, कुसुमगन्धेन = पुष्पसौरभेण, मधुकरीव = भ्रमरी इव, आकृष्यमाणा = हठात् नीयमाना, कतिचित् पदानि गत्वाः इति सम्बन्धः, पदानि विशेषयन् आह—कौतुक-तरलाभ्याधिकतरोपजातमणिनूपुरझङ्काराकृष्टसरःकलहंसानि = कौतुकेन कुतूहलेन तरला चञ्चला या गतिः तया अभ्यधिकतरः पूर्वातिशायी उपजातः उत्पन्नः यः मणिनूपुराणां मणिनिर्मितमञ्जीराणां झङ्कारः झङ्कृतिः तेन आकृष्टाः आकर्षिताः सरसः अच्छोदसरोवरस्य कलहंसाः कादम्बाः यैः (पदैः) तानि, कतिचित् = कियन्ति, पदानिः ('पग' इति हिन्दी), गत्वा = चलित्वा, "स्नानार्थमागतं मुनिकुमारमपश्यम्" इति इरेण अन्वयः, इतः द्वितीयैकवचनान्तानि पदानि "मुनिकुमारम्" इति विशेष्यपदस्य विशेष-णानि—हरहुताशनेन्धनीकृतमदनशोकविधुरम् = हरः शिवः तस्य हुताशनः तृतीयनेत्रजन्मा अग्निः तेन इन्धनीकृतः भस्मसात् कृतः यः मदनः अनङ्गः तस्य शोकः वियोगजखेदः तेन विधुरं व्याकुलं 'वैकल्येऽपि च विश्लेषे, विधुरं विकले त्रिषु" इति त्रिकाण्डशेषः (अत एव) तपस्यन्तं = तपस्यां कुर्वन्तं, वसन्तमिव = सुरभिमासम्, इव, (अत्र पदार्थहेतुककाव्यलिङ्गं तेन द्रव्योत्प्रेक्षा च), अखिलमण्डलप्राप्त्यर्थम् = सम्पूर्णमण्डलावाप्त्यर्थम्, ईशानशिरःशशाङ्कमिव = शिवललाटस्थचन्द्रम्, इव, धृतव्रतं = स्वीकृतनियमं (द्रव्योत्प्रेक्षा), अयुग्मलोचनं = त्रिनयनं (शिवं), वशी-

---

वह (चारों ओर) फैल रही थी, अत्यधिक सुगन्ध के कारण जैसे (वह) नासिका में लेप सा लगा रही थी, (नासिका को) तृप्त (तथा) पूर्ण सी कर रही थी, भौंरे होड़ लगाकर उसका अनुगमन कर रहे थे, (वह गन्ध) पहले कभी न सूँघी जाने वाली तथा देव-लोक के (लिए) उचित थी। यह (गन्ध) कहाँ से आई' इस प्रकार के कूतूहल से युक्त, अधमुँदी आँखों वाली तथा उस पुष्प गन्ध से भ्रमरी की तरह आकृष्ट होती हुई मैने कुतूहलवश चंचल-गति से (शीघ्रता से चलने के कारण) बढ़ती हुई नूपूर की झङ्कारों

कर्तुकामं काममिव सनियमम्, अतितेजस्वितया प्रचलतडिल्लतापञ्जरमध्यगतमिव ग्रीष्मदिवसदिवसकरमण्डलोदरप्रविष्टमिव ज्वलनज्वालाकलापमध्यस्थितमिव विभाव्यमानम्, उन्मिषन्त्या बहुलबहुलया दीपिकालोकपिङ्गलया देहप्रभया कपिलीकृतकाननं कनकमयमिव तं प्रदेशं कुर्वाणम्, रोचनारसलुलितप्रतिसरसमानसुकुमारपिङ्गलजटम्, पुण्यपताकायमानया सरस्वतीसमागमो-

कर्तुकामं = वशीकर्तुं स्वायत्तीकर्तुं कामः अभिलाषः यस्य तं, काममिव = अनङ्गम्, इव, सनियमं = धृतव्रतं (द्रव्योत्प्रेक्षा), अतितेजस्वितया = अतितेजः विद्यते अस्य इति अतितेजस्वी महाप्रतापी तस्य भावः तया, प्रचलतडिल्लतापञ्जरमध्यमगतमिव = प्रचला चञ्चला या तडिल्लता विद्युल्लता तस्याः पञ्जरं तस्य मध्ये अभ्यन्तरे गतमिव प्राप्तम्, इव, (अतितेजस्वितया) ग्रीष्मदिवसदिवसकरमण्डलोदरप्रविष्टमिव = ग्रीष्मदिवसे निदाघकालिकेदिवसे दिवसकरस्य सूर्यस्य यत् मण्डलं बिम्बं तस्य उदर मध्यदेशः तस्मिन् प्रविष्टमिव कृतप्रवेशम् इव; (अतितेजस्वितया) ज्वलनज्वालाकलापमध्यस्थितमिव = ज्वलनः अग्निः तस्य ज्वालाकलापः शिखासमूहः तस्य मध्ये उदरे स्थितमिव उपविष्टम्, इव, विभाव्यमानम् = प्रतीयमानम् ('मध्यगतमिव' 'प्रविष्टमिव', 'मध्यस्थितमिव' इति सर्वत्र क्रियोत्प्रेक्षाः; मिथः अनपेक्षतया स्थित्या च संसृष्टिः), उन्मिषन्त्या = विकसन्त्या, बहुलबहुलया = अत्यधिकया, दीपिकालोकपिङ्गलया = दीपिकायाः दीपस्य यः आलोक- प्रकाशः तद्वत् पिङ्गलया पीतवर्णया (लुप्तोपमा), देहप्रभया = शारीरिकदीप्त्या, कपिलीकृतकाननम् = अकपिलं कपिलं कृतम् इति कपिलीकृतं पिङ्गवर्णीकृत काननं वनं येन तम्, (अतएव) तं प्रदेशं = वनभूमिभागं, कनकमयमिव = सुवर्णमयम् इव, कुर्वाणं = कुर्वन्तम् (अतिशयोक्तिः, गुणोत्प्रेक्षाकाव्यलिङ्गम् च) तुलनीयम्—"देहप्रभावितानेन ..... दन्तमयीमिव तं प्रदेशं कुर्वन्तीम्।" रोचनारसलुलितप्रतिसरसमानसुकुमारपिङ्गलजटम् = रोचना गोरोचना तस्याः रसेन द्रवेण लुलितः रक्तः यः प्रतिसरः (विवाहादिशुभावसरे धार्यं) हस्तसूत्रं तेन समाना तुल्या सुकुमारा कोमला पिङ्गला पीतवर्णा च जटा सटा यस्य तम् "व्रतिनस्तु जटा सटा" इत्यमरः (लुप्तोपमा), पुण्यपताकायमानया = पुण्यस्य धर्मस्य पताका ध्वजः तद्वत् आचरन्त्या (व्यञ्ज्या उपमा), सरस्वतीसमागमोत्कण्ठाकृतचन्दनलेखयेव = सरस्वती शारदा तस्याः समागमाय

से सरोवर के कलहंसों को आकृष्ट करने वाले कुछ पग चलकर, स्नान के लिए आए हुए (एक) अति सुन्दर मुनिकुमार को देखा। (उसे देखकर ऐसा लगता था) मानो रुद्राग्निमें इन्धन बने (भस्मीभूत) कामदेव के शोक से विह्वल वसन्त तपस्या कर रहा हो, शङ्कर के ललाट में स्थित चन्द्रकला मानो सम्पूर्ण (षोडश कला से युक्त) मण्डल को प्राप्त करने के लिए व्रत धारण किए हो, त्रिलोचन को वश में करने की कामना से काम व्रतधारी हो। (मुनि की) प्रखर तेजस्विता से ऐसा लगता था मानो वह चंचल

त्कण्ठाकृतचन्दनलेखयेव भस्मललाटिकया बालपुलिनलेखयेव गङ्गाप्रवाहमुद्भासमानम्, अनेकशापभ्रूकुटिभवनतोरणेन भ्रूलताद्वयेन विराजितम्, अत्यायततया लोचनमयीं मालामिव ग्रथितामुद्वहन्तम्, सर्वहरिणैरिव दत्तलोचनशोभासंविभागम्, आयतोत्तुङ्गघ्राणवंशम्, अप्राप्तहृदयप्रवेशेन नवयौवनरागेणेव सर्वात्मना पाटलीकृताधररुचकम्, अनुद्भिन्नश्मश्रुत्वादनासादितम-

संगमाय या उत्कण्ठा उत्कलिका तया कृता धृता या चन्दनस्य मलयजस्य लेखा रेखा तया इव, (उत्प्रेक्षा) भस्मललाटिकया = भस्मनः विभूतेः ललाटिकया पुण्ड्रकविशेषेण, बालपुलिनलेखया = बालं सूक्ष्मं यत् पुलिनं जल-परित्यक्तं तटं तस्य लेखा रेखा तया (सुशोभितम्) गङ्गाप्रवाहं = गङ्गायाः भागीरथ्याः प्रवाहः धारा, इव (उपमा), उद्भासमानं = देदीप्यमानं, अनेक शापभ्रूकुटिभवनतोरणेन = अनेके अगणिताः ये शापाः अभिसम्पाताः तेभ्यः भ्रूकुटिः भ्रूसङ्कोचः एव भवनं गृहं तस्य तोरणेन बहिर्द्वारेण (द्वारवर्तिधनुराकारकाष्ठविशेषरूपेण), भ्रूलताद्वयेन = भ्रूलता भ्रूवल्ली तस्याः द्वयेन युगलेन, विराजितं = सुशोभितम् (अत्र परम्परित रूपकम्), अत्यायततया = अतिदीर्घतया, लोचनमयीं = नेत्रमयीं ग्रथितां = गुम्फितां, मालामिव = स्रजम्, इव, उद्वहन्तं = धारयन्त (जात्युत्प्रेक्षा), सर्वहरिणैः = अखिलमृगैः, दत्तलोचनशोभासंविभागम् = दत्तः अर्पितः लोचनयोः नेत्रयोः शोभायाः सौन्दर्यस्य संविभागः विभक्तांशः यस्मै तम्, इव (नेत्रशोभादानस्य उत्प्रेक्षणात् क्रियोत्प्रेक्षा,), आयतोत्तुङ्गघ्राणवंशम् = आयतः विस्तृतः उत्तुङ्गः उच्चः च घ्राणवंशः नासिकादण्डः यस्य सः तम्, अप्राप्तहृदयप्रवेशेन = अप्राप्तः अनुपलब्धः हृदये अन्तःकरणे प्रवेशः येन तेन, नवयौवनरागेणेव = नवयौवनस्य नूतनयुवावस्थायाः रागेण रमणीजनं प्रति अनुरागः एव रागः लौहित्यं तेन इव, सर्वात्मना = पूर्णतः, पाटलीकृताधररुचकं = पाटलीकृतः श्वेतरक्तीकृतः अधरः ओष्ठः एव रुचकं स्वस्तिकद्रव्यं बीजपूरः वा, यस्य सः तम्, "रुचकः बीजपूरे ...." इति मेदिनी—"रुचकं स्वस्तिकद्रव्ये" इति विश्वः, "श्वेतरक्तस्तु पाटलः" इत्यमरः (क्रियोत्प्रेक्षा), अनुद्भिन्नश्मश्रुत्वात् = न उद्भिन्नानि प्रकटितानि श्मश्रूणि मुखलोमानि यस्य तस्य भावः तस्मात्, अनासादितमधुकरावलीवलयपरिक्षेपविलासम् = अनासादितः अप्राप्तः मधुकरावलीवलयेन मधुपंक्तिमण्डलेन परिक्षेपविला-

विद्युल्लता के पिंजरे के मध्य में स्थित हो, ग्रीष्म-दिवस के भानु-मण्डल के उदर में प्रविष्ट हो, अग्नि-ज्वाला-समूह के बीच में बैठा हो। (शरीर से) विकसित होने वाली अत्यधिक दीप के प्रकाश के समान पीली शरीर-कान्ति से (उसने) उस वन को पीला बना रखा था, (अतएव) मानो वह (वन से युक्त) उस स्थान को स्वर्णमय बना रहा था। वह गोरोचना के द्रव से रंजित हस्तसूत्र के समान कोमल तथा पीली जटा वाला था। (उसके ललाट में) पुण्यपताका के समान (आचरण वाली) तथा

धुकरावलीवलयपरिक्षेपविलासमिव बालकमलमाननं दधानम्, अनङ्गकार्मुकगुणेनेव कुण्डलीकृतेन तपस्तडागकमलिनीमृणालेनेव यज्ञोपवीतेनालंकृतम्, एकेन सनालबकुलफलाकारं कमण्डलुमपरेण मकरकेतुविनाशशोकरुदिताया रतेरिव बाष्पजलबिन्दुभिरारचितां स्फटिकाक्षमालिकां करेण कलयन्तम्, अनेकविद्यापगासङ्गमावर्तनिभया नाभिमुद्रयोपशोभमानम्, अन्तर्ज्ञाननिराकृतस्य

सः परिवेष्टनशोभा येन तत्, बालकमलं = नवजातनलिनम्, इव, आननं = वदनं, दधानं = धारयन्तम् (उपमा), अनङ्गकार्मुकगुणेनेव = अनङ्गस्य कामदेवस्य कार्मुकगुणेनेव धनुःप्रत्यञ्चया, इव, कुण्डलीकृतेन = वलयीकृतेन, तपस्तडागकमलिनीमृणालेनेव = तपः तपस्या एव तडागः सरः तस्य या कमलिनी सरोजिनी तस्याः मृणालेन बिसेन, इव, यज्ञोपवीतेन = यज्ञसूत्रेण, अलङ्कृतं = विभूषितं ('कार्मुकगुणेनेव' इत्यत्र श्रौती उपमा, 'तपस्तडागः' इत्यादौ निरङ्गरूपकम् च), एकेन करेण = वामहस्तेनेत्यर्थः सनालबकुलफलाकारं = सनालं नालयुक्तं यत् बकुलफलं केसरफलं तद्वत् आकारः आकृतिः यस्य सः तम् (आर्थी उपमा), कमण्डलुं = मुनिपात्रम्, अपरेण = द्वितीयेन (हस्तेन-दक्षिणहस्तेन इत्यर्थः), मकरकेतुविनाशशोकरुदितायाः = मकरकेतुः कामदेवः तस्य विनाशः (शिवस्य तृतीयनेत्रकृतः) नाशः तस्मात् यः शोकः तेन रुदितायाः कृतरोदनायाः, रतेः = कामपत्न्याः, बाष्पजलबिन्दुभिः = अश्रुजलकणैः, आरचिताम् = निर्मिताम्, इव (उत्प्रेक्षा), स्फटिकाक्षमालिकां = स्फटिकस्य श्वेतमणेः अक्षमालिकां जपमालिकां, कलयन्तं = धारयन्तम्, अनेकविद्यापगासङ्गमावर्तनिभया = अनेकाः नानाप्रकाराः विद्याः एव आपगाः नद्यः तासां सङ्गमे सम्मेलने एकस्मिन् (मुनिकुमारे) अवस्थित्या (पक्षे—एकत्र सम्मेलने) यः आवर्तः जलभ्रमिः (भंवरी इति हिन्दी) तन्निभया तत्सदृशया, नाभिमुद्रया = तुन्दकूपिकया, उपशोभमानं = विराजमानं, (विद्यापगा इत्यत्र रूपकम् 'आवर्तनिभया' अत्र च आर्थीउपमा), अन्तर्ज्ञाननिराकृतस्य = अन्तर्ज्ञानं

सरस्वती के समागम की उत्सुकता से लगाई गई मानो चन्दन-रेखा-सी भस्म की ललाटिका (तिलक) थी, (उससे) वह पतली पुलिन-पंक्ति से सुशोभित गङ्गा-प्रवाह की भांति देदीप्यमान था। वह अगणित शाप के लिए (किए गए) भ्रू सङ्कोच रूपी गृह के तोरण (बहिर्द्वार) सदृश दो भ्रूलताओं से सुशोभित था। (लोचनों के) अत्यन्त विस्तृत होने के कारण मानो उसने लोचनों की गुँथी माला धारण की हो, जैसे (वन के) समस्त हरिणों ने उसे (अपनी-अपनी) आँखों का सौन्दर्य समान रूप से विभक्त कर दे दिया हो। उसकी नासिका लम्बी एवं ऊँची थी। नवयौवन का राग (लालिमा) उसके हृदय में प्रविष्ट नहीं हुआ था, (इसीलिये) मानो पूर्णरूप से (रागद्वारा) उसका अधर-रुचक श्वेतरक्त वर्ण का हो गया था। दाढ़ी के न

मोहान्धकारस्यापयानपदवीमिवाञ्जनरजोलेखाश्यामलांरोमराजिमुदरेणतनीयसीं बिभ्राणम् , आत्मतेजसा विजित्य सवितारमागृहीतेन परिवेषमण्डलेनेव मौञ्ज-मेखलागुणेन परिक्षिप्तजघनभागम् , अभ्रगङ्गास्रोतोजलप्रक्षालितेन जरच्चकोर-लोचनपुटपाटलकान्तिना मन्दारवल्कलेनोपपादिताम्बरप्रयोजनम् , अलङ्कार-मिव ब्रह्मचर्यस्य, यौवनमिव धर्मस्य, विलासमिव सरस्वत्याः, स्वयंवरपतिमिव

तत्त्वज्ञानं तेन निराकृतस्य दूरीकृतस्य, **मोहान्धकारस्य** = मोहः अज्ञानम् एव अन्धकारः तमः तस्य, **अपयानपदवीमिव** = अपयानं निःसरणं तस्य पदवीं मार्गम् , इव, **अञ्जनरजोलेखाश्यामलाम्** = अञ्जनरजसां कज्जलकणानां लेखा पङ्क्तिः तद्वत् श्यामलां कृष्णां, **तनीयसीं** = कृशतरां, **रोमराजिम्** = रोमावलीम् , **उदरेण**=जठरेण, **बिभ्राणं** = धारयन्तम् ('अत्र मोहे अन्धकारस्य, अन्तर्ज्ञाने च प्रकाशस्यारोपः तेन एकदेशविवर्ति-रूपकम्,' 'अपयानपदवीम्' इत्यत्र जात्युत्प्रेक्षा, 'अञ्जनरज०······इत्यादौ लुप्तोपमा, अङ्गाङ्गिभावसङ्करश्च). **आत्मतेजसा** = स्वतपः प्रभावेण, **सवितारं** = सूर्यं, **विजित्य** = जित्वा, **आगृहीतेन** = परिगृहीतेन, **परिवेषमण्डलेनेव** = परिधिवलयेन, इव (प्रतीयमानेन), **मौञ्जमेखलागुणेन** = मुञ्जरचितायाः मेखलायाः रशनायाः गुणेन तन्तुजातेन, **परिक्षिप्तजघनभागं** = परिक्षिप्तः आच्छादितः जघनभागः जघनस्थलं यस्य तं (जात्युत्प्रेक्षा), **अभ्रगङ्गास्रोतोजलप्रक्षालितेन** = अभ्रगङ्गा आकाशगङ्गा तस्याः स्रोतसः प्रवाहस्य जलेन वारिणा प्रक्षालितेन धौतेन, **जरच्चकोरलोचनपुट-पाटलकान्तिना** = जरतः वृद्धस्य चकोरस्य पक्षिविशेषस्य यत् लोचनपुटं तद्वत् पाटला श्वेतरक्ता कान्तिः विभा यस्य तेन, **मन्दारवल्कलेन** = मन्दारः देवतरुविशेषः तस्य वल्कलेन, **उपपादिताम्बरप्रयोजनम्** = उपपादितं सम्पादितं अम्बरप्रयोजनं वसनकृत्यं येन तं ('लोचनपुटपाटलकान्तिना' इत्यत्र लुप्तोपमा,) ब्रह्मचर्यस्य, अल-ङ्कारमिव = विभूषणम् , इव, धर्मस्य = पुण्यस्य, यौवनमिव = तारुण्यम् , इव, सरस्वत्याः = वाग्देव्याः, विलासमिव = विभ्रममिव, **सर्वविद्यानां** = सर्वासां विद्यानाम् आन्वीक्षिक्यादीनां, **स्वयम्बरपतिमिव** = स्वयं व्रियते इति स्वयम्बरः तथाभूतः पतिः

निकलने के कारण वह, भ्रमर-पंक्ति के वलयाकार रूप से (स्थित होने के कारण) परिवेष्टन से उत्पन्न शोभा को न प्राप्त करने वाले बाल-कमल के सदृश आनन को धारण कर रहा था। वह काम के धनुष की मण्डलाकार प्रत्यंचा के समान एवं तपस्यारूपी तडाग की कमलिनी के मृणाल तन्तु की भांति यज्ञोपवीत से अलंकृत था। एक हाथ में वह नाल सहित केसर के फल के सदृश आकार वाले कमण्डलु को तथा दूसरे में मानो काम के विनाश से उत्पन्न शोक से रोती हुई रति के अश्रु-जल कणों से निर्मित जपमाला को धारण कर रहा था। अनेक विद्यारूपी नदियों के सङ्गम के आवर्त (भँवर) के सदृश नाभि से वह सुशोभित था। मानो वह आन्तरिक ज्ञान से दूर किये किये मोहान्धकार के निःसरण मार्ग के सदृश तथा कज्जल-कण की

सर्वविद्यानाम्, सङ्केतस्थानमिव सर्वश्रुतीनाम्, निदाघकालमिव साषाढम्, हिमसमयकाननमिव स्फुटितप्रियङ्गुमञ्जरीगौरम्, मधुमासमिव कुसुमधवलतिलकभूतिभूषितमुखम्, आत्मानुरूपेण सवयसापरेण देवतार्चनकुसुमान्यु-

---

स्वामी तम् इव, विद्याः स्वयमेव तमाश्रिताः इति भावः, सर्वश्रुतीनां = सर्वाश्च ताः श्रुतयः तासां समस्तवेदानां, सङ्केतस्थानमिव = संयोगाय पूर्वसङ्केतितं स्थलम्, इव, निदाघकालमिव = ग्रीष्मसमयम्, इव, साषाढम् = आषाढेन पलाशदण्डेन सह (पक्षे आषाढमासेन सह) वर्तमानम्—"आषाढो व्रतिनां दण्डेमासे मलयपर्वते" इति मेदिनी, हिमसमयकाननमिव = हिमसमयस्य शीतकालस्य काननं वनं तत्, इव, स्फुटितप्रियङ्गुमञ्जरीगौरं = स्फुटिता प्रफुल्ला या प्रियङ्गुमञ्जरी श्यामा वल्लरी तद्वत् गौरं गौरवर्णं (पक्षे—तया गौरम्), "श्यामा तु महिलाह्वया। लता गोवन्दनी गुन्द्रा प्रियङ्गुः फलिनी फली" इति–अमरः, मधुमासमिव = चैत्रमासम्, इव, कुसुमधवलतिलकभूतिभूषितमुखं = कुसुमं पुष्पं तद्वत् धवला शुभ्रा या तिलकभूतिः तिलकभस्म तया भूषितम् अलङ्कृतं मुखं वदनं यस्य तं मुनिकुमारं (पक्षे—कुसुमैः धवलाः ये तिलकाः तिलकसंज्ञकवृक्षाः तेषां भूत्या समृद्ध्या भूषितं मुखम् अग्रभागः (प्रारम्भकालः) यस्य तम्—तिलकवृक्षेषु वसन्तस्य प्रारम्भिककाले एव कुसुमोत्पत्तिः जायते, "भूतिर्भस्मनि सम्पत्तिहस्तिश्रृङ्गारयोः स्त्रियाम्" इति मेदिनी, (अत्र 'निदाघकालमिव' इत्यारभ्य 'मधुमासमिव' इति यावत् पूर्णोपमा), आत्मानुरूपेण = स्वतुल्येन, अपरेण = द्वितीयेन, सवयसा = समानं वयः अवस्था यस्य तेन (समवयस्केन), देवतार्चन-

---

पंक्ति की भाँति कृष्ण वर्ण की पतली रोम-श्रेणी को उदर भाग पर धारण कर रहा था। उसने अपने तेज से मानो सूर्य को जीतकर अपने अधीन किए गए परिवेष-मंडल के समान मूँज की करधन की डोरी से जघनभाग को आच्छादित कर रखा था तथा वह आकाश-गङ्गा के प्रवाहजल में प्रक्षालित तथा वृद्ध चकोर पक्षी के लोचन के सदृश श्वेत-रक्त वर्ण (गुलाबी) की कान्ति वाले मन्दार-वृक्ष के बल्कल से निर्मित वस्त्र का प्रयोग करता था, वह ब्रह्मचर्य का मानो आभूषण, धर्म का मानो यौवन, सरस्वती का मानो विलास, समस्त विद्याओं का जैसे स्वयंवर पति तथा समस्त श्रुतियों का जैसे संकेत-स्थल था। वह (आषाढ़ मास के साथ) ग्रीष्म-समय के समान पलाशदण्ड से युक्त, (विकसित प्रियंगु मञ्जरी से शुभ्र) हेमन्त काल के वन की भाँति उत्फुल्ल प्रियंगु-मञ्जरी के समान गौर वर्ण, (पुष्पों से धवलित तिलक वृक्षों की समृद्धि से अलंकृत मुख वाले) मधुमास की तरह पुष्प के सदृश धवल भस्म-तिलक से अलंकृत मुख वाला था (और) वह अपने अनुरूप, समवयस्क

चिन्वता तापसकुमारेणानुगतम्, अतिमनोहरम्, स्नानार्थमागतं मुनिकुमारकमपश्यम्।

तेन च कर्णावतंसीकृतां वसन्तदर्शनानन्दितायाः स्मितप्रभामिव वनश्रियः, मलयमारुतागमनार्थलाजाञ्जलिमिव मधुमासस्य, यौवनलीलामिव कुसुमलक्ष्म्याः, सुरतपरिश्रमस्वेदजलकणजालकावलीमिव रतेः, ध्वजचिह्नचामरपिच्छिकामिव मनोभवगजस्य, मधुकरकामुकाभिसारिकाम्, कृत्तिकातारास्तवकानु-

कुसुमानि = देवताः निर्जराः तेषाम् अर्चनाय पूजनाय कुसुमानि पुष्पाणि, उच्चिन्वता = अवचयं कुर्वता (सता), **तापसकुमारेण** = मुनिबालकेन, **अनुगतम्** = अनुसृतं, **स्नानार्थम्** = मज्जनार्थं, **आगतम्** = सरोवरप्रान्तं समायातम्, **अतिमनोहरम्** = अतिसुन्दरं, **मुनिकुमारकं** = तापसबालकम्, **अपश्यम्** = अद्राक्षम्। अनुकम्पार्थे मुनिकुमारशब्दात् कः।

तेन च = मुनिकुमारकेण च, 'कर्णावतंसीकृतां·······कुसुममञ्जरीमद्राक्षम्' इति वाक्यम्, इतः द्वितीयैकवचनान्तानि स्त्रीलिङ्ग पदानि कुसुममञ्जरीम्' इत्यस्य विशेषणानि। **कर्णावतंसीकृतां** = श्रोत्रभूषणरूपेण धृतां, **वसन्तदर्शनानन्दितायाः** = वसन्तस्य ऋतुराजस्य दर्शनेन वीक्षणेन आनन्दितायाः प्रफुल्लितायाः, **वनश्रियः** = अरण्यलक्ष्म्याः,-**स्मितप्रभामिव** = मन्दहासच्छविम्, इव (जात्युत्प्रेक्षा), **मधुमासस्य** = वसन्तस्य, **मलयमारुतागमनार्थलाजाञ्जलिमिव** = मलयमारुतस्य मलयपवनस्य आगमनार्थम् आगमाभिनन्दनाय यः लाजाञ्जलिः धानाञ्जलिः तम् इव, तुलनीयम् "अवाकिरन् बाललताप्रसूनैराचार लाजैरिव पौरकन्याः।" रघु० २ सर्गः, (जात्युत्प्रेक्षा) **कुसुमलक्ष्म्याः** = पुष्पश्रियः, **यौवनलीलामिव** = तारुण्यक्रीडामिव (गुणोत्प्रेक्षा), **रतेः** = कामपत्न्याः, **सुरतपरिश्रमस्वेदजलकणजालकावलीमिव** = सुरतं मैथुनं तत्र यः परिश्रमः तस्मात् जातं यत् स्वेदजलं धर्मवारि तस्य कणजालकावली बिन्दुसमूहपंक्तिः ताम् इव (उत्प्रेक्षा), **मनोभवगजस्य** = मनोभवः मनसिजः स एव गजः हस्ती तस्य (रूपकम्), **ध्वजचिह्नचामरपिच्छिकामिव** = ध्वजः वैजयन्ती तस्य चिह्नरूपा लक्ष्मरूपा या चामरपिच्छिका चामररूपाबर्हचूडा ताम्, इव (उत्प्रेक्षा,) **मधुकरकामुकाभिसारिकाम्** = मधुकराः भ्रमराः एव कामुकाः (रूपकम्) सुरताभिलाषिणः, तेषाम् अभिसारिका आनयनकर्त्री, (अत्र 'अभिसारयते कान्तम्···' इति लक्षणम् अवधेयम्) ताम्, **कृत्तिकातारास्तवकानुकारिणीं** = कृत्तिकाताराणां कृत्तिकासंज्ञकनक्षत्रविशेषाणां स्तवकं

तथा देव-पूजन के लिये पुष्पों का चयन करते हुए (एक) दूसरे तपस्वी कुमार के साथ था।

उसके (मुनि कुमार के) द्वारा कर्णाभूषण बनाई गई (कर्णाभूषण के रूप में पहनी गई), अमृत बूंदों को बहाने वाली (एवं) अदृष्ट पूर्व कुसम-मञ्जरी को

कारिणीम्, अमृतबिन्दुनिस्यन्दिनीम्, अदृष्टपूर्वांकुसुममञ्जरीमद्राक्षम्। "अस्याः परिभूतान्यकुसुमामोदो नन्वयं परिमलः" इति मनसा निश्चित्य तं तपोधनयुवानमीक्षमाणाहमचिन्तयम्—'अहो रूपातिशयनिष्पादनोपकरणकोपस्याक्षीणता विधातुः, यत्त्रिभुवनाद्भुतरूपसम्भारं भगवन्तं कुसुमायुधमुत्पाद्य तदाकारातिरिक्तरूपराशिरयमपरो मुनिमायामयो मकरकेतुरुत्पादितः। मन्ये च सकलजगन्नयनानन्दकरं शशिबिम्बं विरचयता लक्ष्मीलीलावासभवनानि

गुच्छम् अनुकर्तुं शीलं यस्याः ताम् (आर्थी उपमा), अमृतबिन्दु निस्यन्दिनीम् = अमृतस्य पीयूषस्य बिन्दवः कणाः तेषां निस्यन्दिनीं स्राविणीम्, अदृष्टपूर्वाम् = अनवलोकितपूर्वां, कुसुममञ्जरीं = पुष्पवल्लरीम्, अद्राक्षम् = अपश्यम्। ननु = निश्चयेन, 'प्रश्नावधारणानुज्ञानुनयामन्त्रणे ननु' इत्यमरः, अस्याः = मञ्जर्याः, अयं = सर्वातिशायी, परिमलः = सौरभः, परिभूतान्यकुसुमामोदः = परिभूतः तिरस्कृतः अन्येषाम् इतरेषां कुसुमानां पुष्पाणाम् आमोदः सुगन्धः येन सः तथाविधः, इति = इत्थम्, मनसा = मानसेन, निश्चित्य = निर्णीय, तं = पूर्ववर्णितं, तपोधनयुवानं = तपस्वियुवकम्, ईक्षमाणा = पश्यन्ती, अहं = महाश्वेता, अचिन्तयम् = चिन्तितवती। अहो! आश्चर्यं, विधातुः = ब्रह्मणः, रूपातिशयनिष्पादनोपकरणकोपस्य = रूपातिशयस्य सौन्दर्याधिक्यस्य (असाधारणसौन्दर्यस्येति भावः) निष्पादने निर्माणे यानि उपकरणानि साधनानि तेषां कोषस्य भाण्डागारस्य, अक्षीणता = अक्षयता (सदा भवति), यत् = यतः, त्रिभुवनाद्भुतरूपसम्भारं = त्रिभुवने लोकत्रये अद्भुतः अतिशायीरूपसम्भारः सौन्दर्यराशिः यस्मिन् तम्, भगवन्तं, कुसुमायुधम् = कामदेवम्, उत्पाद्य = निर्माय, तदाकारातिरिक्तरूपराशिः = तस्य कुसुमायुधस्य आकारात् आकृतेः अतिरिक्तः अधिकः रूपराशिः सौन्दर्यराशिः, मुनिमायामयः = तापसव्याजमयः (अपह्नुतिः), अयम् = एषः, अपरः = द्वितीयः, मकरकेतुः = मीनकेतनः (कामः), उत्पादितः = जनितः। मन्ये च = चिन्तयामि च, सकलजगन्नयनानन्दकरं = सकलस्य सम्पूर्णस्य जगतः संसारस्य नयनानन्दकरं नेत्रानन्दजनकं; शशिबिम्बं = चन्द्रमण्डलं, विरचयता = रचनां कुर्वता, लक्ष्मीलीलावासभवनानि = लक्ष्मीः श्रीः तस्याः लीलायाः

मैंने देखा; वह मानो वसन्त दर्शन से प्रमुदित वन-लक्ष्मी के मुसकान की प्रभा हो, (या) मलयानिल के आगमन के अभिनन्दन के लिए (दी गई) लाजाञ्जलि हो, या (पुष्प-लक्ष्मी की) यौवन-क्रीडा हो, (या) सम्भोगकाल के परिश्रम से उत्पन्न रति के स्वेद-बिन्दुओं के समूह की पंक्ति हो, (या) कामदेव रूप गजराज की पताका में चिह्न रूप में स्थित चामरपिच्छिका (चँवर-चूडा) हो। वह भ्रमर रूपी कामियों की अभिसारिका के समान तथा कृत्तिका नामक तारों के गुच्छे का अनुकरण करने वाली थी (अर्थात् गुच्छक सदृश थी)। 'इस मञ्जरी की यह गन्ध दूसरे पुष्पों की गन्ध को अभिभूत (पराजित) कर देने वाली है,' इस प्रकार मन

कमलानि सृजता प्रजापतिनाप्रथममेतदाननाकारकरणकौशलाभ्यास एव कृतः। अन्यथा किमिव हि सदृशवस्तुविरचनायां कारणम्। अलीकं चेदं यथा किल सकलाः कलाः कलावतो बहुलपक्षे क्षीयमाणस्य सुषुम्नानाम्ना रश्मिना रविरापिबतीति। ताः खल्वस्य गभस्तयः समस्ता वपुरिदमाविशन्तीति। कुतोऽन्यथा रूपापहारिणि क्लेशबहुले तपसि वर्तमानस्येदं लावण्यम्।' इति विचिन्तय-

---

आवासभवनानि निवासस्थानानि एवम्भूतानि, कमलानि = नलिनानि, सृजता = रचयता, प्रजापतिना = धात्रा, प्रथमम् = (रचनायाः) आदौ, एतदाननाकारकरणकौशलाभ्यासः = एतस्य मुनिकुमारस्य आननस्य मुखस्य यः आकारः आकृतिः तस्य करणे निर्माणे यत् कौशलं नैपुण्यं तदर्थम् अभ्यासः, एव, कृतः = विहितः, अन्यथा = उक्तवैपरीत्ये, सदृशवस्तुरचनायां = समान वस्तुनिर्माणे, किमिव हि = किम् अन्यत्, कारणं = हेतुः ? न किमपि इति भावः, अत्र क्रियोत्प्रेक्षा, शशिबिम्बकमलापेक्षया मुनिकुमारस्य लावण्याधिक्यवर्णनात् (व्यतिरेकः ध्वन्यते), च = अपि च, किल = आप्तवचनम्. इदम् = एतत्, अलीकम् = असत्यं, यत् रविः = सूर्यः, सुषुम्नानाम्ना = एतत्संज्ञकेन, रश्मिना = स्वकिरणेन, बहुलपक्षे = कृष्णपक्षे, क्षीयमाणस्य = कृशतांगच्छतः, कलावतः = कलाधरस्य (चन्द्रमसः), सकलाः = अशेषाः, कलाः=षोडशांशाः, आपिबति=पानं करोति इति। अलीकत्वसम्बन्धे असति अपि तथा प्रतिपादनात् अतिशयोक्तिः। खलु = निश्चयेन, अस्य = चन्द्रस्य, ताः, गभस्तयः = रश्मयः, (मुनिकुमारस्य) इदम् = अवलोक्यमानं, वपुः = शरीरम्, आविशन्ति = प्रविशन्ति, इति। शशिकिरणानां तस्य शरीरे प्रवेशसम्बन्धाभावे अपि तत्सम्बन्धकथनात् अतिशयोक्तिः, अन्यथा = उक्तान्यथात्वे, रूपापहारिणि = सौन्दर्यापघातके, क्लेशबहुले = दुःखप्राये, तपसि = तपःकर्मणि, वर्तमानस्य = स्थितस्य (अस्य), इदं = सर्वातिशायि, लावण्यं = सौन्दर्यं, कुतः = कस्मात्, स्यादिति शेषः, इति = एवं, विचिन्तयन्तीं = विचारयन्तीम्, एव, माम् = महाश्वेताम् (मुनिकुमार-

---

में निश्चय कर उस तपस्वी युवक को देखती हुई मैं सोचने लगी—'अहो ! (आश्चर्य है !) ब्रह्मा के असाधारण सौन्दर्य-निर्माण के साधन-भण्डार में कभी-कभी नहीं होती ! क्योंकि (उसने) त्रिभुवन में अद्भुत रूपराशि कामदेव को उत्पन्न करने के बाद, उससे भी अधिक सौन्दर्यशाली (एवं) मुनि वेषधारी यह दूसरा कामदेव बना डाला। (मैं ऐसा) सोचती हूँ कि अखिल संसार के नयनों को आनन्द देने वाले चन्द्र-मण्डल (एवं) लक्ष्मी की लीला के निवास स्थान कमलों की रचना करते हुये प्रजापति ने इसकी मुखाकृति के निर्माण में कुशलता प्राप्त करने के लिए पहले अभ्यास ही किया है, अन्यथा सदृश वस्तुओं की रचना में (दूसरा) कौन सा कारण हो सकता है ? यह (पौराणिक कथन भी) मिथ्या है कि सूर्य सुषुम्ना नामक रश्मि से कृष्ण पक्ष में क्षीण होते हुये चन्द्र की समस्त कलाओं को पी लेता

न्तीमेव मामविचारितगुणदोषविशेषो रूपैकपक्षपाती नवयौवनसुलभः कुसुमायुधः कुसुमसमयमद इव मधुकरीं परवशामकरोत्।

उच्छ्वसितैः सह विस्मृतनिमेषेण किञ्चिदामुकुलितपक्ष्मणा जिह्मिततरलतरतारसारोदरेण दक्षिणेन चक्षुषा सस्पृहमापिबन्तीव, किमपि याचमानेव, 'त्वदायत्तास्मि' इति वदन्तीव, अभिमुखं हृदयमर्पयन्तीव, सर्वात्मनानुप्रविशन्तीव, तन्मयतामिव गन्तुमीहमाना, 'मनोभवाभिभूतां त्रायस्व' इति शरणमिवोप-

---

सौन्दर्यानुरक्ताम्), **अविचारितगुणदोषविशेषः** = अविचारितः अनालोचितः गुणदोषयोः विशेषः पार्थक्यं येन सः, **रूपैकपक्षपाती** = सौन्दर्यमात्रपक्षपाती, **नवयौवनसुलभः** = नवीनतारुण्यमुप्रापः, **कुसुमायुधः** = पुष्पधन्वा (कामः), **कुसुमसमयमदः** = कुसुमसमयः वसन्तकालः तस्य मदः (मधुपानजः) मादः, **मधुकरीं** = भ्रमरीम्, **इव** (उपमा), **परवशाम्** = परतन्त्राम्, **अकरोत्** = कृतवान्।

अच्छ्वसितैः = उच्छ्वासैः, **सह** = साकं **विस्मृतनिमेषेणे** = विस्मृतः (सौन्दर्यावलोकनलोभात्) विस्मरणं प्राप्तः निमेषः निमीलनं येन तथाभूतेन, = **किञ्चित्** = ईषत्, **आमुकुलितपक्ष्मणा** = आमुकुलितानि आकुड्मलितानि पक्ष्माणि नेत्रलोमानि यस्य तेन, **जिह्मिततरलतरतारसारोदरेण**=जिह्मिता कुटिला तरलतरा अतिचञ्चला च तारा कनीनिका यस्य एवंभूतं सारोदरं कल्मषमध्यभागः यस्य तादृशेन, **दक्षिणेन** = वामेतरेण, **चक्षुषा** = नेत्रेण, **सस्पृहम्** = साभिलाषम्, **आपिबन्तीव** = पानं कुर्वन्ती इव (सादरमवलोकयन्ती इव), **किमपि**=अनिर्वचनीयस्वरूपं, **याचमानेव**=प्रार्थयमाना, इव, **त्वदायत्ता**=त्वदाधीना, **अस्मि** = भवामि **इति** = एवं, **वदन्तीव** = कथयन्ती इव, **अभिमुखं** = सम्मुखं, **हृदयम्** = मनः, **अर्पयन्तीव** = समर्पयन्तीः इव, **सर्वात्मना** = सर्वप्रकारेण, **अनुप्रविशन्तीव** = प्रवेशं कुर्वन्ती, इव, **तन्मयतां** = तद्रूपतां, **गन्तुम्** = प्राप्तुम्, **ईहमाना** = अभिलषन्ती, इव, '**मनोभवाभिभूतां** = मनसिजविजितां, (मां) **त्रायस्व** = रक्ष', **इति** = एवं **शरणम्** = आश्रयम्, **उपयान्ती** = उपगच्छन्ती **इव**,

---

है, क्योंकि वे समस्त किरणें (आकर) इसके शरीर में प्रविष्ट हो जाती हैं, अन्यथा क्लेश से परिपूर्ण एवं सौन्दर्य का हरण करने वाली तपस्या में स्थित इसका यह लावण्य कहाँ से आता ?" इस प्रकार मैं सोच ही रही थी कि गुण-दोष की विशिष्टता (बलाबल) का विचार न करने वाले, सौन्दर्य-मात्र के पक्षपाती तथा नव यौवन में सुलभ कामदेव ने मुझे (उसी तरह) परवश बना डाला, जिस प्रकार बसन्तकालीन मद भ्रमरी को (परवश कर देता है)।

उच्छ्वासों के साथ निर्निमेष, किंचित् मुकलित नेत्र-रोम वाले (अर्थात् कुछ-कुछ मुँदे), कुटिल तथा चंचल पुतली से युक्त (होने से) कर्बुरित (विचित्र) मध्य भाग वाले अपने दाहिने नयन से जैसे (उसे) स्पृहा के साथ पी-सी रही थी, जैसे कुछ माँग रही थी। जैसे कह रही थी कि 'मैं तुम्हारे अधीन हूँ, उसके सामने

यान्ती, 'देहि हृदयेऽवकाशम्' इत्यर्थितामिव दर्शयन्ती, हा हा किमिदमसांप्रतमतिह्रेपणमकुलकुमारीजनोचितमिदं मया प्रस्तुतम्' इति जानानाप्यप्रभवन्ती करणानाम्, स्तम्भितेव लिखितेव उत्कीर्णेव संयतेव मूर्छितेव केनापि विधृतेव निष्पन्दसकलावयवा तत्कालाविर्भूतेनावष्टम्भेन, अकथितशिक्षितेनानाख्येयेन स्वसंवेद्येन केवलं न विभाव्यते किं तद्रूपसंपदा किं मनसा मनसिजेन किमभिनवयौवनेन किमनुरागेणैवोपदिश्यमाना किमन्येनैव केनापि प्रकारेणाहमपि

हृदये = मनसि, अवकाशं = स्थानं, देहि = प्रयच्छ' इति, अर्थितां = याचकतां, दर्शयन्ती = प्रकटयन्ती, इव, 'हा हा ! खेदे, किमिदम् = आपतितमिति शेषः, मया = महाश्वेतया, असाम्प्रतम् = असङ्गतम्, अतिह्रपणम = अतिलज्जाकरम्, अकुलकुमारीजनोचितं = कुलकुमारीजनानुचितं, इदम = ईदृशं गर्हितं कर्म, प्रस्तुतं = समारब्धम्' इति = एवं, जानानापि = अवगच्छन्ती, अपि, करणानाम् = इन्द्रियाणाम् (अवरोधे), अप्रभवन्ती = असमर्था, ('प्रभवति निजस्य कन्यकाजनस्य महाराजः'—मालतीमाधवम्) स्तम्भितेव = स्तब्धा, इव, लिखितेव = चित्रिता, इव, उत्कीर्णेव = उत्कीरिता, इव, संयतेव = बद्धा इव, मूर्च्छितेव = अचेतना, इव, केनापि = केनचित्, विधृतेव = परिगृहीता इव, (सर्वत्र क्रियोत्प्रेक्षा). अकथितशिक्षितेन = अकथितः अनुपदिष्टः अपि अशिक्षितः निपुणः तेन, अनाख्येयेन = वक्तुमशक्येन, (अतः) स्वसंवेद्येन = स्वमात्रसाक्षिणा इति भावः, तत्कालाविर्भूतेन = तत्काले तत्समये आविर्भूतेन प्रादुर्भूतेन, अवष्टम्भेन = सात्त्विकविकारविशेषेण (व्यामोहेन), निष्पन्दसकलावयवा = निष्पन्दाः निश्चेष्टाः सकलाः समस्ताः अवयवाः अङ्गानि यस्याः सा (अहं), केवलं, तं = मुनिकुमारम्, अतिचिरं = बहुकालं यावत्, व्यलोकयम् = अवलोकयन्ती आसं, न विभाव्यते = न निश्चीयते, किं तद्रूपसंपदा = तस्य मुनिकुमारस्य सौन्दर्यसम्पत्त्या, किं मनसा = अन्तःकरणेन, किं मनसिजेन = मनोभवेन, किमभिनवयौवनेन = नवतारुण्येन, किम् अनुरागेण = प्रेम्णा, किम् अन्येनैव = एतेभ्यः भिन्नेन, एव, केनापि = ज्ञातुमशक्येन, प्रकारेण = विधिना, उपदिश्यमाना = शिक्ष्यमाणा (अहं तम् अतिचिरं व्यलोकयम् इति सम्बन्धः) कथं कथं तम् अतिचिरं व्यलोकयम् इति अहम् अपि =

जैसे हृदय का समर्पण कर रही थी, जैसे सब प्रकार से (उसमें) प्रवेश कर रही थी, तन्मयता प्राप्त करने के लिए मानो अभिलाषा कर रही थी, 'कामाभिभूत मुझको बचाइये' इस प्रकार (कहकर) जैसे शरणागत हो रही थी, (अथवा) 'हृदय में मुझे स्थान दो' इस प्रकार मानो (अपने) याचक-भाव को दिखला रही थी। 'हाय ! हाय ! कुलीन कुमारियों के लिये अयोग्य, (सर्वथा) अनुचित तथा अत्यन्त लज्जा-जनक यह (ऐसा कर्म) मैंने आरम्भ कर दिया' यह जानती हुई भी मैं

न जानामि कथंकथमपि तमतिचिरं व्यलोकयम्। उत्क्षिप्य नीयमानेव तत्समीपमिन्द्रियैः पुरस्तादाकृष्यमाणेव हृदयेन पृष्ठतः प्रेर्यमाणेव पुष्पधन्वना कथमपि मुक्तप्रयत्नमप्यात्मानमधारयम्। अनन्तरं च मेऽन्तर्मदनावकाशमिव दातुमाहितसन्ताना निरीयुः श्वासमरुतः। साभिलाषं हृदयमाख्यातुकाममिव स्फुरितमुख-

स्वयमपि, न जानामि। तत्समीपं = मुनिकुमारकस्य अन्तिकम्, इन्द्रियैः = चक्षुरादिकरणैः, उत्क्षिप्य = उत्थाप्य, नीयमानेव = प्राप्यमाणा, इव, हृदयेन = अन्तःकरणेन, पुरस्तात् = अग्रे, आकृष्यमाणेव = आकृष्य नीयमाना इव, पुष्पधन्वना = कामदेवेन, पृष्ठतः = पश्चात्तः प्रेर्यमाणेव = नोद्यमाना, इव, (स्थलत्रये क्रियोत्प्रेक्षा), मुक्तप्रयत्नमपि = मुक्तः त्यक्तः प्रयत्नः तत्समीपगमनव्यापारः येन तादृशम्, अपि, आत्मानं = स्वम्, कथमपि = केनापिप्रकारेण, अधारयम् = धारितवती। अनन्तरम् = तत्पश्चात्, च = समुच्चये, मे = मम, अन्तः = हृदयाभ्यन्तरे, मदनावकाशं = मदनस्य कामस्य कृते अवकाशं, दातुम् = अर्पितुम्, इव, आहितसन्तानाः = आहितः उत्पादितः सन्तानः विस्तारः येषां ते, श्वासमरुतः = निःश्वासवायवः (बहिः) निरीयुः = निर्गताः। श्वासे निर्गते एव हृदये मदनस्य कृते स्थानं रिक्तं भविष्यति इति तात्पर्यम्—अत्र (क्रियोत्प्रेक्षा)। साभिलाषं = सोत्कण्ठं, हृदयम् = मनः, आख्यातुकाममिव = (त्वमेनं नूनं प्राप्स्यसि—इति) वक्तुकामम्, इव (उत्प्रेक्षा), कुचयुगलं = स्तनद्वयं, स्फुरितमुखम् = स्फुरितं स्पन्दितं मुखम् अग्रभागः

अपनी इन्द्रियों के दमन में समर्थ न हो सकी। उस समय मानो मैं स्तम्भित (स्तब्ध) के समान, चित्रित (चित्र-लिखित) के सदृश, उत्कीर्ण (उकेरी गई) की तरह, बाँधी गई की भांति, मूर्च्छित के समान अथवा जैसे किसी (व्यक्ति) के द्वारा पकड़ी गई के समान हो गई थी। तत्काल आविर्भूत सात्त्विक विकार-विशेष से, जो बिना उपदेश के शिक्षित, अकथनीय तथा स्वसंवेद्य (स्वमात्रसाक्षी) था, (उस समय) मेरे सब अङ्ग निस्पन्द (चेष्टा रहित) हो गये; (ऐसी मैं) केवल उसको बहुत देर तक देखती रही पता नहीं, उसकी सौन्दर्य-संपत्ति से, या मन से, या कामदेव से या नव यौवन से या अनुराग से या किसी और प्रकार से उपदेश पाकर (मैं ऐसा करती रही), मुझे स्वयं नहीं मालूम कि मैं कैसे-कैसे उसे बहुत देर तक देखती रही। उस समय इन्द्रियाँ जैसे मुझे उठाकर उसके समीप पहुँचा रही थीं, हृदय मानो आगे की ओर खींच रहा था, कामदेव जैसे पीछे से प्रेरित कर रहा था, यद्यपि (उसके समीप जाने से रोकने का) मेरा प्रयत्न शिथिल हो गया था, फिर भी मैं अपने आप को किसी प्रकार रोके रही। तदनन्तर जैसे कामदेव को मेरे हृदय में स्थान देने के लिए उच्छ्वास-वायु धारावाहिक रूप से (बाहर) निकलने लगे। मानो हृदय-गत अभिलाषा को कहने के लिये मेरे दोनों कुचों के अग्रभाग फड़कने लगे। जैसे पसीने की बूँदों की पंक्ति से धुलकर ही लज्जा गल गई।

मभूत्कुचयुगलम् । स्वेदसलिललवलेखाक्षालितेवागलल्लज्जा । मकरध्वजनिशित-शरनिकरनिपातत्रस्तेवाकम्पत गात्रयष्टिः । तद्रूपातिशयं द्रष्टुमिव कुतूहलादालिङ्गनलालसेभ्योऽङ्गेभ्यो निरगाद्रोमाञ्चजालकम् । अशेषतः स्वेदाम्भसा धौतश्चरणयुगलादिव हृदयमविशद्रागः ।

आसीच्च मम मनसि—'शान्तात्मनि दूरीकृतसुरतव्यतिकरेऽस्मिञ्जने मां निक्षिपता किमिदमनार्येणासदृशमारब्धं मनसिजेन । एवं च नामातिमूढं

यस्य तत्, अभूत् = जातम् । स्वेदसलिललवलेखाक्षालितेव = स्वेदसलिलस्य घर्मजलस्य ये लवाः कणाः तेषां लेखया पङ्क्त्या क्षालितेव धौता इव, लज्जा = त्रपा, अगलत् = अस्रवत् (क्रियोत्प्रेक्षा) । मकरध्वजनिशितशरनिकरनिपातत्रस्तेव = मकरध्वजस्य कामस्य निशितानां तीक्ष्णानां शराणां बाणानां निकरस्य समूहस्य निपातात् पतनात् त्रस्ता भीता, इव, गात्रयष्टिः = शरीरयष्टिः, अकम्पत = कम्पमाना जाता । (क्रियोत्प्रेक्षा) । कुतूहलात् = कौतूहलवशात्, तद्रूपातिशयं = तस्य मुनेः रूपातिशयं सौन्दर्योत्कर्षं, द्रष्टुम् इव = विलोकयितुम्, इव (फलोत्प्रेक्षा), आलिङ्गनलालसेभ्यः = आलिङ्गनार्थं लोलुपेभ्यः, अङ्गेभ्यः = अवयवेभ्यः, रोमाञ्चजालकं = रोमाञ्चसमूहः, निरगात् = निर्गतः अभूत् । स्वेदाम्भसा = घर्मजलेन, अशेषतः = पूर्णतः, धौतः = क्षालितः, रागः = अलक्तकारुण्यम्—(पक्षे अनुरागः), चरणयुगलात् = पादद्वयात्, हृदयं = मनः, अविशत् = प्रविष्टः अत्र (अतिशयोक्तिः) ।

च = किञ्च, मे = मम, मनसि = चेतसि, (इदम्) आसीत् = अभूत्—'शान्तात्मनि = शान्तः सत्त्वगुणयुक्तः आत्मा मनः यस्य तस्मिन्—सत्त्वविशिष्टे इति भावः, (अतएव) दूरीकृतसुरतव्यतिकरे = दूरीकृतः परित्यक्तः सुरतस्य सम्भोगस्य व्यतिकरः सम्बन्धः येन तादृशे, अस्मिन् = एतस्मिन्, जने = प्राणिनि (मुनिकुमारे), मां = महाश्वेतां, निक्षिपता = स्थापयता, अनार्येण = दुष्टेन, मनसिजेन = कामदेवेन, किमिदं = कीदृशम्, एतत्, असदृशम् = अनुचितं (कार्यम्), आरब्धं = प्रारब्धम् । च = किञ्च, एवं = पूर्वोक्तप्रकारेण, नाम = कोमलामन्त्रणे, अङ्गनाजनस्य = नारीजनस्य, हृदयं = मनः, अतिमूढं = अतिमुग्धं, यत् = यस्मात् कारणात्,

---

मकरध्वज के तीक्ष्ण बाणराशि के प्रहार से मानो भयभीत होकर गात्र-यष्टि काँप उठी । उसके सौन्दर्यातिरेक (असाधारण सौन्दर्य) को देखने के लिए (ही) मानो कौतुकवश आलिंगन के लिए लोलुप (मेरे) अङ्गों से रोमांच-जाल (फूटकर) बाहर निकल पड़ा । स्वेद-जल के द्वारा पूर्ण रूप से धुला हुआ राग (आलता राग) दोनों चरणों से निकलकर मानो (अनुराग के रूप में) हृदय में प्रविष्ट हो गया ।

मेरे मन में (यह विचार) हुआ 'सुरत-व्यापार से सर्वथा दूर, शान्त-आत्मा वाले इस व्यक्ति पर मुझे (प्रेम-बन्धन में) स्थापित करने वाले (अर्थात्

हृदयमङ्गनाजनस्य, यदनुरागविषययोग्यतामपि विचारयितुं नालम्। क्वेद-मतिभास्वरं धाम तेजसां तपसां च; क्व च प्राकृतजनाभिनन्दितानि मन्मथ-परिस्पन्दितानि। नियतमयं मामेवं मकरलाञ्छनेन विडम्ब्यमानामुपहसति मनसा। चित्रं चेदं यदहमेवमवगच्छन्त्यपि न शक्नोम्यात्मनो विकारमुप-संहर्तुम्। अन्या अपि कन्यकास्त्रपामपहाय स्वयमुपयाताः पतीन्। अन्या अप्यनेन दुर्विनीतेन मन्मथेनोन्मत्ततां नीता नार्यः। न पुनरहमेका यथा।

अनुरागविषययोग्यतामपि = अनुरागस्य प्रेम्णः विषयस्य पात्रीभूतस्य जनस्य योग्यताम् अर्हताम् अपि, विचारयितुं = निर्णेतुं, नालं = न समर्थम्। कस्मिन् जने प्रेमकरणीयं कस्मिन् च न करणीयम्—इति विचारयितुम् अशक्तम् इति भावः। अप्रस्तुत प्रशंसा। क्व = महदन्तरे, इदं = मुनिकुमारस्वरूपं, तेजसां = दीप्तीनां, तपसाम् = तपस्यानां च, अतिभास्वरं = अतिभासमानं, धाम = आश्रयः, क्व च, प्राकृतजनाभिनन्दितानि = प्राकृतजनैः साधारणजनैः अभिनन्दितानि अनुमोदितानि, मन्मथपरिस्पन्दितानि = मन्मथस्य मनोभवस्य परिस्पन्दितानि चेष्टितानि, कामचेष्टाः इति भावः, अत्र विषमालङ्कारः। नियतं = निश्चितम्, अयम् = असौ (मुनिकुमारकः), मकरलाञ्छनेन = मीनकेतुना, एवम् = इत्थं, विडम्ब्यमानां = प्रतार्यमाणां, मां = महाश्वेतां, मनसा = अन्तःकरणेन, उपहसति = 'कथमियं मां विरक्तं प्रति अनुरक्ता इति, अहो! अस्याः मूढता' इत्यादिरूपं, परिहासं करोति। च = अपि च, इदम् = एतत्, चित्रम् = आश्चर्यं, यत् = यस्मात्, अहम् = महाश्वेता, एवं = पूर्वोक्त-प्रकारेण, अवगच्छन्ती = जानन्ती अपि, आत्मनः = स्वस्य, विकारम् = कामवि-कृतिम्, उपसंहर्तुं = दूरीकर्तुं, न शक्नोमि = न समर्था अस्मि। अन्या अपि = अपराः अपि, कन्यकाः = कुमारिकाः, त्रपाम् = लज्जाम्, अपहाय = विहाय, स्वयम् = आत्मना (एव), पतीन् = स्वामिनः, उपयाताः = उपगताः। अन्या अपि = इतराः अपि, नार्यः = अङ्गना, अनेन = एतेन, दुर्विनीतेन = दुराचारेण, मन्मथेन = मनोजेन, उन्मत्ततां = सविकारतां, नीताः = प्रापिताः। यथा = येन विधिना, अहम् = महाश्वेता, एका = अन्याभ्यः भिन्ना, (कामाविद्धा जाता, तथा)

उसके ऊपर मुझे आसक्त करने वाले) अनार्य कामदेव ने यह कैसा अनुचित (कार्य) आरम्भ किया? अङ्गनाओं का हृदय (तो) यों ही अत्यन्त मूढ़ होता है, जिससे (वह प्रेम विषय-योग्यता का विचार करने में भी समर्थ नहीं हो पाता। कहाँ तेज एवं तपस्या का (यह) अतिभास्वर धाम और कहाँ साधारण जनों द्वारा अनुमोदित काम की चेष्टायें! निश्चय ही यह मुझको इस प्रकार ठगी हुई जानकर (अपने) मन में हँसता होगा। आश्चर्य तो यह है कि इस प्रकार जानती हुई भी मैं अपने (काम) विकार को रोक नहीं पा रही हूँ दूसरी कन्यायें भी लज्जा का परित्याग कर स्वयं पतियों के पास गई हैं और इस दुर्विनीत कामदेव ने दूसरी नारियों को भी

कथमनेन क्षणेनाकारमात्रालोकनाकुलीभूतमेवमस्वतन्त्रतामुपैत्यन्तःकरणम् । कालो हि गुणाश्च दुर्निवारतामारोपयन्ति मदनस्य सर्वथा । यावदेव सचेतनास्मि, यावदेव च न परिस्फुटमनेन विभाव्यते मे मदनदुश्चेष्टितलाघवमेतत्, तावदेवास्मात्प्रदेशादपसर्पणं श्रेयः । कदाचिदनभिमतस्मरविकारदर्शनकुपितोऽयं शापाभिज्ञां करोति माम् । अदूरकोपा हि मुनिजनप्रकृतिः' इत्यवधार्यापसर्पणाभिलाषिण्यहमभवम् । अशेषजनपूजनीया चेयं जातिरिति कृत्वा

न पुनः अन्याः । अनेन = एतेन, क्षणेन = कालेन, आकारमात्रालोकनाकुलीभूतम् = आकृतिदर्शनमात्रेणविह्वलीभूतम्, अन्तःकरणं = मम हृदयम्, एवम् = इत्थम्, अस्वतन्त्रताम् = पराधीनतां, कथम्, उपैति = उपगच्छति । हि = यतः, कालः = कामोद्दीपकः वसन्तादिकालः गुणाः = सौन्दर्यादयः, च, सर्वथा = सर्वतोभावेन, मदनस्य = कन्दर्पस्य, दुर्निवारतां = दुर्निवारणीयताम् आरोपयन्ति = स्थापयन्ति (अप्रस्तुत प्रशंसा) । यावदेव = यावत्कालम्, एव, सचेतना = चेतनावती, अस्मि = वर्ते, यावदेव च, मे = मम, एतत् = इद, मदनदुश्चेष्टितलाघवं = कामविकारजनितलघुत्वम्, अनेन = मुनिकुमारकेण, परिस्फुटं = सुस्पष्टं, न विभाव्यते = न परिज्ञायते, तावदेव = तावत्कालम्, एव, अस्मात् = एतस्मात्, प्रदेशात् = स्थानात्, अपसर्पणम् = अपसरणं, श्रेयः = कल्याणकरम् । (अन्यथा) कदाचित्, अनभिमतस्मरविकारदर्शनकुपितः = अनभिमतः अनभीष्टः स्मरविकारः कामविकारः तस्य दर्शनेन अवलोकनेन कुपितः क्रुद्धः अयं = तपोधनः, मां = महाश्वेतां, शापाभिज्ञां = शापस्य अभिज्ञां परिचितां (शापेन शप्ताम् इति भावः), करोति = विदधाति । हि = यतः, मुनिजनप्रकृतिः = ऋषिजनस्वभावः, अदूरकोपा = अदूरे समीपे कोपः क्रोधः यस्याः सा, इति = एवम्, अवधार्य = विचार्य, अहम्, अपसर्पणाभिलाषिणी = दूरगमनाभिलाषिणी, अभवम् = अभूवम् च = अपि च, इयं जातिः = एषा तपस्विजातिः, अशेषजनपूजनीया = अशेषैः अखिलैः जनैः प्राणिभिः पूजनीया वन्दनीया, इति कृत्वा = एवं विचार्य, (अतः परं

उन्मत्त बनाया है, पर मैं अकेली जैसी (कामविकृत हुई हूँ वैसी कोई) नहीं (हुई होगी) । क्षण-मात्र में केवल (उसके) आकार के दर्शन से व्यग्र बना हुआ यह अंतःकरण ऐसा पराधीन कैसे बन गया ? (वस्तुतः) काल (वसन्त आदि) और गुण (सौन्दर्य आदि) सब प्रकार से कामदेव को दुर्निवारणीय बना देते हैं (तो) जब तक मैं सचेत हूँ, और जब तक यह (मुनिकुमार) काम-विकार से उत्पन्न लघुता को स्पष्ट रूप से जान नहीं जाते, तब तक इस स्थान से हट जाना ही श्रेयस्कर है । कहीं यह अनभिलषित (मेरे) काम विकार के दर्शन से रुष्ट होकर (मुझे) शाप न दे दे, क्योंकि मुनियों के स्वभाव में क्रोध पास ही रहता है ।" ऐसा सोचकर मैंने वहाँ से हट जाने की इच्छा की, पर यह सोचकर कि यह जाति (मुनि-गण) तो सबके

तद्वदनाकृष्टदृष्टिप्रसरम्, अचलितपक्ष्ममालम्, अदृष्टभूतलम्, ईषदुल्लसितकर्णपल्लवोन्मुक्तकपोलमण्डलम्, आलोलालकलतालसत्कुसुमावतंसम्, अंसदेशदोलायितमणिकुण्डलमस्मै प्रणाममकरवम्।

अथ कृतप्रणामायां मयि दुर्लङ्घ्यशासनतया भगवतो मनोभुवः, मदजननतया च मधुमासस्य, अतिरमणीयतया च तस्य प्रदेशस्य, अविनयबहुल-

---

सर्वाणि पदानि 'प्रणाममकरवम्' इति क्रियायाः विशेषणानि), तद्वदनाकृष्टदृष्टिप्रसरम् = तद्वदनात् मुनिकुमारकमुखात् आकृष्टः आकर्षितः दृष्टेः दर्शनस्य प्रसरः विस्तारः यस्मिन् तत् यथा स्यात् तथा, (एवमग्रेऽपि) अचलितपक्ष्ममालम् = अचलिता निश्चेष्टा पक्ष्ममाला नेत्ररोमराजिः यस्मिन् तत्, अदृष्टभूतलम् = अदृष्टम् अनवलोकितं भूतलं धरातलं यस्मिन् कर्मणि तत्, ईषदुल्लसितकर्णपल्लवोन्मुक्तकपोलमण्डलम् = ईषत् किञ्चित् उल्लसिते उत्क्षिप्ते ये कर्णपल्लवे श्रवणकिसलये ताभ्याम् उन्मुक्ते उज्झिते कपोलमण्डले गण्डबिम्बयुगलं यस्मिन् कर्मणि तत्, आलोलालकलतालसत्कुसुमावतंसम् = आलोला किञ्चित्चञ्चला या अलकलता केशपाशः तस्यां लसन् शोभमानः कुसुमावतंसः पुष्पालङ्करणं यस्मिन् कर्मणि तत्, अंसदेशदोलायितमणिकुण्डलम् = अंसदेशे स्कन्धभागे दोलायिते चलिते मणिकुण्डले रत्नकुण्डले यत्र तत्, अस्मै = तापसकुमाराय, प्रणामम् = नमस्कारम्, अकरवम् = कृतवती। अत्र स्वभावोक्तिः।

अथ = अनन्तरं, "मङ्गलानन्तरारम्भप्रश्नकार्त्स्न्येष्वथो अथ" इत्यमरः मयि = महाश्वेतायां, कृतप्रणामायां = कृतः विहितः प्रणामः नमस्कारः यया सा तस्यां, 'तमपि·····प्रदीपमिव पवनस्तरलतामनयदनङ्ग' इति वाक्यम्। मुनिकुमारस्य कामविकारहेतुं वर्णयति—'भगवतः = ऐश्वर्यवतः, मनोभुवः = कामदेवस्य, दुर्लङ्घ्यशासनतया = दुर्लङ्घ्यं दुर्लङ्घनीयं शासनम् आदेशः यस्य सः तस्य भावः तया, मधुमासस्य = चैत्रमासस्य, च = समुच्चये (एवं सर्वत्र), मदजननतया = मदोत्पादकतया, तस्य = पूर्वोक्तस्य, प्रदेशस्य = भूभागस्य, च, अतिरमणीयतया = अतिमनोहरतया, अभिनवयौवनस्य = नवतारुण्यस्य, च, अविनयबहुलतया = उच्छृङ्खलता-

---

द्वारा पूजनीय है, मैंने (भी) उसे प्रणाम किया। (प्रणाम करने में) मेरी दृष्टि उसके मुख की ओर आकृष्ट थी एवं बरौनियाँ निश्चल थीं। (मैं) पृथिवी की ओर नहीं देख रही थी। कर्णपल्लव कपोलों से कुछ ऊपर की ओर खिंच गये थे, चंचल केशपाश में पुष्पाभरण सुशोभित हो रहे थे तथा मणि-कुंडल कंधे पर झूल रहे थे।

इसके बाद मेरे प्रणाम कर लेने पर काम के अलंध्यशासन होने के कारण, मधुमास के मदोत्पादक होने के कारण, उस प्रदेश के अति रमणीय होने से, नव यौवन के उच्छृङ्खलतापूर्ण होने से, इन्द्रियों के चंचलस्वभाव होने के कारण, विषयाकांक्षाओं की दुर्निवारता से, चित्तवृत्ति की चपलता से तथा उन-उन वस्तुओं की

तया चाभिनवयौवनस्य, चञ्चलप्रकृतितया चेन्द्रियाणाम्, दुर्निवारतया च विषयाभिलाषाणाम्, चपलतया च मनोवृत्तेः, तथाभवितव्यतया च तस्य तस्य वस्तुनः; किं बहुना, मम मन्दभाग्यदौरात्म्यादस्य चेदृशस्य क्लेशस्य विहितत्वात्तमपि मद्विकारदर्शनापहृतधैर्यं प्रदीपमिव पवनस्तरलतामनयदनङ्गः। तदा तस्याप्यभिनवागतं मदनं प्रत्युद्गच्छन्निव रोमोद्गमः, प्रादुरभवत्। मत्सकाशमभिप्रस्थितस्य मनसो मार्गमिवोपदिशद्भिः पुरः प्रवृत्तं श्वासैः। वेपथुगृहीता व्रतभङ्गभीतेवाकम्पत करतलगताक्षमाला। द्वितीयेव कर्णावसक्तकुसुममञ्जरी कपोलतलासङ्गिनी समदृश्यत स्वेदसलिलसीकरजालिका। मद्दर्श-

---

पूर्णतया, इन्द्रियाणां = नेत्रादिकरणानां, च, चञ्चलप्रकृतितया = चापलस्वभावतया, विषयाभिलाषाणां = विषयाकांक्षाणां, च, दुर्निवारतया = दुःखेन निवारणीयतया, मनोवृत्तेः = चित्तवृत्तेः, च, चपलतया = चञ्चलतया, तस्य, तस्य, वस्तुनः = सुखदुःखादेः च, तथा = तेन प्रकारेण भवितव्यतया = भावितया, किं बहुना = किं बहूक्तेन, मम = अभागिन्याः, मन्दभाग्यदौरात्म्यात् = मन्दभाग्यस्यक्षीणभागधेयस्य दौरात्म्यात् दुष्टतया, अस्य = वर्तमानस्य, च, ईदृशस्य = एवं विधस्य, क्लेशस्य = (मम) तपश्चर्यादिदुःखस्य, च विहितत्वात् = कृतत्वात्, मद्विकारदर्शनापहृतधैर्यं = मम विकारदर्शनेन अपहृतं बलात् दूरीकृतं धैर्यं धीरता यस्य तथाभूतम्, तमपि = मुनिकुमारकम्, अपि अनङ्गः = कन्दर्पः पवनः = वायुः, प्रदीपमिव = दीपकम्, इव, तरलताम् = चञ्चलताम्, अनयत् = नीतवान्। अत्र उपमा। अथातो मुनिकुमारकस्य कामविकृतां दशां वर्णयति — तदा = तस्मिन काले, तस्यापि = मुनिकुमारकस्यापि, अभिनवागतं = नवागतं, मदनं = कामं, प्रत्युद्गच्छन्निव = स्वागतार्थं समीपं गच्छन्, इव (फलोत्प्रेक्षा), रोमोद्गमः = रोमाञ्चः, प्रादुरभवत् = प्रकटीबभूव। मत्शकाशम् = मम समीपम्, अभिप्रस्थितस्य = सम्मुखं चलितस्य, मनसः = (तस्य) हृदयस्य, मार्गम् = पन्थानम्, उपदिशद्भिः = निर्दिशद्भिः इव, श्वासैः = निःश्वासवायुभिः, पुरः—अग्रे, प्रवृतम् = प्रस्थितम्। (फलोत्प्रेक्षा)। वेपथुगृहीता = वेपथुः कम्पः तेन गृहीता धृता, करतलगता = हस्तगता, अक्षमाला = जपमालिका, व्रतभङ्गभीतेव = व्रतस्य तपसः नियमस्य भङ्गेन खण्डेन भीता त्रस्ता, इव, अकम्पत = कम्पमाना = अभूत्। अत्र हेतूत्प्रेक्षा। कपोलतलासङ्गिनी = कपोलतलाश्लेषिणी, स्वेदसलिलसीकरजालिका = स्वेदसलिलस्य श्रमजलस्य सीकराणां बिन्दूनां जालिका श्रेणी, द्वितीया = अपरा, कर्णावसक्तकुसुममञ्जरी = श्रवणसंलग्ना पुष्पवल्लरी, इव, समदृश्यत = दृष्टा अभूत् (द्रव्योत्प्रेक्षा)। मद्दर्शन-

---

सुखःदुःखादि की) उस प्रकार की भवितव्यता से, अधिक क्या कहूँ, मेरे मन्दभाग्य की दुष्टता से तथा इस प्रकार के (तपस्यात्मक) क्लेश के विधान से, मेरे विकार के दर्शन से अधीर हुए उस मुनिकुमार को भी काम ने (उसी प्रकार) चंचल बना

नप्रीतिविस्तारितस्य चोत्तानतारकस्य पुण्डरीकमयमिव तमुद्देशमुपदर्शयतो लोचनयुगलस्य विसर्पिभिरंशुसन्तानैर्यदृच्छयाच्छोदसलिलमपहायविकचकुवलयवनैरिव गगनतलसमुत्पतितैररुध्यन्तदश दिशः। तया तु तस्यातिप्रकटया विकृत्या द्विगुणीकृतमदनावेशा तत्क्षण महमवर्णनयोग्यां कामप्यवस्थामन्वभवम्। इदं च मनस्यकरवम्—'अनेकसुरतसमागमलास्यलीलोपदेशोपाध्याया मकरकेतुरेव विलासानुपदिशति; अन्यथा विविधरसासङ्गललितेष्वीदृशेषु व्यतिक-

---

प्रीतिविस्तारितस्य = मद्दर्शनप्रीत्या मम अवलोकनजानितहर्षेण विस्तारितस्य प्रसारितस्य, ('लोचनयुगलस्य अंशुसन्तानैः अरुध्यन्त दश दिशः' इति वाक्यम्) उत्तानतारकस्य = उत्ताने उपरिगते तारके कनीनिके यस्य तस्य, तमुद्देशं = तं प्रदेशं, पुण्डरीकमयमिव=नेत्रयोः धवलत्वात् श्वेतकमलमयम्, इव, उपदर्शयतः = प्रदर्शयतः, लोचनयुगलस्य = नयनद्वयस्य, विसर्पिभिः = प्रसरणशीलैः, अंशुसन्तानैः = किरणसमूहैः, यदृच्छया = स्वेच्छया, अच्छोदसलिलम् = अच्छोदसरसः जलम्, अपहाय = परित्यज्य, गगनतलसमुत्पतितैः = गगनतलम् आकाशतलं समुत्पतितैः उद्गतैः, विकचकुवलयवनैरिव = विकचितानि विकसितानि यानि कुवलयानि नीलकमलानि तेषां वनैः अरण्यैः, इव, दश = दशसङ्ख्याकाः दिशः = आशाः, अरुध्यन्त = आच्छाद्यन्त, अत्र 'पुण्डरीकमयमिव' इति क्रियोत्प्रेक्षा, "विकचकुवलयवनैः इव" इति जात्युत्प्रेक्षा, दिशामाच्छादनवर्णने अतिशयोक्तिः च। तस्य = मुनिकुमारकस्य, अतिप्रकटया = अत्यन्तस्पष्टया, विकृत्या = कामविकारेण, द्विगुणीकृतमदनावेशा = द्विगुणीकृतः द्विगुणतां नीतः मदनस्य कामस्य आवेशः यस्याः सा एवम्भूता, अहं = महाश्वेता, तत्क्षणं = तत्कालं, कामपि, अवर्णनयोग्यम् = अनिर्वचनीयाम्, अवस्थाम् = दशाम्, अन्वभवम् = अनुभूतवती। किं च, मनसि = चेतसि, इदम् = एतत्, अकरवम् = कृतवती, इदम् अचिन्तयम् इति भावः,—अनेकसुरतसमागमलास्यलीलोपदेशोपाध्यायः = अनेके बहुविधाः ये सुरतसमागमाः सम्भोगसंसर्गाः ते एव लास्यलीलाः नृत्यव्यापाराः तासाम् उपदेशे शिक्षणे उपाध्यायः आचार्यः, मकरकेतुः = मीनकेतनः, एव = अवधारणे, विलासान् = नेत्रविकारान्, उपदिशति = शिक्षयति, अन्यथा = उक्तवैपरीत्ये, विविधरसासङ्गललितेषु = विविधाः बहुप्रकारकाः ये रसाः शृङ्गारादयः तेषाम् आसङ्गेन संसर्गेण ललितेषु मनोहरेषु, ईदृशेषु = एवं विधेषु, व्यतिकरेषु = सम्बन्धेषु, अप्रविष्टबुद्धेः =

दिया (जैसे) पवन दीपक को (चंचल बना देता है)। उस समय मानो नवागत मदन की अगवानी करता हुआ रोमांच उसमें भी उत्पन्न हो गया। मेरे समीप आते हुये मन को जैसे मार्ग बताती हुई साँसें आगे-आगे चल पड़ीं। (शरीरोत्पन्न) कम्प से संक्रान्त उसकी हस्त-गत जप-माला मानो व्रत-भङ्ग के भय से काँपने लगी। कपोल-

रेष्वप्रविष्टबुद्धेरस्य जनस्य कुत इयमनभ्यस्ताकृती रतिरसनिस्यन्दमिव क्षरन्त्यमृतमिव वर्षन्ती मदमुकुलितेव खेदालसेव निद्राजडेवानन्दभरमन्थरतरत्तारसञ्चारिण्यनिभृतभ्रूलतोल्लासिनी दृष्टिः । कुतश्चेदमतिनैपुण्यं यच्चक्षुषैवानक्षरमेवमन्तर्गतो हृदयाभिलापः कथ्यते'।

अप्रविष्टा बुद्धिः मतिः यस्य तादृशस्य, अस्य, जनस्य = मुनिकुमारकस्य, कुतः = कस्मात् हेतोः, इयम् = एतादृशी (दृष्टिः इति सम्बन्धः) दृष्टिं विशेषयति—अनभ्यस्ताकृतिः = अनभ्यस्ता अपरिचिता आकृतिः आकारः यया सा, रतिरसनिष्यन्दं = रतिरसस्य शृङ्गाररसस्य निष्यन्दं प्रस्रवणं, क्षरन्ती = स्रवन्ती, इव, अमृतं = सुधां, वर्षन्ती = वृष्टिं कुर्वन्ती, इव, मदमुकुलितेव = मदेन काममत्ततया मुकुलिता ईषत् मुद्रिता, इव, खेदालसेव = परिश्रममन्थरा, इव, निद्राजडेव = निद्रया स्तम्भिता, इव (सर्वत्र उत्प्रेक्षा), आनन्दभरमन्थरतरत्तारसञ्चारिणी = आनन्दस्य प्रमोदस्य यः भरः अतिशयः तेन मन्थरा अलसा एवं विधा तरन्ती चञ्चलतां प्राप्नुवन्ती तारा कनीनिका यस्मिन् एतादृशः सञ्चारः विद्यते यस्याः सा, अनिभृतभ्रूलतोल्लासिनी = अनिभृतं स्फुटं भ्रूलते उल्लासयितुं शीलं यस्याः सा, (एतादृशी) दृष्टिः, जाता इति शेषः । च = किं च, कुतः = कस्मात् , इदम् = एतत् , अतिनैपुण्यम् = अतिचातुर्यं यत् , अन्तर्गतः = आन्तरिकः, हृदयाभिलाषः = चित्ताभिप्रायः, अनक्षरम् = अक्षररहितं यथा स्यात् तथा, चक्षुषैव = नेत्रेण, एव, कथ्यते = प्रकाश्यते, अनेन मुनिकुमारेण इति शेषः ।'

भाग पर पड़ी हुई पसीने की बूँदों की पंक्ति मानो कान में संलग्न (पहनी गई) दूसरी कुसुममञ्जरी की भांति दिखाई देने लगी । उसके दोनों नेत्रों की रश्मियों से दसो दिशायें आच्छादित हो गईं । वे नेत्र मुझे देखने से उत्पन्न हर्ष वश फैले हुए थे, दोनों पुतलियाँ चढ़ी हुई थीं, (अतएव) वे मानो उस प्रदेश को (श्वेत) कमलमय की भांति प्रदर्शित कर रहे थे । (उस समय ऐसा लगता था) जैसे अच्छोद-सर के जल को स्वेच्छा से छोड़कर नीलकमल का वन आकाश की ओर उड़ रहा हो । उसके अति स्पष्ट उस काम-विकार से दुगुनी काम-भावना से भरी हुई । मैंने उस समय अनिर्वचनीय दशा का अनुभव किया । मैंने मन में यह सोचा—'सुरतसमागमरूपी विविध नृत्य-क्रीड़ाओं की शिक्षा का आचार्य कामदेव ही विलासों का उपदेश करता है, नहीं तो विविध रसों के संसर्ग से सुन्दर इस प्रकार के प्रसङ्गों में जिसकी बुद्धि प्रविष्ट नहीं हुई है, ऐसे इस व्यक्ति की (शृङ्गार रस के अनुकूल) आकृति से अपरिचित यह दृष्टि ऐसी कैसे बन जाती, जो (इस समय) मानो रति-रस का झरना बहाती, मानो अमृत की वर्षा करती, मद से मुँदी हुई, परिश्रम से अलसाई हुई, निद्रा से जड़ बनी, अतिशय आनन्द से मन्थर एवं चंचल पुतलियों सहित संचरणशील तथा स्पष्ट रूपसे भ्रूलता को नचानेवाली है । (इसमें) यह बड़ीचातुरी कहाँसे आगई, जो (अपने) आन्तरिक हृदय-गत अभिप्राय को नेत्रों से ही निःशब्द (भाव से) व्यक्त कर रहा है ।

प्राप्तप्रसरा चोपसृत्य तं द्वितीयमस्य सहचरं मुनिबालकं प्रणामपूर्वकमपृच्छम्—'भगवन्किमभिधानः कस्य चायं तपोधनयुवा ? किंनाम्नस्तरोरियमनेनावतंसीकृता कुसुममञ्जरी ? जनयति हि मे मनसि महत्कौतुकमस्याः समुत्सर्पन्नसाधारणसौरभोऽयमनाघ्रातपूर्वो गन्धः'' इति। स तु मामीषद्विहस्याब्रवीत्—''बाले किमनेन पृष्टेन प्रयोजनम् ? अथ कौतुकमावेदयामि। श्रूयताम् :—

अस्ति खलु सकलत्रिभुवनप्रख्यातकीर्तिरत्युदारतया सुरासुरसिद्धवृन्दवन्दि-

---

च = किञ्च, प्राप्तप्रसरा = प्राप्तः लब्धः प्रसरः अवकाशः यया तथाभूता, (अहम्) उपसृत्य = समीपं गत्वा, अस्य = मुनिकुमारस्य, तं, द्वितीयम् = अपरं, सहचरं = सखायं, मुनिबालकं = तापसकुमारं, प्रणामपूर्वकम् = अभिवादनपूर्वकम्, अपृच्छम् पृष्टवती—''भगवन् ! महानुभाव !, अयं = भवत्सहचरः, तपोधनयुवा = युवा तापसः किमभिधानः ? = किं नामा ?, कस्य = जनस्य च, पुत्रः इति शेषः। किं नाम्नः = किमभिधानस्यतरोः = वृक्षस्य, इयम् = एषा, कुसुममञ्जरी=पुष्पवल्लरी, अनेन = मुनिकुमारेण, अवतंसीकृता ? = कर्णालङ्काररूपेण धृता ? हि = यतः, अस्याः = कुसुममञ्जर्याः, समुत्सर्पन् = सर्वतः प्रसरन्, असाधारणसौरभः = असामान्यसुगन्धः, अनाघ्रातपूर्वः = नासिकया अगृहीतपूर्वः, अयं = प्रत्यक्षीक्रियमाणः, गन्धः, मे = मम, मनसि = चित्ते, महत् = अत्यधिकं, कौतुकं = कौतूहलं, जनयति = उत्पादयति। सः = मुनिबालकः, तु, ईषद् विहस्य = किञ्चित् स्मितं कृत्वा, माम् (प्रति), अब्रवीत् = उवाच—'बाले' ! = कुमारिके !, अनेन = एवंविधेन, पृष्टेन = प्रश्नेन, किं प्रयोजनं = कः अर्थः ? अथ = चेत् कौतुकं = (तव) कौतूहलं, (तदा) आवेदयामि = वदामि, श्रूयताम् = आकर्ण्यताम्।

खलु, सकलत्रिभुवनप्रख्यातकीर्तिः = सकले निखिले त्रिभुवने भुवनत्रये प्रख्याता प्रसिद्धा कीर्तिः यशः यस्य सः, अत्युदारतया = अत्युत्कृष्टतया, सुरासुरसिद्धवृन्दवन्दितचरणयुगलः = सुराः देवाः असुराः दैत्याः सिद्धाः देवयोनिविशेषाः तेषां वृन्देन

अवसर पाते ही समीप जाकर मैंने उसके सहचर दूसरे मुनिकुमार से प्रणामपूर्वक पूछा—''भगवन् ! इस तपस्वीयुवक का नाम क्या है ? और यह किसका (पुत्र) है ? किस वृक्ष की कुसुम मञ्जरी को इसने (कर्ण का) आभूषण बनाया है ? असाधारण सौरभ से समन्वित, पहले (कभी) न सूँघी गई, फैलती हुई इसकी गन्ध मेरे मन में बड़ा कौतुक उत्पन्न कर रही है।' उसने कुछ हँसकर मुझ से कहा—''बालिके ! इस प्रकार पूछने से क्या प्रयोजन ? (तथापि) यदि कुतूहल है, तो कहता हूँ, सुनो।''

सम्पूर्ण त्रिलोक में विख्यात कीर्ति वाले, अति उदार होने के कारण सुरों, असुरों एवं सिद्धों के समूह से पूजित चरणों वाले तथा दिव्यलोक में निवास करने वाले

तच्चरणयुगलो महामुनिर्दिव्यलोकनिवासी श्वेतकेतुर्नाम। तस्य भगवतः सुरासुरलोकसुन्दरीहृदयानन्दकरम्, अशेषत्रिभुवनसुन्दरम्, अतिशयितनलकूबरं रूपमासीत्। स कदाचिद्देवतार्चनकमलान्युद्धर्तुमैरावतमदजलबिन्दुबद्धचन्द्रकशतखचितजलां हरहसितसितस्रोतसं मन्दाकिनीमवततार। अवतरन्तं च तदा कमलवनेषु संततसंनिहिता विकचसहस्रपत्रपुण्डरीकोपविष्टा देवी लक्ष्मीर्ददर्श।

समूहेन वन्दितं पूजितं चरणयुगलं पादद्वयं यस्य सः, दिव्यलोकनिवासी = स्वर्गलोकनिवासी, श्वेतकेतुर्नाम = एतन्नामा, महामुनिः = महान् चासौ मुनिः महामुनिः महातपस्वी, अस्ति = वर्तते। भगवतः = दिव्यैश्वर्ययुक्तस्य, तस्य = श्वेतकेतुमुनेः, रूपं = सौन्दर्यं, सुरासुरलोकसुन्दरीहृदयानन्दकरम् = सुराः अमराः असुराः दानवाः तेषां लोकयोः जगतोः सुन्दरीणां कामिनीनां हृदयानन्दकरं चित्तानन्दजनकम्, अशेषत्रिभुवनसुन्दरम् = अशेषे निखिले त्रिभुवने त्रैलोक्ये सुन्दरं सर्वेभ्यः मनोज्ञम्, अतिशयितनलकूवरम् = अतिशयितः अतिक्रान्तः नलकूबरः एतन्नामा कुबेरपुत्रः, (तदीयरूपमिति यावत्) येन (रूपेण) तत् तथा, आसीत् = अभूत्। सः = श्वेतकेतुः, कदाचित् = कस्मिंश्चित् काले, देवतार्चनकमलानि = देवतार्चनाय देवपूजनाय कमलानि नलिनानि, उद्धर्तुम् = उत्पाटयितुम्, ऐरावतमदजलबिन्दुबद्धचन्द्रकशतखचितजलाम् = (जलक्रीडार्थं प्रविष्टस्य) ऐरावतस्य इन्द्रवाहनस्य श्वेतगजस्य यत् मदजलं दानवारि तस्य बिन्दुभिः शीकरैः बद्धम् उत्पादितं यत् चन्द्रकशतं विविधवर्णं जाज्वल्यमानं वर्तुलाकारं चिह्नवृन्दं (तैलादिबिन्दूनां पतने यत् जलस्तरोपरि दृष्टिगोचरं भवति) तेन (चन्द्रकशतेन) खचितं व्याप्तं जलं नीरं यस्याः तां तथाभूतां, हरहसितसितस्रोतसम् = हरस्य शिवस्य यद् हसितं हासः तद्वत् सितं श्वेत स्रोतः प्रवाहः यस्याः तादृशीं, मन्दाकिनीम् = आकाशगङ्गाम्, अवततार = अवतरणं विहितवान्। लुप्तोपमा। तदा = तस्मिन् काले, अवतरन्तम् = अवतरणं कुर्वन्तं, तं, कमलवनेषु = पद्मवनेषु, संततसंनिहिता = संततं निरन्तरं संनिहिता निकटवर्तिनी, विकचसहस्रपत्रपुण्डरीकोपविष्टा = विकचानि विकसितानि सहस्रपत्राणि यस्मिन् एवम्भूतं यत् पुण्डरीकं श्वेतकमलं तत्र उपविष्टा निषण्णा, देवी, लक्ष्मीः = पद्मालया, ददर्श = विलोकयामास। तम् = श्वेतकेतुम्, अवलोक-

---

श्वेतकेतु नामक महामुनि हैं। उन भगवान् (श्वेतकेतु) का रूप सुरासुर-लोक की सुन्दरियों के हृदय को आनन्द देने वाला, समस्त त्रिलोक से सुन्दर तथा नलकूबर के (भी) रूप को अतिक्रान्त करने वाला था। किसी समय वे देव-पूजन के हेतु कमलों को तोड़ने के लिए आकाश-गङ्गा के जल में उतरे। (उस समय) मन्दाकिनी का जल ऐरावत के मद-जल की बूँदों से बने सैकड़ों चन्द्रकों से युक्त था तथा जल-धारा शङ्कर के हास्य सदृश श्वेत थी। उस समय उतरते हुये उनको कमल-वनों में सदा रहने वाली तथा विकसित सहस्रपत्रों से युक्त पुण्डरीक पर बैठी

तस्यास्तु तमवलोकयन्त्याः प्रेममदमुकुलितेनानन्दबाष्पभरतरङ्गतरलतारेण लोचनयुगलेन रूपमास्वादयन्त्या जृम्भिकारम्भमन्थरमुखविन्यस्तहस्तपल्लवाया मन्मथविकृतं मन आसीत्। आलोकनमात्रेण च समासादितसुरतसमागमसुखायास्तस्मिन्नेवासनीकृते पुण्डरीके कृतार्थतासीत्। तस्माच्च कुमारः समुदपादि। ततस्तमुत्संगेनादाय सा 'भगवन्गृहाण तवायमात्मजः' इत्युक्त्वा तस्मै श्वेतकेतवे ददौ। असावपि बालजनोचिताः सर्वाः क्रियाः कृत्वा तस्य पुण्डरी-

---

यन्त्याः = पश्यन्त्याः, तस्याः = लक्ष्म्याः, (मन्मथविकृतं मन आसीत्—इति वाक्यम्), कामासक्तलक्ष्मीदशां वर्णयन्नाह—प्रेममदमुकुलितेन = प्रेममदः प्रीतिमदः तेन मुकुलितेन कुड्मलितेन, आनन्दबाष्पभरतरङ्गतरलतारेण = आनन्दबाष्पभरस्य आनन्दाश्रुजलातिशयस्य 'अतिशयो भरः' इत्यमरः, तरङ्गैः कल्लोलैः तरले चञ्चले तारे कनीनिके यस्य (लोचनयुगलस्य), तेन, लोचनयुगलेन = नेत्रद्वयेन, रूपम् = सौन्दर्यम्, आस्वादयन्त्याः = पिबन्त्याः, जृम्भिकारम्भमन्थरमुखविन्यस्तहस्तपल्लवायाः = जृम्भिकायाः जृम्भणस्य आरम्भेण प्रादुर्भावेण मन्थरे सालसे मुखे आनने विन्यस्तं स्थापितं हस्तपल्लवं करकिसलयं ययाः, तस्याः मनः=चेतः, मन्मथविकृतम् = कामविकारयुक्तम्, आसीत् = अभूत्। च = किञ्च, आलोकनमात्रेण = केवलम् ईक्षणेन, समासादितसुरतसमागमसुखायाः = समासादितं सम्प्राप्तं सुरते सम्भोगे यः समागमः संयोगः तस्य सुखम् आनन्दः यया सा तस्याः (लक्ष्म्याः), आसनीकृते = विष्टरीकृते, तस्मिन्नेव = पूर्वोक्ते, एव, पुण्डरीके = श्वेतकमले, कृतार्थता = सुरतसफलता, आसीत् = अभूत्। तस्मात् = पुण्डरीकात्, कुमारः = अयं मुनिकुमारः, समुदपादि = समुत्पन्नः। ततः = कुमारजन्मानन्तरं, तम् = नवकुमारकम्, उत्सङ्गेन = क्रोडेन, आदाय = गृहीत्वा, सा = लक्ष्मीः, "भगवन्! = श्रीमन्!, गृहाण = स्वीकुरु, अयम् = एषः मयानीतः, तव = भवतः, आत्मजः = पुत्रः", इत्युक्त्वा = एवं कथयित्वा, तस्मै = पूर्वोक्ताय, श्वेतकेतवे = एतत्संज्ञकमुनये, ददौ = समर्पयामास। असावपि = श्वेतकेतुः, अपि, बालजनोचिताः = शिशुयोग्याः, सर्वाः = निखिलाः, क्रियाः = जातकर्मादिधार्मिकाः क्रियाः, कृत्वा = विधाय, पुण्डरीकसम्भवतया =

हुई लक्ष्मी ने देखा। उनको देखती हुई उसका (लक्ष्मी का) मन मन्मथ (कामभावना) से विकृत हो गया। उसके दोनों नयन प्रीतिमद से मुकुलित तथा पुतलियाँ आनन्दाश्रु-समूह की तरङ्ग से तरल थीं, ऐसे दोनों नेत्रों से वह (उसके) सौन्दर्य का आस्वादन कर रही थी और (इसलिए) जँभाई आने के कारण अलस हुये मुख-मण्डल पर पाणिपल्लव रखे थी। दर्शन-मात्र से उसने सुरत-समागम का सुख प्राप्त कर लिया तथा आसन रूप में प्रयुक्त उसी पुण्डरीक पर उसे सुरतसफलता मिल गई और उसी से कुमार की उत्पत्ति हुई। तदनन्तर उसे गोद में लेकर 'भगवन्! लीजिये यह आपका पुत्र है, ऐसा कहकर (उसे) श्वेतकेतु को दे दिया।

कसंभवतया तदेव 'पुण्डरीक' इति नाम चक्रे। प्रतिपादितव्रतं च तमागृहीत-सकलविद्याकलापमकार्षीत्। सोऽयम्।

इयं च सुरासुरैर्मथ्यमानात्क्षीरसागरादुद्गतः पारिजातनामा पादपस्तस्य मञ्जरी। यथा चैषा व्रतविरुद्धमस्य श्रवणसंसर्गमासादितवती तदपि कथयामि। अद्य चतुर्दशीति भगवन्तमम्बिकापतिं कैलासगतमुपासितुममरलोकान्मया सह नन्दनवनसमीपेनायमनुसरन्निर्गत्य साक्षान्मधुमास-

---

पुण्डरीकात् श्वेतकमलात् सम्भवः उत्पत्तिः तस्य भावः तत्ता तया, तस्य = कुमारस्य, तदेव = अन्वर्थकमेव, 'पुण्डरीकः' इति नाम = संज्ञा, चक्रे = कृतवान्। प्रतिपादितव्रतं = प्रतिपादितं व्रतं यज्ञोपवीतं यस्य तादृशं, तम् = पुण्डरीकम्, आगृहीत-सकलविद्याकलापम् = आगृहीतः शिक्षितः सकलविद्याकलापः समस्तविद्यासमूहः येन तथाविधम्, अकार्षीत = कृतवान्, श्वेतकेतुः इतः शेषः। अयं = तापसकुमारः, सः, पुण्डरीकः, एव इति शेषः।

सुरासुरैः = देवदानवैः, मथ्यमानात् = आलोड्यमानात्, क्षीरसागरात् = दुग्धोदधेः, उद्गतः = उत्पन्नः, पारिजातनामा = पारम् अस्ति अस्य इति पारी समुद्रः तत्र जातः एतत्संज्ञकः, पादपः = वृक्षः, तस्य, इयम् = एषा, मञ्जरी = वल्लरी, यथा च = येन विधिना च, एषा = इयं मञ्जरी, व्रतविरुद्धं = नियमविरुद्धं (ब्रह्मचारिणां विलाससामग्रीस्वीकरणं निषिद्धम्), अस्य = पुण्डरीकस्य, श्रवणसंसर्गम् = श्रवणस्य = कर्णस्य संसर्गं संयोगम्, आसादितवती = प्राप्तवती, तदपि = तद्वृत्तान्तमपि, कथयामि = वदामि। अद्य चतुर्दशी = अस्मिन् दिवसे चतुर्दशी (तिथिः) अस्ति, इति = हेतोः, कैलासगतं = रजताद्रिस्थितं, भगवन्तम् = सर्वैश्वर्ययुक्तम्, अम्बिकापतिम् = गौरीशम्, उपासितुम् = आराधयितुम्, अमरलोकात् = स्वर्गात्, मया, सह = साकं, नन्दनवनसमीपेन = इन्द्रकानननिकटस्थप्रदेशेन, अनुसरन् = कैलासं प्रति आगच्छन्, निर्गत्य = इन्द्रोद्यानाद् बहिः निःसृत्य, "नन्दनवन देवतया प्रणम्याभिहितः" इति वाक्यम्, इतः तृतीयैकवचनान्तानि स्त्रीलिङ्ग पदानि 'नन्दनवन-देवतया' इत्यस्य विशेषणानि, मधुमासलक्ष्मीदत्तललितहस्तावलम्बया = मधुमासस्य वसन्तस्य लक्ष्म्या श्रिया दत्तः अर्पितः (स्वस्य) ललितस्य सुन्दरस्य हस्तस्य करस्य अवलम्बः

इन्होने भी बालोचित सभी क्रियायें करके, पुण्डरीक से उत्पत्ति होने के कारण उसका वही 'पुण्डरीक' यह नाम रखा। (उसके बाद) उसका उपनयन संस्कार कर (उसे) समस्त विद्या-समूह के ज्ञान से युक्त बना दिया। यह (कुमार) वही (पुण्डरीक) है।

यह मञ्जरी सुरों और असुरों द्वारा मथे गये समुद्र से निकले हुये पारिजात नामक वृक्ष की है। जिस प्रकार इसने (मञ्जरी ने) ब्रह्मचर्य-व्रत के विपरीत इसके कानों के सम्बन्ध को प्राप्त किया, वह भी बताता हूँ। आज चतुर्दशी है,

लक्ष्मीदत्तललितहस्तावलम्बया बकुलमालिकामेखलया कुसुमपल्लवग्रथिताभिरा-जानुलम्बिनीभिः कण्ठमालिकाभिर्निरन्तराच्छादितविग्रहया नवचूताङ्कुर-कर्णपूरया पुष्पासवपानमत्तया नन्दनवनदेवतया पारिजातकुसुममञ्जरी-मिमामादाय प्रणम्याभिहितः—'भगवन्सकलत्रिभुवनदर्शनाभिरामायास्तवा-कृतेरस्याः सदृशोऽयमलङ्कारः प्रसादीक्रियताम्। इयमवतंसविलासदुर्ललिता समारोप्यतां श्रवणशिखरम्। व्रजतु सफलतां जन्म पारिजातस्य'। इत्येव-मभिदधानां चायमात्मरूपस्तुतिवादत्रपावनमितविलोचनस्तामनादृत्यैव गन्तुं

आश्रयः यस्यै सा तया, बकुलमालिकामेखलया = बकुलस्य केसरपुष्पस्य मालिकाः माला (सैव) मेखला काञ्ची यस्याः तया, कुसुमपल्लवग्रथिताभिः = कुसुमैःपुष्पैः पल्लवैः किसलयैः (च) ग्रथिताभिः गुम्फिताभिः, आजानुलम्बिनीभिः = जानुपर्यन्तं लम्बमानाभिः, कण्ठमालिकाभिः = ग्रीवामालाभिः, निरन्तराच्छादितविग्रहया = निरन्तरम् आच्छा-दितः आवृतः विग्रहः शरीरं यस्याः तया, नवचूताङ्कुरकर्णपूरया = नवाः नूतना ये चूतस्य आम्रस्य अङ्कुराः कुड्मलाः तं एव कर्णपूराः श्रोत्रावतंसाः यस्याः तया, पुष्पासवपानमत्तया = पुष्पाणां कुसुमानाम् आसवस्य मधुनः पानेन मत्तया उन्माद-गतया, साक्षात् = स्वयं, नन्दनवनदेवतया = नन्दनवनस्य इन्द्रकाननस्य देवतया अधिष्ठातृदेव्या, इमाम् = एतां, पारिजातकुसुममञ्जरी = पारिजातपुष्पवल्लरीम् आदाय = गृहीत्वा, प्रणम्य = नमस्कृत्य, अभिहितः = उक्तः, असौ पुण्डरीकः इति शेषः—''भगवन् = श्रीमन्, सकलत्रिभुवनदर्शनाभिरामायाः = सकलस्य सम्पूर्णस्य त्रिभुवनस्य लोकत्रयस्य दर्शने वीक्षणे अभिरामायाः मनोहारिण्याः, अस्याः एतस्याः, तव = भवतः, आकृतेः = स्वरूपस्य, सदृशः = तुल्यः, अयं = मया उपायनीकृतः, अलङ्कारः = आभूषणं, प्रसादीक्रियतां = कृपापूर्वकं स्वीक्रियताम्। अवतंसविलासदुर्ललिता = अवतंसविलासेन भूषणविभ्रमेण दुर्ललिता धृष्टा, इयं = पुष्पमञ्जरी, श्रवणशिखरं = कर्णोपरि, समारोप्यताम् = संस्थाप्यताम्। (यतः) पारिजातस्य, जन्म = उत्पत्तिः, सफलतां = साफल्यं, व्रजतु = गच्छतु। इत्येवं = पूर्वोक्तप्रकारेण, अभिदधानां = कथयन्तीं, ताम् = नन्दनवनदेवीम्, अयं = पुण्डरीकः, च, आत्मरूपस्तुतिवादत्रपावनमितविलोचनः = आत्मरूपस्य स्वसौन्दर्यस्य स्तुतिवादः प्रशंसा तस्मात् या त्रपा लज्जा तया अवनमिते नम्रीकृते लोचने नयने येन तादृशः सन्, अनादृत्यैव = तिरस्कृत्य, एव, गन्तुं = चलितुं, प्रवृत्तः =

इसलिए यह, कैलाश पर स्थित भगवान् अम्बिकापति (शिव) की उपासना करने के लिये, देवलोक से मेरे साथ नंदनवन के समीप से आ रहा था, (इतने में) साक्षात् नन्दनवन की देवी ने, (जिसे) मधुमास की लक्ष्मी ने (अपने) कोमल करों का सहारा दे रखा था, (जो) केसरमाला की करधन पहने थी, (जिसने) पुष्पों तथा पल्लवों से गुम्फित घुटने तक लटकने वाली कण्ठ-मालाओं से निरन्तर

प्रवृत्तः। मया तु तामनुयान्तीमालोक्य 'को दोषः सखे क्रियतामस्याः प्रणयपरिग्रहः' इत्यभिधाय बलादियमनिच्छतोऽप्यस्य कर्णपूरीकृता। तदेतत्कार्त्स्न्येन योऽयं या चेयं, यथा चास्य श्रवणशिखरं समारूढा तत्सर्वमावेदितम्।

इत्युक्तवति तस्मिन स तपोधनयुवा किञ्चिदुपदर्शितस्मितो मामवादीत्—

व्यवसितः। ताम् = नन्दनवनदेवीम्, अनुयान्तीम् = अनुसरन्तीम्, आलोक्य = दृष्ट्वा, मया तु, "सखे ! = मित्र ! को दोषः = (मञ्जरीग्रहणे) का हानिः? अस्याः = वनदेवतायाः, परिणयपरिग्रहः = स्नेहःस्वीकारः, क्रियतां = विधीयताम् (प्रेमोपहारः स्वीक्रियताम् इति भावः)" इति = एवम्, अभिधाय = उक्त्वा, इयम् = कुसुममञ्जरी, अनिच्छतः = अनभिलषतः, अपि, अस्य = पुण्डरीकस्य, बलात् = हठात्, कर्णपूरीकृता = कर्णावतंसीकृता। तद् = तस्मात् हेतोः एतत् = जिज्ञास्यम् इदं वृत्तं, कार्त्स्न्येन = साकल्येन, योऽयं = यः एषः (तपोधनयुवा) इयं च = एषा (कुसुममञ्जरी) च, या, यथा च = येन विधिना च, अस्य = पुण्डरीकस्य, श्रवणशिखरं = कर्णाग्रभागं, समारूढा = समारुह्य स्थिता, तत् सर्वम् = तदखिलम्, आवेदितम् = निवेदितम् मया इतिशेष।

तस्मिन् = पुण्डरीकसहचरे, इति = इत्थम्, उक्तवति = वदति (सति), सः तपोधनयुवा = पुण्डरीकः, किञ्चित् = ईषत्, उपदर्शितस्मितः = उपदर्शितं प्रकटितं स्मितं येन तथाभूतः (सन्), माम् = महाश्वेताम्, अवादीत् = अवोचत्

(अपने) शरीर को आच्छादित कर रखा था, जो आम्र के नये अंकुर (और) का कर्ण-भूषण पहने थी तथा जो पुष्पासव (पुष्परस) के पान से मत्त थी, बाहर आकर पारिजात-कुसुम की इस मञ्जरी को लिए हुए इससे प्रणामपूर्वक कहा—भगवन्! समस्त त्रिभुवन की दृष्टि में सुन्दर आपकी इस आकृति के अनुरूप यह अलङ्कार है, (इसलिए) इसे अनुग्रह-पूर्वक ग्रहण करिये। आभूषण के विलास से दुर्ललित (सिरचढ़ी) इसको (अपने) कान के ऊपर धारण कीजिए। (जिससे) पारिजात का जन्म सार्थकता को प्राप्त कर ले (अर्थात् सार्थक हो जाय)। अपने सौन्दर्य की प्रशंसा के कारण लज्जा से उसकी आँखें झुक गईं और वह इस प्रकार कहती हुई वनदेवी का अनादर करके ही चल पड़ा। अनुगमन करती हुई उसे (वन-देवी को) देखकर मैंने कहा—'मित्र! (मञ्जरी को ले लेने में) क्या दोष है? इसके प्रमोपहार को स्वीकार करिये?', इस प्रकार कहकर इसके न चाहने पर भी (इस मञ्जरी को) मैंने बलपूर्वक इसके कर्ण का आभूषण बना दिया! अत एव यह जो है, यह मञ्जरी जैसी है और जैसे यह इसके कर्ण-भाग पर समारूढ़ हुई (इसके कान का आभूषण बनी), यह सब मैंने पूर्ण-रूप से निवेदन कर दिया।

इस प्रकार उसके कहने पर उस तपस्वी युवक ने कुछ मुस्कराते हुए मुझ

'अयि कुतूहलिनि, किमनेन प्रश्नायासेन। यदि रुचितसुरभिपरिमला गृह्यतामियम्' इत्युक्त्वा समुपसृत्यात्मीयाच्छ्रवणादपनीय कलैरलिकुलक्वणितैः प्रारब्धरतिसमागमप्रार्थनामिव मदीये श्रवणपुटे तामकरोत्। मम तु तत्करतलस्पर्शलोभेन तत्क्षणमपरमिव पारिजातकुसुममवतंसस्थाने पुलकमासीत्। स च मत्कपोलस्पर्शसुखेन तरलीकृताङ्गुलिजालकात्करतलादक्षमालां लज्जया सह गलितामपि नाज्ञासीत्। अथाहं तामसंप्राप्तामेव भूतलमक्षमालां गृहीत्वा

—"अयि कुतूहलिनि ! = कौतूहलवति ! अनेन = एतेन, प्रश्नायासेन = प्रश्नस्य परिश्रमेणा, किम् ? यदि = चेत, इयं = मम कुसुममञ्जरी, रुचितसुरभिपरिमला = रुचितः रुचिविषयीभूतः सुरभि-परिमलः मनोहरसौरभं यस्याः तथाभूता, गृह्यतां = स्वीक्रियताम् , इयम् इतिशेषः, इत्युक्त्वा = एवमभिधाय, समुपसृत्य = माम् उपगत्य, आत्मीयात् = स्वीयात् , श्रवणात् = श्रोत्रात् , अपनीय = अपसार्य, कलैः = अव्यक्तमधुरैः, अलिकुलक्वणितैः = अलिकुलस्य भ्रमरसमूहस्य क्वणितैः गुञ्जितैः, प्रारब्धरतिसमागमप्रार्थनामिव = प्रारब्धा समारब्धा रतिसमागमस्य सम्भोगसंसर्गस्य प्रार्थना याच्ञा यया ताम् , इव (सती), तां = कुसुममञ्जरीं, मदीये = मामकीने, श्रवणपुटे = कर्णपुटे, अकरोत् = कृतवान् (परिधापितवान् इति भावः)। क्रियोत्प्रेक्षा। तत्करतलस्पर्शलोभेन = तस्य तपोधनयुवकस्य करतलस्पर्शस्य पाणिपल्लवाश्लेषस्य लोभेन तृष्णया, तत्क्षणं = तदानी, ममतु = महाश्वेतायाः तु अवतंसस्थाने = अवतंसः कर्णालङ्कारः तस्य स्थानेभागे (कर्ण प्रान्ते), अपरं = द्वितीयं, पारिजातकुसुममिव = पारिजातपुष्पम् , इव, पुलकं = रोमाञ्चः, आसीत् = प्रादुरभूत् । (द्रव्योत्प्रेक्षा)। सः च = मुनिकुमारः च, मत्कपोलस्पर्शसुखेन = मम महाश्वेतायाः कपोलस्य स्पर्शसुखेन आश्लेषानन्देन, तरलीकृताङ्गुलिजालकात् = तरलीकृतं कम्पितं अङ्गुलिजालकम् अङ्गुलिसमूहः यस्य तस्मात् , करतलात् = हस्तात् , लज्जया = त्रपया, सह = सार्धं, गलितां = स्रस्ताम्, अक्षमालामपि = जपमालिकाम् , अपि, नाज्ञासीत् = न ज्ञातवान्. (सहोक्तिः)। अथ = अनन्तरम् , अहं = महाश्वेता, भूतलं = धरातलम् , असम्प्राप्तामेव = अपतिताम् . एव, ताम् = पुण्डरीक हस्तात् विच्युताम् , अक्षमालां = जपमालां

से कहा—'ओ कुतूहल भरी राजकन्ये ! प्रश्न (करने) के इस परिश्रम से क्या मतलब ? यदि इसकी सुगन्ध तुम्हें रुच गई है, तो इसे ले लो। यह कहकर एवं (मेरे समीप आकर उसने उस कुसुम-मञ्जरी को अपने कान से उतार कर मेरे कान में पहना दिया। (अपने समीपवर्ती) मधुकर-समूह के मधुर गुञ्जन से मानो वह (मञ्जरी) रति-समागम के लिये प्रार्थना कर रही थी। उसके करतल स्पर्श के लोभ से उस समय मेरे कर्णभूषण के स्थान में, मानो दूसरे पारिजातपुष्प की भाँति, रोमांच हो आया। मेरे कपोल-स्पर्श के सुख से उसके हाथ की अँगुलियाँ

सलीलं तद्भुजपाशसंदानितकण्ठग्रहसुखमिवानुभवन्ती दर्शितापूर्वहारलतालीलां कण्ठाभरणतामनयम्।

इत्थंभूते च व्यतिकरे छत्रग्राहिणी मामवोचत्—'भर्तृदारिके स्नाता देवी। प्रत्यासीदति गृहगमनकालः। तत्क्रियतां मज्जनविधिः' इति। अहं तु तेन तस्या वचनेन नवग्रहा करिणीव प्रथमाङ्कुशपातेनानिच्छया कथंकथमपि समाकृष्यमाणा तन्मुखाल्लावण्यामृतपङ्कमग्नामिव कपोलपुलककण्टकजाल-

---

गृहीत्वा = आदाय, तद्भुजपाशसंदानितकण्ठग्रहसुखम् = तस्य पुण्डरीकस्य भुजपाशेन बाहुपाशेन संदानितः संयतः यः कण्ठः तस्य ग्रहणसुखम् आलिङ्गनसुखम्, अनुभवन्ती = साक्षात्कुर्वन्ती, इव (क्रियोत्प्रेक्षा) दर्शितापूर्वहारलतालीलां = दर्शिता प्रकटिता अपूर्वहारलतायाः अनुपममुक्तावल्याः लीला शोभा यया तादृशीम् (अक्षमालाम्), कण्ठाभरणताम् = कण्ठालङ्कारताम्, अनयम् = नीतवती।

इत्थम्भूते = एतादृशे, व्यतिकरे = परस्परानुरागरूपसम्बन्धे जाते, छत्रग्राहिणी = आतपत्रधारिणी (सेविका), माम् = महाश्वेताम्, अवोचत् = अवादीत्—भर्तृदारिके ! = राजकुमारि !, देवी = भवत्याः माता, स्नाता = स्नानं कृतवती। गृहगमनकालः = भवनगमनसमयः, प्रत्यासीदति = आसन्नः भवति। तत् = तस्मात्, मज्जनविधिः = स्नानकर्म, क्रियतां = विधीयताम्।' अहं तु = महाश्वेता तु, तस्याः = छत्रधारिण्याः, तेन = पूर्वोक्तेन, वचनेन = निवेदनेन, प्रथमाङ्कुशपातेन = प्रथमः आद्यः यः अङ्कुशस्य सृणेः पातः प्रहारः तेन, नवग्रहा = नवः नूतनः ग्रहः ग्रहणं (बन्धने आनयनं) यस्याः सा तथाभूता, करिणीव = हस्तिनी, इव (उपमा) अनिच्छया = अनीहया, कथंकथमपि = महताकष्टेन समाकृष्यमाणा = आकृष्य नीयमाना—'हस्तिमाकृष्य स्नातुमुदचलम्' इति वाक्यम्। अथ दृष्टिं विशेषयति—लावण्यामृतपङ्कमग्नामिव = लावण्यं सौन्दर्यम् एव अमृतं सुधा तस्य पङ्के कर्दमे मग्नां लीनाम्, इव, (रूपकं क्रियोत्प्रेक्षा च) कपोलपुलककण्टकजालकलग्नामिव = कपोलयोः गण्डस्थलयोः पुलकाः रोमाञ्चाः एव कण्टकाः

कांपने लगीं और हाथ से लज्जा के साथ गिरी हुई जपमाला को भी वह न जान सका। तत्पश्चात् वह माला पृथिवी पर पहुँची भी न थी कि उसे लेकर मैंने लीला के साथ अपने गले का हार बना लिया, जहाँ वह हार के असाधारण सौन्दर्य का प्रदर्शन करने लगी। (उस समय) जैसे मैं उसके भुज-पाश से आबद्ध कण्ठालिङ्गन के सुख की तरह आनन्द का अनुभव कर रही थी।

इस प्रकार की (परस्परानुरागरूप) घटना हो जाने पर छत्र-ग्राहिणी (परिचारिका) ने मुझसे कहा—'राजकुमारी ! देवी स्नान कर चुकीं। घर जाने का समय बीत रहा है। अतः (अब आप भी) स्नान-क्रिया कीजिये।' उसके उस वचन से, अंकुश के प्रथम प्रहार से नये बन्धन में पड़ी हस्तिनी की भाँति, अनिच्छापूर्वक

कलग्नामिव मदनशरशलाकाकीलितामिव सौभाग्यगुणस्यूतामिवातिकृच्छ्रेण दृष्टिमाकृष्य स्नातुमुदचलम्। उच्चलितायां च मयि द्वितीयो मुनिदारकस्तथाविधं तस्य धैर्यस्खलितमालोक्य किंचित्प्रकटितप्रणयकोप इवावादीत्—

'सखे पुण्डरीक! नैतदनुरूपं भवतः। क्षुद्रजनक्षुण्ण एष मार्गः। धैर्यधना हि साधवः। किं यः कश्चित्प्राकृत इव विक्लवीभवन्तमात्मानं न रुणत्सि।

तेषां जालके जाले लग्नां संसक्ताम्, इव (रूपकं क्रियोत्प्रेक्षा च), मदनशरशलाकाकीलितामिव = मदनस्य कामस्य शराः बाणाः तेषां शलाकाः ईषिकाः ताभिः कीलितां विद्धाम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), **सौभाग्यगुणस्यूतामिवः** = सौभाग्यम् एव गुणः तन्तुः तेन स्यूताम् अन्योन्यश्लिष्टाम्, इव (रूपकं क्रियोत्प्रेक्षा च) दृष्टिम् = नेत्रम्, **अतिकृच्छ्रेण** = महता कष्टेन, **तन्मुखात्** = पुण्डरीकवदनात् आकृष्य = हठात् परावर्त्य, **स्नातुम्** = मज्जितुम्, **उदचलम्** = उदगच्छम्। च = किञ्च, मयि = महाश्वेतायाम्, **उच्चलितायां** = प्रस्थितायां, **द्वितीयः** = अपरः मुनिदारकः = मुनिकुमारः, **तस्य** = पुण्डरीकस्य, **तथाविधं** = तादृशं, **धैर्यस्खलितम्** = कामविकारेण धैर्यस्खलनम् (अधीरताम् इति यावत्), **अवलोक्य** = दृष्ट्वा, **किञ्चित्प्रकटितप्रणयकोपः** = किञ्चित् ईषत् प्रकटितः दर्शितः प्रणयकोपः स्नेहकोपः येन सः, इव, अवादीत् = अवोचत्—

"सखे! = मित्र, पुण्डरीक!, **एतत्** = भवता क्रियमाणं गर्हितं कर्म, **भवतः** = भवादृशस्य तपस्विजनस्य, **अनुरूपं** = सदृशं, न = नहि अस्ति। **एषमार्गः** = अयं पन्थाः, **क्षुद्रजनक्षुण्णः** = नीचैः आचरितः। हि = यतः, साधवः = सज्जनाः, **धैर्यधनाः** = धैर्यं स्थैर्यम् एव धनं येषां ते तादृशाः भवन्ति। किं = कथं, यः कश्चित्, **प्राकृत इव** = साधारणः मनुष्यः इव, **विक्लवीभवन्तम्** = कामेन व्यग्रीभवन्तम्, **आत्मानं** = स्वं, **न रुणत्सि** = निरुद्धं न करोषि। अद्य, कुतः = कस्मात्, तव =

अति कष्ट के साथ समाकृष्ट होती हुई (मुँड़ती हुई) मैं अति क्लेश से उसके मुख-मण्डल से (अपनी) दृष्टि को हटाकर स्नान के लिये चल पड़ी! (उस समय) मेरी दृष्टि मानो (उसके मुखके) लावण्यरूपी अमृतपङ्क में फँस गई थी, (या) कपोलों के रोमांचरूपी कण्टक-जाल में जैसे उलझी हुई थी, (या) काम-बाण की शलाका (सलाई) से जैसे कीलित की गई थी (या) सौभाग्य रूपी सूत्र से मानो सिल गई थी। मेरे चले जाने पर उसके इस प्रकार के धैर्य-स्खलन को देखकर दूसरा मुनिकुमार कुछ प्रणय-कोप सा दिखाता हुआ बोला।

'मित्र पुण्डरीक! यह (आचरण) आपके योग्य नहीं है। यह मार्ग क्षुद्र लोगों द्वारा आचरित है? सज्जन धैर्य के धनी होते हैं। तुम जिस किसी साधारण मनुष्य की भाँति व्यग्र होते हुये आत्मा (अपने) को क्यों नहीं रोकते? आज कहाँ से

कुतस्तवापूर्वोऽयमद्येन्द्रियोपप्लवो येनास्येवं कृतः। क्व ते तद्धैर्यम्। क्वासाविन्द्रियजयः। क्व तद्वशित्वं चेतसः। क्व सा प्रशान्तिः। क्व तत्कुलक्रमागतं ब्रह्मचर्यम्। क्व सा सर्वविषयनिरुत्सुकता। क्व ते गुरूपदेशाः। क्व तानि श्रुतानि। क्व ता वैराग्यबुद्धयः। क्व तदुपभोगविद्वेषित्वम्। क्व सा सुखपराङ्मुखता। क्वासौ तपस्यभिनिवेशः। क्व सा भोगानामुपर्यरुचिः। क्व तद्यौवनानुशासनम्। सर्वथा निष्फला प्रज्ञा, निर्गुणो धर्मशास्त्राभ्यासः, निरर्थकः

भवतः, अयम् = एषः, अपूर्वः = अननुभूतः. इन्द्रियोपप्लवः = इन्द्रियाणां करणानाम् उपप्लवः उपद्रवः, जातः इति शेषः, येन = उपद्रवेण, एवं कृतः = इत्थं व्यग्रतां नीतः असि = भवसि। ते = तव, तत् = प्रसिद्धं, धैर्यं = स्थैर्यं, क्व = कुत्र, गतमिति शेषः ? एवं सर्वत्र बोध्यम्। असौ = पूर्वम् अवलोकितः (ते) इन्द्रियजयः = इन्द्रियाणां करणानां जयः निरोधः, क्व ? चेतसः = चित्तस्य, तत् = प्रशस्यं, वशित्वं = स्वतन्त्रत्वं क्व ? सा प्रशान्तिः = प्रकृष्टा शान्तिः क्व ? तत्, कुलक्रमागतं = वंशपरम्पराप्राप्तं, ब्रह्मचर्यं क्व ? सा = पूर्वकालीना, सर्वविषयनिरुत्सुकता = सर्वेषु विषयेषु इन्द्रियार्थेषु निरुत्सुकता उदासीनता क्व ? ते = तव, गुरूपदेशाः = गुरुशिक्षावचनानि क्व ? तानि श्रुतानि = शास्त्रज्ञानानि क्व ? ताः वैराग्यबुद्धयः = विरक्ततामतयः क्व ? तत् उपभोगविद्वेषित्वं = उपभोगः विषयसेवनं तस्मिन् विद्वेषित्वं वैरित्वं क्व ? सा सुखपराङ्मुखता = सुखात् लौकिकसुखेभ्यः पराङ्मुखता विमुखता क्व ? तपसि = तपश्चर्यायाम्, असौ, अभिनिवेशः = आग्रहः क्व ? भोगानाम् = विषयाणाम्, उपरि, सा, अरुचिः = अस्पृहा क्व ? तत् यौवनानुशासनं = तारुण्यनियन्त्रणं क्व ? प्रज्ञा = प्रतिभा, सर्वथा = सर्वप्रकारेण, निष्प्रयोजना (जाता इति शेषः, एवं सर्वत्र बोध्यम्), धर्मशास्त्राभ्यासः = धर्मशास्त्रानुशीलनं, निर्गुणः = विवेकादिगुणहीनः, संस्कारः = शिक्षाजनित-चित्तशुद्धिः निरर्थकः = निष्प्रयोजनः।

तुम में यह अपूर्व इन्द्रियों का उपद्रव (उत्पन्न) हो गया, जिसके द्वारा (तुम) ऐसे बना दिये गये ? तुम्हारा वह धैर्य कहाँ गया ? (वह) इन्द्रिय-निरोध कहाँ चला गया ? चित्त को वश में रखने की वह शक्ति कहाँ गई ? वह प्रशान्ति कहाँ गई ? वंशपरम्परा से प्राप्त वह ब्रह्मचर्य कहाँ गया ? वह समस्त विषयों के प्रति निरुत्सुकता (उदासीनता) कहाँ गई ? गुरु के वे उपदेश कहाँ गये ? वे (सब) शास्त्र-ज्ञान कहाँ गये ? वह वैराग्य-बुद्धि कहाँ गई ? उपभोगों के प्रति वह विद्वेषभाव कहाँ गया ? सुख के प्रति विमुखता कहाँ गई। तपस्या में रहने वाला तुम्हारा आग्रह कहाँ गया ? भोगों के प्रति निःस्पृह भावना कहाँ गई ? यौवन पर वह अनुशासन (नियन्त्रण) कहाँ चला गया ? (तुम्हारी) बुद्धि सर्वथा निष्फल हो गई। धर्मशास्त्रों का अभ्यास गुणहीन (अर्थात् उचित अनुचित के विवेक से रहित) सिद्ध हुआ। संस्कार व्यर्थ हो गये। गुरुओं के उपदेशों से प्राप्त विवेक निरर्थक हो गया। जाग-

संस्कारः, निरुपकारको गुरूपदेशविवेकः, निष्प्रयोजना प्रबुद्धता, निष्कारणं ज्ञानम्, यदत्र भवादृशा अपि रागाभिषङ्गैः कलुषीक्रियन्ते प्रमादैश्चाभिभूयन्ते। कथं करतलाद्गलितामपहृतामक्षमालामपि न लक्षयसि। अहो विगतचेतनत्वम्। अपहृता नामेयम्। इदमपि तावदपह्रियमाणमनयानार्यया निवार्यतां हृदयम्।'

इत्येवमभिधीयमानश्च तेन किंचिदुपजातलज्ज इव प्रत्यवादीत्—'सखे कपिञ्जल! किं मामन्यथा संभावयसि। नाहमेवमस्या दुर्विनीतकन्यकाया

गुरूपदेशविवेकः = गुरूणाम् उपदेशैः यः विवेकः सदसद् विचारशक्तिः,=निरुपकारकः निरर्थकः, प्रबुद्धता = जागरूकता, निष्प्रयोजना = अफला, ज्ञानं = बोधः, निष्कारणं = निर्हेतुकं, निष्फलमिति यावत, यद् = हेत्वर्थे, अत्र = अस्मिन विषये, भवादृशा अपि = त्वत्सदृशाः महापुरुषाः अपि, रागाभिषङ्गैः = रागः विषयाभिलाषः तत्र अभिषङ्गैः आसक्तिभिः. कलुषीक्रियन्ते = मालिनीक्रियन्ते, प्रमादैः = अनवधानताभिः च, अभिभूयन्ते = पराभूयन्ते। करतलात् = पाणितलात् गलिताम् = स्खलिताम्, अपहृताम् = तया कन्यकया गृहीताम्, अक्षमालामपि = जपमालाम्, अपि, कथं = कस्मात्, न लक्षयसि = न जानासि। अहो! = आश्चर्यं, विगतचेतनत्वं = तव संज्ञा रहितत्वम्, इयम् = अक्षमाला, अपहृता = कन्यकयागृहीतानाम। (सम्प्रति) अनया = पुरः दृश्यमानया, अनार्यया = दुष्टया, अपह्रियमाणम् = बलात् नीयमानम्, इदं = व्याकुलितं, हृदयमपि = चित्तमपि, तावत् निवार्यताम् निषिध्यताम्।

इत्येवं = पूर्वोक्तविधिना, तेन = पुण्डरीकसहचरेण कपिञ्जलेन, अभिधीयमानः = उच्यमानः, किञ्चिदुपजातलज्ज इव = किञ्चित् ईषत् उपजाता आविर्भूता लज्जा त्रपा यस्य सः, इव. अवादीत् = प्रत्युवाच—''सखे! = मित्र! कपिञ्जल! किं = कथं, माम्, अन्यथा = कन्यकानुरक्तं, सम्भावयसि = सम्भावनां करोषि। अहं (पुण्डरीकः), एवम् = इत्थम्, अस्याः = एतस्याः, दुर्विनीतकन्यकायाः = धृष्ट-

---

रूकता निष्प्रयोजन हो गई। ज्ञान निष्फल हो गया। जब आप सरीखे महापुरुष भी इस विषय में विषयासक्ति से मलिन तथा प्रमादों से पराभूत होने लगे। हाथ से गिरी हुई तथा (दूसरे के द्वारा) अपहृत अक्षमाला को भी तुम क्यों नहीं जान पा रहे हो? आश्चर्य है! तुम्हारी इस निश्चेतनता (संज्ञाहीनता) पर! (अस्तु), जपमाला तो अपहृत (ही) हो गई, अब इस दुष्टा के द्वारा हरे जाते हुए अपने हृदय को तो रोको!

इस प्रकार उसके द्वारा कहे जाने पर, कुछ लज्जित-सा होता हुआ वह (पुण्डरीक) बोला—'मित्र कपिंजल! (तुम) मेरे विषय में अन्यथा सभावना क्यों कर रहे हो? मैं इस प्रकार इस दुर्विनीत कन्या के अक्षमाला ले लेने के इस

मर्षयाम्यक्षमालाग्रहणापराधमिमम् ।' इत्यभिधायालीककोपकान्तेन प्रयत्नविरचितभीषणभ्रुकुटिभूषणेन चुम्बनाभिलाषस्फुरिताधरेण मुखेन्दुना मामवदत्—'चञ्चले, प्रदेशादस्मादिमामक्षमालामदत्त्वा पदात्पदमपि न गन्तव्यम्' इति । तच्च श्रुत्वाहमात्मकण्ठादुन्मुच्य मकरध्वजलास्यारम्भलीलापुष्पाञ्जलिमेकावलीं 'भगवन्गृह्यतामक्षमाला' इति मन्मुखासक्तदृष्टेः शून्यहृदयस्यास्य प्रसारिते पाणौ निधाय स्वेदसलिलस्नातापि पुनः स्नातुमवातरम् । उत्थाय च कथमपि प्रयत्नेन निम्नगेव प्रतीपं नीयमाना सखीजनेन बलादस्वया

बालायाः, इमम् = अमर्षणीयम्, अक्षमालाग्रहणापराधम् = अक्षमालायाः जपमालायाः ग्रहणरूपम् अपराधं न मर्षयामि = न सहिष्ये ।" इत्यभिधाय = एवमुक्त्वा, अलीककोपकान्तेन = अलीकेनकृत्रिमेण कोपेन क्रोधेन कान्तः मनोहरः तेन, प्रयत्नविरचितभीषणभ्रुकुटिभूषणेन = प्रयत्नेन आयासेन विरचिता निर्मिता भीषणा भयजनिका भ्रुकुटिः एव भूषणम् अलङ्करणं यस्य तेन, चुम्बनाभिलाषस्फुरिताधरेण= चुम्बनाभिलाषेण चुम्बनेच्छया: स्फुरितः कम्पितः अधरः ओष्ठः यस्मिन् तादृशेन, मुखेन्दुना=मुखचन्द्रेण (लुप्तोपमा), माम्=महाश्वेताम्, अवदत्=अवोचत्—"चञ्चले != चपले !, इमाम = त्वया गृहीताम्, अक्षमालाम् = मे जपमालिकाम्, अदत्वा = असमर्प्य. अस्मात् प्रदेशात् = एतस्मात् स्थानात्, पदात् पदमपि = एकपदमपि, न गन्तव्यं = न गमनीयम् । तच्चश्रुत्वा = तत् आकर्ण्य, अहं = महाश्वेता, आत्मकण्ठात् = स्वकण्ठात्, उन्मुच्य = निःसार्य, मकरध्वजलास्यारम्भलीलापुष्पाञ्जलिं = मकरध्वजः कन्दर्पः तस्य यः लास्यारम्भः नृत्यारम्भः तत्र, लीलापुष्पाञ्जलिं क्रीडासुमनाञ्जलिं तद्रूपाम्, एकावलीं = स्वीयम् एकपङ्क्तिकं हारं, "भगवन् != महानुभाव ! अक्षमाला, गृह्यताम् – उपादीयताम्", इति = एवम् उक्त्वा, मन्मुखासक्तदृष्टेः = मन्मुखे ममवदने आसक्ता निबद्धा दृष्टिः यस्य तस्य, (तथा) शून्यहृदयस्य = शून्यं हृदयं मनः यस्य (तथाभूतस्य), अस्य = पुण्डरीकस्य, प्रसारिते = विस्तारिते, पाणौ = करे, निधाय = स्थापयित्वा, स्वेदसलिलस्नातापि = स्वेदसलिलेन घर्मवारिणा स्नाता कृतस्नाना, अपि, पुनः = भूयः, स्नातुम् = स्नानं विधातुम्, अवातरम् = अवतीर्णवती, अहम् इति शेषः । उत्थाय = उत्थानं कृत्वा (सरोवरात् निःसृत्य इति भावः), प्रयत्नेन = आयासेन, प्रतीपं = प्रतिकूलदिशं, नीयमाना = प्राप्यमाणा, निम्नगेव = नदी इव, (उपमा) सखीजनेन = वयस्यावृन्देन, कथमपि = येन केनापि प्रकारेण, बलात् = हठात्, (प्रतीपम् = इच्छाविरुद्धं नीयमाना) अस्वया

अपराध को क्षमा नहीं करूँगा ।'' इतना कह कर, मिथ्या क्रोध से सुन्दर, प्रयत्न पूर्वक बनाई गई भयङ्कर भ्रुकुटि से अलंकृत और चुम्बन की अभिलाषा से फड़कते हुये अधरों वाले मुख-चन्द्र से उसने मुझसे कहा—'चंचले ! मेरी इस जपमाला को

सह तमेव चिन्तयन्ती स्वभवनमयासिषम्। गत्वा च प्रविश्य कन्यान्तःपुरं ततः प्रभृति तद्विरहविधुरा किमागतास्मि, किं तत्रैव स्थितास्मि, किमेकाकिन्यस्मि' किं परिवृत्तास्मि, किं तूष्णीमस्मि, किं प्रस्तुतालापास्मि, किं जागर्मि, किं सुप्तास्मि, किं, रोदिमि, किं न रोदिमि, किं दुःखमिदम्, किं सुखमिदम्, किमुत्कण्ठेयम्, किं व्याधिरयम्, किं व्यसनमिदम्, किमुत्सवोऽयम्, किं दिवस एषः, किं निशेयम्, कानि रम्याणि, कान्यरम्याणीति सर्वं नावागच्छम्। अविज्ञातमदनवृत्तान्ता च क गच्छामि किं करोमि किं शृणोमि किं पश्यामि किमालपामि कस्य कथयामि

सह = मया सम, तमेव = मुनिकुमारकमेव, चिन्तयन्ती = स्मरन्ती, स्वभवनम् = स्वगेहम्, अयासिषम् = आगतवती। गत्वा च = यात्वा च, कन्यान्तःपुरं = कन्यावरोधं, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा, ततः प्रभृति = तत्कालात् आरभ्य, तद्विरह-विधुरा = तस्य पुण्डरीकस्य विरहेण वियोगेन विधुरा विकला (सती), किम्, आगतास्मि = गृहं प्राप्तास्मि, किं, तत्रैव = अच्छोदसरसः तीरे, एव, स्थिता = विद्यमाना अस्मि, किम्, एकाकिनी = असहाया अस्मि, किं, परिवृत्ता = (वय-स्याभिः) परिवेष्टिता अस्मि, किं, तूष्णीम् = मौनम्, अस्मि, किं, प्रस्तुतालापा = (सखीभिः सह) प्रस्तुतः विहितः आलापः सम्भाषणं यया तथाभूता, अस्मि, किं, जागर्मि = जागरणं करोमि, किं, सुप्ता = निद्रिता, अस्मि, किं, रोदिमि = विलपामि, किं न रोदिमि, किम्, इदं, दुःखं = कष्टं, किम्, इदं, सुखम् = आनन्दं, किम्, इयम्, उत्कण्ठा = औत्सुक्यं, किम्, अयं, व्याधिः = रोगः, किम्, इदं, व्यसनं = विपत्तिः, किम्, अयम्, उत्सवः = समारोहः, किम्, एषः, दिवसः = दिनं, किम्, इयम्, निशा = रात्रिः, कानि, रम्याणि = सुन्दराणि, कानि, अरम्याणि = असुन्द-राणि, इति सर्वं, न अवागच्छम् = न ज्ञातवती। अविज्ञातमदनवृत्तान्ता = अविज्ञातः अविदितः मदनस्य कामस्य वृत्तान्तः प्रवृत्तिः यया तादृशी, च, क्व = कुत्र, गच्छामि= व्रजामि, किं, करोमि = आचरामि, किं, शृणोमि = आकर्णयामि, किं, पश्यामि = अवलोकयामि, किम्, आलपामि = ब्रवीमि, कस्य = जनस्य, 'कं जनम् इति यावत्',

---

दिए बिना यहाँ से एक पग भी न जाना।' यह सुनकर मैंने, कामदेव के नृत्यारम्भ के अवसर पर (दी जाने वाली) पुष्पांजलि के समान एकावली को अपने गले से उतार कर, 'भगवन्! लीजिए (अपनी) अक्षमाला' यह कहते हुये, मेरे मुख पर आसक्त दृष्टि तथा शून्य हृदय वाले उस मुनि के फैलाये हुये हाथ में रख दिया। (यद्यपि) मैं (एक तरह से) स्वेदजल से स्नान-सा कर चुकी थी, फिर भी पुनः स्नान करने के लिए उतर पड़ी। (स्नान से) उठकर किसी प्रकार, प्रयत्न पूर्वक उलटी दिशा की ओर ले जाई जाती हुई नदी के समान, सखियों द्वारा (प्रतिकूल

कोऽस्य प्रतीकार इति सर्वं च नाज्ञासिषम्। केवलमारुह्य कुमारीपुरप्रासादं विसर्ज्य च सखीजनं द्वारि निवारिताशेषपरिजनप्रवेशा, सर्वव्यापारानुत्सृज्यैकाकिनी मणिजालगवाक्षनिक्षिप्तमुखी, तामेव दिशं तत्सनाथतया प्रसाधितामिव कुसुमितामिव महारत्ननिधानाधिष्ठितामिवामृतरससागरपूरप्लावितामिव पूर्णचन्द्रोदयालंकृतामिव दर्शनसुभगामीक्षमाणा, तस्माद्दिगन्तरादागच्छन्त-

---

कथयामि = वदामि, अस्य = दुःखस्य, कः, प्रतीकारः = प्रतिक्रिया, इति सर्वं च = एतत् अखिलं च, न, अज्ञासिषम् = ज्ञातवती। केवलम् = अन्यनिरपेक्षं, कुमारीपुरप्रासादम् = कुमारीणां कन्यकानां पुरस्य अन्तःपुरस्य प्रासादं भवनम्, आरुह्य = आरोहणं कृत्वा, सखीजनं = वयस्यावर्गं च, विसर्ज्य = दूरीकृत्य, द्वारि = प्रतोल्यां, निवारिताशेषजनप्रवेशा = निवारितः प्रतिषिद्धः अशेषाणाम् अखिलानां परिजनानां सेवकानां प्रवेशः आगमनं यया सा, सर्वव्यापारान् = समस्तकृत्यानि, उत्सृज्य = त्यक्त्वा, एकाकिनी = अद्वितीया, मणिजालगवाक्षनिक्षिप्तमुखी = मणिजालानि मणिनिर्मितानि जालानि यस्मिन् एवम्भूते गवाक्षे वातायने निक्षिप्तं न्यस्तं मुखं वदनं यया तथाभूता, (अहं तामेव दिशमीक्षमाणा—इति सम्बन्धः) अथ दिशं विशेषयति—तत्सनाथतया = तेन मुनिकुमारेण सनाथतया सहिततया, प्रसाधितामिव = सुसज्जिताम्, इव, (अत्र क्रियोत्प्रेक्षा, एवम् अग्रे अपि), कुसुमितामिव = पुष्पिताम्, इव, महारत्ननिधानाधिष्ठितामिव = महान्ति बहुमूल्यवन्ति रत्नानि मणयः यत्र तथोक्तेन निधानेन निधिना अधिष्ठितामिव आश्रिताम्, इव, अमृतरससागरपूरप्लावितामिव = अमृतरसस्य यः सागरः उदधिः तस्य पूरेण प्लवेन प्लावितामिव आकीर्णाम्, इव, पूर्णचन्द्रोदयोलङ्कृतामिव = पूर्णचन्द्रस्य राकेशस्य उदयेन अलङ्कृतामिव विभूषिताम्, इव, दर्शनसुभगाम् = दर्शने अवलोकने सुभगां मनोहरां, तामेव = पुण्डरीकेण अलङ्कृताम् एव, दिशम् = दिशाम्, ईक्षमाणा = पश्यन्ती,—'निष्पन्दमतिष्ठन्' इति दूरस्थक्रियापदेन अन्वयः। तस्मात् = पुण्डरीकाधिष्ठितात्, दिगन्तरात् = प्रदेशात्, आग-

---

दिशा की ओर) बलपूर्वक ले जाई जाती हुई मैं, उसका (मुनिकुमार का) ध्यान करती हुई, माता जी के साथ, अपने घर आई। (घर) पहुँच कर (तथा) कन्याओं के अन्तःपुर में प्रवेश कर तभी से उसके विरह में व्याकुल मैं यह सब कुछ न जान सकी कि 'मैं क्या आ गई हूँ या वहीं खड़ी हूँ, अकेली हूँ, या (सखियों से) घिरी हूँ, चुप हूँ, या बोलने के लिये प्रस्तुत हूँ, जाग रही हूँ, या सो रही हूँ, रो रही हूँ, या नहीं रो रही हूँ, यह दुःख है कि सुख है, यह उत्कण्ठा है या व्याधि है, यह विपत्ति है कि उत्सव है, यह दिन है कि रात है, क्या सुन्दर है, क्या असुन्दर है।' मदन के वृत्तान्त से मैं अपरिचित थी (इसलिए) यह भी समझ में न

मनिलमपि वनकुसुमपरिमलमपि शकुनिध्वनिमपि तद्वार्तां प्रष्टुमीहमाना, तद्वल्लभतया तपःक्लेशायापि स्पृहयन्ती, तत्प्रीत्येव गृहीतमौनव्रता, स्मरजनितपक्षपाता च तत्परिग्रहान्मुनिवेषस्याग्राम्यतां तदास्पदतया यौवनस्य चारुतां तच्छ्रवणसम्पर्कात्पारिजातकुसुमस्य मनोहरतां तन्निवासात्सुरलोकस्य रम्यतां तद्रूपसंपदा कुसुमायुधस्य दुर्जयतामध्यारोपयन्ती, दूरस्थस्यापि कमलि-

च्छन्तम् =आयान्तम् , अनिलमपि =वायुम् , अपि, वनकुसुमपरिमलमपि = अरण्यपुष्पसौरभम् , अपि, शकुनिध्वनिमपि =पक्षिकूजितम् , अपि, तद्वार्तां =तस्य पुण्डरीकस्य वार्तां समाचारं, प्रष्टुम् , ईहमाना =अभिलषन्ती, तद्वल्लभतया =तस्य मुनेः वल्लभतया प्रियतया, तपः क्लेशायापि =तपस्यादुःखाय, अपि, स्पृहयन्ती =वाञ्छन्ती, तत्प्रीत्येव =तस्य पुण्डरीकस्य प्रीत्या प्रेम्णा, एव, गृहीतमौनव्रता =गृहीतं स्वीकृतं मौनव्रतम् यया तथाभूता (हेतूत्प्रेक्षा), स्मरजनितपक्षपाता =स्मरेण कामदेवेन जनितः उत्पादितः पक्षपातः (तस्मिन् मुनिकुमारके) प्रेम यस्याः एवम्भूता, च, तत्परिग्रहात् = तेन मुनिकुमारकेण परिग्रहात् स्वीकारात् (एव), मुनिवेषस्य =ऋषिवेषस्य, (वल्कलादेः), अग्राम्यतां =निर्दोषतां, तदास्पदतया =सः मुनिकुमारकः एव आस्पदम् अवलम्बनं यस्य तस्य भावः तत्ता तया, यौवनस्य =तारुण्यस्य, चारुतां =मनोहरतां, तच्छ्रवणसम्पर्कात् =तस्य श्रवणसम्पर्कात् कर्णसंयोगात् (एव), पारिजातकुसुमस्य =पारिजातपुष्पस्य, मनोहरतां =रम्यतां, तन्निवासात् =तस्य निवासात् अधिष्ठानात् (एव), सुरलोकस्य =स्वर्गस्य, रम्यतां =रमणीयतां, तद्रूपसम्पदा =तस्य सौन्दर्यसम्पत्त्या (एव), कुसुमायुधस्य = पुष्पधन्वनः (कामस्य), दुर्जयताम् =दुर्जेयताम् , अध्यारोपयन्ती =अध्यारोपं कुर्वन्ती, (अत्र 'अध्यारोपयन्ती' इत्येकया क्रियया 'अग्राम्यताम्' इत्यादि पदानां कर्मत्वेन सम्बन्धात् तुल्ययोगिता), दूरस्थस्यापि =दूरे स्थितस्य, अपि, सवितुः =सूर्यस्य, कमलिनीव =

आया कि कहाँ जाऊँ, क्या करूँ, क्या सुनूँ, क्या देखूँ, क्या कहूँ, किससे कहूँ, इसका प्रतिकार क्या है । केवल कुमारियों के अन्तःपुर के प्रासाद पर चढ़कर, सखियों को हटाकर मैंने द्वार पर सारे नौकरों तक का प्रवेश निषिद्ध कर दिया और सब काम छोड़ कर अकेली मणि-जटित जालियों से बनी हुई खिड़की पर मुँह रखे चुपचाप पड़ी रही । उस समय मैं देखने में सुन्दर उसी दिशा को देखती रही, जो मुनिकुमार के रहने के कारण (ऐसी लगती थी) मानो (वह) अलंकृत हो, पुष्पों से भरी हो, रत्नों के बहुत बड़े कोश से युक्त हो, अमृतरस से भरे सागर के प्रवाह में डूबी हो, पूर्ण चन्द्रोदय से सुशोभित हो । उस दिशा से आते हुये पवन, वन्यसुमनों की गन्ध और पक्षियों के कूजन से भी उसका समाचार पूछने की अभिलाषा करती थी । मुनिकुमार को प्रिय लगने के कारण जैसे तपस्या के दुःख के लिये भी मैं स्पृहा

नीव सवितुः सागरवेलेव चन्द्रमसो मयूरीव जलधरस्य तस्यैवाभिमुखी, तथैव तां तद्विरहातुरजीवितोद्गमरक्षावलीमिवाक्षावलीं कण्ठेनोद्वहन्ती, तथैव च तया प्रस्तुततद्रहस्यालापयेव कर्णलग्नया पारिजातमञ्जर्या तथैव च तेन तत्करतलस्पर्शसुखजन्मना कदम्बमुकुलकर्णपूरायमाणेन रोमाञ्चजालेन कण्टकितैककपोलफलका निस्पन्दमतिष्ठम् ।

नलिनी, इव, चन्द्रमसः = (दूरस्थस्यापि) सुधाकरस्य, सागरवेलेव = समुद्रजलवृद्धिः, इव, (दूरस्थस्यापि) जलधरस्य = मेघस्य, मयूरीव = बर्हिणी, इव, दूरस्थस्यापि तस्यैव = पुण्डरीकस्य, एव, अभिमुखी = सम्मुखी सती (मालोपमा), तद्विरहातुरजीवितोद्गमरक्षावलीमिव = तस्य मुनिकुमारकस्य विरहेण वियोगेन आतुरस्य पीडितस्य जीवितस्य जीवनस्य यः उद्गमः (वियोगदुःखात्) शरीरात् निर्गमः तस्य रक्षावलीं रक्षार्थम् अभिमन्त्रितां मालाम्, इव, ताम् = पूर्वोक्ताम्, अक्षावलीं = जपमालां, कण्ठेन = गलेन, तथैव = पूर्ववत् एव, उद्वहन्ती = धारयन्ती सती (जात्युत्प्रेक्षा) 'प्रस्तुततद्रहस्यालापयेव = प्रस्तुतः प्रारब्धः तस्य तपस्विकुमारस्य सम्बन्धे रहस्यालापः गोपनीयवार्ता यया तथाभूतया, इव, (क्रियोत्प्रेक्षा)' तया = तेन दत्तया, तथैव = पूर्ववत् एव, कर्णलग्नया = श्रवणसंसक्तया, पारिजातमञ्जर्या = पारिजातवल्लर्या (उपलक्षिता), तत्करतलस्पर्शसुखजन्मना = तस्य पुण्डरीकस्य करतलस्पर्शसुखात् पाणितलाश्लेषानन्दात् जन्म उत्पत्तिः यस्य तेन, कदम्बमुकुलकर्णपूरायमाणेन = कदम्बस्य नीपस्य मुकुलं कुड्मलं तस्य यः कर्णपूरः कर्णावतंसः तद्वत् आचरता, (कर्णपूरवत् प्रतीयमानेन, अत्र उपमा), तेन, रोमाञ्चजालेन = पुलकसमूहेन, तथैव, कण्टकितैककपोलफलका = कण्टकितं समुद्भूतकण्टकम् एकं कपोलफलकम् गण्डस्थलं यस्याः तथाभूता (सती), अहं, निस्पन्दम् = निश्चलम्, अतिष्ठम् = स्थितवती ।

करती थी। उसकी प्रीति-वश ही जैसे मैंने मौन-व्रत धारण किया था। कामदेव ने उसके प्रति विशेष पक्षपात उत्पन्न कर दिया था, अतएव उसके (मुनि के) धारण करने के कारण मुनियों की वेश-भूषा में अग्राम्यता, उसमें प्रतिष्ठित होने के कारण यौवन में सुन्दरता, उसके कान के संसर्ग में रहने के कारण पारिजात-कुसुम में मनोहरता, उसका निवास-स्थान होने के कारण देव-लोक में रमणीयता तथा उसकी सौन्दर्य-सम्पदा से कुसुमायुध में दुर्जेयता का आरोप करती थी। दूर में स्थित भी उस मुनि की ओर मैं उसी प्रकार संमुखी थी, (अर्थात् उसकी ओर देखती थी) जैसे दूर स्थित भी सूर्य के प्रति कमलिनी, चन्द्रमा की ओर समुद्र-बेला (समुद्र-जल की वृद्धि) तथा मेघ की ओर मयूरी संमुखी होती है (निहारती है)। मैं उसी प्रकार (पूर्ववत्) जैसे उसके विरह से विकल होकर निकलने वाले प्राणों की रक्षा करने के लिये उस अक्षावली (अक्षमाला) को कण्ठ में धारण कर रही थी। जैसे

अथ ताम्बूलकरङ्कवाहिनी मदीया तरलिका नाम मयैव सह गता स्नातुमासीत्, सा च पश्चाच्चिरादिवागत्य तथावस्थितां शनैर्मामवादीत्—"भर्तृदारिके, यौ तौ तापसकुमारकौ दिव्याकारावस्माभिरच्छोदसरस्तीरे दृष्टौ, तयोरेको येन भर्तृदुहितुरियमवतंसीकृता सुरतरुकुसुममञ्जरी स तस्माद् द्वितीयादात्मनो रक्षन्दर्शनमतिनिभृतपदः कुसुमितलतासन्तानगहनान्तरेणोपसृत्य मामागच्छन्तीं पृष्ठतो भर्तृदारिकामुद्दिश्याप्राक्षीत्—'बालिके केयं कन्यका

अथ = तदनन्तरं, तरलिका नाम = तरलिकानाम्नी, मदीया = ममकीना, ताम्बूलकरङ्कवाहिनी = ताम्बूलपात्रधारिणी, मयैव सह = मया साकम् एव, स्नातुं = स्नानं कर्तुं, गता = याता, आसीत् = अभूत्। सा च, पश्चात् = मद्गृहागमनानन्तरं, चिरादिव = बहुकालात्, इव, आगत्य = एत्य, तथा = उक्तरूपेण, अवस्थिताम् = उपविष्टां माम = वियोगविधुराम्, अवादीत् = अवदत्—"भर्तृदारिके। = राजपुत्रि! यौ, तौ = उभौ, तापसकुमारकौ = मुनितनयौ, दिव्याकारौ = अलौकिकरूपौ, अस्माभिः, अच्छोदसरस्तीरे = अच्छोदनामकतडागतटे, दृष्टौ = अवलोकितौ, तयोः = उभयोः, एकः = अन्यतरः, (पुण्डरीक इति भावः) येन, इयम् = एषा, सुरतरुकुसुममञ्जरी = पारिजातपुष्पवल्लरी, भर्तृदुहितुः = राजकुमार्याः' अवतंसीकृता = कर्णपूरीकृता, सः = तपस्वीपुण्डरीकः, तस्मात् द्वितीयात् = अपरात् (कपिञ्जलात्), आत्मनः = स्वस्य, दर्शनं = विलोकनं, रक्षन् = निवारयन्, अतिनिभृतपदः = अतिनिभृतानि अतिनिश्चलानि पदानि चरणसञ्चाराः यस्य तथाभूतः, कुसुमितलतासन्तानगहनान्तरेण = कुसुमिताः पुष्पिताः याः लताः वल्लयः तासां सन्तानः समूहः यत्र तेन, तथाविधस्य, गहनस्य = सघनवनस्य, अन्तरेण = मध्यभागेन, आगच्छन्तीं = गृहं प्रति आयान्तीं, माम् = तरलिकां, पृष्ठतः = पृष्ठभागतः, उपसृत्य = मत्समीपम् आगत्य, भर्तृदारिकाम् = राजकुमारीं त्वाम्, उपदिश्य = लक्ष्यीकृत्य, अप्राक्षीत् = पृष्टवान्—"बालिके! = कन्यके! इयम् = एषा, कन्यका = कुमारिका, कस्य = किमभि-

---

उसके रहस्य की बात को प्रस्तुत करने वाली (बताने वाली) पारिजातमञ्जरी भी वैसे ही मेरे कान में खुँसी थी तथा उसके कर-स्पर्श के सुख से उत्पन्न हुये (तथा) कदम्ब की कली के कर्णपूर सदृश रोमांच-जालेन से मेरा एक कपोल-भाग (अब भी) वैसे ही कण्टकित था।

इसके बाद तरलिका नाम की मेरी ताम्बूल-करङ्क वाहिनी, (जो) मेरे ही साथ स्नान करने के लिए गई थी, बाद में जैसे बहुत विलम्ब से आकर उक्त रूप से बैठी हुई मुझसे धीरे-धीरे बोली—'राजकुमारी! दिव्य रूपवाले जिन दो तपस्वी-कुमारों को हमने अच्छोदसर के तट पर देखा था, उनमें से एक ने, जिसने इस कुसुम-मञ्जरी को आपके कान का आभूषण बनाया था, उस दूसरे (साथी) की दृष्टि से अपने

कस्य वापत्यं किमभिधाना क गच्छति' इति । मयोक्तम्—'एषा खलु भगवतः श्वेतभानोरंशुसंभूतायामप्सरसि गौर्यां समुत्पन्ना देवस्य सकलगन्धर्वमुकुटमणिशलाकाशिखरोल्लेखमसृणितचरणनखचक्रस्य प्रणयप्रसुप्तगन्धर्वकामिनीकपोलपत्रलतालाञ्छितभुजतरुशिखरस्य पादपीठकृतलक्ष्मीकरकमलस्य गन्धर्वाधिपतेर्हंसस्य दुहिता महाश्वेता नाम गन्धर्वाधिवासं हेमकूटाचलमभि-

---

धानस्य जनस्य, वा = वितर्के, अपत्यं = पुत्री, किमभिधाना = किं नाम्नी, क्व वा गच्छति = कुत्र वा व्रजति ?" इति, मया = तरलिकया, उक्तं = कथितम्—"एषा = इयं, खलु, भगवतः, श्वेतभानोः = चन्द्रमसः, अंशुसम्भूतायाम् = किरणोद्भूतायां, गौर्यां = गौर्याभिधानायाम्, अप्सरसि = योषिति, समुत्पन्ना = जाता, 'देवस्य ....हंसस्य दुहिता' इति अग्रेण अन्वयः। इतः षष्ठ्यैकवचनान्तानि पदानि 'हंसस्य' इति पदस्य विशेषणानि । सकलगन्धर्वमुकुटमणिशलाकाशिखरोल्लेखमसृणितचरणनखचक्रस्य = सकलाः अशेषाः ये गन्धर्वाः देवगायकाः तेषां मुकुटेषु किरीटेषु याः मणिशलाकाः रत्नशलाकाः तासां शिखरेभ्यः अग्रभागेभ्यः यः उल्लेखः घर्षणं तेन मसृणितं चिक्कणितं चरणयोः पादयोः नखानां चक्रं समूहः यस्य तादृशस्य, प्रणयप्रसुप्तगन्धर्वकामिनीकपोलपत्रलतालाञ्छितभुजतरुशिखरस्य = प्रणयेन प्रीत्या प्रसुप्ताः निद्रिताः याः गन्धर्वाणां देवगायकानां कामिन्यः रमण्यः तासां कपोलेषु गण्डस्थलेषु याः पत्रलताः पत्राकाराः चित्रविशेषाः ताभिः लाञ्छितं चिह्नितं भुजतरोः बाहुवृक्षस्य शिखरम् ऊर्ध्वभागः यस्य तथाविधस्य, पादपीठीकृतलक्ष्मीकरकमलस्य = पादपीठीकृतं चरणासनीकृतं लक्ष्म्याः श्रियः करकमलं पाणिपद्मं येन सः तथाविधस्य, गन्धर्वाधिपतेः = गन्धर्वराजस्य, देवस्य = महाराजस्य, हंसस्य = तदाख्यस्य, दुहिता = तनया, महाश्वेता नाम = महाश्वेतानाम्नी, गन्धर्वाधिवासं = गन्धर्वाणाम् अधिवासं निवासस्थानं, हेमकूटाचलम् = हेमकूटपर्वतम्, अभि-

---

को बचाता हुआ, गुच्छेदार पेड़ों से, पुष्पित लताओं से पूर्ण सघन वन के बीच से आती हुई मेरे पीछे आकर, आपके विषय में मुझसे पूछा—'बाले ! यह कन्या कौन है ? किसकी सन्तान है ? इसका नाम क्या है ? और यह कहाँ जा रही है ? मैंने (उससे) कहा—चन्द्रमा की किरणों से संभूत गौरी नामक अप्सरा में उत्पन्न यह (कन्या) गन्धर्वराज हंस की पुत्री है, जिनके (हंस के) चरणनख समस्त गन्धर्वों के मुकुटों में लगी मणिशलाकाओं के अग्रभाग के संघर्षण (रगड़) से चिकने हो गये हैं, (जिनके) वृक्षतुल्य (विशाल) भुजयुगल का ऊर्ध्वभाग प्रेम से सोई हुई गन्धर्व-कामिनियों के कपोलों पर (चित्रित) पत्र-लताओं से चिह्नित है तथा (जिन्होंने) लक्ष्मी के करकमल को (अपना) पादपीठ (पैरों की चौकी) बनाया है । इसका नाम महाश्वेता है तथा इसने गन्धर्वों के निवास-स्थान

प्रस्थिता'। इति कथिते च मया किमपि चिन्तयन्मुहूर्तमिव तूष्णीं स्थित्वा विगतनिमेषेण चक्षुषा चिरमभिवीक्षमाणो मां सानुनयमर्थितामिव दर्शयन्पुनराह—'बालिके कल्याणिनी तवाविसंवादिन्यचपला बालभावेऽप्याकृतिरियम्। तत्करोषि मे वचनमेकमभ्यर्थ्यमाना' इति। ततो मया सविनयमुपरचिताञ्जलिपुटया दर्शितादरमभिहितः—'भगवन्कस्मादेवमभिधत्से? काहम्? महात्मानः सकलत्रिभुवनपूजनीयास्त्वादृशाः पुण्यैर्विना निखिलकल्मषापहारि-

प्रस्थिता तदभिमुखं चलिता।" अत्र समुच्चयालङ्कारः। मया = तरलिकया, इति = एवं, कथिते = उक्ते, किमपि = अज्ञातं, चिन्तयन् = ध्यायन्, मुहूर्तमिव = क्षणम्, इव, तूष्णीं = मौनम्, स्थित्वा = अवस्थाय, विगतनिमेषेण = निर्निमेषेण, चक्षुषा = नेत्रेण, चिरम् = बहुकालम्, अभिवीक्षमाणः = सम्मुखं पश्यन, सानुनयम् = स्नेहपूर्वकम्, अर्थितां = याचकतां, दर्शयन् = प्रकटयन्, इव, मां = तरलिकां, पुनः = भूयः, आह = अवदत्—"बालिके! = कुमारिके! तव = भवत्याः, इयम् = एषा, आकृतिः = स्वरूपं, कल्याणिनी = कल्याणं श्रेयः विद्यते यस्याः सा (शुभलक्षणा), अविसंवादिनी = व्यभिचारहीना, (गुणवती इतिभावः—'यत्राकृतिस्तत्रगुणां वसन्ति' इत्युक्तेः), बालभावेऽपि = बालस्वभावे सत्यपि, अचपला = अचञ्चला, अवलोक्यते इतिशेषः। तत् = तस्मात्, अभ्यर्थ्यमाना = (मया) प्रार्थ्यमाना, (त्वं), मे = मम, एकं, वचनं, करोषि = करिष्यसि, किम्?— अत्र लट् लकारः भविष्यदर्थे। ततः = तदनन्तरं, उपरचिताञ्जलिपुटया = उपरचितं विहितम् अञ्जलिपुटं यया तया, मया = तरलिकया, दर्शितादरं = दर्शितः प्रकटीकृतः आदरः सत्कारः यत्र कर्मणि तत् यथा स्यात् तथा, सविनयम् = विनयपूर्वकम्, अभिहितः = उक्तः—"भगवन्! = श्रीमन्!, कस्मात् = कुतः, एवम् = इत्थम्, अभिधत्से = कथयसि? अहम् का? = अतितुच्छा इतिभावः, सकलत्रिभुवनपूजनीयाः = सकले निखिले त्रिभुवने लोकत्रये पूजनीयाः वन्दनीयाः, त्वादृशाः = भवादृशाः, महात्मानः = महाशयाः, अस्मद्विधेषु = अस्मादृशेषु पामरजनेषु, निखिलकल्मषापहारिणीम् = निखिलं समस्तं यत् कल्मषं पापं तस्य अप-

हेमकूट पर्वत की ओर प्रस्थान किया है। मेरे इस प्रकार कहने पर कुछ सोचता हुआ, मुहूर्त भर चुप रहकर, अपलक नेत्र से देर तक सामने देखता हुआ (तथा) मेरे प्रति स्नेहपूर्वक मानो याचकता दिखलाता हुआ वह बोला—'बाले! बालस्वभाव होने पर भी यह तुम्हारी आकृति अचंचल, शुभलक्षण से सम्पन्न तथा गुणों से युक्त है। अतः अनुरोध करने पर मेरी एक बात मानोगी? (अर्थात् मेरा एक कार्य करोगी?)।' तत्पश्चात् विनयपूर्वक हाथ जोड़कर मैंने सादर कहा—'भगवन्! इस प्रकार क्यों कह रहे हैं? मैं क्या हूँ? सकल त्रिलोक के पूजनीय आप जैसे महात्मा तो बिना पुण्य के हम जैसे लोगों पर, सारे पापों को हर लेने

णीमस्मद्विधेषु दृष्टिमपि न पातयन्ति किं पुनराज्ञाम्। तद्विश्रब्धमादिश्यतां कर्तव्यम्। अनुगृह्यतामयं जनः'। इत्येवमुक्तश्च मया सस्नेहया सखीमिवोपकारिणीमिव प्राणप्रदामिव दृष्ट्या मामभिनन्द्य निकटवर्तिनस्तमालपादपात्पल्लवमादाय निष्पीड्य शिलातले तेन गन्धगजमदसुरभिपरिमलेन रसेनोत्तरीयवल्कलैकदेशाद्विपाट्य पट्टिकां स्वहस्तकमलकनिष्ठिकानखशिखरेणाभिलिख्य

हारिणीम् अपहरणकर्त्री, दृष्टिमपि = चक्षुरपि, न पातयन्ति = न प्रक्षिपन्ति, किं पुनः, आज्ञाम् = आदेशम्? तत् = तस्मात्, विश्रब्धं = विश्वस्तं यथा स्यात् तथा, कर्तव्यम् = करणीयं कृत्यम् आदिश्यताम् = आज्ञाप्यताम्। अयं जनः=एषः। उपस्थितः जनः (तरलिका), अनुगृह्यताम् = अनुकम्प्यताम्।" इत्येवम् = उक्तप्रकारेण, मया = तरलिकया, उक्तश्च = कथितः, च, (सः पुण्डरीकः) '......'इत्यभिधाय अर्पितवान्' इति वाक्यम्। सखीमिव = वयस्याम्, इव, उपकारिणीमिव = उपकर्त्रीम्, इव, प्राणप्रदामिव = जीवनदात्रीम्, इव (स्थलत्रये जात्युत्प्रेक्षा) सस्नेहया = प्रेमयुक्तया, दृष्ट्या = वीक्षणेन, माम् = तरलिकाम्, अभिनन्द्य = मोदयित्वा, निकटवर्तिनः = समीपवर्तिनः तमालपादपात् = तापिच्छवृक्षात्, पल्लवम् = किसलयम्, आदाय = गृहीत्वा, शिलातले = प्रस्तरोपरि, निष्पीडय = संमर्द्य, गन्धगजमदसुरभिपरिमलेन = गन्धगजः गन्धहस्ती 'यस्य गन्धं समाघ्राय न तिष्ठन्ति प्रतिद्विपाः सगन्धगजः' तस्य मदवत् दानजलवत् सुरभिः मनोहरः परिमलः गन्धः यस्य तादृशेन, "विमर्दोत्थे परिमलो गन्धे जनमनोहरे" इत्यमरः, तेन रसेन = निष्पीडनोद्भूतेन द्रवेण. उत्तरीयवल्कलैकदेशात् = उत्तरीयं यत् वल्कलं वृक्षत्वक् तस्य एकदेशात् एकभागात्, पट्टिकां = ('पट्टी' इति हिन्दी) विपाट्य = द्वैधीकृत्य, स्वहस्तकमल कनिष्ठिकानखशिखरेण = स्वस्य आत्मनः हस्तकमलस्य पाणिसरोजस्य कनिष्ठकायाः तन्नाम्न्याः अङ्गुल्याः नखस्य शिखरेण अग्रभागेन अभिलिख्य = लिखित्वा, इयं = मया दीयमाना,

---

वाली, (अपनी) दृष्टि भी नहीं डालते, फिर आज्ञा की तो बात ही क्या है?, अतः विश्वस्त भाव से कर्तव्य का आदेश दीजिये तथा इस जन को अनुगृहीत करिये।' इस प्रकार मेरे कहने पर उसने स्नेह-भरी दृष्टि से मेरा अभिनन्दन किया, जैसे मैं उसकी सखी होऊँ (या) उपकारिणी होऊँ (या) जीवन दात्री होऊँ। (उसने) समीपवर्ती तमाल वृक्ष के पल्लव को लेकर उसे शिलापर निचोड़ा (तथा) गन्ध हस्ती के मदजल के सदृश मनोहर गन्ध से पूर्ण (निकले हुये उसके) रस से, वल्कल के एक छोर से पट्टी फाड़कर (तथा उसी पर) अपने करकमल की कनिष्ठिका अँगुली के नखाग्र से लिखकर (उसने) 'यह पत्रिका तुम गुप्त रूप से उस कन्या को अकेले में देना' यह कहकर (पत्रिका मुझे) दे दी।" यह कहकर उसने पनडब्बे से निकालकर वह (पत्रिका मुझे) दिखाई।

'इय पत्रिका त्वया तस्यै कन्यकायै प्रच्छन्नमेकाकिन्यै देया' इत्यभिधायार्पितवान् ।'' इत्युक्त्वा च सा ताम्बूलभाजनादाकृष्य तामदर्शयत् । अहं तु तेन तत्संबन्धिनालापेन शब्दमयेनापि स्पर्शसुखमिवान्तर्जनयता श्रोत्रविषयेणापि रोमोद्गमानुमितसर्वाङ्गानुप्रवेशेन मदनावेशमन्त्रेणेवावेश्यमाना तस्याः करतलादादाय तां वल्कलपत्रिकां तस्यामिमामभिलिखितामार्यामपश्यम्—

दूरं मुक्तालतया बिससितया विप्रलोभ्यमानो मे ।
हंस इव दर्शिताशो मानसजन्मा त्वया नीत ॥

पत्रिका, त्वया = भवत्या, तस्यै, कन्यकायै = महाश्वेतायै, प्रच्छन्नम् = अतिगुप्तं यथा स्यात् तथा, देया = दातव्या ।' इत्यभिधाय = इति उक्त्वा, (पत्रिकाम्) अर्पितवान् = दत्तवान्, मह्यम् इति शेषः । सा = ताम्बूलकरङ्कवाहिनी, च इत्युक्त्वा = एवम् अभिधाय, ताम्बूलभाजनात् = नागवल्लीपात्रात्, आकृष्य = निःसार्य, तां = पत्रिकाम्, अदर्शयत् = दर्शितवती । अहं = महाश्वेता, तु ('तेन ... आलापेन ... आवेश्यमाना ... आर्यामपश्यम् ' इति वाक्यम्), शब्दमयेनापि = शब्दात्मकेन, अपि, अन्तः = अन्तःकरणे, स्पर्शसुखं = स्पर्शजनितानन्दं, जनयता = उत्पादयता, इव, (क्रियोत्प्रेक्षा), श्रोत्रविषयेणापि = कर्णगोचरेण अपि, रोमोद्गमानुमितसर्वाङ्गानुप्रवेशेन = रोमोद्गमैः रोमाञ्चैः अनुमितः अनुमानविषयीकृतः सर्वाङ्गेषु समस्तावयवेषु अनुप्रवेशः यस्य तथाविधेन (क्रियोत्प्रेक्षा), मदनावेशमन्त्रेणेव = मदनस्य कामस्य आवेशः प्रवेशः तदर्थः मन्त्रः तेन, इव (गुणोत्प्रेक्षा), तत्सम्बन्धिना = पुण्डरीकसम्बद्धेन, तेन, आलापेन = वार्तालापेन, आवेश्यमाना = आवेशविषयीक्रियमाणा, तस्याः = तरलिकायाः, करतलात् = हस्तात्, तां = पुण्डरीकदत्तां, वल्कलपत्रिकाम्, आदाय = गृहीत्वा, तस्याम् = पत्रिकायाम्, अभिलिखिताम्, इमाम् = एताम्, आर्याम् = वृत्तविशेषम् (आर्याछन्दोबद्धां पंक्तिम् इति भावः), अपश्यम् = दृष्टवती— 'प्रिये ! त्वया = भवत्या, बिससितया = बिसं मृणालं तद्वत् सितया धवलया, मुक्तालतया = मुक्तामालया, विप्रलोभ्यमानः = लोभं प्राप्यमाणः, (अतएव) दर्शिताशः = दर्शिता प्रकटिता आशा मनोरथपूर्तेः आशंसा यस्य तथाविधः, मानसजन्मा = मानसं मनः तस्मात् जन्म उद्भवः यस्य सः (मनसिजः कामः), हंस इव = मरालः इव, दूरंनीतः = सुदूरं प्रापितः (आत्मना सहैव मम मनः नीतवती—इति भावः), (हंसपक्षे तु—मानसजन्मा = मानसरोवरे जन्म यस्य एवम्भूतः, हंसः, बिससितया, मुक्तालतया = मुक्तानां लतया लतावत्लम्बाकारया, पङ्क्त्या, विप्रलोभ्यमानः = भक्षणार्थं विप्रलोभितः सन्, दर्शिताशः = दर्शिता आशा (नयनार्थम् इष्टा) दिक् यस्मै सः, दूरंनीतः = स्वनिवाससरसः दूरं प्रापितः ।') अत्र पूर्णोपमा ।

उससे (मुनिकुमार से) सम्बद्ध वार्तालाप से, जो मानो शब्दमय होते हुये भी भीतर स्पर्शसुख को उत्पन्न कर रहा था, श्रवण का विषय होते हुये भी रोमांच से सारे

अनया च मे दृष्टया दिङ्मोहभ्रान्त्येव प्रणष्टवर्त्मनः, बहुलनिशयेवान्धस्य, जिह्वोच्छित्त्येव मूकस्य, इन्द्रजालिकपिच्छिकयेवातत्त्वदर्शिनः, ज्वरप्रलापप्रवृत्त्येवासंबद्धभाषिणः, दुष्टनिद्रयेव विषविह्वलस्य, लोकायतिकविद्ययेवाधर्मरुचेः, मदिरयेवोन्मत्तस्य, दुष्टावेशक्रिययेव पिशाचग्रहस्य, दोषविकारोपचयः

च = किञ्च, मे = मम (मया), दृष्टया = विलोकितया (पठितया) सत्या, अनया = पत्रिकया (आर्यया), 'स्मरातुरस्य मे मनसः, दोषविकारोपचयः सुतराम् अक्रियत' इत्यन्वयः, कया कस्य इव इति जिज्ञासायामाह—दिङ्मोहभ्रान्त्या = दिङ्मोहः दिग्भ्रमः तस्य भ्रान्त्या भ्रमेण, प्रणष्टवर्त्मनः = उत्पथगामिनः, इव, बहुलनिशया = कृष्णपक्षरजन्या, अन्धस्य = नेत्रहीनस्य, इव, जिह्वोच्छित्त्या = जिह्वायाः रसनायाः उच्छित्त्या कर्तनेन, मूकस्य = वाणीविहीनस्य, इव, इन्द्रजालिकपिच्छिकया = इन्द्रजालिकः मायिकः तस्य पिच्छिकया लोकानां दृग्बन्धविधायिन्या, अतत्त्वदर्शिनः = प्रकृत्या भ्रान्तस्य, इव, ज्वरप्रलापप्रवृत्त्या = ज्वरेण यः प्रलापः तस्य प्रवृत्त्या प्रवर्तनेन, असंबद्धभाषिणः = असङ्गतवादिनः, इव, दुष्टनिद्रया = दोषजनकस्वापेन, विषविह्वलस्य = विषार्तस्य, इव, लोकायतिकविद्यया = लोकायतिकः चार्वाकः तस्य विद्यया शास्त्रेण, अधर्मरुचेः = अधर्मबुद्धेः, इव, मदिरया = मद्येन, उन्मत्तस्य = उन्मादग्रस्तस्य, इव, दुष्टावेशक्रियया = दुष्टा दोषयुक्ता या आवेशक्रिया पापग्रहाद्यनुप्रवेशकर्म तया, पिशाचग्रहस्य = पिशाचाभिभूतस्य, इव, स्मरातुरस्य = कामपीडितस्य, मे = मम, मनसः = चेतसः, सुतराम् = आधिक्येन, दोषविकारोपचयः = कामविकारवृद्धिः, अक्रियत = अकारि। मालोपमा। येन = दोषविकारो-

---

अङ्गों में (जिसके) प्रवेश का अनुमान होता था, (जो) कामदेव के आवेश-मन्त्र (मन्त्रविशेष) सा था, आवेश में आती हुई मैंने उसके हाथ से वल्कल-पत्रिका को लेकर उसमें लिखी हुई इस आर्या छन्द को देखा—

"(जैसे कोई व्यक्ति) मानसरोवर में जन्मे हुये हंस को मृणाल-तन्तुओं की भाँति धवल मोतियों की लता से (अर्थात् मोतियों की, लता की भांति, लम्बी-पंक्ति से) लुभा कर तथा उसे अभीष्ट दिशा को दिखाकर दूर तक ले जाय (उसी प्रकार) तुम मेरे मनसिज (काम) को मृणाल सदृश शुभ्र इस मुक्तामाला (एकावली) से लुभाकर तथा (मनोरथ-पूर्ति की) आशा बँधाकर दूर तक ले गई।"

मेरे द्वारा देखी गई इस पत्रिका के द्वारा (पहले से ही) कामातुर मेरे मन का दोष-विकार (काम-विकार) वैसे ही अत्यधिक बढ़ गया (जिस प्रकार) दिग्भ्रान्ति से उत्पथगामी का, कृष्ण-पक्ष की रात्रि से अन्धे का, जिह्वोच्छेदन से मूक का, ऐन्द्रजालिक (जादूगर) की पिच्छिका से स्वभावतः भ्रान्त (झूठे दृश्य को देखने वाले) व्यक्ति का, ज्वर-प्रलाप की प्रवृत्ति से असम्बद्धभाषी (ऊट-पटांग बोलने

सुतरामक्रियत स्मरातुरस्य मे मनसः; येनाकुलीक्रियमाणा सरिदिव पूरेण विह्वलतामभ्यागमम् । तां च द्वितीयदर्शनेन कृतमहापुण्यामिवानुभूतसुरलोकवासामिव देवताधिष्ठितामिव लब्धवरामिव पीतामृतामिव समासादितत्रैलोक्यराज्याभिषेकामिव मन्यमाना, सततसंनिहितामपि दुर्लभदर्शनामिवातिपरिचितामप्यपूर्वामिव सादरमाभाषमाणा, पार्श्वावस्थितामपि सर्वलोकस्यो-

---

पचयेन, आकुलीक्रियमाणा = व्यग्रतां नीयमाना (अहं), पूरेण = प्रवाहेण, सरित् = नदी, इव, विह्वलताम् = व्याकुलताम्, अभ्यागमम् = पूर्णतः प्राप्तवती । उपमा । तां = तरलिकां, च, द्वितीयदर्शनेन = द्वितीयवारं मुनिकुमारस्य विलोकनेन, कृतमहापुण्यामिव = कृतं विहितं महत् पुण्यं सुकृतं यया ताम्, इव, अनुभूतसुरलोकवासामिव = अनुभूतः अनुभवविषयीकृतः सुरलोके स्वर्गे वासः निवासः यया ताम्, इव, देवताधिष्ठितामिव = देवतया अधिष्ठिताम् आश्रिताम्, इव, लब्धवरामिव = लब्धः प्राप्तः वरः देवप्रसादः यया ताम्, इव, पीतामृतामिव = पीतम् आस्वादितम् अमृतं यया ताम्, इव, समासादितत्रैलोक्यराज्याभिषेकामिव = समासादितः प्राप्तः त्रैलोक्यस्य त्रिभुवनस्य राज्यम् आधिपत्यं तस्य अभिषेकः अभिषिञ्चनं यया तादृशीम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), मन्यमाना = चित्ते जानाना (अहं), 'पुनः पुनः पर्यपृच्छम्'—इति सम्बन्धः, सततसन्निहितामपि = निरन्तरं समीपवर्तिनीम्, अपि, दुर्लभदर्शनामिव = दुर्लभं दर्शनं यस्याः ताम्, इव, अतिपरिचितामपि = अतिपरिचयं गताम्, अपि, अपूर्वामिव = नवागताम्, इव, सादरम् = सम्मानसहितं यथा स्यात् तथा, आभाषमाणा = आलपन्ती, पार्श्वावस्थितामपि = पार्श्वे अतिसमीपे अवस्थिताम् आसीनाम्, अपि, सर्वलोकस्य = निखिल जगतः,

---

वाला) का, दुष्टनिद्रा (खराब नींद) के द्वारा विष से व्याकुल (व्यक्ति) का, चार्वाकविद्या से अधार्मिक का, मदिरा से (पहले से ही) उन्मत्त का तथा दुष्ट आवेश-क्रिया (पापग्रहादि के प्रवेश रूप कर्म) से पिशाच-ग्रस्त व्यक्ति का (दोष-विकार और बढ़ जाता है)। उक्त दोष की वृद्धि से व्याकुल बनी मैं, प्रवाह से व्याकुल नदी की भांति, (अत्यन्त) विकल हो गई। (मुनिकुमार का) दूसरी बार दर्शन करने के कारण (मैं) उसे (तरलिका को) ऐसा समझने लगी, मानो वह महापुण्य किये हो, (या) देवलोक में निवास (के सुख) का अनुभव किये हो, (या) देवता से आश्रित हो, (या) वरदान प्राप्त कर चुकी हो, (या) अमृत-पान कर ली हो, (या) त्रिभुवन का राज्याभिषेक प्राप्त कर लिया हो। यद्यपि वह सदा समीप में ही रहती थी तथा (मेरे लिए) अत्यन्त परिचित थी, (फिर भी) मैं उससे आदर के साथ बात करने लगी, मानो वह (मेरे लिये) दुर्लभदर्शन तथा अभिनव (नवागन्तुक) हो; बगल में बैठी हुई भी उसको मैं सारे लोगों के ऊपर

मूर्च्छान्धकारितहृदयास्विव प्रारब्धनिमीलनासु पद्मिनीषु, ग्रासीकृतसामान्यमृणाललताविवरसंक्रामितानीव परस्परहृदयान्यादाय विघटमानेषु रथाङ्गनाम्नां युगलेषु सा छत्रग्राहिणी समागत्याकथयत्—'भर्तृदारिके तयोर्मुनिकुमारयोरन्यतरो द्वारि तिष्ठति कथयति चाक्षमालामुपयाचितुमागतोऽस्मि' इति।

अहं तु मुनिकुमारनामग्रहणादेव स्थानस्थितापि गतेव द्वारदेशं समुपजाततदागमनाशङ्का समाहूयान्यतमं कञ्चुकिनम्, 'गच्छ प्रवेशयताम्' इत्या-

मूर्च्छान्धकारितहृदयास्विव = रवेः सूर्यस्य विरहेण वियोगेन या मूर्च्छा तया अन्धकारितानि सञ्जातान्धकाराणि हृदयानि अन्तःकरणानि यासां तादृशीषु, इव, पद्मिनीषु = कमलिनीषु, प्रारब्धनिमीलनासु = प्रारब्धं समारब्धं निमीलनं याभिः तादृशीषु (सतीषु), (अत्र समासोक्तिकाव्यलिङ्गक्रियोत्प्रेक्षाणाम् अङ्गाङ्गिभावसङ्करः), ग्रासीकृतसामान्यमृणाललताविवरसंक्रामितानीव = ग्रासीकृतया कवलीकृतया सामान्यया साधारणतया (एकया इति भावः) मृणाललतया बिसवल्ल्या (कर्त्र्या) विवरेण निजच्छिद्रपथेन (करणेन) संक्रामितानि परस्परं सञ्चारितानि, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), परस्परहृदयानि = अन्योन्यचेतांसि, आदाय = गृहीत्वा रथाङ्गनाम्नां युगलेषु = चक्रवाकयुगलेषु, विघटमानेषु, = वियोगं प्राप्यमाणेषु, सा = पूर्वोक्ता, छत्रग्राहिणी = छत्रधारिणी, समागत्य = आगत्य, अकथयत् = अब्रवीत्—'भर्तृदारिके! = राजपुत्रि! तयोः = अच्छोदसरसः तीरे दृष्टयोः, मुनिकुमारयोः, अन्यतरः = एकः, द्वारि = द्वार भागे, तिष्ठति = स्थितः अस्ति, कथयति = वदति, च, अक्षमालाम् = जपमालिकाम्, उपयाचितुम् = प्रार्थितुम्, आगतोऽस्मि = समायातः अस्मि।'

अहं = महाश्वेता, तु, मुनिकुमारनामग्रहणादेव = मुनिकुमारस्य नाम श्रवणात्, एव, स्थानस्थितापि = स्थाने (तस्मिन्) स्थले स्थिता वर्तमाना, अपि, द्वारदेशंगतेव = द्वारभागं याता, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), समुपजाततदागमनाशङ्का = समुपजाता समुत्पन्ना तस्य पुण्डरीकस्य आगमने आशङ्का यस्याः सा, अन्यतमं = एकम्, कञ्चुकिनम् = सौविदल्लं, समाहूय = आह्वानंकृत्वा, 'गच्छ = व्रज, प्रवेशयताम् = अभ्य-

पूर्ण हृदय वाली कमलिनियाँ (जब) आँखें मूँदने लगीं; (जब) आधी खायी गई एक ही मृणाल-लता के विवर में रखे गये एक दूसरे के हृदयों को मानो लेकर चक्रवाक के जोड़े बिछुड़ने लगे; उसी समय छत्र-धारिणी ने आकर निवेदन किया—'राजकुमारी! उन दोनों मुनिकुमारों में से एक (आकर) दरवाजे पर खड़ा है और कह रहा है कि 'अक्षमाला मांगने के लिये आया हूँ।'

उसके मुख से मुनिकुमार का नाम सुनते ही, मैं तो वहाँ बैठी हुई भी, मानो द्वार पर जा पहुँची (और) उसके आगमन की आशङ्का से समन्वित हो

दिश्य प्राहिणवम् । अथ मुहूर्तादिव तं तस्य रूपस्येव यौवनम्, यौवनस्येव मकरकेतनम्, मकरकेतनस्येव वसन्तसमयम्, वसन्तसमयस्येव दक्षिणानिलम्, अनुरूपं सखायमृषिकुमारकं कपिञ्जलनामानं जराधवलस्य कञ्चुकिनोऽनुमार्गेण चन्द्रातपस्येव बालातपमागच्छन्तमपश्यम् अन्तिकमुपगतस्य चास्यपर्याकुलमिव सविषादमिव शून्यमिवार्थिनमिवानुपरताभिप्रेतमाकारमलक्षयम् । उत्थाय च कृतप्रणामा सादरं स्वयमासनमुपाहरम् । उपविष्टस्य च

न्तरे आनीयताम् (मुनिकुमारः), इति = एवम्, आदिश्य = आज्ञाप्य, प्राहिणवम् = प्रेषितवती ।' अथ = अनन्तरम्, मुहूर्तादिव = क्षणात् इव 'तम्...मुनिकुमारकम्... अपश्यम्' इति वाक्यम्, रूपस्य = सौन्दर्यस्य (अनुरूपं सखायम् इति सर्वत्र योजनीयम्), यौवनम् = तारुण्यम्, इव, यौवनस्य मकरकेतनम् = मनसिजम्, इव, मकरकेतनस्य, वसन्तसमयम् = सुरभिकालम्, इव, वसन्तसमयस्य, दक्षिणानिलम् = मलयपवनम्, इव (रशनोपमा), तस्य = पुण्डरीकस्य, अनुरूपं = स्वसदृशं, सखायं = मित्रं, चन्द्रातपस्य = निशाकरप्रकाशस्य, अनुमार्गेण = पश्चात् पथा, आगच्छन्तम् = आयान्तम्, बालातपम् = प्रभातसूर्यालोकम्, इव (उपमा), जराधवलस्य = वृद्धावस्थया शुभ्रदेहस्य, कञ्चुकिनः अनुमार्गेण आगच्छन्तम्, कपिञ्जलनामानं, तम् = पूर्वोक्तम्, ऋषिकुमारकम्=मुनिकुमारम, अपश्यम्=अवालोकयम् । च=किञ्च, अन्तिकम्=समीपम्, उपगतस्य=सम्प्राप्तस्य, अस्य=कपिञ्जलस्य, पर्याकुलमिव=अतिव्यग्रम्, इव, सविषादमिव = खेदसहितम्, इव, शून्यमिव = क्रियाहीनम्, इव, अर्थिनमिव = याचकम्, इव, अनुपरताभिप्रेतम् = अनुपरतम् अपूर्णम् अभिप्रेतम् वाञ्छितं यस्मिन् एतादृशम्, आकारम् = आकृतिम्, अलक्षयम् = अपश्यम् । उत्थाय च = (सम्मानार्थम्) उत्थानं विधाय च, कृतप्रणामा=कृतः विहितः प्रणामः नमस्कारः यया तादृशी, सादरम् = ससम्मानं स्वयम् = आत्मना, आसनं = विष्टरम्, उपाहरम् = आनयम् । उपविष्टस्य = आसीनस्य, च, अनिच्छतोऽपि = (मया क्रियमाणं

एक कंचुकी को बुलाकर (मैंने) 'जाओ, उसे भीतर ले आओ,' ऐसी आज्ञा देकर भेजा । तदनन्तर मैंने क्षणभर में, जैसे रूप का यौवन, यौवन का कामदेव, कामदेव का वसन्त, वसन्त का दक्षिणपवन (अनुकूल साथी होता है) उसी प्रकार, उसके अनुरूप मित्र कपिञ्जल नामक मुनिकुमार को देखा, जो चन्द्र-प्रकाश का अनुसरण करते बालसूर्यप्रकाश की भांति, जराधवल (वृद्धावस्था से शुभ्र देह वाले) कंचुकी के पीछे-पीछे आ रहा था । समीप में आने पर उसका आकार मुझे अति व्याकुल-सा, विषादपूर्ण-सा, सूना-सा, भिखमंगे-सा और आन्तरिक अभिप्राय से परिपूर्ण-सा दिखलाई पड़ा । उठकर प्रणाम करने के बाद मैं स्वयं आदरपूर्वक आसन ले आई । (जब) वह बैठ गया, (तब) उसके न चाहने पर भी बलपूर्वक उसके चरणों को धोकर (तथा) ओढ़नी के छोर से पोंछकर मैं उसके समीप खाली भूमि पर ही बैठ

बलादनिच्छतोऽपि प्रक्षाल्य चरणावुपमृज्योत्तरीयांशुकपल्लवेनाव्यवधानायां भूमावेव तस्यान्तिके समुपाविशम् । अथ मुहूर्तमिव स्थित्वा किमपि विवक्षुरिव स तस्यां मत्समीपोपविष्टायां तरलिकायां चक्षुरपातयत् । अहं तु विदिताभिप्राया दृष्ट्वैव भगवन्नव्यतिरिक्तेयमस्मच्छरीरादशङ्कितमभिधीयताम्' इत्यवोचम् ।

एवमुक्तश्च मया कपिञ्जलः प्रत्यवादीत्–"राजपुत्रि, किं ब्रवीमि । वागेव मे नाभिधेयविषयमवतरति त्रपया । क्व कन्दमूलफलाशी शान्तो वननिरतो

पाद प्रक्षालनम्) अवाञ्छतः अपि, तस्य = कपिञ्जलस्य, चरणौ = पादौ, बलात् = हठात्, प्रक्षाल्य = प्रक्षालनं विधाय, उत्तरीयांशुकपल्लवेन = उत्तरीयांशुकस्य उपसंव्यानवस्त्रस्य पल्लवेन प्रान्तभागेन, उपमृज्य = सम्प्रोञ्छ्य, अव्यवधानायां = विष्टरविहितव्यवधानरहितायां (केवलायाम् इति भावः) भूमौ = पृथिव्याम्, एव, अन्तिके = तत्समीपे, समुपाविशम् = अतिष्ठम् । अथ = अनन्तरं, मुहूर्तमिव = क्षणम्, इव, स्थित्वा = विरम्य, किमपि, विवक्षुरिव = वक्तुमिच्छुः, इव, सः = कपिञ्जलः, मत्समीपोविष्टायां = मम समीपे उपविष्टायां = निषण्णायां, तस्यां तरलिकायां, चक्षुः = नेत्रम्, (दृष्टिम् इति भावः) अपातयत् = पातितवान् । अहं तु = महाश्वेता तु, दृष्ट्वैव = तस्य वीक्षणेनैव, विदिताभिप्राया = विदितः ज्ञातः अभिप्रायः आशयः यया सा तथाभूता, 'भगवन् = श्रीमन् ! इयम् = मे सेविका, अस्मच्छरीरात् = ममदेहात्, अव्यतिरिक्ता = अभिन्ना, (अतः) अशङ्कितम् = निःशङ्कम, अभिधीयताम् = उच्यताम्', इत्यवोचम् = एवमकथयम् ।

मया = महाश्वेतया, एवम् = पूर्वोक्तरीत्या, उक्त = कथितः, च, कपिञ्जलः, प्रत्यवादीत् = प्रत्युवाच—'राजपुत्रि = राजकुमारि ! किं ब्रवीमि = किं कथयामि, त्रपया = लज्जया, मे = मम, वाग् = वाणी, एव, अभिधेयविषयम् = निवेदनीयविषयं, नावतरति = नायाति । क्व = कुत्र, कन्दमूलफलाशी = कन्दं मूलं फलञ्च कन्दमूलफलानि तानि अश्नाति भुङ्क्ते इति सः, शान्तः = शान्तिम्

गई । इसके बाद थोड़ी देर ठहर कर कुछ कहने की इच्छा से उसने पास में बैठी इस तरलिका पर दृष्टि डाली । मैंने दृष्टि से ही अभिप्राय समझ कर "भगवन् ! यह मेरे शरीर से (मुझसे) अभिन्न है, (इसलिए अपनी बात को) निःशङ्क कहिए", ऐसा कहा ।

मेरे ऐसा कहने पर कपिञ्जल ने उत्तर दिया—"राजपुत्रि ! क्या कहूँ ? लज्जा के कारण मेरी वाणी ही कथनीय विषय में प्रवृत्त नहीं हो रही है । कहाँ कन्द-मूल-फल

मुनिजनः, क्वायमनुपशान्तजनोचितो विषयोपभोगाभिलाषकलुषो मन्मथ-विविधविलाससङ्कटो रागप्रायः प्रपञ्चः। सर्वमेवानुपपन्नमालोकय, किमारब्धं दैवेन। अयत्नेनैव खलूपहासास्पदतामीश्वरो नयति जनम्। न जाने किमिदं वल्कलानां सदृशमुताहो जटानां समुचितम; किं तपसोऽनुरूपमाहोस्विद्धर्मोपदेशाङ्गमिदम्। अपूर्वेयं विडम्बना। केवलमवश्यं कथनीयमिदम्। अपर उपायो न दृश्यते। अन्या प्रतिक्रिया नोपलभ्यते। अन्यच्छरणं नालोक्यते। अन्या गतिर्नास्ति। अकथ्यमाने च महाननर्थोपनिपातो जायते। प्राणपरि-

---

आपन्नः (जितेन्द्रियः), **वनवासनिरतः** = वनवासे अरण्यनिवासे निरतः आसक्तः, **मुनिजनः** = तपस्विजनः, क्व, अयम्, **अनुपशान्तजनोचितः** = अनुपशान्तस्य शान्तिम् अनापन्नस्य (अजितेन्द्रियस्य) जनस्य लोकस्य उचितः योग्यः विषयो-**पभोगाभिलाषकलुषः** = विषयाणाम् भोग्यवस्तूनाम् उपभोगस्य पौनः पुन्येन सेवनस्य अभिलाषेण स्पृहया, कलुषः मलिनः, **मन्मथविविधविलाससङ्कटः** = मन्मथस्य कामस्य विविधैः अनेकैः विलासैः व्यापारैः सङ्कटः सङ्कीर्णः (पूर्णः), **रागप्रायः** = रागबहुलः, **प्रपञ्चः** = संसारः ? विषमालङ्कारः। **दैवेन** = विधिना, **सर्वमेव** = अखिलमेव, **अनुपपन्नम्** = अयुक्तम् किम् आरब्धम् **आलोकय** = पश्य। **ईश्वरः** भगवान्, **अयत्नेनैव** = अनायासेनैव, **खलु** = निश्चयेन, **जनम्** = लोकम्, **उपहासा-स्पदताम्** = परिहासपात्रतां **नयति** = प्रापयति। **न जाने** = नावगच्छामि, **इदं** = मया वक्ष्यमाणं पुण्डरीकाचरणं, किं **वल्कलानां** = वृक्षत्वचां, **सदृशम्** = अनुरूपम्, **उताहो** = अथवा, **जटानां** = सटानाम्, **समुचितं** = योग्यम् ? (न कथमपि समीचीनम् इति भावः); किं **तपसः** = तपस्यायाः, **अनुरूपम्** = योग्यम् **आहोस्वित्** = अथवा, **इदम्** = दुष्कृत्यम्, **धर्मोपदेशाङ्गम्** = धर्मोपदेशस्य अङ्गं कारणम् ? **इयम्** = एषा, **अपूर्वा** = अभिनवा, **विडम्बना** ? **केवलम्**, **इदम्** = पुण्डरीकवृत्तम्, **अवश्यं** = निश्चयेन, **कथनीयम्** = निवेदनीयम्। (यतो हि) **अपरः** = द्वितीयः **उपायः** = प्रतीकारः **न दृश्यते** = न अवलोक्यते। **अन्या** = अपरा, **प्रतिक्रिया** चिकित्सा, **नोपलभ्यते** = न प्राप्यते। **अन्यत्** = एतदतिरिक्तं, **शरणम्** = त्राणं, **नालोक्यते** = न दृश्यते। **अन्या गतिः** = उपायान्तर, **नास्ति** = न विद्यते। **अकथ्यमाने** = तस्मिन् अप्रतिपाद्यमाने, च, **महान् अनर्थोपनिपातः** = अनर्थस्य सङ्कटस्य उपनिपातः उपस्थितिः, **जायते** = उत्पद्यते। **प्राणपरित्यागेनापि** = जीवित-

---

खाने वाले, शान्त, वनवासी मुनिगण और कहाँ अशान्त (अजितेन्द्रिय) जनों के योग्य, विषयभोग की इच्छा से मलिन, नाना प्रकार के मन्मथ-व्यापारों से पूर्ण राग बहुल यह संसार। देखिए, विधाता ने यह सब (कैसा) अनुचित कार्य आरम्भ किया है ! ईश्वर बिना प्रयत्न के ही मनुष्य को उपहासास्पद बना देता है। न जाने

त्यागेनापि रक्षणीयाः सुहृदसव इति कथयामि। अस्ति भवत्याः समक्षमेव स मया तथा निष्ठुरमुपदर्शितकोपेनाभिहितः। तथा चाभिधाय परित्यज्य तं तस्मात्प्रदेशादुपजातमन्युरुत्सृष्टकुसुमावचयोऽन्यं प्रदेशमगमम्। अपयातायां भवत्यां मुहूर्तमिव स्थित्वैकाकी किमयमिदानीमाचरतीति संजातवितर्कः प्रतिनिवृत्य विटपान्तरितविग्रहस्तं प्रदेशं व्यलोकयम्। यावत्तत्र तं नाद्राक्षमासीच्च मे मनस्येवम्; 'किं नु मदनपरायत्तचित्त-वृत्तिस्तामेवानुसरन्-

---

समर्पणेन, अपि, सुहृदसवः = मित्रस्य प्राणाः, रक्षणीयाः = रक्ष्याः, इति, कथयामि = वदामि। भवत्याः = तव, समक्षमेव = सम्मुखम्, एव, तथा = तेन प्रकारेण, उपदर्शितकोपेन = उपदर्शितः प्रकटितः कोपः मन्युः येन तेन, मया = कपिञ्जलेन, सः = पुण्डरीकः, निष्ठुरम् = रूक्षम् अभिहितः = उक्तः, अस्ति = आसीत्। तथा च तेन प्रकारेण च, तम् = पुण्डरीकम्, अभिधाय = उक्त्वा उपजातमन्युः = उपजातः समुत्पन्नः मन्युः कोपः यस्य सः (अहं), परित्यज्य = विमुच्य (पुण्डरीकम्), उत्सृष्टकुसुमावचयः = उत्सृष्टः त्यक्तः कुसुमानाम् पुष्पाणाम् अवचयः सञ्चयनं येन सः तथाभूतः, तस्मात्, प्रदेशात् = स्थानात्, अन्यं = द्वितीयं, प्रदेशम् = स्थानम्, अगमम् = अव्रजम्। भवत्याम् = त्वयि अपयातायाम् = गतायाम् मुहूर्तमिव = क्षणमिव, स्थित्वा = अवस्थाय, इदानीम् = अधुना, अयम् = पुण्डरीकः एकाकी = अद्वितीयः, किमाचरति = किं करोति, इति = एवं, सञ्जातवितर्कः सञ्जातः समुत्पन्नः वितर्कः विकल्पः यस्य सः प्रतिनिवृत्य = परावृत्य, विटपान्तरितविग्रहः = विटपैः वृक्षैः अन्तरितः आच्छादितः विग्रहः देहं यस्य सः तं, प्रदेशं = स्थानं, व्यलोकयम् = अपश्यम्। यावत् = यावत्कालं, तत्र = तस्मिन् स्थाने, तं = पुण्डरीकं, ना द्राक्षम् = न अपश्यम्, (तावत्) मे मनसि = मम चेतसि, एवम् = इत्थम्, आसीत् = अभूत्—'किं नु = कदाचित्, मदनपरायत्तचित्तवृत्तिः = मदनस्य कामस्य परायत्ता पराधीना चित्तवृत्तिः मानसिकव्यापारः यस्य सः तथाभूतः, ताम् = कन्यकाम्, एव, अनुसरन् = अनुव्रजन्, गतः =

यह (मेरे) वल्कलों के योग्य है, अथवा जटाओं के; क्या यह तपस्या के अनुरूप है, अथवा धर्मोपदेश का अङ्ग है? केवल यह अपूर्व विडम्बना है। किन्तु (यह वृत्तान्त) अवश्य कथनीय है। (क्योंकि) दूसरा उपाय नहीं सूझता। दूसरा प्रतिकार नहीं उपलब्ध होता। दूसरी शरण नहीं दीखती। दूसरी गति नहीं है। न कहने पर बहुत बड़ा अनर्थ होता है। प्राण का परित्याग करके भी मित्र के प्राणों की रक्षा करनी चाहिये, इसलिये कहता हूं। आपके समक्ष ही क्रोध दिखाते हुए मैंने उससे उस प्रकार निष्ठुर वचन कहे थे और (वैसा) कह कर क्रोधाविष्ट मैं फूल चुनने से विरत हो उसे (वहीं) छोड़कर उस स्थान से दूसरे स्थान पर चला

गता भवेत्, गतायां च तस्यां लब्धचेतनो लज्जमानो न शक्नोति मे दर्शनपथमुपगन्तुम्, आहोस्वित्कुपितः परित्यज्य मां गतः उतान्वेषमाणो मामेव प्रदेशमन्यमितः समाश्रितः स्यात्'। इत्येवं विकल्पयन्कञ्चित्कालमतिष्ठम्। तेन तु जन्मनः प्रभृत्यनभ्यस्तेन तस्य क्षणमप्यदर्शनेन दूयमानः पुनरचिन्तयम्, 'स कदाचिद्धैर्यस्खलनविलक्षः किंचिदनिष्टमपि समाचरेत्। नहि किंचिन्न क्रियते ह्रिया। तन्न युक्तमेनमेकाकिनं कर्तुम्; इत्यवधार्यान्वेष्टुमादरमकरवम्। अन्वेषमाणश्च यथा यथा नापश्यं तं तथा तथासुहृत्स्नेहकातरेण

प्रयतः, भवेत्=स्यात्? तस्यां च=कन्यकायां च, गतायां=प्रयातायां, लब्धचेतनः=लब्धा प्राप्ता चेतना संज्ञा येन सः, लज्जमानः=त्रपमानः, मे=कपिञ्जलस्य, दर्शनपथम=वीक्षणमार्गम् उपगन्तुं=प्राप्तुं, न शक्नोति=न समर्थः भवति, आहोस्वित् = अथवा, कुपितः = क्रुद्धः, मां = कपिञ्जलं, परित्यज्य=विमुच्य, गतः=प्रस्थितः, उत=अथवा, माम्=कपिञ्जलम्, एव, अन्वेषमाणः=वीक्षमाणः, इतः=अस्मात् प्रदेशात्, अन्यं=द्वितीयं, प्रदेशं=स्थानम्, समाश्रितः = अवलम्बितः स्यात् = भवेत्।' इत्येवम् = इत्थं, विकल्पयन्=तर्कयन्, कञ्चित्कालम् =कञ्चित् समयम्, अतिष्ठम्=स्थितवान्। जन्मनः प्रभृति=आजन्मनः, क्षणमपि=क्षणमात्रमपि, अनभ्यस्तेन=अननुभूतेन, तस्य=पुण्डरीकस्य, तेन अदर्शनेन=तेन अनवलोकनेन, दूयमानः=सन्तप्यमानः, पुनः=भूयः, अचिन्तयम्=चिन्तितवान्—'कदाचित्=जातुचित् धैर्यस्खलनविलक्षः=धैर्यस्य धीरतायाः स्खलनेन विलोपेन विलक्षः लज्जितः (सन्), सः=पुण्डरीकः, किञ्चित्, अनिष्टमपि=असमीहितम् अपि, समाचरेत् व्यवहरेत्। (यतः) ह्रिया=लज्जया, किञ्चित्=किमपि कर्म, न क्रियते =न विधीयते, (इति) नहि=नैव, (अर्थात् लज्जया सर्वमपि कर्तुं शक्यते)। सामान्येन विशेषसमर्थनरूपः अर्थान्तरन्यासः। तत् = तस्मात्, एनम् = पुण्डरीकम्, एकाकिनम् = अद्वितीयं, कर्तुं = विधातुं, न युक्तम् = न उचितम्, इत्यवधार्य=एवं निश्चीय, अन्वेष्टुम् = मार्गयितुम्, आदरम्= उद्योगम् इति भावः, अकरवम्=अकार्षम्। अन्वेषमाणः=मार्गयन्, च, यथा यथा, तं पुण्डरीकं नापश्यं=न अवलोकयम, तथा-तथा, सुहृत्स्नेहकातरेण

गया। (जब) आप वहाँ से चली आईं, तब क्षण भर रुक कर 'अकेला यह (पुण्डरीक) इस समय क्या करता है, यह जानने के अभिप्राय से मैं लौट पड़ा तथा वृक्ष की आड़ में अपने शरीर को छिपाकर उस प्रदेश को देखने लगा और जब वहाँ उसे नहीं देखा तो मेरे मन में (यह विचार) हुआ—'कदाचित् कामाधीन-चित्त होकर उसी का अनुसरण करता हुआ तो (कहीं) नहीं चला गया? अथवा उसके (महाश्वेता के) चले जाने पर होश में आकर लजाता हुआ मेरी

मनसा तत्तदशोभनमाशङ्कमानस्तरुलतागहनानि चन्दनवीथिकालतामण्डपान्सरः कूलानि च वीक्षमाणो निपुणमितस्ततो दत्तदृष्टिःसुचिरं व्यचरम् ।

अथैकस्मिन्सरःसमीपवर्तिनि निरन्तरतया कुसुममय इव मधुकरमय इव परभृतमय इव मयूरमय इवातिमनोहरे वसन्तजन्मभूमिभूते लतागहने कृतावस्थानम्, उत्सृष्टसकलव्यापारतया लिखितमिवोत्कीर्णमिव स्तम्भितमिवोपरतमिव, प्रसुप्तमिव, योगसमाधिस्थमिव, निश्चलमपि स्ववृत्ताच्चलितम्,

---

सुहृदः मित्रस्य स्नेहेन प्रीत्या कातरः भीरुः तेन, **मनसा** = चेतसा, **तत्तत्** = उद्बन्धनादिकम्, **अशोभनम्** = अमङ्गलम्, **आशङ्कमानः** = आशङ्कांकुर्वाणः, **तरुलतागहनानि** = तरुलतानां वृक्षवल्लीनां गहनानि गह्वराणि, **चन्दनवीथिकालतामण्डपान्** = चन्दनवीथिकासु चन्दनवृक्षपङ्क्तिषुयेलतामण्डपाः (जनाश्रयाः) तान्, **सरःकूलानि** = सरोवरतटानि, **च निपुणं** = सम्यक्तया, **वीक्षमाणः** = अवलोकयन्, **इतस्ततः** = परितः, **दत्तदृष्टिः** = दत्ता निक्षिप्ता दृष्टिः येन तादृशः, **सुचिरं** = बहुकालं, **व्यचरम्** = अभ्रमम् ।

अथ = अनन्तरम्, **सरःसमीपवर्तिनि** = सरोवरनिकटस्थिते, **निरन्तरतया** = सान्द्रतया **कुसुममय इव** = कुसुमविरचिते, इव **मधुकरमय इव** = भ्रमरमये, इव, **परभृतमय इव** = कोकिलमये, इव, **मयूरमय इव** = कलापिमये, इव (सर्वत्र उत्प्रेक्षा) **अतिमनोहरे** = अतिसुन्दरे, **वसन्तजन्मभूमिभूते** = वसन्तस्य ऋतुराजस्य जन्मभूमिभूते उद्भवस्थानस्वरूपे, **एकस्मिन्**, **लतागहने** = लतागह्वरे, **कृतावस्थानम्** = कृतं अवस्थानं येन तम् (स्थितम्), 'तमहमद्राक्षम्' इति दूरवर्तिन्या क्रियया सम्बन्धः । द्वितीयैकवचनान्तैः विशेषणैः 'तम् (= पुण्डरीकं)' विशेषयति—**उत्सृष्टसकलव्यापारतया** = उत्सृष्टः परित्यक्तः सकलः सम्पूर्णः व्यापारः उद्योगः येन तस्य भावः तत्ता तया, **लिखितमिव** = चित्रितम्, इव, **उत्कीर्णमिव** = उत्कीरितम्, इव, **स्तम्भितमिव** = जडीकृतम्, इव, **उपरतमिव** = मृतम्, इव, **प्रसुप्तमिव** = शयितम्, इव, **योगसमाधिस्थमिव** = योगः चित्तवृत्तिनिरोधः तस्य समाधौ स्थितम्, इव (सर्वत्र क्रियोत्प्रेक्षा), **निश्चलमपि** = सुस्थिरम्, अपि, **स्ववृत्तात्** = स्वस्य आत्मनः वृत्तात् आचरणात्, **चलितम्** = प्रस्थितम् इति विरोधः, भ्रष्टम् इति तत्परिहारः,

---

आँखों के सामने नहीं आ पा रहा है ? अथवा क्रुद्ध हो मुझे छोड़कर चला गया ? अथवा मुझे ही खोजता हुआ यहाँ से दूसरे स्थान को चला गया ?' इस तरह अनेक प्रकार से सोचता हुआ मैं कुछ देर बैठा रहा । जन्म से लेकर क्षण-भर के भी उसके वियोग का अभ्यास न होने के कारण उसके उस वियोग से (न दीखने से) दुःखी होता हुआ मैं फिर सोचने लगा—'कहीं धैर्य-स्खलन से लज्जित हो कोई अनिष्ट न कर डाले ? (क्योंकि) लज्जा से कुछ भी किया जा सकता है । इससे उसे अकेला छोड़ना ठीक नहीं' ।

एकाकिनमपि सन्मथाधिष्ठितम्, सानुरागमपि पाण्डुतामावहन्तम्, शून्यान्तःकरणमपि हृदयनिवासिदयितम्, तूष्णीकमपि कथितमदनवेदनातिशयम्, शिलातलोपविष्टमपि मरणे व्यवस्थितम्, शापप्रदानभयादिवादत्तदर्शनेन कुसुमायुधेन सन्ताप्यमानम्, अतिनिस्पन्दतया हृदयनिवासिनीं प्रियां द्रष्टुमन्तःप्रविष्टैरिवासह्यसंतापसंत्रासप्रलीनैरिव मनः क्षोभप्रकुपितैरिवोन्मुच्य गतैरिन्द्रियैः

एकाकिनमपि = असहायम्, अपि, मन्मथाधिष्ठितम् = मन्मथेन कामेन अधिष्ठितम् आश्रितम् इति विरोधः कामोपहतम् इति तत्परिहारः, सानुरागमपि = अनुरागः रक्तिमा तेन सहितम्, अपि, पाण्डुताम् = पाण्डुवर्णताम्, आवहन्तम् = धारयन्तम् इति विरोधः, 'सानुरागम्' इत्यत्र अनुरागः प्रेम तेन सहितम् इति तत्परिहारः, शून्यान्तःकरणमपि = शून्यम् रिक्तम् अन्तःकरणं हृदयं यस्य तम्, अपि, हृदयनिवासिदयितम् = हृदये अन्तःकरणे निवासिनी दयिता वल्लभा यस्य तम्, इति विरोधः, शून्य ध्यानान्तरवर्जितम् इति तत्परिहारः, तूष्णीकमपि = मौनावलम्बितम्, अपि, कथितमदनवेदनातिशयम् = कथितः उक्तः मदनस्य कामस्य वेदनायाः सन्तापस्य अतिशयः आधिक्यं येन तम्, इति विरोधः कथितः शरीरस्तम्भनादिना सूचितः इति तत्परिहारः, शिलातलोपविष्टमपि = शिलातले पाषाणतले उपविष्टम् आसीनम् अपि, मरणे, व्यवस्थितम् = स्थितम् इति एकस्य युगपद् अधिष्ठानद्वयवृत्तित्वं विरोधः, व्यवस्थितं कृतनिश्चयम् इति तत्परिहारः, (अत्र 'निश्चलमपि' इत्यारभ्य 'मरणे व्यवस्थितम्' इति यावत् विरोधाभासः) शापप्रदानभयादिव = शापप्रदानस्य अभिसम्पातदानस्य यद् भयं भीतिः तस्मात्, इव, अदत्तदर्शनेन = न दत्तं दर्शनं येन तेन (अदृश्यशरीरेण इति भावः) कुसुमायुधेन = मनोभवेन, सन्ताप्यमानं = पीड्यमानम् (हेतूत्प्रेक्षा) अतिनिस्पन्दतया = अतिशयेन यः निस्पन्दः निष्क्रियत्वं तस्य भावः तत्ता तया, हृदयनिवासिनीं = हृदये निवसन शीलां, प्रियां = प्रणयिनीं, द्रष्टुम् = विलोकयितुम् अन्तःप्रविष्टैरिव = अन्तर्गतैः, इव, असह्यसंतापसंत्रासप्रलीनैरिव = असह्यः सोढुम् अशक्यः यः संतापः संज्वरः तस्मात् यः संत्रासः भयं तेन प्रलीनैः नष्टैः, इव, मनःक्षोभप्रकुपितैरिव = मनसः अन्तःकरणस्य क्षोभेण सङ्कलनेन प्रकुपितैः रिव क्रुद्धैः इव, (अतएव) उन्मुच्य = (तं) परित्यज्य, गतैः = यातैः, इन्द्रियैः =

ऐसा सोचकर उसे ढूँढ़ने का प्रयास करने लगा। खोजते हुये मैंने जैसे-जैसे उसे नहीं देखा, वैसे-वैसे मित्र-स्नेह से कातर अपने मन में नानाविध अमङ्गलों की आशङ्का करता मैं, वृक्षों, लताओं के झुरमुटों, चन्दन वीथिका के लतामण्डपों तथा सरोवरों के तटों को अच्छी प्रकार देखता तथा इधर-उधर दृष्टिपात करता हुआ, देर तक घूमता रहा।

इसके बाद सरोवर के समीपवर्ती एक अत्यन्त मनोहर (तथा) वसन्तकाल की जन्मभूमि स्वरूप लता गह्वर में, जो मानो बहुत सघन होने के कारण पुष्पमय, कोकिल-

शून्यीकृतशरीरम्, निस्पन्दनिमीलितेनान्तर्ज्वलन्मदनदहनधूमाकुलिताभ्यन्तरेणेव पक्ष्मान्तरविवरवान्तानेकधारमनवरतमीक्षणयुगलेन बाष्पजलदुर्दिनमुत्सृजन्तम्, आलोहिनीमधरप्रभामनङ्गाग्नेः प्रदहतो हृदयमूर्ध्वसंसर्पिणीं शिखामिवादाय निष्पतद्भिरुच्छ्वासैस्तरलीकृतासन्नलताकुसुमकेसरम्, वामकपोलशयनीकृतकरतलतया समुत्सर्पद्भिरमलैर्नखांशुभिर्विमलीकृतमच्छाच्छचन्दन-

---

नेत्रादिकरणैः, शून्यीकृतशरीरम् = शून्यीकृत शून्यतां नीतं शरीरं वपुः यस्य तम् (सर्वत्र क्रियोत्प्रेक्षा), निस्पन्दनिमीलितेन = निस्पन्दं क्रियारहितं च तत् निमीलितं मुद्रितं च तथाविधेन, अन्तर्ज्वलन्मदनदहनधूमाकुलिताभ्यन्तरेणेव = अन्तः हृदये ज्वलन् प्रज्वलन् यः मदनदहनः कामाग्निः तस्य धूमः आकुलितं व्याप्तम् अभ्यन्तरम् अन्तः यस्य तेन, इव, (रूपकम्, काव्यलिङ्गं क्रियोत्प्रेक्षा च), ईक्षणयुगलेन = लोचनद्वयेन, अनवरतं = निरन्तरं, पक्ष्मान्तर्रविवरवान्तानेकधारम् = पक्ष्मणां नेत्ररोम्णां यानि विवराणि छिद्राणि तेभ्यः वान्ताः उद्गीर्णाः अनेकाः विविधाः धाराः प्रवाहाः यस्य, तादृशम्, वाष्पजलदुर्दिनम् = वाष्पजलानाम् अश्रुसलिलानां दुर्दिनम् वृष्टिम्, उत्सृजन्तम् = परित्यजन्तम् (वर्षन्तम् इति भावः), हृदयम = मनः, प्रदहतः = दग्धं कुर्वतः अनङ्गाग्नेः = अनङ्गः एव अग्निः तस्य कामानलस्य, (निरङ्गकेवलरूपकम्) ऊर्ध्वसंसर्पिणीम् = उपरिसञ्चरणशीलां, शिखामिव = ज्वालाम्, इव, (श्रौती उपमा जात्युत्प्रेक्षा वा) आलोहिनीम् = आरक्ताम्, अधरप्रभाम् = अधरयोः ओष्ठयोः प्रभां कान्तिम्, आदाय = गृहीत्वा, निष्पतद्भिः = निर्गच्छद्भिः = उच्छ्वासैः = निःश्वासैः, तरलीकृतासन्नलताकुसुमकेसरम् = तरलीकृताः चञ्चलीकृताः आसन्नलतानां निकटवर्तिवल्लीनां कुसुमकेसराः पुष्पकिञ्जल्काः येन तादृशम्, वामकपोलशयनीकृतकरतलतया = वामस्य दक्षिणेतरस्य, कपोलस्य गण्डदेशस्य शयनीकृतं तल्पीकृतं करतलं पाणितलं येन सः तस्य भावः तया, समुत्सर्पद्भिः = समुद्गच्छद्भिः, अमलैः-स्वच्छैः, नखांशुभिः = नखकिरणैः, विमलीकृतम् = धवलीकृतम्, (अतएव) अच्छाच्छचन्दनरसरचितललाटिकमिव =

मय तथा मयूरमथ प्रतीत हो रहा था, उसे बैठा हुआ देखा। सभी क्रिया-व्यापारों को छोड़ देने से वह (ऐसा दीखता था) मानो लिखित (चित्रित) हो, उत्कीर्ण हो, (या) स्तम्भित (कीलित) हो, (या) मृत हो, (या) सोया हो, (या) योग-समाधि में लीन हो। वह निश्चल होकर भी अपने आचरण से भ्रष्ट, एकाकी होने पर भी कामदेव से अधिष्ठित (कामार्त्त) था। सानुराग (रक्तिमा, प्रेम से युक्त) होने पर भी वह पीलापन धारण कर रहा था तथा शून्य अन्तःकरण होते हुये भी हृदय में प्रिया को बसाये था। मौन रहते हुये भी (अपनी चेष्टाओं से) अपनी अत्यधिक वेदना को बता रहा था। शिलातल पर बैठा हुआ भी मृत्यु में

रसरचितललाटिकमिव ललाटमुद्वहन्तम्, अचिरापनीतपारिजातकुसुमकर्णपूरतया सशेषपरिमलामोदलोभोपसर्पिणा कलविरुतच्छलेन मदनसंमोहनमन्त्रमिव जपता मधुकरकुलेन सनीलोत्पलमिव सतमालपल्लवमिव श्रवणदेशं दधानम्, उत्कण्ठाज्वररोमाञ्चव्याजेन प्रतिरोमकूपनिपतितानां मदनशराणां कुसुमशर-शल्यशकलनिकरमिवाङ्गलग्नं बिभ्राणम्, दक्षिणकरेण च स्फुरितनखकिर-

अच्छाच्छेन विमलेन चन्दनरसेन मलयजद्रवेण रचिता निर्मिता ललाटिका तिलक विशेषः यस्मिन् तम्, इव, ललाटं = भालम्, उद्वहन्तम् = धारयन्तम्, (क्रियोत्प्रेक्षा) अचिरापनीतपारिजातकुसुमकर्णपूरतया = अचिरम् सद्यः अपनीतः (महाश्वेतार्पणार्थम्) अपसारितः पारिजातकुसुमकर्णपूरः पारिजातकुसुमम् एव कर्णपूरः श्रवणावतंसः यस्य तस्य भावः तया, सशेषपरिमलामोदलोभोपसर्पिणा=सशेषः (अपसारितेऽपि) अवशिष्टः यः परिमलः मर्दनसम्भूतः गन्धः तस्य यः आमोदः अनुभूतः आनन्दः तस्य लोभेन उपसर्पिणा समीपागमनशीलेन, कलविरुतच्छलेन = कलं मधुरम् यत् विरुतं गुञ्जनं तस्य छलेन व्याजेन, मदनसंमोहनमन्त्रम् = मदनः कामः तस्य सम्मोहनमन्त्रं वशीकरणमन्त्रम्, जपता = जापं कुर्वता, इव, मधुकरकुलेन = भ्रमरसमूहेन, सनीलोत्पलमिव = नीलकमलसहितम्, इव, सतमालपल्लवमिव = तापिच्छकिसलय-सहितम्, इव, श्रवणदेशं = कर्णप्रदेशं, दधानम् = धारयन्तम्, (कलविरुतच्छलेन मदनसम्मोहनमन्त्रमिव इत्यत्र सापह्नवा क्रियोत्प्रेक्षा, अन्यत्र गुणोत्प्रेक्षाद्वयम्, निरपेक्षतया संसृष्टिः च), उत्कण्ठाज्वररोमाञ्चव्याजेन = उत्कण्ठया उत्कलिकया यः ज्वरः कामसन्तापः तेन यः रोमाञ्चः रोमोद्गमः तस्य व्याजेन मिषेण, प्रतिरोमकूप-निपतितानाम् = प्रतिरोमकूपं प्रतिरोमस्थानं निपतितानां लग्नानां, मदनशराणां = कामबाणानाम्—अङ्गलग्नं = देहसक्तं कुसुमशरशल्यशकलनिकरम् = कुसुमशराः पुष्पबाणाःतेषांशल्यशकलानां त्रुटितबाणखण्डानां निकरं समूहम्, बिभ्राणम् = धारयन्तम्, इव (सापह्नवा क्रियोत्प्रेक्षा), दक्षिणकरेण = दक्षिणहस्तेन, च, उरसि = वक्षःस्थले, स्फुरितनखकिरणनिकराम् = स्फुरितः प्रदीप्तः नखकिरणानां नखरश्मीनाम् निकरः

स्थित था (अर्थात् मृत्यु हेतु उद्यत था)। शाप पाने के भय से मानो अदृश्य रहने वाले कामदेव से वह पीड़ित था। वह इन्द्रियों से शून्य (विहीन) शरीर को धारण कर रहा था। अतिनिश्चल होने के कारण (ऐसा लगता था) मानो उसकी इन्द्रियाँ हृदयनिवासिनी प्रिया को देखने के लिये अन्तःप्रविष्ट हों, (या) असह्य संताप के भय से नष्ट हो गई हों, (या) मन के अन्यत्र चले जाने से क्रुद्ध होकर (उसे) छोड़कर चली गई हों। हृदय में जलती हुई कामाग्नि के धुयें से आभ्यन्तर में व्याकुल होने के कारण मानो स्पन्दनहीन एवं मुँदे अपने दोनों नेत्रों से वह लगातार पलकों के छिद्रों से उद्गीर्ण (निकली हुई) अनेक धाराओं से युक्त अश्रुजल की वर्षा कर रहा था। हृदय को जलाती हुई कामाग्नि की ऊर्ध्वगामिनी

णनिकरां करतलस्पर्शसुखकण्टकितामिव मुक्तावलीमविनयपताकामुरसि धारयन्तम्, मदनवशीकरणचूर्णेनेव कुसुमरेणुना तरुभिराहन्यमानम्, आत्मरागमिव संक्रामयद्भिरासन्नैरनिलचलितैरशोकपल्लवैः स्पृश्यमानम्, सुरताभिषेकसलिलैरिवाभिनवपुष्पस्तबकमधुसीकरैर्वनश्रियाभिषिच्यमानम्, अलिनिवहनिपीयमान-

समूहः यस्याः ताम्, (अतः) करतलस्पर्शसुखकण्टकितामिव = करतलस्य पाणितलस्य स्पर्शेन संयोगेन यत् सुखम् आनन्दः तेन कण्टकिताम् रोमाञ्चिताम्, इव, अविनयपताकाम् = अविनयः कामावेशरूपासदाचरणं तस्य पताका ध्वजः ताम्, (इव) मुक्तावलीम् = भवत्यासमर्पितं हारं, धारयन्तम् = दधानम् (पदार्थहेतुकं काव्यलिङ्गम्, क्रियोत्प्रेक्षा, प्रतीयमाना जात्युत्प्रेक्षा अङ्गाङ्गितया सङ्करः च), तरुभिः = वृक्षैः, मदनवशीकरणचूर्णेनेव = मदनस्य कामस्य वशीकरणचूर्णेन लोकसम्मोहनचूर्णेन, इव, कुसुमरेणुना = पुष्पपरागेण, आहन्यमानम् = ताड्यमानम् (जातिक्रियोत्प्रेक्षयोः अङ्गाङ्गिभावसङ्करः), आसन्नैः = समीपवर्तिभिः, अनिलचलितैः = वायुकम्पितैः, आत्मरागम् = स्वलौहित्यम् एव रागम् अनुरागम्, संक्रामयद्भिः = (पुण्डरीके) सञ्चारयद्भिः, इव विद्यमानैः, अशोकपल्लवैः = वञ्जुलकिसलयैः, स्पृश्यमानम्, (लौहित्यानुरागयोः भेदे अपि अभेदाध्यवसायात् अतिशयोक्तिः, संक्रामयद्भिः इव, इत्यत्र क्रियोत्प्रेक्षा, अनयोः सङ्करः च), वनश्रिया = वनलक्ष्म्या, सुरताभिषेकसलिलैरिव = सुरतरूपं यत् राज्यं तदर्थं यः अभिषेकः तस्य सलिलैः जलैः, इव, अभिनवपुष्पस्तवकमधुसीकरैः = अभिनवानां नूतनानां पुष्पस्तवकानां कुसुमगुच्छानाम् मधुसीकरैः, मकरन्दबिन्दुभिः, अभिषिच्यमानम् = अभिषेकविषयीक्रियमाणम् (इव) (जात्युत्प्रेक्षा क्रियोत्पेक्षा च, उभयोः अङ्गाङ्गिभावसङ्करः), कुसुमशरेण = कामेन, सधूमैः = धूमसहितैः, तप्तशरशल्यकैरिव = तप्तानि सोष्णानि यानि शराणां बाणानां शल्यकानि अयोमयानि बाणाग्राणि तैः, इव, अलिनिवहनिपीयमानपरिमलैः = अलिनिवहैः भ्रमरसमूहैः निपीयमानः आस्वाद्यमानः परिमलः विमर्द-

लपट के समान रक्तवर्ण की अधरकान्ति को लेकर बाहर निकलती हुई उच्छ्वासों द्वारा समीपवर्ती लता के पुष्प-केसर को वह कम्पित कर रहा था। बायें कपोल पर रखे गये हाथ के कारण ऊपर जाती हुई नखों की निर्मल किरणों से विमल ललाट को धारण कर रहा था, (ऐसा लगता था) मानो उसका ललाटभाग अतिस्वच्छ चन्दन रस के तिलक से युक्त था। कुछ देर पहले मन्दार-पुष्प के कर्ण-पूर के हटाये जाने से (उसकी) बची हुई सुगन्धजनित आनन्द के लोभ से आकृष्ट भ्रमर वहाँ आकर अस्पष्ट तथा मीठी ध्वनि (गुञ्जन) के बहाने मानो कामदेव के मंत्र का जप कर रहे थे, (अतः) उस भ्रमरसमूह से (ऐसा लगता था) मानो वह नीलकमल (अथवा) तमाल के पल्लव से युक्त कर्णप्रदेश को धारण कर रहा हो।

परिमलैरुपरिपतद्भिश्चम्पककुड्मलैस्तप्तशरशल्यकैरिव सधूमैः कुसुमशरेणताड्यमानम्, अतिबहलवनामोदमत्तमधुकरझङ्कारनिस्वनैर्हुङ्कारैरिव दक्षिणानिलेन निर्भर्त्स्यमानम्, मदकलकोकिलकुलकोलाहलैर्वसन्तजयशब्दकलकलैरिव मधुमासेनाकुलीक्रियमाणम्, प्रभातचन्द्रमिव पाण्डुतया परिगृहीतम्, निदाघगङ्गाप्रवाहमिव

जनितगन्धः येषां तैः, (पुण्डरीकस्य) उपरि, पतद्भिः = पतनशीलैः, चम्पककुड्मलैः = हेमपुष्पमुकुलैः ताड्यमानम् = हन्यमानम् (क्रियोत्प्रेक्षा), दक्षिणानिलेन = मलयसमीरेण, हुङ्कारैरिव = भर्त्सनाबोधकहुंशब्दैः, इव, अतिबहलवनामोदमत्तमधुकरझङ्कारनिस्वनैः = अतिबहलः अतिनिबिडः यः वनस्य आमोदः मनोहरगन्धः तेन मत्ताः मदविह्वलिताः ये मधुकराः भ्रमराः तेषां झङ्कारनिस्वनैः झङ्कारलक्षणशब्दैः, निर्भर्त्स्यमानम् = तिरस्कारपूर्वकम् उच्यमानम्, इव (गुणोत्प्रेक्षा क्रियोत्प्रेक्षा तयोः अङ्गाङ्गिभावसङ्करः च), मधुमासेन = चैत्रमासेन, वसन्तजयशब्दकलकलैरिव = वसन्तस्य ऋतुराजस्य जयशब्दस्य कलकलैः, इव, मदकलकोकिलकुलकोलाहलैः = मदकलाः मदोन्मत्ताः ये कोकिलाः पिकाः तेषां कुलस्य समूहस्य कोलाहलैः कलकलैः, करणैः, आकुलीक्रियमाणम् = व्याकुलीक्रियमाणम् (गुणोत्प्रेक्षा), (वियोगव्यथया) प्रभातचन्द्रमिव = प्रातःकालीनशशिनम्, इव, पाण्डुतया = पाण्डुरत्वेन, परिगृहीतम् = सर्वतः गृहीतम् (पूर्णोपमा), निदाघगङ्गाप्रवाहमिव = निदाघः ग्रीष्म-

---

उत्कण्ठा से (होने वाले) ज्वर से उत्पन्न रोमांच के व्याज से मानो वह रोम-रोम में धँसे हुये काम के कुसुम-बाणों के (आधे धँसे हुये—आधे निकले हुये) टूटे खण्डों के समूह को अपने अङ्गों से धारण कर रहा था। दक्षिण कर से अविनय की ध्वजा के समान मुक्तावली को, जो (दाहिने हाथ की) निकलने वाली नख किरणों से युक्त थी, धारण किये था, मानो वह (मुक्तामाला) हथेली के स्पर्शसुख से कण्टकित हो। तरु-गण मानो काम के वशीकरण चूर्ण के समान कुसुम रेणु से उस पर प्रहार कर रहे थे। समीपवर्ती (तथा) वायु से कम्पित अशोक के पल्लव मानो आत्मराग (लालिमा और अनुराग) देते हुये ही उसका स्पर्श कर रहे थे। वन-लक्ष्मी मानो सुरत-अभिषेक के जल सदृश नवीन पुष्प-गुच्छों के मधुकणों (रसकणों) से उसका अभिषेक कर रही थी। (उसके ऊपर) गिरने वाली चम्पक-कलियों से, जिनके परिमल का पान भ्रमण गण कर रहे थे, (ऐसा लगता था) मानो कामदेव अपने तपाये हुये धूमसहित (धुआँ उड़ाते) बाणों की नोकों से उस पर आघात कर रहा हो। दक्षिण-पवन अपनी हुङ्कार के समान, अत्यन्त निबिड वनपरिमल से उन्मत्त भ्रमरों की गुञ्जारों से मानो (उसकी) भर्त्सना कर रहा था। वसन्त की जय-जयकार के कोलाहल के समान मदमत्त कोकिल-गण के कोलाहल से मानो मधुमास उसे व्याकुल बना रहा था। (उस समय) वह प्रातःकालीन चन्द्रमा के

कृशिमानमागतम्, अन्तर्गतानलं चन्दनविटपमिव म्लायन्तम्, अन्यमिवादृष्टपूर्वमिवापरिचितमिव जन्मान्तरमिवोपगतं रूपान्तरेणेव परिणतमाविष्टमिव महाभूताधिष्ठितमिव ग्रहगृहीतमिवोन्मत्तमिव छलितमिवान्धमिव बधिरमिव मूकमिव विलासमयमिव, मदनमयमिव परायत्तचित्तवृत्तिं परां कोटिमधिरूढं मन्मथावेशस्यानभिज्ञेयपूर्वाकारं तमहमद्राक्षम्।

कालः तस्मिन् यः गङ्गायाः प्रवाहः तम्, इव, **कृशिमानं**=कृशताम्, **आगतम्**=प्राप्तम् (पूर्णोपमा), **अन्तर्गतानलम्**=अन्तर्गतः अभ्यन्तरे प्राप्तः अनलः अग्निः यस्य तं, **चन्दनविटपमिव**=चन्दनस्य मलयजस्य विटपम् वृक्षम्, इव, **म्लायन्तम्**=म्लानतां गच्छन्तम् (पूर्णोपमा) **अन्यमिव**=भिन्नम्, इव, **अदृष्टपूर्वमिव**=अनवलोकितपूर्वम्, इव, **अपरिचितम्** इव, **जन्मान्तरम्**=अपरं जन्म, **उपगतम्**=सम्प्राप्तम्, इव, **रूपान्तरेण**=भिन्नस्वरूपेण, परिणतम्, इव, **आविष्टमिव**=प्रेताद्यभिभूतम्, इव, **महाभूताधिष्ठितमिव**=महाभूतैः वेतालैः अधिष्ठितम् आश्रितम्, इव, **ग्रहगृहीतमिव**=ग्रहैः पूतनादिभिः गृहीतं धृतम्, इव, **उन्मत्तमिव**=उन्मादग्रस्तम्, इव, **छलितमिव**=वञ्चितम् इव, **अन्धमिव**=नेत्रहीनम्, इव, **बधिरमिव**=श्रवणशक्तिहीनम्, इव, **मूकमिव**=वाक्शक्तिरहितम्, इव **विलासमयमिव**=विभ्रमव्याप्तम्, इव **मदनमयमिव**=कामव्याप्तम्, इव (सर्वत्रोत्प्रेक्षा), **परायत्तचित्तवृत्तिम्**=परायत्ता पराधीना चित्तवृत्तिः मनोव्यापारः यस्य तादृशम्, **मन्मथावेशस्य**=कामाभिनिवेशस्य, **पराम्**=चरमां, **कोटिम्**=दशाम्, **अधिरूढं**=समारूढम्, **अनभिज्ञेयपूर्वाकारम्**=अनभिज्ञेयः अभिज्ञातुम् अशक्यः पूर्वाकारः पूर्वाकृतिः यस्य तथाभूतं, **तम्**=पुण्डरीकम्, **अहम्**=कपिञ्जलः **अद्राक्षम्**=अपश्यम्।

समान पाण्डुरता से परिगृहीत था (अर्थात् पीला हो गया था)। वह ग्रीष्म-काल के गंगा-प्रवाह की भांति कृश (तथा) अन्तःप्रविष्ट अग्नि से युक्त चन्दन वृक्ष की भांति म्लान था। (उसे देख कर ऐसा लगता था) मानो वह कोई दूसरा हो, (या) पहले कभी न देखा गया हो, (या) अपरिचित हो, (या) जन्मान्तर को प्राप्त हो, (या) दूसरे रूप में परिणत हो, (या) उसके भीतर डाकिनी आदि प्रवेश कर गई हों, (या) महाभूतों (वेताल आदि) से अधिष्ठित हो, (या) ग्रहों (पिशाच पूतना आदि) से गृहीत हो, (या) उन्मत्त हो, (या) प्रतारित हो, (या) अन्धा हो, (या) बधिर हो, (या) मूक हो, (या) विलासिता से युक्त (विलासी) हो, (या) काम से व्याप्त हो, (या) पराधीन चित्तवृत्ति वाला (जिसकी चित्तवृत्ति पराधीन हो गई हो) हो, (या) कामावेश की पराकाष्ठा को प्राप्त हो। (इन सब कारणों से) उसका पूर्व का आकार तनिक भी पहचान में नहीं आ रहा था।

अपगतनिमेषेण चक्षुषा तदवस्थं चिरमुद्वीक्ष्य समुपजातविषादो वेपमानेन हृदयेनाचिन्तयम्—एवं नामायमतिदुर्विषहवेगो मकरकेतुः येनानेन क्षणेनायमीदृशमवस्थान्तरमप्रतीकारमुपनीतः। कथमेवमेकपदे व्यर्थीभवेदेवंविधो ज्ञानराशिः। अहो बत महच्चित्रम्। तथा नामायमाशैशवाद्धीरप्रकृतिरस्खलितवृत्तिर्मम चान्येषां च मुनिकुमारकाणां स्पृहणीयचरित आसीत्। अद्य त्वितर इव परिभूय ज्ञानमविगणय्य तपःप्रभावमुन्मूल्य गाम्भीर्यं

अपगतनिमेषेण = अपगतः दूरीभूतः निमेषः निमीलनं यस्य तेन, चक्षुषा = नेत्रेण, तदवस्थं = सा पूर्वोक्ता अवस्था दशा यस्य तं, चिरम् = दीर्घकालम् यावत्, उद्वीक्ष्य = विलोक्य, समुपजातविषादः = समुपजातः समुद्भूतः विषादः खेदः यस्य तादृशः (अहं कपिञ्जलः), वेपमानेन = कम्पमानेन, हृदयेन = अन्तःकरणेन, अचिन्तयम् = व्यचारयम्—' एवं नाम = एतादृशः, अयम् = एषः, आतदुर्विषहवेगः = अतिशयेन दुर्विषहः दुःसहः वेगः यस्य सः, मकरकेतुः = मीनकेतनः, येन = हेतुना, अनेन = कामेन, क्षणेन = क्षणमात्रेण, ईदृशम् = एवंविधाम्, अप्रतीकारम् = प्रतीकारायोग्यम्, अवस्थान्तरम् = दशान्तरम्, उपनीतः = प्रापितः । एवंविध एतादृशः, ज्ञानराशिः = ज्ञानसमूहः (पुण्डरीकरूपः), एकपदे = सहसा, एवम् = इत्थं, कथं, व्यर्थीभवेत् = निरर्थकः स्यात् । अहो ! = आश्चर्ये, बत = खेदे, (इदं) महत् = अत्यधिकं = चित्रम् = आश्चर्यम्, 'अहो ही च विस्मये, इति 'खेदानुकम्पासन्तोषविस्मयामन्त्रणे बत' इति च अमरः । तथा नाम = तेन विधिना, अयम् = तपस्वी पुण्डरीकः, आशैशवात् = बाल्यकालात् प्रभृति, धीरप्रकृतिः = धीरा गम्भीराः प्रकृतिः स्वभावः यस्य सः, अस्खलितवृत्तिः = अस्खलिता अच्युता वृत्तिः चरित्रं यस्य तादृशः, मम = कपिञ्जलस्य, च, अन्येषाम् = इतरेषां, मुनिकुमारकाणाम् = ऋषिबालकानां; च = समुच्चये, स्पृहणीयचरितः = स्पृहणीयम् अभिलषणीयं चरितं वृत्तं यस्य सः, आसीत् = अभूत् । तु = किन्तु, अद्य = अस्मिन् दिने, इतर इव = अन्यः, इव, ज्ञानं = बोधं, परिभूय = तिरस्कृत्य, तपःप्रभावम् = तपस्यामाहात्म्यम्, अविगणय्य = अवज्ञाय, गाम्भीर्यम् = गम्भीरताम्, उन्मूल्य = उच्छेद्य, मन्मथेन = कामेन,

अपलक दृष्टि से उसे उस दशा में बहुत देर तक देखकर मुझे खेद हुआ और मैं काँपते हुये हृदय से सोचने लगा—'इस कामदेव का वेग अत्यन्त दुःसह है, जिसके कारण यह क्षणभर में कामद्वारा ऐसे अवस्थान्तर (दूसरी अवस्था) को पहुँचा दिया गया, जिसका प्रतीकार सम्भव नहीं। (अन्यथा) ऐसा (पुण्डरीकरूप) ज्ञान का भण्डार सहसा कैसे व्यर्थ हो जाता ! अहो ! बड़ा आश्चर्य है !, यह बाल्यकाल से ही धीर-स्वभाव तथा अखण्डित (श्रेष्ठ) चरित्र रखने के कारण मेरा तथा अन्य मुनिकुमारों का आदर्श रहा (किन्तु) आज तो इतर जन (साधारण जन)

मन्मथेन जडीकृतः। सर्वथा दुर्लभं यौवनमस्खलितम्' इति। उपसृत्य च तस्मिन्नेव शिलातलैकपार्श्वे समुपविश्यांसदेशावसक्तपाणिस्तमनुन्मीलितलोचनमेव 'सखे पुण्डरीक, कथय किमिदम्' इत्यपृच्छम्। अथ सुचिरसंमीलनालग्नमिव कथमपि प्रयत्नेनानवरतरोदनवशादुपजातारुणभावमश्रुजलपटलपूरप्लावितमुत्कुपितमिव सवेदनमिव स्वच्छांशुकान्तरितरक्तकमलवनच्छायं

जडीकृतः = मूढीकृतः। अस्खलितम् = अखण्डितम्, यौवन = तारुण्यं, सर्वथा = सर्वतोभावेन, दुर्लभम् = दुष्प्राप्यम्, इति। सामान्येन विशेषसमर्थनरूपः अर्थान्तरन्यास.। च = अपि च, उपसृत्य = समीपम् आगत्य, तस्मिन्नेव = पुण्डरीकाधिष्ठिते, एव, शिलातलैकपार्श्वे = प्रस्तरखण्डैकदेशे, समुपविश्य = समवस्थाय, अंसदेशावसक्तपाणि. = अंशदेशे (पुण्डरीकस्य) स्कन्धभागे अवसक्तः न्यस्तः पाणिः हस्तः येन सः (अहं कपिञ्जलः), अनुन्मीलितलोचनमेव = अनुन्मीलते मुदिते लोचने नेत्रे यस्य तादृशम्, एव, तम् = पुण्डरीकम्. "सखे पुण्डरीक ! = मित्र पुण्डरीक !, कथय = वद, किमिदम् = किमेतत्" इति = एवम्, अपृच्छम् = पृष्टवान्। अथ = प्रश्नानन्तरं—'.........चक्षुरुन्मील्य.........शनैः शनैरवदत्' इति वाक्यम्, सुचिरसंमीलनालग्नमिव = सुचिरं दीर्घकालं यावत् संमीलनात् मुद्रणात् आलग्नम् परस्परसंसक्तम्, इव, अनवरतरोदनवशात् = निरन्तराश्रुपातात् उपजातारुणभावम् = उपजातः समुत्पन्नः अरुणभावः रक्तिमा यत्र तत्, अश्रुजलपटलपूरप्लावितम् = अश्रुजलस्य नेत्रसलिलस्य पटलं वृन्दं तस्य पूरः प्रवाहः तेन प्लावितम् व्याप्तम्, उत्कुपितम्, इव, सवेदनमिव = सव्यथम्, इव, स्वच्छांशुकान्तरितरक्तकमलवनच्छायम् = स्वच्छं निर्मलं यत् अंशुकं सूक्ष्मवस्त्रं तेन अन्तरितं पिहितं यत् रक्तकमलवनं

की भांति यह ज्ञान का तिरस्कार कर, तप के प्रभाव की अवहेलना कर तथा गाम्भीर्य का उन्मूलन कर कामदेव के द्वारा जड़ बना दिया गया। सब प्रकार से अखण्डित यौवन (इस संसार में) दुर्लभ है। समीप पहुँचकर तथा उसी शिला-खण्ड के एक किनारे बैठकर एवं उसके कन्धे पर हाथ रखकर आँखे मूँदे हुए ही उससे मैंने पूछा—'सखे! कहो, क्या हैं? इसके बाद निर्मल वस्त्र से ढँके रक्तकमल की भाँति शोभा वाले, लगातार रोने के कारण रक्त वर्ण तथा अश्रुजल के प्रवाह से प्लावित अपने नेत्रों को, जो मानो देर तक मुँदे रहने के कारण चिपक गये थे. (जो) कुपित तथा पीड़ित से थे, किसी प्रकार प्रयत्न पूर्वक खोलकर मन्द-मन्द दृष्टि से उसने मुझे चिरकाल तक देखा; (इसके बाद) बड़ी लम्बी साँस लेकर, लज्जा के कारण लड़खड़ाते स्वल्प अक्षरों में कठिनता से धीरे-धीरे बोला—'मित्र कपिञ्जल! वृत्तान्त जानते हुये भी क्यों मुझसे पूछते हो?' मैं तो यह सुनकर (यद्यपि) उसकी अवस्था से ही (यह समझ गया कि) इसके काम-विकार

चक्षुरुन्मील्य मन्थरया दृष्ट्या सुचिरं विलोक्य मामायततरं निःश्वस्य लज्जाविशीर्यमाणविरलाक्षरं 'सखे कपिञ्जल विदितवृत्तान्तोऽपि किं मां पृच्छसि' इति कृच्छ्रेण शनैः शनैरवदत्। अहं तु तदाकर्ण्य तदवस्थयैवाप्रतीकारविकारोऽयं तथापि सुहृदा सुहृदसन्मार्गप्रवृत्तो यावच्छक्तितः सर्वात्मना निवारणीय इति मनसावधार्याब्रवम्।

'सखे पुण्डरीक, सुविदितमेतन्मम। केवलमिदमेव पृच्छामि, यदेतदारब्धं भवता किमिदं गुरुभिरुपदिष्टम्, उत धर्मशास्त्रेषु पठितम्? उत धर्मार्जनो-

---

कोकनदारण्यं तस्य छाया इव छाया कान्तिः यस्य तादृशं 'रक्तोत्पलं कोकनदम्' इति 'छाया सूर्यप्रियाकान्तिः' इति च अमरः, **चक्षुः** = नेत्रम्, **उन्मील्य** = विमुद्रय, **मन्थरया** = अलसया, **दृष्ट्या** = वीक्षणेन, **सुचिरं** = बहुसमयं यावत्, **मां** = कपिञ्जलं, **विलोक्य** = दृष्ट्वा, **आयततरं** = सुदीर्घं यथा स्यात् तथा, **निःश्वस्य** = उच्छ्वासं विधाय, **लज्जाविशीर्यमाणविरलाक्षरं** = लज्जया ह्रिया विशीर्यमाणानि विदीर्यमाणानि (अस्फुटमुदीर्यमाणानि) विरलानि स्वल्पानि अक्षराणि वर्णाः यत्र क्रियायां तत् यथा स्यात् तथा—'**सखेकपिञ्जल !** = मित्र कपिञ्जल ! **विदितवृत्तान्तोऽपि** = विदितः ज्ञातः वृत्तान्तः येन सः तथाभूतः अपि, **मां, किं, पृच्छसि** = प्रश्नं करोषि ?' **इति** = एवं, **कृच्छ्रेण** = कष्टेन, **शनैः शनैः** = मन्दंमन्दम्, **अवदत्** = अवोचत्। 'लग्नमिव, उत्कुपितमिव' इत्यत्र क्रियोत्प्रेक्षा, 'सव्यथमिव' इत्यत्र गुणोत्प्रेक्षा, 'स्वच्छांशुकान्तरितेत्यादौ' लुप्तोपमा। **अहं** = कपिञ्जलः, **तु, तदाकर्ण्य** = तत् श्रुत्वा, **तदवस्थयैव** = तस्य पुण्डरीकस्य अवस्थया दशया, एव, **अप्रतीकारविकारः** = न विद्यते प्रतीकारः प्रतिक्रिया यस्य तादृशः विकारः यस्य तादृशः (संजातः), **अयं** = पुण्डरीकः, **तथापि** = एवं सत्यपि, **सुहृदा** = मित्रेण, **असन्मार्गप्रवृत्तः** = कुमार्गारूढः, **सुहृद्** = मित्रम्, **यावच्छक्तितः** = यथाशक्ति, **सर्वात्मना** = सर्वप्रकारेण, **निवारणीयः** = वर्जनीयः, **इति** = एवं, **मनसा** = हृदा, **अवधार्य** = विनिश्चित्य, **अब्रवम्** = अवोचम्।

"**सखेपुण्डरीक !** = मित्र पुण्डरीक !, **एतत्** = त्वदीयं वृत्तान्तं, **मम** = कपिञ्जलस्य, **सुविदितम्** = सम्यक् ज्ञातम्। **केवलम्, इदमेव** = एतत्, एव, **पृच्छामि** = प्रश्नं करोमि, **भवता** = त्वया, **यत्** = गर्ह्यम्, **एतत्** = कर्म, **आरब्धम्** प्रस्तुतम्; **इद, किं, गुरुभिः** = हितोपदेशकैः, **उपदिष्टम्** = शिक्षितम् ? **उत** = अथवा, **धर्मशास्त्रेषु** = मनुस्मृत्यादिधर्मशास्त्रग्रन्थेषु, **पठितम्** = अधीतम् ?, **उत, अयं, धर्मार्ज-**

का प्रतीकार नहीं हो सकता फिर भी, 'एक मित्र को अपनी शक्ति भर हर एक प्रकार से असत् मार्ग पर जाते हुये अपने मित्र को रोकना (ही) चाहिये,' इस प्रकार मन में विचार कर बोला—

'मित्र पुण्डरीक ! यह मुझे भली भांति ज्ञात है। केवल यही पूछता हूँ कि तुमने जो यह (कार्य) आरम्भ किया है, यह क्या गुरुओं ने बताया है ? अथवा धर्मशास्त्रों

पायोऽयम्? उतापरस्तपसां प्रकारः? उत स्वर्गगमनमार्गोऽयम्? उत व्रतरहस्यमिदम्? उत मोक्षप्राप्तियुक्तिरियम्? आहोस्विदन्यो नियमप्रकारः? कथमेतद्युक्तं भवतो मनसापि चिन्तयितुं किं पुनराख्यातुमीक्षितुं वा। किमप्रबुद्ध इवानेन मन्मथहतकेनोपहासास्पदतां नीयमानमात्मानं नावबुध्यसे। मूढो हि मदनेनायास्यते। का वा सुखाशा साधुजननिन्दितेष्वेवंविधेषु प्राकृतजनबहुमतेषु विषयेषु भवतः। स खलु धर्मबुद्ध्या विषलतावनं सिञ्चति, कुवलय-

---

नोपायः = पुण्योपार्जनप्रकारः ? उत, तपसां = तपस्यानाम्, अपरः = भिन्नः, प्रकारः = भेदः, ? उत्, अयं, स्वर्गगमनमार्गः = देवलोकगमनपथः ?, उत, इदम्, व्रतरहस्यम् = व्रतस्य गुप्तं तत्त्वम् ? उत, इयं, मोक्षप्राप्तियुक्तिः = मोक्षस्य अपवर्गस्य प्राप्तौ लब्धौ युक्तिः योगविशेषः ? आहोस्वित् = अथवा, अन्यः = अपरः, नियमप्रकारः = व्रतानुष्ठानभेदः ? एतत् = गर्ह्यम् इदम् कर्म, मनसापि = हृदयेनापि, चिन्तयितुं = ध्यातुं, भवतः, कथं, युक्तम् = उचितं, (कथमपि न युक्तम् इति अर्थः), किं, पुनः, आख्यातुम् = प्रवक्तुम्, ईक्षितुं = द्रष्टुं वा। अप्रबुद्धः = अज्ञानी इव, अनेन = एतेन, मन्मथहतकेन = पापिना कामेन, आत्मानं = स्वम्-, उपहासास्पदताम् = परिहासविषयतां, नीयमानं = प्राप्यमाणम्, किं = कथं, नावबुध्यसे = न जानासि। हि = यतः, मूढः = मन्दः, मदनेन = कामेन, आयास्यते = पीड्यते। प्राकृतजनहुमतेपु = प्राकृताः साधारणाः ये जनाः प्राणिनः तैः बहुमतेषु सम्मानितेषु, साधुजननिन्दितेपु = सज्जनैः गर्हितेषु, एवंविधेपु = एतादृशेषु, विषयेपु = भोग्यवस्तुषु, भवतः = तव (तपस्विनः) का, वा, सुखाशा = सुखस्य आशा (न कापि इति भावः) यः, मूढः = मूर्खः अनिष्टानुबन्धिपु = अनिष्टानां दुःखानाम् अनुबन्धः परम्परा विद्यते येषु एवंविधेषु विषयोपभोगेपु = विषयाणाम् उपभोगेषु सेवनेषु, सुखबुद्धिम् = 'सुखकरमिदम्'—इति मतिम्, आरोपयति = स्थापयति (सुखमभिलषति), सः = मूढः, खलु = निश्चयेन, धर्मबुद्ध्या = पुण्यम् इति कृत्वा, विषलतावनं = विषलतानां गरलवल्लीनां वनं विपिनं, सिञ्चति, जलेन इतिशेषः, कुवलयमालेति =

में पड़ा है? या यह धर्मार्जन का उपाय है? अथवा तप का कोई प्रकार है? या यह स्वर्ग जाने का रास्ता है? अथवा व्रत का रहस्य है? या यह मोक्ष प्राप्त करने की युक्ति है? या नियम (व्रत-चर्या) का दूसरा भेद है? आपको तो इस प्रकार सोचना भी उचित नहीं, कहना और देखना तो अलग। अज्ञानी की भांति इस पापी कामदेव द्वारा अपने को उपहास का पात्र बनते देखकर क्यों नहीं चेतते? निश्चित रूप से मूर्ख ही कामदेव द्वारा पीड़ित होता है। सज्जनों द्वारा निन्दित (तथा) साधारण जनों द्वारा सम्मानित इस प्रकार के विषयों में आपको किस सुख की आशा है? जो मूढ़ अनिष्टोत्पादक (परिणाम में क्लेशकर) विषयों के उपभोग में

मालेति निस्त्रिंशलतामालिङ्गति, कृष्णागुरुधूमलेखेति कृष्णसर्पमवगूहते, रत्नमिति ज्वलन्तमङ्गारमभिस्पृशति, मृणालमिति दुष्टवारणदन्तमुषलमुन्मूलयति, मूढो विषयोपभोगेष्वनिष्टानुबन्धिषु यः सुखबुद्धिमारोपयति। अधिगतविषयतत्त्वोऽपि कस्मात्खद्योत इव ज्योतिर्निवार्यमिदं ज्ञानमुद्वहसि, यतो न विनारयसि प्रबलरजःप्रसरकलुषितानि स्रोतांसीवोन्मार्गप्रस्थितानीन्द्रियाणि, न नियमयसि

'नीलकमलमाला इयम्' इति बुद्ध्या, निस्त्रिंशलताम् = निस्त्रिंशः खड्गः सः लता इव ताम्, आलिङ्गति = आश्लिष्यति, कृष्णागुरुधूमलेखेति = कृष्णागुरुः काकतुण्डः तस्य धूमलेखा धूमपङ्क्तिः, इति बुद्ध्या, कृष्णसर्पम् = कृष्णः चासौ सर्पः तम् (भीषणपन्नगम्), अवगूहते = आलिङ्गति, रत्नमिति = रत्नं मणिः इति मत्वा, ज्वलन्तम् = देदीप्यमानम्, अङ्गारम्, अभिस्पृशति = आमृशति, मृणालमिति = कमलकन्दम् इति (कृत्वा), दुष्टवारणदन्तमुषलम् = दुष्टवारणस्य मदोन्मत्तहस्तिनः दन्तमुषलं दशनायोग्रम्, 'अयोग्रो मुषलोऽस्त्रीस्यात्' इत्यमरः, उन्मूलयति = उत्पाटयति। माला निदर्शना। अधिगतविषयतत्त्वोऽपि = अधिगतं ज्ञातं विषयतत्त्वं भोग्यवस्तुस्वरूपं येन तथाभूतः, अपि, कस्मात् = कुतः, खद्योतइव = ज्योतिरिङ्गणः, इव, ज्योतिर्निवार्यं = ज्योतिः तत्त्वज्ञानं प्रकाशः च तेन निवार्यं दूरीकरणार्हं, ज्ञानम्, उद्वहसि = धारयसि (यथा खद्योतस्य ज्योतिर्धारणम् तुच्छम् तथैव तव ज्ञानधारणम् इति भावः, श्रौती उपमा), यतः, प्रबलरजःप्रसरकलुषितानि = प्रबलः तीव्रः यः रजसः रजोगुणजनितस्य कामस्य प्रसरः वेगः तेन कलुषितानि दूषितानि, (पक्षान्तरे—प्रबलस्य रजसः धूलेः प्रसरेण विस्तारेण कलुषितानि मलिनीकृतानि) स्रोतांसीव = स्वतोऽम्भः प्रसरणानि, इव, उन्मार्गप्रस्थितानि = उत्पथप्रवृत्तानि, इन्द्रियाणि = चक्षुरादिकरणानि, ननिवारयसि = न रुणत्सि, क्षुभितं = चञ्चलं, मनः = मानसं, च, नियमयसि = निरोद्धुं शक्नोषि पूर्णोपमा। नाम = कुत्सने 'नामप्रकाश्य-

---

सुख की अभिलाषा करता है; (एक तरह से) वह (मूर्ख) निश्चय ही धर्म समझ कर विषलता को सींचता है, नीलकमल की माला जानकर तलवार का आलिङ्गन करता है, कृष्णागुरु (काकतुण्ड) की धूम्र-लेखा समझ कर काले सर्प का स्पर्श करता है, रत्न मान कर जलते हुये अङ्गार को छूता है, कमलकन्द समझ कर दुष्ट हाथी के दाँत को उखाड़ता है। विषयों का स्वरूप समझ कर भी जुगनू की भाँति ज्योति (तत्त्वज्ञान, प्रकाश) से दूर करने योग्य ज्ञान को क्यों धारण किये हो, जिसके कारण न तो (प्रबल धूलि के प्रसार से कलुषित) स्रोतों की भाँति, रजोगुणजनित काम के प्रबलवेग से दूषित (एवं) उलटे मार्ग (कुमार्ग) पर जाने वाली इन्द्रियों को रोक पाते हो, न तो क्षुब्ध मन का नियन्त्रण ही कर पा रहे हो? यह अनङ्ग कौन

च क्षुभितं मनः। कोऽयमनङ्गो नाम। धैर्यमवलम्ब्य निर्भर्त्स्यतामयं दुराचारः' इत्येवं वदत एव मे वचनमाक्षिप्य प्रतिपक्ष्मान्तरालप्रवृत्तबाष्पवेणिकं प्रमृज्य चक्षुः करतलेन पाणौ मामवलम्ब्यावोचत्-'सखे ! किं बहुनोक्तेन। सर्वथा स्वस्थोऽसि। आशीविषविषवेगविषमाणामेतेषां कुसुमचापसायकानां पतितोऽसि न गोचरे। सुखमुपदिश्यते परस्य। यस्य चेन्द्रियाणि सन्ति, मनो वा विद्यते,

---

यः पश्यति वा शृणोति वा, श्रुतमवधारयति वा, यो वा शुभमिदं न शुभमिद-

संभाव्यक्रोधोपगमकुत्सने' इत्यमरः, अयम् = एषः, अनङ्गः = कामः, कः ? (नितान्त-तुच्छः कामः इति भावः), धैर्यम् = धीरताम्, अवलम्ब्य = आश्रित्य, अयम् = एषः, दुराचारः = कदाचारः (कामः), निर्भर्त्स्यताम् = तिरस्क्रियताम्, इत्येवं = पूर्वोक्तप्रकारेण, वदत एव = कथयतः, एव, मे = मम, वचनम् = कथनम्, आक्षिप्य = विच्छिद्य, प्रतिपक्ष्मान्तरालप्रवृत्तबाष्पवेणिकम् = प्रति प्रत्येकं यत् पक्ष्मणः नेत्रलोम्नः अन्तरालं मध्यं तत्र प्रवृत्ताः चलिताः बाष्पाणाम् अश्रुजलानां वेणिकाः धाराः यस्मिन् तादृश, चक्षुः = नेत्रं, प्रमृज्य = सम्प्रोञ्छ्य, करतलेन = निजहस्त-तलेन, पाणौ = हस्तं, माम् = कपिञ्जलम्, अवलम्ब्य = आश्रित्य (ममहस्तं स्वकर-तलेन धृत्वा), अवोचत् = अवदत्—'सखे = वयस्य ! बहुना = अधिकेन, उक्तेन= कथनेन, किंम् = किं प्रयोजनम् ? (न किमपि इति भावः), सर्वथा = सर्वप्रकारेण, स्वस्थः = निरुपद्रवः, असि = भवसि। आशीविंषविषवेगविषमाणाम् = आशीविषाः सर्पाः तेषां विषवेगः गरलप्रसारः तद्वत् विषमाणाम् कठिनानाम् (वृत्त्यनुप्रासः), एतेषां, कुसुमचापसायकानां = कुसुमचापः पुष्पधन्वा (कामः) तस्य सायकानां शराणां, गोचरे = विषये, न पतितः, असि = भवसि। परस्य = अन्यस्य, (मद्विधस्य जनस्य कृते) सुखम् = अनायासम् यथा स्यात् तथा, उपदिश्यते = उपदेशः क्रियते। वाक्यार्थहेतुककाव्यलिङ्गम्। यस्य = जनस्य, च, इन्द्रियाणि = करणानि (समर्थानि) सन्ति = भवन्ति, वा = अथवा, (एवं सर्वत्र) मनः = मानसं (निरुपद्रवं), विद्यते= वर्तते, यः, पश्यति = सदसत् अवलोकयति, वा, शृणोति = आकर्णयति, वा, श्रुतम् = आकर्णितम् (उपदिष्टमिति तात्पर्यम्) अवधारयति = जानाति, वा, यः = जनः, वा, इदं, शुभम् = मङ्गलम्, इदं, न शुभम् = अमङ्गलम्, इति, विवेक्तुम् = विवेचनं

है ! धैर्य का अवलम्बन कर इस दुराचारी की भर्त्सना करो' इस प्रकार मैं कह ही रहा था कि (बीच में) मेरी बात काटकर, अपनी आँखों को, जिनके प्रत्येक बरौनियों के बीच से आसुओं की धारा बह रही थी, पोंछ कर तथा हथेली से मेरा सहारा लेकर (वह) बोला—'मित्र ! अधिक कहने से क्या लाभ ? तुम सब प्रकार से स्वस्थ हो। सर्प के विष-वेग के समान विषम (कठिन) कामदेव के इन बाणों का निशाना नहीं बने हो, (अतएव तुम) दूसरे की सरलता से उपदेश दे रहे हो। वह (व्यक्ति) उपदेश

भिनि विवेक्तुमलं स खलूपदेशमर्हति। मम तु सर्वमेवेदमतिदूरापेतम्। अवष्टम्भो ज्ञानं धैर्यं प्रतिसंख्यानमित्यस्तमितैषा कथा। कथमप्येवमेवायत्नविधृतास्तिष्ठन्त्यसवः। दूरातीतः खलूपदेशकालः। समतिक्रान्तो धैर्यावसरः। गता प्रतिसंख्यानवेला। अतीतो ज्ञानावष्टम्भसमयः। केन वान्येनास्मिन्समये भवन्तमपहायोपदेष्टव्यमुन्मार्गप्रवृत्ति-निवारणं वा करणीयम्। कस्यान्यस्य वा वचसि मया स्थातव्यम्। को वापरस्त्वत्समो मे जगति बन्धुः। किं करोमि। यन्न शक्नोमि निवारयितुमात्मानम्। इयमनेनैव क्षणेन भवता दृष्टा दुष्टावस्था।

कर्तुम्, अलं = समर्थः, सः = जनः, खलु = निश्चयेन, उपदेशमर्हति = उपदेशयोग्यः भवति। मम तु = (कामविह्वचेतसः) पुण्डरीकस्य तु, इदम् = पूर्वोक्तम्, सर्वमेव = निखिलम्, एव, अतिदूरापेतम् = अतिदूरंगतम्। अवष्टम्भः = चित्तवृत्तिनिरोधः, ज्ञानं = प्रबोधः, धैर्यं = धीरता, प्रतिसंख्यानम् = अध्यात्मज्ञानम्, इति, एषा = एतत्सम्बन्धिनी, कथा = वार्ता, अस्तमिता = अस्तङ्गता। एवमेव = इत्थमेव, अयत्नविधृताः = अयत्नेन अनायासेन विधृताः, स्वयमवस्थिताः, असवः = (मे) प्राणाः, कथमपि = केनापि प्रकारेण, तिष्ठन्ति = मम देहे वर्तन्ते। खलु = निश्चयेन, उपदेशकालः = उपदेशस्य शिक्षायाः कालः समयः, दूरातीतः = दूरं यातः, धैर्यावसरः = धीरतासमयः, समतिक्रान्त = व्यतीतः। प्रतिसंख्यानवेला = अध्यात्मज्ञानकालः, गता = दूरीभूता, ज्ञानावष्टम्भसमयः = ज्ञानेन सदसद्विवेचनेन यः अवष्टम्भः चित्तवृत्तिनिरोधः तस्य समयः अवसरः, अतीतः = अतिक्रान्तः। अस्मिन् समये = एतस्मिन् विपत्तिकाले, भवन्तम् = त्वाम्, अपहाय = त्यक्त्वा, अन्येन = अपरेण, केन = जनेन, उपदेष्टव्यम् = शिक्षयितव्यम्, वा, उन्मार्गप्रवृत्तिनिवारणम् = उन्मार्गे असन्मार्गे या प्रवृत्तिः प्रवर्तनं तस्य निवारणम् प्रतिषेधः, करणीयम् = (केन) आचरणीयम् (न केनापि इति भावः)। अन्यस्य = भवदतिरिक्तस्य कस्य = उपदेशकस्य, वचसि = उपदेशे, वा, मया = (किंकर्तव्यविमूढेन) पुण्डरीकेण, स्थातव्यम् = वर्तितव्यम् (न कस्यापि इति आशयः)। जगति = संसारे, त्वत्समः = भवत्सदृशः, अपरः = अन्यः, कः, वा, बन्धुः = भ्राता, किं करोमि = किं विदधामि? यत् = यस्मात्, आत्मानं = स्वं, निवारयितुम् = निरोद्धुं, न शक्नोमि = न समर्थः भवामि। अनेनैव = एतेन, एव, क्षणेन = समयेन, भवता = त्वया, दुष्टावस्था =

देने के योग्य होता है, जिसकी इन्द्रियाँ (समर्थ) हों अथवा जिसका चित्त ठिकाने हो, जो (भला-बुरा) देखता हो, सुनता हो अथवा सुनी बात को समझता हो तथा जो शुभ एवं अशुभ की विवेचना में समर्थ हो। मेरा तो यह सब बहुत दूर चला गया है। चित्तवृत्ति-निरोध ज्ञान, धैर्य अध्यात्मज्ञान—ये सब अब अस्त हो गये। किसी प्रकार बिना प्रयत्न के ही मेरे प्राण रुके हैं। उपदेश का समय दूर चला गया। धैर्य का अवसर बीत गया। अध्यात्मज्ञान

तद्गत इदानीमुपदेशकालः। यावत्प्राणिमि तावदस्य कल्पान्तोदितद्वादशदिनकरकिरणातपतीव्रस्य मदनसंतापस्य प्रतिक्रियां क्रियमाणामिच्छामि। पच्यन्त इव मेऽङ्गानि। उत्क्वथ्यत इव हृदयम्। प्लुष्यत इव दृष्टिः। ज्वलतीव शरीरम्। अत्र यत्प्राप्तकालं तत्करोतु भवान्,' इत्यभिधाय तूष्णीमभवत्।

एवमुक्तोऽप्यहमेनं प्राबोधयं पुनः पुनः। यदा शास्त्रोपदेशविशदैः सनिदर्शनैः सेतिहासैश्च वचोभिः सानुनयं सोपग्रहं चाभिधीयमानोऽपि

कष्टदायिनीदशा, दृष्टा = विलोकिता। तत् = तस्मात्, इदानीम् = सम्प्रति, उपदेशकालः = प्रबोधनसमयः, गतः = व्यतीतः। यावत् = यत्कालपर्यन्तं, प्राणिमि = (अहं) जीवामि, तावत् = तावत्कालपर्यन्तम्, कल्पान्तोदितद्वादशदिनकरकिरणातपतीव्रस्य = कल्पान्ते पलयकाले उदिताः उदयं प्राप्ताः ये द्वादश दिनकराः भास्कराः तेषां किरणानां रश्मीनां यः आतपः सन्तापः तद्वत् तीव्रस्य, असह्यस्य, अस्य = मया अनुभूयमानस्य, मदनसंतापस्य = कामज्वरस्य, प्रतिक्रियाम् = उपशान्ति, क्रियमाणाम् = विधीयमानाम्, इच्छामि = अभिलषामि। लुप्तोपमा। मे = मम, अङ्गानि = हस्तपादादीनि, पच्यन्त इव = पाकविषयी क्रियन्ते इव। हृदयम् = (मे) मनः, उत्क्वथ्यत इव = क्वाथं प्राप्यते, इव। दृष्टिः = (मम) नेत्रं, प्लुष्यत इव = दह्यते, इव। शरीरं = वपुः, ज्वलतीव = भस्मी भवति, इव। (अतः) अत्र = अस्मिन् प्रसङ्गे, यत् = यत्किञ्चित्कर्म, प्राप्तकालं = समयोचितं, तत् = तदेव, भवान् = कपिञ्जलः, करोतु = विदधातु, इत्यभिधाय = एवमुक्त्वा, तूष्णीम् = मौनम्, अभवत् = अभूत्।

एवम् = पूर्वोक्तविधिना, उक्तः = अभिहितः, अपि, अहम् = कपिञ्जलः, एनं = पुण्डरीकं, पुनः पुनः = भूयः भूयः, प्राबोधयम् = प्रबोधं कृतवान्। यदा, शास्त्रोपदेशविशदैः = शास्त्रस्य धर्मादिप्रतिपादकग्रन्थस्य उपदेशेन शिक्षया विशदैः निर्मलैः, सनिदर्शनैः = दृष्टान्तसहितैः, सेतिहासैः = इतिहासयुक्तैः च, वचोभिः = वचनैः, सानुनयं = प्रेमपूर्वकं, सोपग्रहम् = सानुकूल्यम् च, अभिधीयमानः = उच्यमानः,

---

का समय (भी) समाप्त हो चुका। ज्ञान के द्वारा चित्तवृत्ति के निरोध का भी समय टल गया। इस (विपदा के) समय आपके अतिरिक्त कौन उपदेश देगा? अथवा कुमार्ग पर चलने से रोकेगा? दूसरे किसके वचन के अधीन रह सकता हूँ? इस संसार में आपके सदृश दूसरा कौन मेरा बन्धु है? क्या करूँ? जो अपने को रोक नहीं पा रहा हूँ। इस क्षण आपने (मेरी) यह दुरवस्था देख ली, इसलिए अब तो उपदेश का समय गया। जब तक जीता हूँ तब तक प्रलय-काल में उदित बारहों सूर्यों की किरणों से उत्पन्न आतप के समान असह्य इस काम-संताप की प्रतिक्रिया (उपशान्ति) कराना चाहता हूँ। मेरे अङ्ग जैसे पकाये जा रहे हैं, हृदय मानो उबला जा रहा है,

नाकरोत्कर्णं तदाहमचिन्तयम्—'अतिभूमिमयं गतो न शक्यते निवर्तयितुम्, इदानीं निरर्थकाः खलूपदेशाः। तत्प्राणपरिरक्षणेऽपि तावदस्य यत्नमाचरामि' इति कृतमतिरुत्थाय गत्वा तस्मात् सरसः सरसा मृणालिकाः समुद्धृत्य कमलिनीपलाशानि जललवलाञ्छितान्यादाय गर्भधूलिकषायपरिमलमनोहराणि च कुमुदकुवलयकमलानि गृहीत्वागत्य तस्मिन्नेव लतागृहशिलातले शयनमस्याकल्पयम्। तत्र च सुखनिषण्णस्य प्रत्यासन्नवर्तिनां चन्दनविटपादीनां मृदूनि

अपि, (सः पुण्डरीकः) कर्णनाकरोत्=मद् वचनं न श्रुतवान्, तदा, अहम्=कपिञ्जल, अचिन्तयम्=विचारं कृतवान्—'अयम्=पुण्डरीकः, अतिभूमिम्=(कामस्य) परांकोटिं, गतः=प्राप्त', (अतः) निवर्तयितुं=ततः व्यावर्तयितुं, न शक्यते=न पार्यते, इदानीम्=साम्प्रतम्, खलु=निश्चयेन, उपदेशाः=शिक्षाः, निरर्थकाः=निष्प्रयोजनाः। तत्=तस्मात्, तावत्=प्रथमम्, अस्य=कामार्तपुण्डरीकस्य, प्राणपरिरक्षणे=जीवितपरित्राणे, अपि, यत्नम्=उद्योगम्, आचरामि=करोमि' इति=एवं, कृतमतिः=कृता विहिता मतिः बुद्धिः येन सः (अहम्), उत्थाय=उत्थानं कृत्वा, "......शयनमस्याकल्पयम्" इति वाक्यम्, गत्वा=व्रजित्वा, तस्मात् सरसः=अच्छोदाभिधानात् सरोवरात्, सरसाः=रससंयुताः, मृणालिकाः=कमलिनीः, समुद्धृत्य=उत्पाट्य, जललवलाञ्छितानि=जलस्य वारिणः लवैः कणैः लाञ्छितानि युक्तानि, कमलिनीपलाशानि=नलिनीपत्राणि, आदाय=गृहीत्वा, गर्भधूलिकषायपरिमलमनोहराणि=गर्भे पुष्पाभ्यन्तरे याः धूलयः परागाः तासां यः कषायः परिमलः गन्धः तेन मनोहराणि हृदयावर्जकानि, कुमुदकुवलयकमलानि=श्वेतकमलनीलोत्पलपङ्कजानि, च, गृहीत्वा=आदाय, आगत्य,=समेत्य, तस्मिन्नेव=पूर्वोक्ते, एव, लतागृहशिलातले=लतागृहस्य वल्लीभवनस्य शिलातले प्रस्तरतले. अस्य=पुण्डरीकस्य, शयनम्=शय्याम्, अकल्पयम्=व्यरचयम्। तत्र च=शयनोपरि, च, सुखनिषण्णस्य=सुखपूर्वकमुपविष्टस्य, (पुण्डरीकस्य) प्रत्यासन्नवर्तिनां=समीपस्थानां, चन्दनविटपादीनाम्=चन्दनवृक्षादीनाम्, मृदूनि=कोमलानि, किसलयानि=नूतनपल्लवानि, निष्पीड्य=

नेत्र मानो जल रहे हैं, शरीर जैसे भस्म हो रहा है। (इसलिए) अब (तो) जो कुछ समयोचित हो, वह आप करें।' ऐसा कहकर वह चुप हो गया।

ऐसा कहने पर भी मैंने उसको (पुण्डरीक को) बार-बार समझाया। जब शास्त्रोपदेश से निर्मल, दृष्टान्त एवं इतिहास से युक्त वचनों द्वारा प्रेमपूर्वक अनुकूलता के साथ (बार-बार) समझाये जाने पर भी उसने कान न दिया (अर्थात् बातें न सुनीं), तब मैं सोचने लगा—'यह बहुत दूर तक चला गया है अब लौटाया नहीं जा सकता। इस समय उपदेश निरर्थक हैं। इसलिये इसके प्राण बचाने का यत्न करूँ।' ऐसा निश्चय कर मैं उठा

किसलयानि निष्पीड्य तेन स्वभावसुरभिणा तुषारशिशिरेण रसेन ललाटिकामकल्पयम्। आचरणतलादङ्गचर्चां चारचयम्। अभ्यर्णपादपस्फुटितवल्कलविवरशीर्णेन च करसंचूर्णितेन कर्पूररेणुना स्वेदप्रतीकारमकरवम्। उरोनिहितचन्दनद्रवार्द्रवल्कलस्य स्वच्छसलिलसीकरनिकरस्राविणा कदलीदलेन व्यजनक्रियामन्वतिष्ठम्। एवं च मुहुर्मुहुरन्यदन्यन्नलिनदलशयनमुपकल्पयतो मुहुर्मुहु-

संमर्द्य, तेन = अवर्णनीयेन, स्वभावसुरभिणा = सहजसौरभमयेन, तुषारशिशिरेण = हिमसदृशशीतलेन, रसेन = द्रवेण, ललाटिकाम् = तिलकविशेषम्, अकल्पयम = अरचयम्। आचरणतलात् = चरणतलात् आरभ्य, अङ्गचर्चाम् = (शैत्यप्रापणाय) शरीरलेपनम्, च, अरचयम् = अकरवम्। अभ्यर्णपादपस्फुटितवल्कलविवरशीर्णेन = अभ्यर्णाः निकटवर्तिनः ये पादपाः वृक्षाः तेषां स्फुटितानां स्फोटं गतानाम् वल्कलानां त्वचां विवरेभ्यः छिद्रेभ्यः शीर्णेन गलितेन, करसंचूर्णितेन = हस्तमर्दितेन, कर्पूररेणुना = घनसाररजसा, स्वेदप्रतीकारम् = धर्मजलशोषणम्, च, अकरवम् = अकार्षम्। उरोनिर्हितचन्दनद्रवार्द्रवल्कलस्य = उरसि वक्षसि निहितं स्थापितं चन्दनद्रवेण मलयजरसेन. आर्द्रं क्लिन्नं वल्कलं यस्य तादृशस्य (पुण्डरीकस्य). स्वच्छसलिलसीकरनिकरस्राविणा = स्वच्छाः निर्मलाः सलिलसीकराः जलकणाः तेषां निकरः समूहः तस्य स्राविणा वर्षकेण, कदलीदलेन = रम्भापत्रेण, व्यजनक्रियाम् = उपवीजनकर्म, अन्वतिष्ठम् = अकरवम्। एवं च = पूर्वोक्तविधिना च, मुहुर्मुहुः = पौनः पुन्येन, अन्यत्-अन्यत् = नवं नवम् इति भावः, नलिनदलशयनम् = कमलपत्रतल्पम्, उपकल्पयतः = विरचयतः, मुहुर्मुहुः, चन्दनचर्चाम् = मलयजलेपम्, आरचयतः = प्रकुर्वतः, मुहुर्मुहुः, च, स्वेदप्रतिक्रियां = धर्मजलप्रतीकारं, कुर्वतः =

और उस तालाब से सरस कमलिनियाँ उखाड़ कर तथा जलकणों से युक्त कमलिनी के पालाश (पत्ते), अपने मध्य के पराग की कसैली सुगन्ध से मनोहारी कुमुद, नीलोत्पल एवं कमलों को लाकर (मैंने) उसी लतामंडप की शिला पर उसकी शय्या बना दी। वहाँ उसके सुखपूर्वक बैठ जाने पर मैंने समीपस्थ चन्दनादि वृक्षों के कोमल पत्ते पीसकर, उनके स्वभावतः सुगन्धित एवं तुषार-सदृश शीतल रस से उसके माथेपर मला तथा पैरों तक सारे शरीर में लेप किया। निकटवर्ती वृक्षों की फटी हुई छालों के छिद्रों से निकले कर्पूर को हाथ से मल कर चूर्ण बनाया और उससे उसके (पुण्डरीक के) पसीने को दूर किया। पुण्डरीक के वक्षःस्थल पर चन्दन के रस से गीला वल्कल-वस्त्र रखकर मैंने निर्मल जलकणों को टपकाने वाले केले के पत्ते से उसे पङ्खा झला। इस प्रकार बार-बार नये-नये कमलिनी के पत्तों की शय्या बनाता हुआ (मैं) बार-बार चन्दन का लेप करता रहा। बार-बार पसीने को सुखाने का

श्चन्दनचर्चामारचयतो मुहुर्मुहुश्च स्वेदप्रतिक्रियां कुर्वतः कदलीदलेनानवरतं वीजयतः समुद्भून्मे मनसि चिन्ता—'नास्ति खल्वसाध्यं नाम भगवतो मनोभुवः। क्वायं हरिण इव वनवासनिरतः स्वभावमुग्धो जनः, क्व च विविध-विलासरसराशिर्गन्धर्वराजपुत्री महाश्वेता? सर्वथा नहि किंचिदस्य दुर्घटं दुष्करमनायत्तमकर्तव्यं वा जगति। दुरुपपादेष्वर्थेष्वयमवज्ञया विचरति। नायं केनापि प्रतिकूलयितुं शक्यते। का वा गणना सचेतनेषु, अपगत-चेतनान्यपि सङ्घटयितुमलं यद्यस्मै रोचते। तत्कुमुदिन्यपि दिनकरकरानुरागिणी

आचरतः, कदलीदलेन = रम्भापत्रेण (च), अनवरतं = निरन्तरं, वीजयतः = वीजनं कुर्वतः, मे = कपिञ्जलस्य, मनसि = चेतसि, चिन्ता = विचारः, समुद्भूत् = समजायत—"भगवतः, मनोभुवः = मनसिजस्य (कृते), खलु = निश्चयेन, असा-ध्यम् = अकरणीयम् (कर्म), नास्ति = न वर्तते, नाम = कोमलमन्त्रणे। हरिण-इव = मृगः, इव, स्वभावमुग्धः = स्वभावेनसरलः, वनवासनिरतः = अरण्यनिवास-शीलः, अयम् = एषः, जनः = प्राणी (पुण्डरीकः) क्व। विविधविलासरसराशिः = विविधाः अनेक प्रकाराः ये विलासाः विभ्रमाः तेषां रसस्य अनुभवजनितानन्दस्य, राशिः पुञ्जः, एतादृशी गन्धर्वराजपुत्री = गन्धर्वराजसुता, महाश्वेता, च, क्व? श्रौतीउपमा, विषमालङ्कारः। अस्य = कामस्य (कृते), जगति = लोके, किञ्चित् = किमपि, सर्वथा = सर्वतोभावेन, दुर्घटं = दुःसाध्यं, दुष्करम् = कठिनम्, अनाय-त्तम् = अनधीनम्, अकर्तव्यम् = अकरणीयं, वा = विकल्पे, नहि = नैव, (वर्तते)। अयम् = एषः कामः, दुरुपपादेषु = दुष्करेषु, अर्थेषु = विषयेषु, अपि, अवज्ञया = अवहेलया, विचरति = भ्रमति। अयं = कामः, केनापि = जनेन, प्रतिकूलयितुं = प्रतिरोद्धुं, न शक्यते = न पार्यते। वा = अथवा, सचेतनेषु = मानवादिषु, का गणना = का वार्ता, यदि = चेत्, अस्मै = कामाय, रोचते, अपगतचेतनान्यपि = जडानि, अपि, सङ्घटयितुम् = मिथः संयोजयितुम्, अलं = समर्थः तत् = तदा, कुमुदिन्यपि = कैरविणी, अपि, दिनकरकरानुरागिणी = सूर्यकिरणप्रेमिका, भवति =

उपाय करते हुए तथा लगातार केले के पत्ते से पङ्खा झलते हुये मेरे मन में विचार आया—'कामदेव के लिये कुछ भी दुष्कर नहीं है। कहाँ वनवास में निरत, स्वभाव से मुग्ध हरिण के समान यह पुण्डरीक और कहाँ नाना-प्रकार के विलासों (विभ्रमों) की राशि गन्धर्वराज-पुत्री महाश्वेता? इस कामदेव के लिये इस संसार में (कोई भी वस्तु) सर्वतोभावेन दुःसाध्य, कठिन, अनधीन अथवा अकरणीय नहीं है। यह काम दुष्कर विषयों में भी अवहेलना पूर्वक प्रवृत्त होता है। इसे कोई रोक नहीं सकता। सचेतन (पदार्थों) का कहना ही क्या, यदि यह चाहे तो अचेतन (पदार्थों) का भी (परस्पर) योग करा सकता है। कुमुदिनी भी भानु-रश्मियों की अनुरागिणी बन

भवति। कमलिन्यपि शशिकरद्वेषमुज्झति। निशापि वासरेण सह मिश्रतामेति। ज्योत्स्नाप्यन्धकारमनुवर्तते। छायापि प्रदीपाभिमुखमवतिष्ठते। तडिदपि जलदे स्थिरतां व्रजति। जरापि यौवनेन संचारिणी भवति। किं वा तस्य दुःसाध्यमपरम्। एवंविधो येनायमगाधगाम्भीर्यसागरस्तृणवल्लघुतामुपनीतः। क्व तत्तपः, क्वेयमवस्था? सर्वथा निष्प्रतीकारेयमापदुपस्थिता। किमिदानीं कर्तव्यम्। किं वा चेष्टितव्यम्। कां दिशं गन्तव्यम्। किं शरणम्। को वोपायः। कः सहायः। कः प्रकारः। का युक्तिः कः समाश्रयः। येनास्यासवः

जायते। कमलिन्यपि=सरोजिनी, अपि, शशिकरद्वेषम्=शशिनः चन्द्रमसः करेषु किरणेषु यः द्वेषः तम्, उज्झति=त्यजति। निशापि=रात्रिः, अपि, वासरेण=दिवसेन, मिश्रताम्=ऐक्यम्, एति=प्राप्नोति। ज्योत्स्नापि=चन्द्रिका, अपि, अन्धकारं=तमः, अनुवर्तते=अनुसरति, छाया, अपि, प्रदीपाभिमुखम्=दीपसम्मुखम्, अवतिष्ठते=तिष्ठति। तडिदपि=विद्युत्, अपि, जलदे=घने, स्थिरतां=स्थैर्यं, व्रजति=याति। जरापि=वृद्धावस्था, अपि, यौवनेन=तारुण्येन (सह), सञ्चारिणी=गमनशीला, भवति=जायते। येन=मनसिजेन, एवंविधः=एतादृशः, अगाधगाम्भीर्यसागरः=अगाधम् अप्राप्यतलं यत् गाम्भीर्यं गम्भीरता तस्य सागरः समुद्रः, अयं=पुण्डरीकः, तृणवत्, लघुताम्=लघुत्वम्, अपनीतः=प्रापितः। तस्य=एवंविधस्य कामस्य, अपरम्=अन्यत्, किं वा, दुःसाध्यं=दुष्करम्? (तस्यकृते सर्वं साध्यमेव, इति भावः) अर्थापत्तिः। क्व=कुत्र, तत्=अनिर्वचनीयस्वरूपं, तपः? क्व, इयम्=एषा, अवस्था=दशा? सर्वथा=सर्वप्रकारेण, निष्प्रतीकारा=असाध्या, इयम्=वर्तमाना, आपद्=विपत्, उपस्थिता=समापतिता। इदानीं=साम्प्रतम्, किं कर्तव्यम्=किं करणीयं?, किं, वा=विकल्पे चेष्टितव्यम्=आचरणीयम्? कां, दिशं, (प्रति) गन्तव्यम्=गमनीयम्? किं, शरणम्=त्राणम्? कः वा उपायः=कः वा प्रतीकारः? कः, सहायः=सहायकः? कः प्रकारः=कः विधिः? का, युक्तिः=उपपत्तिः? कः, समाश्रयः=अवलम्बनम्? येन, अस्य=पुण्डरीकस्य, असवः=प्राणाः, संधार्यन्ते=

जाती है, कमलिनी (भी) शशि-किरणों से द्वेष करना छोड़-देती है, रात्रि भी दिन से मिल जाती है, ज्योत्स्ना भी अन्धकार का अनुगमन करने लगती है, छाया भी दीपक के सम्मुख स्थित हो जाती है, बिजली भी बादल में स्थिर हो जाती है (और) जरा भी यौवन के साथ संचरण करने लगती है। जिसने इस प्रकार के अगाध गाम्भीर्य के सागर (पुण्डरीक) को तृण की तरह लघु बना दिया, उसके लिये और क्या दुष्कर है? कहाँ वह तप और कहाँ यह दशा? सब प्रकार से असाध्य यह विपदा आई है। इस समय क्या करना चाहिये, कैसी

संधार्यन्ते। केन वा कौशलेन कतमया वा युक्त्या कतरेण वा प्रकारेण केन वावष्टम्भेन कया वा प्रज्ञया कतमेन वा समाश्वासनेनायं जीवेत्' । इत्येते चान्ये च मे विषण्णहृदयस्य संकल्पाः प्रादुरासन्। पुनश्चाचिन्तयम्—'किमनया ध्यातया निष्प्रयोजनया चिन्तया। प्राणास्तावदस्य येन केनचिदुपायेन शुभेनाशुभेन वा रक्षणीयाः। तेषां च तत्समागममेकमपहाय नास्त्यपरः संरक्षणोपायः। बालभावादप्रगल्भतया च तपोविरुद्धमनुचितमुपहासमिवात्मनो मदनव्यतिकरं मन्यमानो नियतमेकोच्छ्वासावशेषजीवितोऽपि नायं तस्याः

रक्ष्यन्ते। केन वा, कौशलेन = चातुर्येण, कतमया, वा, युक्त्या = उपपत्त्या, कतरेण = केन, वा, प्रकारेण = विधानेन, केन, वा, अवष्टम्भेन = उपायावलम्बनेन, कया, वा, प्रज्ञया = बुद्ध्या, कतमेन, वा, समाश्वासनेन = सान्त्वनेन, अयं = कामार्तपुण्डरीकः, जीवेत् = प्राणान् धारयेत्।'' इति, एते = इमे, च, अन्ये = इतरे, च, संकल्पाः = वितर्काः, विषण्णहृदयस्य = खिन्नचेतसः, मे = कपिञ्जलस्य, प्रादुरासन् = प्रादुर्भूताः जाताः। पुनश्च = भूयः च, (अहम्) अचिन्तयम् = विचारितवान्—''अनया = एतया, निष्प्रयोजनया = निरर्थकया, चिन्तया, ध्यातया = ध्यानविषयीकृतया, किम्? तावत् = प्रथमम्, अस्य = पुण्डरीकस्य, प्राणाः = असवः, शुभेन = सता, अशुभेन = असता वा, केनचित्—उपायेन = उद्योगेन, रक्षणीयाः = पालनीयाः, मया इति शेषः। एकम् = केवलं, तत्समागमम् = तस्याः महाश्वेतायाः समागमं सम्मिलनं, अपहाय = विहाय, तेषाम् = पुण्डरीकप्राणानाम्, अपरः = द्वितीयः, संरक्षणोपायः = संरक्षणस्य रक्षायाः उपायः, नास्ति। बालभावात् = शिशुस्वभावात्, अप्रगल्भतया = लज्जालुतया, च, आत्मनः = स्वस्य, मदनव्यतिकरं = कन्दर्पवृत्तान्तं, तपोविरुद्धम् = तपःप्रतिकूलम्, अनुचितम् = असमीचीनम्, उपहासमिव = परिहासम्, इव, मन्यमानः = स्वीकुर्वन्, अयं = पुण्डरीकः, नियतम् = निश्चितम्, एकोच्छ्वासावशेषजीवितोऽपि = एकः एव उच्छ्वासः निःश्वासः अवशेषः अवशिष्टः यस्य एतादृशं जीवितं जीवनं यस्य तथाभूतः, अपि, स्वयम् = आत्मना, तस्याः = महाश्वेतायाः, अभिगमनेन = सम्मिलनेन, मनो-

चेष्टा करनी चाहिये, किस स्थान पर जाना चाहिये, कौन सी शरण है, क्या उपाय है, कौन सहायक है, क्या विधि है, कौन सी युक्ति है, क्या अवलम्बन है, जिससे इसके (पुण्डरीक के) प्राण बच सकें। किस कौशल से अथवा किस युक्ति से, किस विधान से अथवा किस उपाय के अवलम्बन से, किस बुद्धि से अथवा किस आश्वासन से यह जीवित रह सकता है? ये (सब) और अन्य भी संकल्प-विकल्प मेरे खिन्न मन में उठने लगे। फिर सोचने लगा—'इस निष्प्रयोजन चिन्ता के ध्यान से क्या लाभ? पहले इसके प्राणों को शुभ अथवा अशुभ किसी भी उपाय से बचाना चाहिये। केवल महाश्वेता के सम्मिलन को छोड़ कर (पुण्डरीक के) प्राणों के बचाने

स्वयमभिगमनेन पूरयति मनोरथम् । अकालान्तरक्षमश्चायमस्य मदनविकारः । सततमतिगर्हितेनाकृत्येनापि रक्षणीयान्मन्यन्ते सुहृदसून्साधवः । तदतिह्रेपणमकर्तव्यमप्येतदस्माकमवश्यकर्तव्यतामापतितम । किं चान्यत्क्रियते । का चान्या गतिः । सर्वथा प्रयामि तस्याः सकाशम् । आवेदयाम्येतामवस्थाम्' । इति चिन्तयित्वा कदाचिदनुचितव्यापारप्रवृत्तं मां विज्ञाय संजातलज्जो निवारयेदित्यनिवेद्यैव तस्मै तत्प्रदेशात्सव्याजमुत्थायागतोऽहम् । तदेवमवस्थिते यदत्रावसरप्राप्तमीदृशस्य चानुरागस्य सदृशमस्मदागमनस्य चानुरूपमात्मनो

रथम् = अभिलाषं, न पूरयति = न पूरयिष्यति, (अत्र भविष्यदर्थे लट्)। अस्य = पुण्डरीकस्य, च, अयम् = वर्तमानः, मदनविकारः = कामविकृतिः, अकालान्तरक्षमः = समयविलम्बासहः । साधवः = सज्जनाः, सततम् = सदैव, अतिगर्हितेन = अतिनिन्दितेन, अकृत्येनापि = अकरणीयेन कार्येण, अपि, सुहृदसून् = सुहृत् सखा तस्य असून् प्राणान्, रक्षणीयान् = रक्षायोग्यान्, मन्यन्ते = जानन्ति । तत् = तस्मात्, अतिह्रेपणम् = अधिकलज्जाजनकम्, अकर्तव्यमपि = अकरणीयम्, अपि, एतत् = इदं कार्यम्, अस्माकम् = पुण्डरीकमित्राणाम्, अवश्यकर्तव्यताम् = निश्चितकरणीयताम्, आपतितम् = उपस्थितम् । अन्यत् = एतद् व्यतिरिक्तं, च, किं = कृत्यं, क्रियते = कर्तुं पार्यते । अन्या = एतदतिरिक्ता, का, च, गतिः = उपायः । सर्वथा = सर्वप्रकारेण, तस्याः = महाश्वेतायाः, सकाशं = समीपं, प्रयामि = गच्छामि । (गत्वा च) एताम् = दृश्यमानाम्, अवस्थां = (पुण्डरीकस्य) दशाम्, आवेदयामि = निवेदयामि ।" इति = एवं, चिन्तयित्वा = विचार्य, कदाचित् = जातुचित्, अनुचितव्यापारप्रवृत्तं = अनुचिते अयोग्ये व्यापारे कार्ये प्रवृत्तं तत्परं, मां = कपिञ्जलं, विज्ञाय = ज्ञात्वा, सञ्जातलज्जः = सञ्जाता समुत्पन्ना लज्जा त्रपा यस्य सः (तथाभूतः सन्), निवारयेत् = प्रतिषेधयेत्, इति = एवं (विचार्य), तस्मै = पुण्डरीकाय, अनिवेद्यैव = अनुक्त्वा, एव, सव्याजम् = सापदेशं, तत्प्रदेशात् = तत्स्थानात्, उत्थाय, अहम् = कपिञ्जलः, आगतः = आयातः (अस्मि)। तत् = तस्मात्, एवमवस्थिते = ईदृशे वृत्तान्ते जाते, यद् = यत्किञ्चित्, अत्र = अस्मिन् प्रसङ्गे, अवसरप्राप्तम् = समयानुकूलम्, ईदृशस्य = एतादृशस्य, अनुरागस्य = प्रेम्णः, च, सदृशम् = योग्यम्, अस्मदागमनस्य = मदीयागमनस्य, च, अनुरूपम् = अनुकूलम्, आत्मनः = स्वस्य, वा, समुचितं = योग्यं, तत्र = तस्मिन् कार्ये, भवती =

का दूसरा कोई उपाय नहीं है । बाल-स्वभाव एवं अप्रगल्भ होने से अपने मदन-वृत्तान्त को तपश्चर्या के विरुद्ध, अनुचित तथा हास्यास्पद मानता हुआ यह, निश्चित रूप से जीवन की एक साँस शेष रहने पर भी, स्वयं उसके पास जाकर अपने मनोरथ को पूरा नहीं करेगा । इसका यह मदन-विकार अब कुछ भी विलम्ब

वा समुचितं तत्र प्रभवति भवती'; इत्यभिधाय किमियं वक्ष्यतीति मन्मुखासक्तदृष्टिस्तूष्णीमासीत ।

अहं तु तदाकर्ण्य सुखामृतमये ह्रद इव निमग्ना, रतिरसमयमुदधिमिवावतीर्णा, सर्वानन्दानामुपरि वर्तमाना, सर्वमनोरथानामग्रमिवाधिरूढा, सर्वोत्सवानामतिभूमिमिवाधिशयाना, तत्कालोपजातया लज्जया किंचिदवनम्यमान-

महाश्वेता प्रभवति = समर्था भवति' इत्यभिधाय = एवमुक्त्वा, इयं = महाश्वेता, किं वक्ष्यति = न (जाने) किं कथयिष्यति, इति (कृत्वा), मन्मुखासक्तदृष्टिः = मम महाश्वेतायाः' मुखे आनने आसक्ता लग्ना दृष्टिः यस्य एवम्भूतः (कपिञ्जलः), तूष्णीम् = मौनम्, आसीत् = अभूत् ।

अहं तु = महाश्वेता तु, तद् = कपिञ्जलोक्तम्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, सुखामृतमये = सुखम् आनन्दम् एवं अमृतं सुधा तन्मये, ह्रदे = अगाधजले (सागरे) 'तत्रागाधजलो ह्रदः' इत्यमरः, (रूपमम्), निमग्ना = निमज्जिता, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), रतिरसमयम् = रतिरसः श्रृङ्गाररसः तन्मयम् (रूपकम्), उदधिम् = समुद्रम्, अवतीर्णा = अन्तःप्रविष्टा, इव (उत्प्रेक्षा), सर्वानन्दानाम् = सर्वे निखिलाः आनन्दाः प्रमोदाः तेषाम्, उपरि, वर्तमाना = विद्यमाना, (इव—क्रियोत्प्रेक्षा), सर्वमनोरथानाम् = सकलकामनानाम्, अग्रम् = अग्रभागम्, अधिरूढा = अधिष्ठिता, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), सर्वोत्सवानाम् = समस्तसमारोहाणाम्, अतिभूमिम् = पराकाष्ठाम्,

नहीं सह सकता। सज्जन सदा अतिगर्हित एवं अकरणीय कार्य से मित्र के प्राणों की रक्षा करना ठीक समझते हैं। इसलिये अत्यन्त लज्जाजनक और अकरणीय भी वह कार्य मेरे लिए आवश्यक कर्तव्य बन गया है। और दूसरा किया क्या जाय ! दूसरी गति क्या है ? सब प्रकार से उसके पास ही जाता हूँ और इसकी अवस्था को बताता हूँ। यह सोचकर तथा मुझे अनुचित व्यापार में प्रवृत्त जानकर लज्जान्वित हो कहीं यह रोक न दे, इसलिए उससे बिना बताये ही, उस स्थान से, बहाने से उठकर मैं (यहाँ) आया हूँ। इसलिए ऐसी अवस्था में जो अवसर के अनुकूल हो, ऐसे (उत्कट) अनुराग के योग्य हो, हमारे आने के अनुरूप हो तथा आपके लिए (भी) जो उचित हो, वह आप (ही) कर सकती हैं; इतना कह कर, 'यह क्या कहेगी', इस विचार से मेरे मुखपर दृष्टि लगाये वह चुप हो गया।

मैं तो यह सुनकर सुख-रूपी अमृत के सागर में मानो डूब गयी; मानो श्रृङ्गार रस के समुद्र में प्रविष्ट हो गयी; जैसे समस्त आनन्दों के ऊपर स्थित हो गई; मानो सारे मनोरथों के अग्रभाग पर चढ़ गई, जैसे सभी उत्सवों की पराकाष्ठा पर सो गई। उस समय उत्पन्न लज्जा के कारण मुख के कुछ झुक जाने से कपोलयुगल के मध्य भाग का स्पर्श न करने वाले, मानो गुंथे हुये के समान, ऊपर गिरने के क्रम के

वदनत्वादस्पृष्टकपोलोदरैः, ग्रथितैरिवोपर्युपरिपतनानुबन्धदर्शितमालाक्रमैः, अप्राप्तपक्ष्मसंश्लेषतयोपजातप्रथिमभरैरमलैरानन्दबाष्पजलबिन्दुभिः स्रवद्भिरावेद्यमानप्रसरा तत्क्षणमचिन्तयम्—'दिष्ट्या तावदयमनङ्गो मामिव तमप्यनुबध्नाति। यत्सत्यमेतेन मे संतापयताप्यंशेन दर्शितानुकूलता। यदि च सत्यमेव तस्येदृशी दशा वर्तते ततः किमिव नापकृतमनेन। किं वा नोपपादितम्। को

अधिशयाना = स्वापं लभमाना, इव, (क्रियोत्प्रेक्षा) तत्कालोपजातया = तस्मिन् काले क्षणे उपजाता उत्पन्ना तया, लज्जया = त्रपया, किञ्चित् = स्वल्पं, अवनम्यमानवदनत्वात् = अवनम्यमानं प्रह्वीभूयमानं यत् वदनं मुखं तस्य भावः तत्त्वं तस्मात्, अस्पृष्टकपोलोदरैः = न स्पृष्टं कपोलयोः गण्डस्थलयोः उदरं मध्यभागः यैः तैः, ग्रथितैरिव = गुम्फितैः, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), उपर्युपरिपतनानुबन्धदर्शितमालाक्रमैः = उपरि ऊर्ध्वं यत् पतनं स्खलनं तस्य अनुबन्धेन परम्परया दर्शितः प्रकटितः मालायाः हारस्य क्रमः परिपाटी यैः तैः, अप्राप्तपक्ष्मसंश्लेषतया = अप्राप्तः अलब्धः यः पक्ष्मसंश्लेषः नेत्रलोमसंयोगः तस्य भावः तत्ता तया, उपजातप्रथिमभरैः = उपजातः उत्पन्नः प्रथिम्नः स्थूलतायाः भरः अतिशयः येषां तैः, अमलैः = (अञ्जनाभावात्) स्वच्छैः, स्रवद्भिः = क्षरद्भिः, आनन्दबाष्पजलबिन्दुभिः = आनन्दस्य हर्षस्य यत् बाष्पजलं अश्रुसलिलम् तस्य बिन्दुभिः शीकरैः, आवेद्यमानप्रहर्षप्रसरा = आवेद्यमानः उच्यमानः प्रहर्षस्य प्रमोदस्य प्रसरः अतिशयः यस्याः तादृशी (अहं महाश्वेता) तत्क्षणम् = तदानीम्, अचिन्तयम् = चिन्तनं कृतवती'—दिष्ट्या = भाग्येन, तावत् = प्रथमम्, अयम् = दुर्जेयः, अनङ्गः = कामः, माम् = महाश्वेताम्, इव = सादृश्ये, तमपि = पुण्डरीकम्, अपि, अनुबध्नाति = पीडयति। यत् = यस्मात्, संतापयतापि = (मां) पीडयता, अपि, एतेन = कामेन, मे = मम, अंशेन = अंशतः, सत्यम् = वस्तुततः, अनुकूलता = आनुकूल्यं, दर्शिता = प्रकटिता। यदि च, सत्यमेव = यथार्थमेव, तस्य = पुण्डरीकस्य, ईदृशी = एवंविधा (कपिञ्जलेन वर्णिता), दशा = अवस्था, वर्तते विद्यमाना अस्ति, ततः = तदा, अनेन = कामेन, किमिव नोपकृतम् = कः उपकारः न कृतः? वा = अथवा, किं नोपपादितम् = किं न सम्पा-

---

कारण माला के भ्रम को उत्पन्न करने वाले, पलकों का स्पर्श न होने से मोटे-मोटे, झरते हुए निर्मल आनन्द के आँसुओं से अपने आनन्दातिशय को सूचित करती हुई मैं उस समय सोचने लगी—'भाग्य से यह कामदेव मेरे समान उसे भी पीड़ित कर रहा है, इसलिए मुझे पीड़ित करते हुए भी इसने सचमुच कुछ अंश में मेरे प्रति अनुकूलता ही दिखलाई है। यदि सचमुच उसकी ऐसी दशा है तो इसने मेरा क्या उपकार नहीं किया? या क्या निष्पन्न नहीं किया? इसके समान दूसरा मेरा बन्धु कौन है? अथवा प्रशान्त आकृति वाले इस कपिञ्जल के मुख से स्वप्न में

वानेनापरः समानो बन्धुः। कथं वा कपिञ्जलस्य स्वप्नेऽपि वितथा भारती प्रशान्ताकृतेरस्माद्वदनान्निष्क्रामति। इत्थंभूते किं मयापि प्रतिपत्तव्यम्। तस्य वा पुरः किमभिधातव्यम्'। इत्येवं विचारयन्त्यामेव प्रविश्य ससंभ्रमा प्रतीहारी मामकथयत्—'भर्तृदारिके, त्वमस्वस्थशरीरेति परिजनादुपलभ्य महादेवी प्राप्ता' इति। तच्च श्रुत्वा कपिञ्जलो महाजनसंमर्दभीरुः सत्वरमुत्थाय 'राजपुत्रि, महानयमुपस्थितः कालातिपातः, भगवांश्च भुवनत्रयचूडामणिरस्तमु-

दितम्? अनेन = एतेन कामेन समः = सदृशः, अपरः = अन्यः, कः वा, (मम) बन्धुः? प्रशान्ताकृतेः = प्रशान्ता गम्भीरा (निश्छला) आकृतिः मूर्तिः यस्य तस्य कपिञ्जलस्य, अस्मात् वदनात् = एतस्मात् मुखात् स्वप्नेऽपि = स्वप्नावस्थायामपि, कथं = केन प्रकारेण, वितथा = असत्या, भारती = वाणी, निष्क्रामति = निर्गच्छति (यतोहि 'यत्राकृतिस्तत्र गुणावसन्ति') इत्थम्भूते = एवंविधे (वृत्तान्ते), मयापि = महाश्वेतया अपि, किं, प्रतिपत्तव्यम् = स्वीकरणीयम्? तस्य = पुण्डरीकस्य, वा, पुरः = अग्रे, किम्, अभिधातव्यम् = वक्तव्यम्? इत्येवम् = अनेन प्रकारेण, विचारयन्त्यामेव = चिन्तयन्त्याम् एव, 'मयि' इति शेषः, ससम्भ्रमा सम्भ्रमसहिता, प्रतीहारी = द्वाररक्षिका, प्रविश्य = (गृहाभ्यन्तरे) प्रवेशं कृत्वा, माम् = महाश्वेताम्, अकथयत् = अवोचत्—"भर्तृदारिके! = राजकुमारि! त्वम् = भवती, अस्वस्थशरीरा = अस्वस्थम् अप्रकृतिस्थं शरीरं देहं यस्याः सा तथाभूता, इति, परिजनात् = अनुचरवर्गात्, उपलभ्य = ज्ञात्वा, महादेवी = राजमहिषी (भवत्याः माता) प्राप्ता = आगता' इति। तत् = प्रतीहार्युक्तं, च, श्रुत्वा = निशम्य, महाजनसंमर्दभीरुः = महान् समुत्कृष्टः यः जनानाम् संमर्दः परस्पर संघर्षः तस्मात् भीरुः भीतः, कपिञ्जल = पुण्डरीकस्य सखा, सत्वरम् = शीघ्रम्, उत्थाय = उत्थानं विधाय "राजपुत्रि! = राजकुमारि!, अयम् = एषः, महान् = दीर्घः, कालातिपातः = समयातिक्रमः (समयविलम्बः इति यावत्) उपस्थितः = प्राप्तः, भुवनत्रयचूडामणिः = भुवनानां त्रयं भुवनत्रयं त्रिलोकी तस्य चूडामणिः शिरोभूषणं तथाभूतः, भगवान्, दिवसकरः = सूर्यः, च, अस्तमुपगच्छति = अस्ताचलं व्रजति, तत् = तस्मात्,

भी झूठे वचन कैसे निकल सकते हैं? ऐसी परिस्थिति में मुझे भी क्या स्वीकार करना चाहिये अथवा उसके सम्मुख क्या कहना चाहिए?' मैं ऐसा सोच ही रही थी कि घबड़ाई हुई प्रतीहारी ने प्रवेश कर कहा 'भर्तृदारिके! परिजनों से आपकी अस्वस्थता का समाचार पाकर महादेवी जी आई हैं।' यह सुनकर भारी भीड़ से भयभीत कपिञ्जल जल्दी से उठकर, 'राजपुत्रि! अब बहुत विलम्ब हो गया, त्रिलोकके चूड़ामणि भगवान् भास्कर अस्ताचल को जा रहे हैं, इसलिए अब जा रहा हूँ! सब प्रकार से प्रिय मित्र की प्राण रक्षा रूपी दक्षिणा के लिए ये मेरे हाथ जुड़े हैं। यही मेरा परम विभव है। इस प्रकार कह कर उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही वह

पगच्छति दिवसकरः, तद्गच्छामि, सर्वथाभिमतसुहृत्प्राणरक्षादक्षिणार्थमयमुपरचितोऽञ्जलिः, एष मे परमो विभवः' इत्यभिधाय प्रतिवचनकालमप्रतीक्ष्यैव पुरोयायिनाम्बायाः प्रविशता कनकवेत्रलताकरेण प्रतीहारीजनेन कञ्चुकिलोकेन गृहीतताम्बूलकुसुमपटवासाङ्गरागेण चामरव्यग्रपाणिना कुब्जकिरातबधिरवामनवर्षधरकलमूकानुगतेन परिजनेन सर्वतः संरुद्धे द्वारदेशे कथमप्यवाप्तनिर्गमः प्रययौ। अम्बा तु मत्समीपमागत्य सुचिरं स्थित्वा स्वभवनमयासीत्।

गच्छामि = यामि, सर्वथाभिमतसुहृत्प्राणरक्षादक्षिणार्थम् = सर्वथा सर्वप्रकारेण अभिमतस्य प्रियस्य सुहृदः मित्रस्य प्राणानाम् असूनां रक्षा त्राणम् एव दक्षिणा तदर्थम् तत्कृते, अयम् = एषः, अञ्जलिः = पाणिसयोजनरूपः, उपरचितः = कृतः, एषः = अञ्जलि रूपः, मे = मम तापसस्य, परमः = उत्कृष्टः, विभवः = सम्पत्तिः, (इतः परं मम ऐश्वर्यं न, यत् दत्त्वा भवतीं प्रसादयेयम् इति भावः)' इत्यभिधाय = एवम् उक्त्वा, प्रतिवचनकालम् = प्रत्युत्तरसमयम् अप्रतीक्ष्यैव = प्रतीक्षाम् अकृत्वा एव, "·········सर्वतः संरुद्धे द्वारदेशे कथमप्यवाप्त निर्गमः प्रययौ" इति वाक्यम्— कनकवेत्रलताकरेण = कनकस्य सुवर्णस्य या वेत्रलता यष्टिविशेषः सा करे हस्ते यस्य तादृशेन, अम्बायाः = मातुः, पुरोयायिना = अग्रगामिना, प्रविशता = प्रवेशं कुर्वता सता, प्रतीहारीजनेन = द्वारपालिकालोकेन, गृहीततांबूलकुसुमपटवासाङ्गरागेण = गृहीताः ताम्बूलं नागवल्लीदलं कुसुमं पुष्पं पटवासः पिष्टातकः अङ्गरागः अङ्गलेपनद्रव्यं च येन तेन, कञ्चुकिलोकेन = सौविदल्लजनेन चामरव्यग्रपाणिना = चामरेण बालव्यजनेन व्यग्रः व्याकुलः पाणिः हस्तः यस्य तेन, कुब्जकिरातबधिरवामनवर्षधरकलमूकानुगतेन = कुब्जैः वक्रशरीरैः किरातैः कृशशरीरैः बधिरैः श्रवण सामर्थ्यरहितैः वामनैः खर्वाकृतिभिः वर्षधरैः नपुंसकैः कलमूकैः अवाक्श्रुतिभिः, च, 'कलमूकोऽवाक्श्रुतिः' इति हलायुधः अनुगतेन अनुसृतेन, परिजनेन = अनुचरवर्गेण, सर्वतः = परितः, संरुद्धे = अवरुद्धे, द्वारदेशे = गृहद्वारप्रान्ते (सति) कथमपि = कष्टेन, अवाप्तनिर्गमः=अवाप्तः प्राप्तः निर्गमः निर्गमनमार्गः येन तथाभूतः (कपिञ्जलः), प्रययौ = निष्क्रान्तः। अम्बा तु = जननी, तु, मत्समीपम् = मदन्तिकम्, आगत्य = एत्य, सुचिरं = दीर्घकालं, स्थित्वा, स्वभवनम् = स्वगेहम्, अयासीत् = गतवती,। तत्रागत्य = मदन्तिकम् एत्य, तया तु = मे जनन्या,

---

किसी तरह दरवाजे से निकलने का रास्ता पाकर चला आया। उस समय वह द्वारदेश, हाथ में सोने की छड़ी लेकर माताजी के आगे-आगे चलने वाली प्रतिहारियों, पान-फूल-पटवास तथा अङ्गराग लिए कंचुकियों और चामर लेने से व्याकुल हाथों वाले कुबड़ों, किरातों, बधिरों, बौनों, नपुंसकों तथा गूँगे-बहिरे परिजनों से सर्वथा अवरुद्ध था। माता जी तो मेरे समीप आकर और बहुत देर तक बैठ कर

तया तु तत्रागत्य किं कृतं किमभिहितं किमाचेष्टितमिति शून्यहृदया सर्वं नालक्षयम् ।

गतायां च तस्यामस्तमुपगते भगवति हारीतहरितवाजिनि सरोजिनीजीवितेश्वरे चक्रवाकसुहृदि सवितरि, लोहितायमाने पश्चिमाशामुखे, हरितायमानेषु कमलवनेषु, नीलायमाने पूर्वदिग्भागे, पातालपङ्ककलुषेण महाप्रलयजलधिपयःपूरेणेव तिमिरेणावष्टभ्यमाने जीवलोके, किंकर्तव्यतामूढा तामेव

तु, किं कृतं = किं विहितं, किमभिहितं = किम् उक्तं, किमाचेष्टितम् = किम् आचरितम्, इति, सर्वम् = अखिलम्, शून्यहृदया = शून्यं विषयान्तरावबोधरहितं हृदयं मनः यस्याः सा तथाभूता (अहं), नालक्षयम् = न ज्ञातवती।

तस्यां = मातरि, च गतायां = (स्वभवनं) यातायां, हारीतहरितवाजिनि = हारीतः तन्नामा पक्षिविशेषः ('हारिल' इति लोके प्रसिद्धः) तद्वत् हरिताः हरितवर्णाः वाजिनः अश्वाः यस्य सः तस्मिन् (सूर्ये), सरोजिनीजीवितेश्वरे = सरोजिनी कमलिनी तस्याः जीवितस्य जीवनस्य ईश्वरः स्वामी तस्मिन् (अनुप्रासः), चक्रवाकसुहृदि = चक्रवाकानां रथाङ्गानां सुहृत् मित्रं तस्मिन् भगवति, सवितरि = सूर्ये, अस्तमुपगते = अस्ताचलं प्रयाते, पश्चिमाशामुखे = प्रतीचीमुखे, लोहितायमाने = रक्तायमाने (सति), कमलवनेषु = सरोजविपिनेषु, हरितायमानेषु = (सन्ध्याकालवशात्) नीलायमानेषु (सत्सु), पूर्वदिग्भागे = प्राचीदिक्प्रान्ते, नीलायमाने = हरितायमाने, (सति), पातालपङ्ककलुषेण = पातालस्य यः पङ्कः कर्दमः तेन कलुषेण मलिनीकृतेन (अथवा पातालपङ्कवत् कलुषेण मलिनेन) लुप्तोपमा, महाप्रलयजलधिपयपूरेणेव = महाप्रलयस्य यः जलधिः सागरः तस्य पयःपूरेण जलप्रवाहेण (जलौघेन), इव तिमिरेण = तमसा, (उपमा), जीवलोके = संसारे, अवष्टभ्यमाने = व्याप्यमाने (सति), किंकर्तव्यतामूढा = किं कर्तव्यता करणीयाकरणीयसन्दिग्धता तया मूढा (अहं), तामेव = तत्रोप-

(फिर) अपने भवन को चली गयीं। माता जी ने वहाँ आकर क्या किया, क्या कहा, कैसा व्यवहार किया, यह सब शून्यहृदया मैं न जान सकी।

माता जी के चले जाने पर जब हारिल (पक्षी) के सदृश हरे अश्वों वाले, कमलिनी के प्राणनाथ तथा चक्रवाकों के मित्र भगवान् सूर्य अस्त हो गये, जब पश्चिम दिशा का अग्र भाग लाल हो गया, (जब) कमलों के वन हरे होने लगे, (जब) पूर्व दिशा नीली हो गई, (जब) पाताल-पङ्क से मलिन (बने) महाप्रलय कालीन समुद्र के जल-प्रवाह (जलौघ) के सदृश अन्धकार से (सारा) संसार आवृत हो गया, तब किंकर्तव्यविमूढ मैंने उसी तरलिका से पूछा—'अरी तरलिके! तुम अत्यन्त व्याकुल मेरे हृदय को तथा कर्तव्य का निर्णय करने में असमर्थ होने से व्यग्र इन्द्रियों

तरलिकामपृच्छम्–'अयि तरलिके, कथं न पश्यसि दृढमाकुलं मे हृदयमप्रतिपत्तिविह्वलानि चेन्द्रियाणि। न स्वयमण्वपि कर्तव्यमलमस्मि ज्ञातुम्। उपदिशतु मे भवती यदत्र सांप्रतम्। अयमेवं त्वत्समक्षमेवाभिधाय गतः कपिञ्जलः। यदि तावदितरकन्यकेव विहाय लज्जाम, उत्सृज्य धैर्यम्, अवमुच्य विनयम्, अचिन्तयित्वा जनापवादम्, अतिक्रम्य सदाचारम्, उल्लङ्घ्य शीलम्, अवगणय्य कुलम्, अङ्गीकृत्यायशः, रागान्धवृत्तिः, अननुज्ञाता पित्रा, अननुमोदिता मात्रा, स्वयमनुगम्य ग्राहयामि पाणिम्, एवं गुरुजनातिक्रमादधर्मो

विष्टाम्, एव, तरलिकाम्, अपृच्छम्=पृष्टवती—"अयि तरलिके!, दृढम्=अत्यन्तम्, आकुलं=व्याकुलं, मे=मम, हृदयम्=मनः, अप्रतिपत्तिविह्वलानि =अप्रतिपत्तिः कर्तव्यनिर्णये असामर्थ्यं तया विह्वलानि व्यग्राणि, इन्द्रियाणि=करणानि, च, कथं, न पश्यसि? स्वयम्=आत्मना, अण्वपि=अल्पम अपि, कर्तव्यम्=करणीयं, ज्ञातुम्=बोद्धुम्, (अहम्) अलम्=समर्था, न=नहि, अस्मि=भवामि। अत्र=अस्मिन् विषये, यत्, साम्प्रतं=युक्तं (तत्) भवती =त्वम्, मे=मम, उपदिशतु=कथ-यतु। अयं कपिञ्जलः, त्वत्समक्षमेव = तव समक्षम् एव, एवम्=इत्थम्, अभिधाय=उक्त्वा गतः = (अधुनैव) प्रयातः। यदि=चेत्, तावत्=प्रथमम्, इतरकन्यकेव=अन्यकन्या, इव (नीचकुलोत्पन्ना कन्या इव इति भावः) लज्जाम्=त्रपां, विहाय=त्यक्त्वा, धैर्यम्=धीरताम्, उत्सृज्य=अपहाय, विनयम्=नम्रताम्, अवमुच्य=दूरीकृत्य, जनापवादम्=लोकनिन्दाम्, अचिन्तयित्वा=अनपेक्ष्य, सदाचारम्= सदाचरणम्, अतिक्रम्य=उल्लङ्घ्य, शीलम्=स्वभावम्, उल्लङ्घ्य=अतिक्रम्य, कुलम्=वंशम्, अवगणय्य = अवगणनां कृत्वा (सर्वं सद्गुणादि त्यक्त्वा), अयशः=अकीर्तिम् अङ्गीकृत्य=स्वीकृत्य, रागान्धवृत्तिः=रागेण कामासक्त्या अन्धा विवेकशून्या वृत्तिः व्यापारः यस्याः सा एवम्भूता, पित्रा= जनकेन, अननुज्ञाता=अनादिष्टा, मात्रा=जनन्या, (च) अननुमोदिता= असमर्थिता, (अहं) स्वयम्=आत्मना, अनुगम्य=अनुसृत्य, पाणिंग्राहयामि पाणिग्रहणंकारयामि, (तद) एवम् = इत्थं गुरुजनातिक्रमणात्=पूज्यजनानाम्

को क्यों नहीं देखती? इस विषय में स्वयं मैं थोड़ा भी अपने कर्तव्य को समझने में असमर्थ हूँ। अतएव इस विषय में जो उचित हो उसको तुम्हीं बताओ। यह कपिञ्जल तुम्हारे सामने ही इस प्रकार कहकर (अभी) गया है। यदि (नीच कुलोत्पन्न) अन्य कन्या की भाँति लज्जा, धैर्य एवं विनय को छोड़कर लोकापवाद की परवाह किये बिना, सदाचार का अतिक्रमण कर, शील का उल्लङ्घन कर, कुल की अवगणना कर, अपकीर्ति को स्वीकार कर, कामान्ध बनी, पिता से आज्ञा तथा माता से अनुमोदन लिये बिना ही, मैं स्वयं (उसके पास) जाकर पाणि-ग्रहण

महान्। अथ धर्मानुरोधादितरपक्षावलम्बनद्वारेण मृत्युमङ्गीकरोमि, एवमपि प्रथमं तावत्स्वयमागतस्य प्रथमप्रणयिनस्तत्रभवतः कपिञ्जलस्य प्रणयप्रसरभङ्गः। पुनरपरं यदि कदाचित्तस्य जनस्य मत्कृतादाशाभङ्गात्प्राणविपत्तिरुपजायते, तदपि मुनिजनवधजनितं महदेनो भवेत्'। इत्येवमुच्चारयन्त्यामेव मय्यासन्नचन्द्रोदयजन्मना विरलविरलेनालोकेन वसन्तवनराजिरिव कुसुमरजसा धूसरतां वासवी दिगयासीत्।

उल्लङ्घनात् महान् = गुरुतरः अधर्म, स्यात् इति शेषः। अथ, धर्मानुरोधात् = धर्मविचारात्, इतरपक्षावलम्बनद्वारेण = तदनुसरणरूपान्यपक्षाश्रयणमार्गेण, मृत्युम् = मरणम्, अङ्गीकरोमि = स्वीकरोमि, एवमपि = मरणे स्वीकृते, अपि, प्रथमं (दूषणं) तावत, स्वयमागतस्य = स्वयम् आयातस्य, प्रथमप्रणयिनिः = प्रथमः आद्यः प्रणयः याञ्चा अस्ति अस्येति तस्य, तत्रभवतः = पूज्यस्य, कपिञ्जलस्य = पुण्डरीकमित्रस्य, प्रणयप्रसरभङ्ग = प्रणयस्य प्रार्थनायाः यः प्रसरः वृद्धिः तस्य भङ्गः नाशः (भवेत्) कदाचित् पुनः, अपरम् = द्वितीयं (दूषणं), यदि, कदाचित् तस्य जनस्य = पुण्डरीकस्य, मत्कृतात् = मया विहितात, आशाभङ्गात् = मत्समागमरूपाशाविनाशात्, प्राणविपत्तिः = जीवनसङ्कटः उपजायते = आपतति, तदपि = तदापि, मुनिवधजनितं = तापसजनहननोत्पन्नं, महदेनः = महापातकं, भवेत् स्यात्।' इत्येवम् = इत्थम्, उच्चारयन्त्यामेव = कथयन्त्याम्, एव, मयि, आसन्नचन्द्रोदयजन्मना = आसन्नः निकटः यः चन्द्रोदयः निशाकरोद्गमः तस्मात् जन्म उद्भवःयस्य तेन, विरलविरलेन = अल्पादपि अल्पेन (अतिक्षीणेन), आलोकेन = प्रकाशेन, वासवी = वासवस्य इन्द्रस्य इयम् इति वासवी प्राची, = दिक् = दिशा, कुसुमरजसा = पुष्परागेण, वसन्तवनराजिरिव = वसन्तस्य ऋतुराजस्य वनानां काननानां राजिः पङ्क्तिः, इव, धूसरताम् = ईषत् पाण्डुताम्, अयासीत् = प्राप्तवती 'ईषत् पाण्डरस्तु धूसरः' इत्यमरः, उपमा।

कराती हूँ तो इस प्रकार गुरुजनों का अतिक्रमण करने से महान् अधर्म होता है और यदि धर्म के अनुरोध से दूसरे पक्ष का अवलम्बन कर मृत्यु को स्वीकार करती हूँ तो ऐसा करने से एक तो स्वयं आए हुए तथा पहली बार (प्राणरक्षा की) प्रार्थना करने वाले आदरणीय कपिञ्जल की प्रार्थना भङ्ग होती है और फिर कहीं मेरे द्वारा आशा भङ्ग किये जाने के कारण उसके प्राणों पर विपत्ति आ जाती है, तो मुनिजन की हत्या का महापातक लगता है।' मैं ऐसा कह ही रही थी कि आसन्न चंद्रोदय से उत्पन्न अति क्षीण प्रकाश से पूर्व दिशा, पुष्पपराग से वसंत काल की वनपंक्ति के समान धूसर हो उठी।

ततः शशिकेसरिकरनखरविदार्यमाण तमःकरिकुम्भसंभवेन मुक्ताफलक्षोदेनेव धवलतामुपनीयमानम्, उदयगिरिसिद्धसुन्दरीकुचच्युतेन चन्दनचूर्णराशिनेव पाण्डुरीक्रियमाणम्, चलितजलधिजलकल्लोलानिलोल्लासितेन वेलापुलिनसिकतोद्गमेनेव पाण्डुतामापाद्यमानं पश्चिमेतरदिन्दुधाम्ना दिगन्तरमदृश्यत। शनैः शनैश्चन्द्रदर्शनान्मन्दमन्दस्मितताया दशनप्रभेव ज्योत्स्ना निष्पतन्ती निशाया मुखशोभामकरोत्। तदनु रसातलादवनीमवदार्योद्गच्छता

पश्चिमेतरद्दिगन्तरं (पूर्वदिग्विभागं) विशेषयति—ततः = अनन्तरं, **शशिकेसरिकरनखरविदार्यमाण तमः—करिकुम्भसंभवेन** = शशी चन्द्रः एव केसरी सिंहः तस्य कराः रश्मयः एव नखराः नखा तैः विदार्यमाणः भिद्यमानः तमः अन्धकारः एव करी तस्य कुम्भः शिरःपिण्डः तस्मात् सम्भवेन सञ्जातेन, **मुक्ताफलक्षोदेनेव** = मुक्ताफलचूर्णेनइव, **धवलताम्** = श्वेतताम्, **उपनीयमानम्** = प्राप्यमाणम्, (जात्युत्प्रेक्षा साङ्गरूपकं तयोः सङ्करः), **उदयगिरिसिद्धसुन्दरीकुचच्युतेन** = उदयगिरिः उदयपर्वतः तत्र ये सिद्धाः देवयोनिविशेषा तेषां याः सुन्दर्यः रमण्यः तासां कुचेभ्यः स्तनेभ्यः च्युतेन पतितेन, **चन्दनचूर्णराशिनेव** = मलयजक्षोदसमूहेन, इव, **पाण्डुरीक्रियमाणम्** = श्वेततां प्राप्यमाणम्, (जात्युत्प्रेक्षा), **चलितजलधिजलकल्लोलानिलोल्लासितेन** = चलितस्य क्षुब्धस्य जलधिजलस्य समुद्रतोयस्य कल्लोलानिलैः तरङ्गवायुभिः उल्लासितेन उत्थानं प्रापितेन, **वेलापुलिनसिकतोद्गमेनेव** = वेला अम्भसः वृद्धिः तस्याः पुलिनस्य जलत्यक्त-तटस्य सिकतोद्गमेन सिकतानाम वालुकानाम् उद्गमेन ऊर्ध्वगमनेन, इव, **पाण्डुताम्** = श्वेतताम्, **आपाद्यमानम्** = प्राप्यमाणम् (जात्युत्प्रेक्षा), **इन्दुधाम्ना** = शशिकिरणेन, **पश्चिमेतरत्** = पौर्वं, **दिगन्तरम्**, **अदृश्यत्** = आलोक्यत्। **चन्द्रदर्शनात्** = सुधाकरावलोकनात्, **मन्दमन्दस्मिततायाः** = मन्दं मन्दं स्मितं यस्याः तथोक्तायाः, **निशायाः** = रजन्याः, **दशनप्रभेव** = दन्तकान्तिः, इव (जात्युत्प्रेक्षा), **शनैःशनैः** = मन्दं मन्दं, **निष्पतन्ती** = प्रसरन्ती, **ज्योत्स्ना** = चन्द्रिका, (निशायाः) **मुखशोभाम्** = पूर्वभागसौन्दर्यम् इति भावः), **अकरोत्** = कृतवती। अत्र निशाचन्द्रयोः स्त्रीपुरुषव्यवहारारोपात समासोक्तिः। **तदनु** = तत्पश्चात्, **अवनीम्** = पृथिवीम्, **अवदार्य** = विदार्य, **रसातलात्** = नागलोकात्, **उद्गच्छता** = प्रादुर्भवता,

इसके बाद शशांक के तेज से (प्रकाशित) पूर्वी दिशा दिखाई दी, जो मानो चन्द्रमारूपी सिंह द्वारा किरणरूपी नखों से विदारित होते हुये अन्धकाररूपी हाथी के कुम्भस्थल से उत्पन्न मुक्ताफल के चूर्ण से धवल, उदयाचलवासिनी गन्धर्व सुन्दरियों के कुचों से च्युत चन्दनचूर्ण की राशि से पाण्डुर, क्षुब्ध समुद्रजल की तरङ्ग-वायु से उल्लासित (उड़ाये गये) जल से रिक्त तट के बालुओं के ऊपर उठने से पाण्डु-वर्ण हो रही थी। चन्द्र-दर्शन के कारण मन्दं मन्द मुसकराती हुई रात्रि की मानो

शेषफणमण्डलेनेव रजनीकरबिम्बेनाराजत रजनी। क्रमेण च सकलजीवलोकानन्दकेन कामिनीजनवल्लभेन. किंचिदुन्मुक्तबालभावेन मकरध्वजबन्धुभूतेन समुपारूढरागेण सुरतोत्सवोपभोगैकयोग्येनामृतमयेन यौवनेनेवारोहता शशिना रमणीयतामनीयत यामिनी।

अथ तं प्रत्यासन्नसमुद्रविद्रुमप्रभापाटलितमिव, उदयगिरिसिंहकरतलाहतहरिणशोणितशोणीकृतमिव, रतिकलहकुपितरोहिणीचरणालक्तकरसलाञ्छितमिव,

---

शेषफणमण्डलेनेव = शेषस्य अनन्तनागस्य फणमण्डलेन फणासमूहेन, इव (द्रव्योत्प्रेक्षा), रजनीकरबिम्बेन = चन्द्रमण्डलेन, रजनी = निशा, अराजत = अशोभत। क्रमेण च = क्रमशः, च, समस्तजीवलोकानन्दकेन = सकलप्राणिलोकानन्दप्रदेन, कामिनीजनवल्लभेन = रमणीजनप्रियेण, किञ्चित् = ईषत्, उन्मुक्तबालभावेन = उन्मुक्तः त्यक्तः बालभावः शिशुत्वं प्रथमोदितभावः च येन तादृशेन, मकरध्वजबन्धुभूतेन = मकरध्वजः कामदेवः तस्य बन्धुभूतेन स्वजनभूतेन, समुपारूढरागेण = समुपारूढः समुत्पन्नः राग अनुरागः लौहित्यं च यत्र तेन, सुरतोत्सवोपभोगैकयोग्येन = सुरतोत्सवः सम्भोगानन्दः तस्य उपभोगे एकयोग्येन सर्वथा समर्थेन, अमृतमयेन = आनन्दमयेन सुधामयेन च यौवनेनेव = तारुण्येन, इव, आरोहता = (देहम्-गगनं च) अधिरोहता, शशिना = चन्द्रमसा, यामिनी = रात्रिः, रमणीयताम् = सुन्दरताम्, अनीयत = प्राप्यत। इह श्लेषानुप्राणिता उपमा।

अथ = अनन्तरम् "......रजनीकरमुदितं विलोक्य.........तत्क्षणमचिन्तयम्" इति वाक्यम्, प्रत्यासन्नसमुद्रविद्रुमप्रभापाटलितमिव = प्रत्यासन्नः समीपवर्ती यः समुद्रः सागरः तस्य विद्रुमाणां प्रवालानां प्रभया कान्त्या पाटलितम् श्वेतरक्तीकृतम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), उदयगिरिसिंहकरतलाहतहरिणशोणितशोणीकृतमिव = उदयगिरिः उदयाचलः तत्रय सिंहः मृगेन्द्रः तस्य करतलेन चपेटया आहतः ताडितः यः हरिणः मृगः तस्य शोणितेन रुधिरेण शोणीकृतम् रक्तवर्णीकृतम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), रतिकलहकुपितरोहिणीचरणालक्तकरसलाञ्छितमिव = रतिकलहेन कामकलहेन

दन्त-प्रभा के सदृश धीरे-धीरे फैलती हुई ज्योत्स्ना ने रात के मुख को (पूर्वभाग को) सुशोभित कर दिया। तत्पश्चात् पृथिवी को विदीर्ण कर पाताल से प्रकट होते हुये शेषनाग के फणमण्डल के समान चन्द्र-बिम्ब से रजनी सुशोभित हो उठी। धीरे-धीरे समस्त जीवलोक के आनन्ददायक, कामिनियों के वल्लभ, शिशुभाव का थोड़ा-सा परित्याग करने वाले, मकरध्वज के बन्धुस्वरूप, राग (लाली या अनुराग) से युक्त, सुरतोपभोग के लिये सर्वथा समर्थ, अमृतमय (आमोदमय, सुधामय), (शरीर में आरोहण करने वाले) यौवन के समान (आकाश में) उठते हुये शशि से रात्रि रमणीय हो गई।

इसके बाद मानो समीपवर्ती समुद्र के मूँगों की कान्ति से श्वेतरक्त, उदयाचल

अभिनवोदयरागलोहितं रजनीकरमुदितं विलोक्य, अन्तर्ज्वलितमदनानलाप्यन्धकारितहृदया, तरलिकोत्सङ्गविधृतशरीरापि मन्मथहस्तवर्तिनी, चन्द्रगतनयनापि मृत्युमालोकयन्ती तत्क्षणमचिन्तयम्—'एकत्र खलु मदनमधुमासमलयमारुतप्रभृतयः समस्ताः। एकत्र चायं पापकारी चन्द्रहतको न शक्यते सोढुम्। इदमतिदुर्विषहमदनवेदनातुरं च मे हृदयम्। अस्य चोद्गमनमिदं सदाहज्वरग्रस्तस्याङ्गारवर्षः, शीतार्तस्य तुषारपातः, विषस्फोटमूर्च्छितस्य

कुपिता क्रुद्धा या रोहिणी तदाख्या चन्द्रस्त्री तस्याः चरणयोः पादयोः यः अलक्तकरसः यावकद्रवः तेन लाञ्छितम् चिह्नितम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा). अभिनवोदयरागलोहितम् = अभिनवः नूतनः यः उदयरागः उद्गमरक्तिमा तेन लोहितम् रक्तम्, तं, रजनीकरम् = निशाकरम्, उदितं = प्राप्तोदयं, विलोक्य = दृष्ट्वा, अन्तर्ज्वलितमदनानलापि = अन्तः शरीराभ्यन्तरे ज्वलितः प्रदीप्तः मदनानलः कामाग्निः यस्यां तथाभूता, अपि, अन्धकारितहृदया = अन्धकारितं तमसाच्छन्नं (परिहारपक्षेमोहाच्छन्नं) हृदयं यस्याः सा, तरलिकोत्सङ्गविधृतशरीरापि = तरलिकायाः उत्सङ्गे क्रोडे विधृतं स्थापितं शरीरं वपुः यस्याः तथाविधा, अपि, मन्मथहस्तवर्तिनी = कामहस्तगता, (परिहारपक्षे—कामाधीना), चन्द्रगतनयनापि = चन्द्रं शशिनं गते प्राप्ते नयने नेत्रे यस्याः तादृशी, अपि, मृत्युम = मरणम्, आलोकयन्ती = पश्यन्ती, (परिहारपक्षे-कामपीडावशात् मृत्यु सम्भावयन्ती), स्थलत्रये विरोधाभासः, तत्क्षणम् = तत्कालम्, अचिन्त्यम् = व्यचारयम्—"खलु = निश्चयेन, एकत्र = एकस्मिन् पक्षे, मदनमधुमासमलयमारुतप्रभृतयः = कामचैत्रमासमलयानिलादयः, समस्ताः = सकलाः, एकत्र च = अपरस्मिन् पक्षे, च, अयम् = दृश्यमानः, पापकारी = पापी, चन्द्रहतकः = चन्द्रः निशाकरः एव हतकः घातकः, सोढुं न शक्यते = मर्षयितुं न पार्यते। मे = मम, इदम् = एतत्, हृदयम् = मनः च अतिदुर्विषहमदनवेदनातुरम् = अतिदुर्विषहया अतिदुःसहया मदनवेदनया कामपीडया आतुरं व्याकुलम् (जातम्)। अस्य = चन्द्रस्य, च, इदम उद्गमनम् = अयमुदयः, सदाहज्वरग्रस्तस्य = सदाहः दाहसहितः यः ज्वरः तेन ग्रस्तस्य तप्तस्य (कृते), अङ्गारवर्षः = उल्मुकवृष्टिः, शीतार्तस्य = शीतपीडितस्य (कृते), तुषारपातः = हिमपातः, विषस्फोटमूर्च्छितस्य विषस्फोटेन विषवत् ज्वालाजनकेन व्रणविशेषेण मूर्च्छितस्य संज्ञाहीनस्य (कृते),

(निवासी) सिंह के थपेड़ से आहत हरिण के रुधिर से लाल, रति-कलह में कुपित रोहिणी के चरणों में लगे अलक्तक-रस (महावर) से मानो चिह्नित (अर्थात् रञ्जित) अभिनव उदय की लालिमा से लोहित उस चन्द्रमा को उदित हुआ देखकर, कामाग्नि के भीतर ही भीतर जलते रहने पर भी अन्धकारपूर्ण हृदयवाली, तरलिका की गोद में शरीर के रखे रहने पर भी वस्तुतः कामदेव के हाथों पड़ी और चन्द्रमा की ओर दृष्टि रहने पर भी मृत्यु को देखती हुई, मैं उस समय सोचने लगी—'एक ओर

कृष्णसर्पदंशः'। इत्येवं विचिन्तयन्तीमेव चन्द्रोदयोपनीता कमलवनम्लानिनिद्रेव मूर्च्छा मां निमीलितलोचनामकार्षीत्। अचिरेण च संभ्रान्ततरलिकोपनीताभिश्चन्दनचर्चाभिस्तालवृन्तानिलैश्चोपलब्धसंज्ञा तामेवाकुलाकुलां मूर्तेनेवाधिष्ठितां विषादेन मल्ललाटविधृतस्रवच्चन्द्रकान्तमणिशलाकामविच्छिन्नबाष्पजलधारान्धकारितमुखीं रुदतीं तरलिकामपश्यम्। उन्मीलितलोचनां च मां सा कृतपादप्रणामा चन्दनपङ्कार्द्रेण करयुगलेन बद्धाञ्जलिरवादीत्—'भर्तृ-

---

कृष्णसर्पदंशः = कालनागदंशः (वर्तते)। निरङ्गमालारूपकम्। इत्येवम् = अनेन प्रकारेण, विचिन्तयन्तीमेव = विचारयन्तीम्, एव, सा = महाश्वेतां, चन्द्रोदयोपनीता = शशाङ्कोद्गमप्राप्ता, कमलवनम्लानिनिद्रेव = कमलवनस्य नलिनविपिनस्य म्लानिनिद्रा म्लानिः सङ्कोचः सा एव निद्रा प्रमीला सा, इव, मूर्च्छा, निमीलितलोचनाम् = निमीलिते मुद्रिते लोचने नयने यस्याः ताम्, अकार्षीत् = कृतवती। उपमा। अचिरेण = शीघ्रमेव, च, संभ्रान्ततरलिकोपनीताभिः = सम्भ्रान्तया अत्याकुलया तरलिकया अपनीताभिः (कृताभिः इति भावः), चन्दनचर्चाभिः = मलयजलेपैः, तालवृन्तानिलैः = व्यजनवायुभिः, च, उपलब्धसंज्ञा = उपलब्धा प्राप्ता संज्ञा चैतन्यं यया सा (अहं), आकुलाकुलां = नितान्तव्यग्रां, मूर्तेनेव = देहधारिणा, इव, विषादेन = शोकेन, अधिष्ठिताम् = आश्रिताम् (गुणोत्प्रेक्षा), मल्ललाटविधृतस्रवच्चन्द्रकान्तमणिशलाकाम् = मम महाश्वेतायाः ललाटे मस्तके विधृता स्थापिता स्रवन्ती जलं क्षरयन्ती चन्द्रकान्तमणेः शलाका यया सा ताम्, अविच्छिन्नबाष्पजलधारान्तकारितमुखीम् = अविच्छिन्ना अखण्डिता या बाष्पजलधारा अश्रुसलिलप्रवाहः तया अन्धकारितं अन्धकारपूर्णं (मलिनं) मुखं वदनं यस्याः तादृशीम्, रुदतीम् = रोदनं कुर्वन्तीं, तामेव, तरलिकाम्, अपश्यम् = व्यलोकयम्। च = किञ्च, उन्मीलितलोचनाम् = उन्मीलिते उद्घाटिते लोचने नयने यस्याः सा ताम्, मां = महाश्वेतां, कृतपादप्रणामा = कृतः विहितः पादयोः (मम) चरणयोः प्रणामः नमस्कारः यया तथाभूता, सा = तरलिका, चन्दनपङ्कार्द्रेण = चन्दनस्य मलयजस्य पङ्केन कर्दमेन आर्द्रं क्लिन्नं तेन, करयुगलेन = हस्तद्वयेन, बद्धाञ्जलिः = बद्धः अञ्जलिः यया सा, अवादीत् = अकथयत्—''भर्तृदारिके!

मधुमास, मलयानिल आदि सब, दूसरी ओर यह पापी तथा हत्यारा चन्द्रमा असह्य हो रहा है। मेरा यह हृदय अति दुःसह कामपीड़ा से विकल हो गया है। इसका (चन्द्र का) यह उदय ज्वर-ताप से तप्त जन के लिए अङ्गारों की वर्षा, शीत से पीड़ित के लिये तुषारपात, विषैले व्रण से मूर्च्छित के लिए कृष्णसर्प का दंश है', मैं इस प्रकार सोच ही रही थी कि, चन्द्रोदय द्वारा होने वाली कमल-वन की संकोचरूपी निद्रा के समान मूर्च्छा ने मेरे नेत्रों को बन्द कर दिया। शीघ्र ही घबराई हुई तरलिका के द्वारा किये गये चन्दनलेप तथा पङ्खे की हवा से सचेत बनी मैंने तरलिका को देखा, वह

दारिके किं लज्जया गुरुजनापेक्षया वा। प्रसीद प्रेषय माम्। आनयामि ते हृदयदयितं जनम्। उत्तिष्ठ स्वयं वा तत्र गम्यताम्। अतः परमसमर्थासि सोढुमिमं प्रबलचन्द्रोदयविजृम्भमाणोत्कलिकाशतमुदधिमिव मकरचिह्नम्'। इत्येवंवादिनीं तामवोचम्—'उन्मत्ते! किं मन्मथेन। नन्वयं सर्वविकल्पानपहरन्, सर्वोपायदर्शनान्युत्सारयन्, सर्वानन्तरायानन्तरयन्, सर्वसंदेहानपनयन्, सर्वशङ्कास्तिरस्कुर्वन्, लज्जामुन्मूलयन्, स्वयमभिगमनलाघवदोषमा-

---

राजकुमारि! लज्जया = ह्रिया, किम्, गुरुजनापेक्षया = पूज्यजनापेक्षया वा, किम्? न किमपि इदानीं प्रयोजनम् इति भावः। प्रसीद = प्रसन्ना भव, माम् = तरलिकां, प्रेषय = (पुण्डरीक समीपे) प्रेषणं कुरु। ते = तव, हृदयदयितं = प्राणवल्लभं, जनम्, आनयामि = आनेष्यामि। वा = अथवा, उत्तिष्ठ = उत्थानं कुरु, स्वयम्, तत्र = प्रियतमसमीपे, गम्यताम् = प्रस्थीयताम्। प्रबलचन्द्रोदयविजृम्भमाणोत्कलिकाशतम् = प्रबलेन प्रकृष्टेन चन्द्रोदयेन निशाकरोद्गमनेन विजृम्भमाणा वृद्धिं गच्छन्ती या उत्कलिका उत्कण्ठा (सागरपक्षे—ऊर्मिका) तासां शतं यस्मिन् तादृशम्, उदधिमिव = सागरम्, इव मकरचिह्नम् = कामदेवम्, अतः परम् = इतः अधिकम्, सोढुम् = मर्षयितुम्, असमर्था = अशक्ता, असि = वर्तसे।' पूर्णोपमा। इत्येवम् = इत्थं, वादिनीम् = भाषिणीं, ताम् = तरलिकाम्, (अहम्) अवोचम् = अकथयम्— "उन्मत्ते = उन्मादशालिनि। मन्मथेन = मनोभवेन, किम्, स्यादिति शेषः। ननु = आमन्त्रणे, सर्वविकल्पान् = अखिलवितर्कान्, अपहरन् = दूरीकुर्वन्, सर्वोपायदर्शनानि = सर्वेषां निखिलानाम् उपायानां चन्दनलेपादीनाम् दर्शनानि ज्ञानानि, उत्सारयन् = विनाशयन् ("दृश्यते अयमुपायः जीवरक्षणाय" इति दर्शनशब्दः ज्ञानवाची), सर्वान् = अखिलान्, अन्तरायान् = विघ्नान्, अन्तरयन् = व्यवहितान् कुर्वन्, सर्वसन्देहान् = अखिलसंशयान्, अपनयन् = निवारयन्, सर्वशङ्काः = सर्वाः निखिलाः शङ्काः गुरुजनेभ्यः भीतयः ताः (तुल०—जातशङ्कैर्देवैः मेनकानामाप्सराः प्रेषिता—शा०), तिरस्कुर्वन् = न्यक्कुर्वन्, लज्जाम् = व्रीडाम्, उमूलयन् = उत्पाटयन्, स्वयम् = स्वतः, अभिगमनलाघवदोषम् = अभिगमने

अत्यन्त व्याकुल, मूर्त्तिमान् विषाद से मानो घिरी हुई थी; मेरे ललाट पर वह जलस्राव करने वाली चन्द्रकान्त मणि की शलाका रखे थी। उसका मुख निरन्तर बहती हुई आँसुओं की धारा से मलिन हो गया था तथा (उस समय वह) रो रही थी। मेरी आँखें खुलने पर मेरे चरणों में प्रणाम करके चन्दन के लेप से गीले दोनों हाथों से अञ्जलि बाँधकर वह बोली—'राजपुत्री! लज्जा अथवा गुरुजनों की अपेक्षा से क्या (लाभ)? प्रसन्न होइये और मुझे भेजिए। मैं आपके प्राण-वल्लभ को ले आती हूँ। (अथवा) उठिये स्वयं उसके पास जाइये। प्रबल चन्द्रोदय से उमड़ती हुई सैकड़ों तरङ्गों से युक्त समुद्र की भाँति (सैकड़ों उत्कण्ठाओं से युक्त) इस कामदेव को

घृण्वन्, कालातिपातं परिहरन्नागत एव मृत्योस्तस्यैव वा सकाशं नेता कुमुदबान्धवः। तदुत्तिष्ठ यथाकथंचिदनुगमनेन जीविता संभावयामि हृदयदयितमायासकारिणंजनम्'। इत्यभिदधाना मदनमूर्च्छास्वेदविह्वलैरङ्गैः कथंचिदवलम्ब्य तामेवोदतिष्ठम्। उच्चलितायाश्च मे दुर्निमित्तनिवेदकमस्पन्दत दक्षिणं लोचनम्। उपजातशङ्का चाचिन्तयम् 'इदमपरं किमप्युपक्षिप्तं दैवेन' इति।

अभिसरणे लाघवदोषम् लघुतारूपदूषणम्, आवृण्वन् = आच्छादयन, कालातिपातं = समयविलम्बं, परिहरन् = परित्यजन्, अयम् = एषः, कुमुदबान्धवः = चन्द्रमा, मृत्यो = अन्तकस्य, तस्य = पुण्डरीकस्य, एव, वा, सकाशं = समीपं, नेता = प्रापयिता, आगत एव = उपस्थितः, एव। तदुत्तिष्ठ = तस्मात् उत्थानं कुरु, यथाकथञ्चित् = येन केनापि विधिना, अनुगमनेन = अनुसरणेन, (यदि) जीविता = श्वसिता, (भवेयम् तदा) आयासकारिणम् = कष्टदायकं, हृदयदयितं = प्राणवल्लभं, जनं, सम्भावयामि = प्रीतिपूर्वकं सम्मानयामि। इत्यभिदधाना = एवं कथयन्ती, मदनमूर्च्छास्वेदविह्वलैः = मदनमूर्छया जनितः यः स्वेदः धर्मजलं तेन विह्वलैः व्याकुलैः, अङ्गैः = अवयवैः, कथंचित् = आयासपूर्वकं, तामेव = तरलिकाम्, एव, अवलम्ब्य = आश्रित्य, उदतिष्ठम् = उत्थितवती। उच्चलितायाः = (अभिसारार्थं) प्रयातायाः, च, मे = मम, दुर्निमित्तनिवेदकम् = अशुभसूचकम्, दक्षिणम् = अपसव्यम्, लोचनम् = नेत्रम्, अस्पन्दत = अस्फुरत्। उपजातशङ्का = उपजाता समुत्पन्ना (अनिष्टस्य) शङ्का यस्याः एवंविधा, च, अहम्, अचिन्तयम् = व्यचारयम्—'दैवेन = विधिना, इदम् = एतत्, अपरम् = वर्तमानात् अन्यत्, किमपि = अमङ्गलम्, उपक्षिप्तम = निक्षिप्तम्' इति। नारीणां दक्षिणनेत्रस्पन्दनं स्वजनविनाशकारि, इति शकुनशास्त्रज्ञाः वदन्ति।

इससे आगे सहने में (आप) असमर्थ हैं।' इस प्रकार कहती हुई उससे मैं बोली—'अरी पगली! मन्मथ से क्या? सब वितर्कों को दूर करता, सब उपायों के दर्शनों को विनष्ट करता, विघ्नों को रोकता, सब सन्देहों को हटाता, सब शङ्काओं (भयों) का तिरस्कार करता, लज्जा का उन्मूलन करता, (वहाँ) स्वयं जाने के लाघव-दोष को ढकता और समय के विलम्ब को छुड़ाता, हुआ मृत्यु के अथवा उसीके (पुण्डरीक के) पास (मुझे) ले जाने वाला कुमुदों का बन्धु यह चन्द्र आ ही गया। इसलिए उठो। जिस किसी तरह अनुगमन के द्वारा यदि जीवित बची तो उस दुःखदायी प्राणवल्लभ को प्रेम से सम्मानित करूँगी', ऐसा कहती हुई मैं मदन-मूर्च्छा से उत्पन्न पसीने से व्याकुल अङ्गों द्वारा किसी प्रकार उसका ही सहारा लेकर उठी। (किन्तु) जैसे ही चली, अशुभ सूचक मेरी दाहिनी आँख फड़कने लगी। उससे (मेरे मन में) शङ्का उत्पन्न हो गई और मैं सोचने लगी— दैव ने यह कोई दूसरा (विघ्न) खड़ा कर दिया'।

अथ नातिदूरोद्गतेन त्रिभुवनप्रासादमहाप्रणालानुकारिणा सुधासलिलप्लवानिव वहता चन्दनरसनिर्झरनिकरानिव क्षरता श्वेतगङ्गाप्रवाहसहस्राणीव वमताऽमृतसागरपूरानिवोद्गिरता चन्द्रमण्डलेन प्लाव्यमाने ज्योत्स्नया भुवनान्तराले, श्वेतद्वीपनिवासमिव सोमलोकदर्शनसुखमिवानुभवति जने, महावराहदंष्ट्रामण्डलनिभेन शशिना क्षीरसागरोदरादिवोद्ध्रियमाणे महीमण्डले, प्रतिभवनमङ्गनाजनेन विकचकुमुदगन्धैश्चन्दनोदकैरुपह्रियमाणेषु चन्द्रोदयार्घेषु,

---

अथ = दुर्निमित्तानन्तरम्, '......प्रदोषसमये......तरलिकयानुगम्यमाना... ......तस्मात् प्रासादशिखरादवातरम्' इति वाक्यम्—त्रिभुवनप्रासादमहाप्रणालानुकारिणा = त्रिभुवनं त्रिविष्टपम् एव प्रासादः सौधः तस्य महाप्रणालं विशालजलनिस्सरणमार्गम् अनुकरोति इति तेन (निरङ्ग रूपकम्, आर्थी उपमा च), सुधासलिलप्लवान् = सुधा अमृतं सा एव सलिलं जलं तस्य प्लवान् पूरान्, वहता, इव, चन्दनरसनिर्झरनिकरान् = चन्दनरसस्य मलयजद्रवस्य निर्झरनिकरान् प्रस्रवण समूहान्, क्षरता = स्रवता, इव, श्वेतगङ्गाप्रवाहसहस्राणि, = श्वेतगङ्गायाः प्रवाहाणां धाराणां सहस्राणि, वमता = उद्गिरता, इव, अमृतसागरपूरान् = सुधासमुद्रप्रवाहान्, उद्गिरता = वमता, इव, नातिदूरोद्गतेन = नातिविप्रकृष्टोदितेन, चन्द्रमण्डलेन = शशिबिम्बेन, ज्योत्स्नया = चन्द्रिकया, भुवनान्तराले = जगन्मध्यभागे, प्लाव्यमाने = पूर्यमाणे, श्वेतद्वीपनिवासमिव = श्वेतद्वीपे निवासं वसतिम्, इव, सोमलोकदर्शनसुखमिव = सोमलोकस्य चन्द्रलोकस्य दर्शनसुखं दर्शनानन्दम्, इव, जने = लोके, अनुभवति = साक्षात्कुर्वति सति (सर्वत्रक्रियोत्प्रेक्षा), महावराहदंष्ट्रामण्डलनिभेन = महावराहः आदिवराहः तस्य यत् दंष्ट्रामण्डलं दशन् समूहः तस्य निभेन सदृशेन, शशिना = चन्द्रमसा (आर्थी उपमा), क्षीरसागरोदरात् = दुग्धोदधिमध्यात्, महीमण्डले = पृथ्वीमण्डले, उद्ध्रियमाणे = बहिः निःसार्यमाणे, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), प्रतिभवनम् = प्रतिगृहम्, अङ्गनाजनेन = कामिनीगणेन, विकचकुमुदगन्धैः = विकचिताः विकासं प्राप्ताः ये कुमुदाः कैरवाः तेषां गन्धः परिमलः यत्र तैः, चन्दनोदकैः=चन्दनमिश्रितजलैः चन्द्रोदयार्घेषु = चन्द्रोदयस्य कृते अर्घेषु पूजनवस्तुषु,

---

इसके बाद जैसे त्रिभुवनरूपी महल के महाप्रणाल (पानी बहाने वाला-विशाल परनाला) की भांति, जैसे अमृत रूपी जल की धारा को (नीचे) बहाते, मानो चन्दनरस के झरनों को प्रवाहित करते, मानो श्वेतगङ्गा की सहस्रों धाराओं को तथा अमृत सागर के प्रवाहों को उगलते हुये, निकटोदित चन्द्रमण्डल के द्वारा जब समस्त भुवन चाँदनी से भर गया; (जब) सब लोग श्वेत-द्वीप में निवास की भाँति चन्द्रलोक के दर्शन-सुख का अनुभव करने लगे, (जब) महावराह के दन्तमण्डल के सदृश चन्द्र द्वारा पृथ्वी-मण्डल मानो क्षीरसागर से उद्धृत होने लगा, (जब) प्रत्येक भवन में विकसित कुमुदों की गन्ध से युक्त

कामिनीप्रहितसुरतदूतीसहस्रसंकुलेषु राजमार्गेषु, नीलांशुकरचितावगुण्ठनासु चन्द्रालोकभयचकितासु कमलवनलक्ष्मीष्विव नीलोत्पलप्रभापिहितास्वित-स्ततः पलायमानास्वभिसारिकासु, प्रतिकुमुदमाबद्धमधुकरमण्डलासु प्रबुध्य-मानासु भवनदीर्घिकाकुमुदिनीषु, स्फुटितकुमुदवनबहलधूलिधवलितोदरे निशानदीपुलिनायमानेऽन्तरिक्षे, चन्द्रोदयानन्दनिर्भरे महोदधाविव रतिर-समय इवोत्सवमय इव विलासमय इव प्रीतिमय इव जीवलोके,

उपह्रियमाणेषु = दीयमानेषु (सत्सु), द्रष्टव्यम्:—"आपः क्षीरं कुशाग्रं च दधि सर्पिः सतण्डुलम् । यवः सिद्धार्थकश्चैव अष्टाङ्गोऽर्घः प्रकीर्तितः ॥" राजमार्गेषु = राजपथेषु, कामिनीप्रहितसुरतदूतीसहस्रसंकुलेषु = कामिनीभिः रमणीभिः प्रहितानां प्रेषितानां सुरतदूतीनां सहस्र तेन संकुलेषु व्याप्तेषु (सत्सु), नीलोत्पलप्रभापिहितासु = नीलोत्पलानां नीलकमलानां प्रभाभिः कान्तिभिः पिहितासु आच्छादितासु, कमलवन-लक्ष्मीष्विव = कमलवनस्य सरोजविपिनस्य लक्ष्मीषु श्रीषु, इव, [अभिसारिकासु अभि-सरणशीलासु, नीलांशुकरचितावगुण्ठनासु = नीलांशुकैः नीलपरिधानैः रचितानि कृतानि अवगुण्ठनानि शिरोवेष्टनानि याभिः तासु, (अतः) चन्द्रालोकभयचकितासु = चन्द्रस्यशशिनः आलोकस्य प्रकाशस्य यद् भयं तेन चकितासु त्रस्तासु, (अतः) इतः स्ततः = अनेकत्र, पलायमानासु = पलायने प्रवृत्तासु (सतीषु), अत्र पदार्थहेतु-ककाव्यलिङ्गेन संकीर्णा श्रौती उपमा, प्रतिकुमुदम् = प्रतिकैरवम्, आबद्धमधुकर-मण्डलासु = आबद्धं धृत मधुकराणां भ्रमराणां मण्डलं समूहः याभिः तासु, भवनदीर्घि-काकुमुदिनीषु = भवनस्य गृहस्य दीर्घिकायाः वापिकायाः कुमुदिनीषु कैरविणीषु, प्रबुध्यमानासु = विकसितासु (सतीषु), अन्तरिक्षे = गगने, स्फुटितकुमुदवनबह-लधूलिधवलितोदरे = स्फुटितं विकसितं यत् कुमुदवनं कैरवविपिनं तस्य बहलाः निबिडाः याः धूलयः परागाः ताभिः धवलितं शुभ्रतां गतम् उदरम् अभ्यन्तरं यस्य तस्मिन्, (अतः) निशानदीपुलिनायमाने = निशा रात्रिः सा एव नदी सरित् तस्याः पुलिनायमाने जलोज्झिततटायमाने (सति), पदार्थ हेतुकं काव्यलिङ्गम्, उपमा, निरङ्ग केवलरूपकं सङ्करश्च अत्र, चन्द्रोदयानन्दनिर्भरे = चन्द्रस्य शशिनः उदयेन उद्गमनेन आनन्दनिर्भरः आनन्दातिशयः यत्र तादृशे, महोदधाविव = महासागरे, इव (आनन्दभरिते), जीवलोके = प्राणिवर्गे (उपमा), रतिरसमय इव = शृङ्गार

चन्दन-जल से अङ्गनाओं द्वारा चन्द्रोदय का अर्घ दिया जाने लगा, (जब) राजमार्गों पर कामिनियों द्वारा भेजी गई सहस्रों सुरत-दूतियों की भीड़ होने लगी, (जब) नीलकमल की प्रभा से आच्छादित कमलवन की लक्ष्मियों की भाँति नीले वस्त्र का घूँघट ओढ़े अभिसारिकायें चाँदनी के भय से चकपका कर इधर-उधर भागने लगीं; (जब) गृह-वापी की कुमुदिनियाँ, जिनके प्रत्येक कुमुद पर भौंर बैठे हुये थे, खिलने लगीं, विकसित कुमुद-वन के प्रचुर पराग से मध्य भाग के धवल

शशिमणिप्रणालनिर्झरप्रमोदमुखरमयूररवरम्ये प्रदोषसमये, गृहीतविविधकुसुमताम्बूलाङ्गरागपटवासचूर्णया तरलिकयानुगम्यमाना तेनैव मूर्च्छानिहितेन किंचिदाश्यानचन्दनललाटिकालग्नधूसराकुलालकेन चन्दनरसचर्चाङ्गरागवेषेणार्द्रार्द्रेण तथैव च तया कण्ठस्थितयाक्षमालया श्रवणशिखरचुम्बिन्या च पारिजा-

---

रससमये, इव, उत्सवमये, इव, विलासमय इव = लीलामये, इव, प्रीतिमय इव = स्नेहमये, इव (पूर्वत्र स्थल चतुष्टये गुणोत्प्रेक्षा), **शशिमणिप्रणालनिर्झरप्रमोदमुखरमयूररवरम्ये** = शशिमणयः चन्द्रकान्तमणयः ते एव प्रणालाः जलनिस्सरणमार्गाः तेषां निर्झरेण वारि प्रवाहेण (वर्षर्तुभ्रमवशात्) उत्पन्नः यः प्रमोदः आनन्दः तेन मुखराणां वाचालानां मयूराणां बर्हिणां रवैः केकाशब्दैः रम्ये रमणीये, **प्रदोषसमये** = रजनीमुखकाले (निरङ्ग केवलरूपकं, भ्रान्तिमान् च), **गृहीतविविधकुसुमताम्बूलाङ्गरागपटवासचूर्णया** = गृहीतानि आत्तानि विविधानि अनेक प्रकाराणि कुसुमानि सुमनानि ताम्बूलानि नागवल्लीदलानि अङ्गरागाः लेपनानि पटवासचूर्णः पिष्टातकक्षोदाः च यया तया तादृश्या, तरलिकया, **अनुगम्यमाना** = अनुव्रज्यमाना (अहं), **मूर्च्छानिहितेन** = अचेतनावस्थायां (तरलिकया) संस्थापितेन, **किंचिदाश्यानचन्दनललाटिकालग्नधूसराकुलालकेन** = किंचित् ईषत् आश्याना आशुष्का या चन्दनललाटिका मस्तके चन्दनतिलकः तत्र लग्नाः संसक्ताः (अतः) धूसराः ईषत्पाण्डुराः आकुलाः इतस्ततः पर्यस्ताः अलकाः केशाः यस्मिन् तेन, **आर्द्रार्द्रेण** = क्लिन्नेन, तेन, एव, **चन्दनरसचर्चाङ्गरागवेषेण** = चन्दनरसस्य मलयजद्रवस्य चर्चा लेपनम् एव अङ्ग रागः सः एव वेषः नेपथ्यं तेन (उपलक्षिता), च, **तथैव** = पूर्वोक्तप्रकारेण, एव, च, **तया** = पुण्डरीकसम्बन्धिन्या, **कण्ठस्थितया** = गलप्रदेशनिहितया, **अक्षमालया** = जपमालिकया (उपलक्षिता), **श्रवणशिखरचुम्बिन्या** = श्रवणयोः कर्णयोः शिखरम् अग्रं चुम्बति स्पृशति इति तच्छीला तया, **पारिजातमञ्जर्या** = मन्दारवल्लर्या, च,

---

हो जाने के कारण जब आकाश रात्रिरूपी नदी के तट की तरह हो गया, (जब) चन्द्रोदय जनित आनन्दातिशय से उमड़े महासमुद्र की भाँति (चन्द्रोदय से आनन्द-विभोर) जीवलोक मानो शृङ्गारमय, उत्सवमय, विलासमय तथा प्रीतिमय होने लगा; जब चन्द्रकान्त मणिरूपी प्रणालों (परनालों) से जल-निस्सरण होने से (वर्षा के भ्रमवश) उत्पन्न प्रमोद के कारण कूकते हुये मयूरों के शब्दों से रजनीमुख रमणीय बन गया; तब नाना प्रकार के फूल, पान, अङ्गराग तथा पटवास चूर्ण साथ लेकर पीछे-पीछे चलने वाली तरलिका के साथ मैं अपने प्रासाद-शिखर से नीचे उतरी। (उस समय) कुछ गले चन्दन-तिलक से सट जाने के कारण धूसर (कुछ पाण्डुवर्ण की) बनीं (मेरी) अलकें वैसे ही (बिखरी) थीं; मूर्च्छा-काल में तरलिका द्वारा निहिता चन्दन-रस के लेपरूप अङ्गराग से गीला (मेरा) वेष भी वही था; कण्ठ-स्थित अक्षमाला भी वैसे ही (मेरे गले में) पड़ी थी; पारिजात-मञ्जरी भी वैसे ही

तमञ्जर्या पद्मरागरत्नरश्मिनिर्मितेनेव रक्तांशुकेन कृतशिरोऽवगुण्ठना केनचिदात्मीयेनापि परिजनेनानुपलक्ष्यमाणा तस्मात्प्रासादशिखरादवातरम् ।

अवतीर्य च पारिजातकुसुममञ्जरीपरिमलाकृष्टेन रिक्तीकृतोपवनेन कुमुदवनान्यपहाय धावता मधुकरजालेन नीलपटावगुण्ठनविभ्रममिव संपादयतानुबध्यमाना प्रमदवनपक्षद्वारेण निर्गत्य तत्समीपमुदचलम् । प्रयान्ती च तरलिकाद्वितीयमपरिजनमात्मानमवलोक्याचिन्तयम्—'प्रियतमाभिसरणप्रवृ-

(उपलक्षिता), पद्मरागरत्नरश्मिनिर्मितेनेव = पद्मरागरत्नस्य लोहितकरत्नस्य रश्मिभिः किरणैः निर्मितेन रचितेन, इव, रक्तांशुकेन = लोहितवस्त्रेण (क्रियोत्प्रेक्षा), कृतशिरोऽवगुण्ठना = कृतं विहितं शिरसः मूर्ध्नः अवगुण्ठनम् आच्छादनं यया सा, केनचित् आत्मीयेनापि = स्वकीयेन, अपि, परिजनेन = सेवकेन, अनुपलक्ष्यमाणा = अज्ञायमाना (अहं), तस्मात् = पूर्ववर्णितात्, प्रासादशिखरात् = सौधप्रान्तात्, अवातरम् = अवतीर्णवती ।

अवतीर्य = (प्रासादशिखरात्) अवतरणं विधाय, च, पारिजातकुसुममञ्जरीपरिमलाकृष्टेन = पारिजातस्य मन्दारस्य या कुसुममञ्जरी पुष्पवल्लरी तस्याः यः परिमलः विमर्दोत्थः गन्धः तेन आकृष्टेन आकर्षितेन, (अतः) रिक्तीकृतोपवनेन = रिक्तीकृतम् शून्यतां प्रापितम् उपवनं प्रमदवनं येन तादृशेन, नीलपटावगुण्ठनविभ्रमम् = नीलपटेन कृष्णांशुकेन यत् अवगुण्ठनं शिरोवेष्टनं तस्य विभ्रमं विलासम्, सम्पादयता = निष्पन्नं कुर्वता, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), कुमुदवनानि = कैरवारण्यानि, अपहाय = त्यक्त्वा, धावता = उड्डीयमानेन, मधुकरजालेन = भ्रमरसमूहेन, अनुबध्यमाना = अनुगम्यमाना (अहं), प्रमदवनपक्षद्वारेण = प्रमदवनस्य स्वकीयोपवनस्य पक्षद्वारेण, निर्गत्य = निःसृत्य, तत्समीपम् = पुण्डरीकनिकटम्, उदचलम् = उदगच्छम् । प्रयान्ती च = गच्छन्ती, च, तरलिकाद्वितीया = तरलिका एव द्वितीया अपरा यस्य तम्, आत्मानम् = स्वम्, अपरिजनम् = अन्यपरिजनरहितम्, अवलोक्य = दृष्ट्वा, अचिन्तयम् = चिन्तितवती—'प्रियतमाभिसरणप्रवृत्तस्य = प्रियतमस्यप्राण-

मेरे कान में लटक रही थी । मानो पद्मराग की किरणों से बने हुये लालवस्त्र से मैं अपने शिर का घूँघट बनाये थी । (ऐसी स्थिति में) मुझे कोई आत्मीय परिजन भी न देख (पहचान) सका ।

(प्रासाद से नीचे) उतरकर (तथा) प्रमदवन के पक्षद्वार से बाहर निकलकर मैं उसके (पुण्डरीक के) समीप चल पड़ी । (उस समय) पारिजात पुष्प की मञ्जरी की सुगन्ध से आकृष्ट, उपवनों को खाली कर (तथा) कुमुद-वनों को छोड़कर उड़ने वाला मधुकर-समूह, जो मानो नील-वस्त्र के अवगुण्ठन की शोभा को उत्पन्न कर रहा था, मेरा पीछा कर रहा था । जाती हुई मैं, तरलिका के अतिरिक्त अन्य किसी भी परिजन को अपने साथ न देखकर, सोचने लगी—'प्रियतम के निकट

त्तस्य जनस्य किमिव कृत्यं बाह्येन परिजनेन। नन्वेत एव परिजनलीलामुपदर्शयन्ति। तथा हि—समारोपितशरासनासक्तसायकोऽनुसरति कुसुमायुधः। दूरप्रसारितकरः कर्षति शशी। प्रस्खलनभयात्पदे पदेऽवलम्बते रागः। लज्जां पृष्ठतः कृत्वा पुरः सहेन्द्रियैर्धावति हृदयम्। निश्चयमारोप्य यत्युत्कण्ठा' इति। प्रकाशं चावदम्—'अयि तरलिके! अपि नाम मामिवायमिन्दुहतकस्तमपि किरणकचग्रहाकृष्टमभिमुखमानयेत्' इत्येवंवादिनीं च मां सा विहस्याब्रवीत्—

वल्लभस्य अभिसरणे अनुगमने प्रवृत्तस्य उद्यतस्य, जनस्य = अभिसारिकालोकस्य, बाह्येन = बहिर्भूतेन, परिजनेन = सेवकेन, किमिव = किं नाम, कृत्यम् = प्रयोजनम् (न किमपि इति तात्पर्यम्), अत्र 'किम्' इत्यस्य जुगुप्सनम् अर्थः 'किं पृच्छयां जुगुप्सने' इत्यमरः। ननु = अवधारणे 'प्रश्नावधारणानुज्ञानुनयामन्त्रणे ननु' इत्यमरः, एत एव = वक्ष्यमाणाः एव, (मम) परिजनलीलाम् = अनुचरकार्यम्, उपदर्शयन्ति = प्रकटयन्ति। तथा हि—कुसुमायुधः = पुष्पधन्वा, समारोपितशरासनासक्तसायकः = समारोपितम् आरोपितमौर्वीकं यत् शरासनं धनुः तत्र आसक्तः आयुक्तः सायकः शरः यस्य तथाभूतः, अनुसरति = अनुगच्छति ('माम्' शेषः, एवं सर्वत्र)। दूरप्रसारितकरः = दूरे प्रसारिताः विस्तारिताः कराः रश्मयः (हस्ताः) येन तथाभूतः, शशी = चन्द्रः, कर्षति = आकृष्य नयति। प्रस्खलनभयात् = प्रपतनभीत्याः, पदे पदे = प्रतिपदम्, रागः = अनुरागः, अवलम्बते = धारयति। लज्जां = व्रीडां, पृष्ठत कृत्वा = पृष्ठे विधाय, हृदयं = मनः, सहेन्द्रियैः = चक्षुरादिभिः सह, पुरः = अग्रे, धावति = द्रुतं व्रजति। उत्कण्ठा = प्रियविषयिणी उत्सुकता, निश्चयम् आरोप्य = निश्चयेन प्रियसङ्गमः भविष्यति इति कृत्वा नयति = प्रापयति।' प्रकाशं = प्रकटं यथा स्यात् तथा, च, अवदम् = अवोचम्—'अयि तरलिके!, अपि नाम = प्रश्ने, "गर्हासमुच्चयप्रश्नशङ्कासम्भावनास्वपि" इत्यमरः अयम् = दृश्यमानः, इन्दुहतकः=घातकः चन्द्रः, मामिव=महाश्वेताम्, इव, तमपि=मत्प्रियम्, अपि, किरणकचग्रहाकृष्टम् = किरणैः रश्मिभिः (करैः) यः कचग्रहः केशग्रहः तेन आकृष्टम् आकर्षितम्, अभिमुखम् = सम्मुखम्, आनयेत् = प्रापयेत्।' इति, एवंवादिनीम् = एवं कथयन्तीं, च, मां = महाश्वेतां, सा = तरलिका, विहस्य = हसित्वा, अब्रवीत् = अवोचत्—'भर्तृदारिके = राजकुमारि!, मुग्धासि = त्वम्

अभिसार करने के लिए प्रवृत्त जन (अभिसारिका) को किसी बाहरी परिजन से क्या प्रयोजन? क्योंकि ये ही सब परिजन का कार्य कर रहे हैं। जैसे प्रत्यञ्चा खिंचे धनुष पर बाण चढ़ाकर कामदेव (स्वयं मेरे) पीछे-पीछे चल रहा है। चन्द्रमा दूर से (ही) किरणरूपी हाथ फैलाकर जैसे मुझे (आगे की ओर) खींच रहा है। गिरने के भय से पग-पग पर अनुराग (मुझे) सहारा दे रहा है। लज्जा को पीछे कर (मेरा) मन इन्द्रियों के साथ दौड़ रहा है। (पुण्डरीकविषयक)

'भर्तृदारिके, मुग्धासि। किमस्य तेन जनेन। अयमात्मनैव तावन्मदनातुर इव भर्तृदारिकायां तास्ताश्चेष्टाः करोति। तथा हि—प्रतिबिम्बच्छलेन स्वेदसलिलकणिकाचितं चुम्बति कपोलयुगलम्। लावण्यवति पयोधरभारे निपतति प्रस्फुरितकरः। स्पृशति रशनामणीन्। निर्मलनखलग्नमूर्तिः पादयोः पतति। किं चास्य मदनातुरस्येव वपुस्तापाच्छुष्कचन्दनानुलेपपाण्डुतामुद्वहति। मृणालवलयधवलान्करान्धत्ते। प्रतिमाव्याजेन स्फटिकमणिकुट्टिमेषु निपतति।

अनभिज्ञा भवसि। तेन जनेन = तव प्रियतमेन, अस्य = चन्द्रस्य, किम् = किं प्रयोजनम्? अयम् = चन्द्रः, आत्मनैव = स्वयम्, एव, तावत्, मदनातुर इव = कामपीडितः, इव, भर्तृदारिकायां = भवत्यां, तास्ताः = कामिजनोचिताः, चेष्टाः = क्रियाः, करोति = विदधाति। तथा हि—प्रतिबिम्बच्छलेन = स्वीयप्रतिच्छाया-व्याजेन, स्वेदसलिलकणिकाचितं = स्वेदसलिलस्य धर्मजलस्य कणिकाभिः बिन्दुभिः आचितं व्याप्तं, (ते) कपोलयुगलम् = गण्डद्वयम्. चुम्बति = स्पृशति (इव) सापह्नव प्रतीयमाना क्रियोत्प्रेक्षा। लावण्यवति = सौन्दर्यशालिनि, पयोधरभारे = विपुले स्तनद्वये, प्रस्फुरितकरः = प्रस्फुरितः प्रकम्पितः करः किरणः (हस्तः) यस्य सः (सन्), निपतति (इव)। प्रतीयमानाक्रियोत्प्रेक्षा रशनामणीन् = मेखलारत्नानि, स्पृशति = स्पर्शं करोति (इव)। निर्मलनखलग्नमूर्तिः = निर्मलेषु नितान्तस्वच्छेषु नखेषु तव चरणनखेषु लग्ना सक्ता (प्रतिबिम्बिता) मूर्तिः आकृतिः यस्य सः तथाभूतः (चन्द्रः), पादयोः = तव चरणयोः, पतति = (कृतापराधः कामुकः इव) प्रणिपातं करोति (इव) किं च = अन्यच्च, मदनातुरस्येव = कामार्तस्य, इव, प्रतीयमाना क्रियोत्प्रेक्षा। (उपमा) अस्य = चन्द्रस्य, वपुः = शरीरं, तापात् = कामज्वरात्, शुष्कचन्दनानुलेपपाण्डुताम् = शुष्कः अनार्द्रः यः चन्दनस्य मलयजस्य अनुलेपः विलेपः तद्वत् या पाण्डुता श्वेतता ताम्, उद्वहति = धारयति। मृणालवलयधवलान् = मृणालवलयवत् बिसकटकवत् धवलान् शुभ्रान्, करान् = किरणान्, धत्ते = दधाति। प्रतिमाव्याजेन = प्रतिबिम्बच्छलेन स्फटिकमणि-कुट्टिमेषु = स्फटिकमणीनां स्फटिकरत्नानां कुट्टिमेषु बद्धभूमिषु, निपतति = प्रस्खलति।

उत्कण्ठा (प्रियमिलन को) निश्चित जान कर मुझे लिए जारही है। फिर प्रकट रूप से मैंने कहा—'अरी तरलिका! कहीं यह दुष्ट चन्द्र मेरी तरह उसे (पुण्डरीक को) भी अपने किरण-करों द्वारा केश पकड़कर खींच मेरे सामने न ला दे' इस प्रकार कहती हुई मुझसे वह हँसकर बोली—'राजपुत्रि! तुम अनभिज्ञ हो। इसका उससे क्या प्रयोजन? यह तो स्वयं ही कामपीड़ित की भांति होकर स्वामिपुत्री आपके साथ वैसी-वैसी चेष्टायें कर रहा है। जैसे प्रतिबिम्ब के बहाने यह पसीने की बूँदों से भरे (आपके) दोनों कपोलों का मानो चुम्बन कर रहा है। लावण्य-भरे कुचयुगल पर जैसे काँपते हाथों गिर रहा है। करधनी की (जड़ी हुई)

केतकीगर्भकेसरधूलिधूसरपादः कुमुदसरांस्यवगाहते। सलिलसीकरार्द्रान्शशिमणीन्करैरामृशति। द्वेष्टि विघटितचक्रवाकमिथुनानि कमलवनानि'। एतैश्चान्यैश्च तत्कालोचितैरालापैस्तया सह तमुद्देशमभ्युपागमम्। तत्र च मार्गलताकुसुमरजोधूसरं चरणयुगलं कैलासतटाच्चन्द्रोदयप्रसृतचन्द्रकान्तमणिप्रस्रवणे प्रक्षालयन्ती यस्मिन्प्रदेशे स आस्ते तस्मिन्नेव चास्य सरसः पश्चिमे तटे पुरुषस्येव रुदितध्वनिं विप्रकर्षान्नातिव्यक्तमुपालक्षयम्। दक्षिणेक्षणस्फुरणेन

अपह्नुतिः। केतकीगर्भकेसरधूलिधूसरपादः = केतक्याः केतकीपुष्पस्य गर्भकेसरधूलिः अन्तःस्थकिञ्जल्कपरागः तद्वत् धूसरः ईषत्पाण्डुः पादः रश्मिः एव चरणः यस्य तथाभूतः, कुमुदसरांसि = कैरवपूर्णतडागान, अवगाहते = विलोडति। सलिलसीकरार्द्रान् = सलिलं जलं तस्य सीकरैः कणैः आर्द्रान् क्लिन्नान्, शशिमणीन् = चन्द्रकान्तरत्नानि, करैः = किरणैः (हस्तैः) आमृशति = (शैत्यमवाप्तुं) स्पृशति। विघटितचक्रवाकमिथुनानि = विघटितानि वियुक्तानि चक्रवाकमिथुनानि रथाङ्गयुगमानि येभ्यः तानि, कमलवनानि = नलिनविपिनानि, द्वेष्टि = विद्वेषं करोति" (एभिः एव कमलवनैः चक्रवाकयुगलानि वियुक्तानि इति विचार्य तानि सङ्कोचयन् विद्वेषं विदधाति, इव इति भावः, प्रतीयमाना क्रियोत्प्रेक्षा सर्वत्र।' एतैः = पूर्वोक्तैः, च अन्यैः = अपरैः, च, तत्कालोचितैः = आलापैः = संलापैः, तया = तरलिकया, सह तमुद्देशम् = पुण्डरीकाश्रितं प्रदेशम्, अभ्युपागमम् = प्राप्तवती। तत्र च = तस्मिन् प्रदेशे च, मार्गलताकुसुमरजोधूसरंमम = मार्गे पथि लतानां वल्लीनां यानि कुसुमानि पुष्पाणि तेषां रजोभिः परागैः धूसरम् ईषत्पाण्डुरं, चरणयुगलं = पादद्वयं, कैलासतटात् = कैलासशिखरात्, चन्द्रोदयप्रसृतचन्द्रकान्तमणिप्रस्रवणे = चन्द्रोदयेन प्रसृतं प्रच्युतं यत् चन्द्रकान्तमणेः प्रस्रवणं निर्झरः तस्मिन्, प्रक्षालयन्ती = प्रक्षालनं कुर्वन्ती (अहं), यस्मिन् प्रदेशे = यस्मिन् भू-भागे, सः = मुनिकुमारः (पुण्डरीकः), आस्ते = तिष्ठति, तस्मिन्नेव = तस्मिन् प्रान्ते, एव, अस्य = अच्छोदनाम्नः, सरसः = तडागस्य, पश्चिमेतटे = पश्चिमदिग्वर्तितीरे च, विप्रकर्षात् = दूरत्वात्, नातिव्यक्तम् = न अतिस्पष्टम्, पुरुषस्येव = पुंसः, इव, रुदितध्वनिम् = रोदनशब्दम्, उपालक्षयम् = अशृणवम्। च = किञ्च, दक्षिणेक्षणस्फुरणेन = अपसव्यस्य नेत्रस्य स्पन्दनेन, प्रथममेव = आदौ, एव,

---

मणियों को छू रहा है। (आपके) निर्मल चरण नखों में प्रतिबिम्बित होकर मानो (आपके) पैरों पड़ रहा है। और कामपीडित की भांति इसका शरीर मानो ताप से सूखे चन्दन-लेप की तरह सफेद हो रहा है। (यह) मृणाल-वलय की तरह श्वेत करों (किरणों) को धारण कर रहा है। प्रतिबिम्ब के व्याज से (यह) स्फटिक-मणि के कुट्टिमों (फर्स) पर गिर रहा है। केतकी-फूल के मध्य स्थित केसर पराग के समान धूसर पैरों (किरणों) वाला यह कुमुद-सरों में स्नान कर

च प्रथममेव मनस्याहितशङ्का तेन सुतरामवदीर्णहृदयेव किमप्यनिष्टमन्तः कथयतेव विषण्णेनान्तरात्मना 'तरलिके किमिदम्' इति सभयमभिदधाना वेपमानगात्रयष्टिस्तदभिमुखमतित्वरितमगच्छम् ।

अथ निशीथप्रभावाद्दूरादेव विभाव्यमानस्वरम्, उन्मुक्तार्तनादम्, 'हा हतोऽस्मि, हा दग्धोऽस्मि, हा वञ्चितोऽस्मि, हा किमिदमापतितम्, किं वृत्तम्,

---

मनसि = हृदये, आहितशङ्का = आहिता स्थापिता शङ्का यस्याः तादृशी (अहं), तेन = रोदनध्वनिना, सुतराम् = तपूर्णः, अवदीर्णहृदयेव = अवदीर्णं विशीर्णं हृदयम् अन्तःकरणं यस्याः सा, इव, किमपि = अनिर्वचनीयम्, अनिष्टम् = अशुभम्, अन्तः = अभ्यन्तरे, कथयतेव = वदता, इव, विषण्णेन = खिन्नेन, अन्तरात्मना = अन्तःकरणेन 'तरलिके, किमिदम् = इदं किं जातम्' इति, सभयम् = सत्रासं यथा स्यात् तथा, अभिदधाना = कथयन्ती, वेपमानगात्रयष्टिः = कम्पमानशरीरा, तदभिमुखम् = तत्सम्मुखम्, अतित्वरितम् = अतिशीघ्रम्, अगच्छम् = अगमम् ।

अथ = आगमनान्तरं, निशीथप्रभावात् = निशीथः, अर्धरात्रं तस्य प्रभावात् माहात्म्यात् (निःस्तब्धतया), दूरादेव = विप्रकृष्टात्, एव, विभाव्यमानस्वरम् = विभाव्यमानः कपिञ्जलस्वरत्वेन ज्ञायमानः स्वरः यस्य तम्, उन्मुक्तार्तनादम् = उन्मुक्तः मुक्तकण्ठः आर्तनादः आर्तस्वरः यस्य सः तम् "……इत्येतानि चान्यानि च विलपन्तं कपिञ्जलमश्रौषम् = " इति वाक्यम्, हा = खेदे (एवं सर्वत्र), हतोऽस्मि = (दैवेन) ताडितः, अस्मि ? हा दग्धोऽस्मि = (शोकाग्निना) भस्मीभूतः, अस्मि ? हा वञ्चितोऽस्मि = (विधिना) प्रतारितः, अस्मि ? हा किमिदम् = अतर्कितम्, आपतितम् = (मम शिरसि) उपस्थितम् ? किं, वृत्तम् = भूतम् ? उत्स-

---

रहा है। जल के कणों से आर्द्र चन्द्रकान्त मणियों को करों (किरणों) से छू रहा है। जिनसे चक्रवाक का जोड़ा बिछुड़ गया है, ऐसे कमल-वनों से द्वेष कर रहा है।' दूसरी बातें करती-करती मैं उसके साथ उस स्थल पर पहुँच गई। वहाँ पर मार्ग में लताओं के पुष्पों के परागों (के लग जाने से) धूसर दोनों पैरों को (जब मैं) कैलाश के शिखर से चन्द्रोदय के कारण च्युत (झरे) चन्द्रकान्तमणि के झरने में प्रक्षालित कर रही थी, (तब) मुझे, जहाँ वह (मुनिकुमार) था, उसी प्रदेश में इस सरोवर के पश्चिमी तटपर पुरुष की भाँति रोने की ध्वनि सुनाई दी, जो दूर होने के कारण अधिक स्पष्ट नहीं थी। दाहिनी आँख के फड़कने से पहले ही मेरे मन में शङ्का हो गई थी, किन्तु उससे (रोने की ध्वनि से) मेरा हृदय जैसे विदीर्ण हो गया। किसी अनिष्ट को मानो भीतर कहते हुये खिन्न अन्तरात्मा से, 'तरलिके, यह क्या है ?' यह भयपूर्वक कहती हुई मैं अतिशीघ्र उस ओर चली गई, उस समय मेरा शरीर काँप रहा था।

इसके बाद अर्धरात्रि के प्रभाव से (अर्थात् सन्नाटा होने के कारण) दूर से

उत्सन्नोऽस्मि, दुरात्मन्मदनपिशाच, पाप निर्घृण किमिदमकृत्यमनुष्ठितम्, आः पापे दुष्कृतकारिणि दुर्विनीते महाश्वेते, किमनेन तेऽपकृतम्, आः पाप दुश्चरित चन्द्रचाण्डाल, कृतार्थोऽसीदानीम्, अपगतदाक्षिण्य दक्षिणानिलहतक, पूर्णास्ते मनोरथाः, कृतं कर्तव्यं वहेदानीं यथेष्टम, हा भगवञ्छ्वेतकेतो, पुत्रवत्सल न वेत्सि मुषितमात्मानम, हा धर्म निष्परिग्रहोऽसि, हा तपः, निराश्रयमसि, हा सरस्वति विधवासि; हा सत्यअनाथमसि, हा सुरलोक,

न्नोऽस्मि = मूलात् एव उत्पाटितः, अस्मि ? दुरात्मन् = दुष्टात्मन् ? मदन-पिशाच = कामराक्षस ? पाप = हे पापिन ? निर्घृण = निर्दय ? किमिदम्, अकृत्यम् = दुष्कृत्यम्, अनुष्ठितम् = (त्वया) आचरितम् ? आः = आक्रोशे, पापे = पापिनि ? दुष्कृतकारिणि = दुराचारिणि ? दुर्विनीते = अविनीते ? महाश्वेते ? अनेन = तापसेन पुण्डरीकेण ते = तव, किम् अपकृतम् = कः अपकारः कृतः (आसीत् ?) आः, पाप = पापात्मन् ? दुश्चरित = दुराचार ? चन्द्रचाण्डाल = चाण्डाल सदृश शशिन ? इदानीम् = सम्प्रति, कृतार्थः = कृतकृत्यः, असि ? अपगत-दाक्षिण्य = अपगतं दूरी भूतं दाक्षिण्यम् आनुकूल्यं यस्य सः तत्सम्बुद्धौ, दक्षिणा-निलहतक = दुष्ट मलय पवन ? ते = तव, मनोरथाः = अभिलाषाः, पूर्णाः = परि-पूर्णीभूताः ?, कर्तव्यम = अभिमतकार्यम्, कृतम् = विहितम् ? इदानीं = सम्प्रति, यथेष्टम् = यथेच्छं, वह = सञ्चर ? हा भगवन् ? श्वेतकेतो = पुण्डरीकजनक ? पुत्रवत्सल = सुतस्नेहिन् ? मुषितम् = अपहृतसर्वस्वम्, आत्मानम् = स्वम्, नवेत्सि = न जानासि ? हा, धर्म = पुण्य ? निष्परिग्रहः = न वर्तते परिग्रहः स्वीकारः यस्य सः, असि ?, हा तपः ?, निराश्रयम् = अवलम्बन रहितम्, असि ? हा सरस्वति, विधवा = स्वामिविहीना, असि ? हा सत्य ? अनाथम् = स्वामिरहितम्, असि ? हा सुरलोक =

ही जिसका स्वर पहिचाना जा रहा था, ऐसा आर्तनाद करता हुआ कपिञ्जल सुनाई पड़ा, वह 'हाय मारा गया। हाय मैं जल गया। हाय ठगा गया। हाय यह क्या आ पड़ा ? क्या हुआ ? (दैव द्वारा) जड़ से उखड़ गया। दुष्टात्मा, पापी, निर्दय, मदनपिशाच ! तूने यह क्या कुकर्म कर डाला ? अरी पापिनी, दुराचारिणी, दुर्विनीत महाश्वेते ! तेरा इसने क्या अपकार किया था ? आः पापी, दुश्चरित्र, चाण्डाल चन्द्र ! तू इस समय कृतार्थ हो गया। अनुकूलता (अनुकूल आचरण) से विहीन, दुष्ट, दक्षिण पवन ! अब तेरे मनोरथ पूरे हुये ! तूने (मन चाहा) कर्तव्य कर डाला। अब तू स्वेच्छापूर्वक बहो। हा पुत्रवत्सल, भगवन् श्वेतकेतो ! आपको नहीं पता कि आप लुट गये ? धर्म अब तुम्हारी स्वीकृति समाप्त हुई। (अर्थात् अब तुम किसको स्वीकार करोगे ?)। तप ! अब तुम निराश्रय हो गए। हा सरस्वती ! (अब) तुम विधवा हो गई। हाय सत्य ! तुम अनाथ हो गये। हा देवलोक ! तुम शून्य हो गये। मित्र ! तुम मेरी प्रतीक्षा करो। मैं भी आपके पीछे जाऊँगा।

शून्योऽसि, सखे प्रतिपालय माम्, अहमपि भवन्तमनुयास्यामि, न शक्नोमि भवता विना क्षणमप्यवस्थातुमेकाकी, कथमपरिचित इवादृष्टपूर्व इवाद्य मामेकपदे उत्सृज्य प्रयासि, कुतस्तवेयमतिनिष्ठुरता। कथय त्वदृते क्व गच्छामि, कं याचे, कं शरणमुपैमि, अन्धोऽस्मि संवृत्तः, शून्या मे दिशो जाताः, निरर्थकं जीवितमप्रयोजनं तपो निःसुखाश्च लोकाः, केन सह परिभ्रमामि, कमालपामि उत्तिष्ठ देहि मे प्रतिवचनम्, क्व तन्ममोपरि सुहृत्प्रेम, क्व सा स्मितपूर्वाभिभाषिता च' इत्येतानि चान्यानि च विलपन्तं कपिञ्जलमश्रौषम्।

देवलोक ?, शून्योऽसि = रिक्तः, असि ! सखे = मित्र ? माम् = कपिञ्जलं, प्रतिपालय = प्रतीक्षस्व ? अहम्, अपि, भवन्तम्, अनुयास्यामि = अनुगमिष्यामि, भवताविना = त्वाम् अन्तरा, क्षणमपि = क्षणमात्रम्, अपि, एकाकी = केवलः, अवस्थातुम् = वर्तितुम्, न शक्नोमि ? कथम्, अपरिचित इव = अज्ञातसंस्तवः, इव अदृष्टपूर्व इव = अनवलोकितपूर्वः. इव, अद्य = इदानीं, माम् = सहचरं कपिञ्जलम्, एकपदे = सहसा, उत्सृज्य = त्यक्त्वा, प्रयासि = गच्छसि ? तव = भवतः, इयम् = अदृष्टपूर्वा, अतिनिष्ठुरता = अतिकठोरता, कुतः = कस्मात् (आगता ?), कथय = वद ? त्वदृते = त्वया विना, क्व गच्छामि = कुत्र व्रजामि ? कं याचे = कं प्रार्थये ? कं शरणम् = कं रक्षकम्, उपैमि = प्रयामि ? (अहम्) अन्धः = दृष्टिहीनः, संवृत्तः = जातः, अस्मि ? मे = मम, दिशः = आशाः, शून्याः = रिक्ताः, जाताः = भूताः ? (मे) जीवितम् = जीवनम्, निरर्थकम् = निष्फलम् ? तपः, अप्रयोजनम् = निष्प्रयोजनम् ? लोकाः = भुवनानि, च, निःसुखाः = निरानन्दाः ? केन, सह, परिभ्रमामि = पर्यटामि ? कम्, आलपामि = संलपामि ? (त्वयाविना' इति सर्वत्र योजनीयम्)। उत्तिष्ठ, मे = मम, प्रतिवचनम् = उत्तरम्, देहि = प्रयच्छ, मम, उपरि, (तव) तत् = पूर्वानुभूतम्, सुहृत्प्रेम = मित्रानुरागः, क्व = कुत्र (गतम् ?) सा. स्मितपूर्वाभिभाषिता = स्मितपूर्वं किंचित् हासपूर्वकम् अभिभाषते आलपति तच्छीलः स्मितपूर्वाभिभाषी तस्य भावः तत्ता, च, क्व ?' इत्येतानि = पूर्वोक्तानि, च, अन्यानि = अपराणि, च, विलपन्तं = विलापं कुर्वन्तं, कपिञ्जलम्, अश्रौषम् = श्रुतवती।

तुम्हारे बिना अकेला एक क्षण भी नहीं रह सकता। कैसे अपरिचित के समान, पहले न देखे हुए की तरह आज सहसा मुझे छोड़कर जा रहे हो ? तुम में ऐसी निष्ठुरता कहाँ से आई ? कहो तुम्हारे बिना कहाँ जाऊँ ? किससे याचना करूँ ? किसकी शरण में जाऊँ ? (अब मैं) अन्धा हो गया हूँ। मेरे लिए दिशायें सूनी हो गई हैं। जीवन निरर्थक है, तप निष्प्रयोजन है, संसार सुखहीन है। (अब) मैं किसके साथ घूमूँ ? किससे वार्त्तालाप करूँ ? तुम उठो। मेरे (प्रश्नों का) उत्तर दो। मेरे प्रति तुम्हारा मित्र-प्रेम कहाँ गया और मुसकान भरी वह (तुम्हारी)

तच्च श्रुत्वा पतितैरिव प्राणैर्दूरादेव मुक्तैकताराक्रन्दा, सरस्तीरलतासक्तित्रुट्यमानांशुकोत्तरीया, यथाशक्ति त्वरितैरज्ञातसमविषमभूमिभागविन्यस्तैः पादप्रक्षेपैः प्रस्खलन्ती पदे पदे, केनाप्युत्क्षिप्य नीयमानेव तं प्रदेशं गत्वा सरस्तीरसमीपवर्तिनि शिशिरसीकरासारस्राविणि शशिमणिशिलातले विरचितं कुमुदकुवलयकमलविविधवनकुसुमसुकुमारमालामयमिव मृणालमयं कुसुमशरसायकमयमिवशयनमधिशयानम्,अतिनिष्पन्दतयामत्पदशब्दमिवाकर्णयन्तम्,

---

तच्च श्रुत्वा=कपिञ्जलरोदनं, च, आकर्ण्य "······तं प्रदेशं गत्वा······तमहं पापकारिणी मन्दभाग्या महाभागमद्राक्षम्" इति वाक्यम्—दूरादेव = विप्रकृष्टात्, एव, **मुक्तैकताराक्रन्दा** = मुक्तः त्यक्तः एकतारः अत्युच्चः आक्रन्दः रुदनशब्दः यया सा, **सरस्तीरलतासक्तित्रुट्यमानांशुकोत्तरीया** = सरसः अच्छोदसरोवरस्य तीरे तटे याः लताः वल्ल्यः तासु आसक्त्या संलग्नतया त्रुट्यमानं विपाट्यमानम् अंशुकस्य कौशेयस्य उत्तरीयं यस्यः सा, **यथाशक्ति** = शक्त्यनुसारं, **त्वरितैः** = क्षिप्रैः **अज्ञातसमविषमभूमिभागविन्यस्तैः** = अज्ञातः अविदितः यः समविषमः उच्चावचः भूमिभागः भूप्रान्तः तत्र विन्यस्तैः निहितैः, **पादप्रक्षेपैः** = चरणन्यासैः, **पतितैः** = बहिर्भूतैः, **प्राणैः** = असुभिः, इव, **पदेपदे** = प्रतिपदं, **प्रस्खलन्ती**=स्खलिता भवन्ती, **केनापि** = अज्ञातेन केनचित्, **उत्क्षिप्य** = उत्तोल्य, **नीयमानेव** = प्राप्यमाणा, इव (क्रियोत्प्रेक्षा) **तं प्रदेशं** = मुनिकुमारेण अधिष्ठितं भूभागं, **गत्वा** = एत्य (अहम्) इतः महाभागं (पुण्डरीकं) विशेषयति—**सरस्तीरसमीपवर्तिनि** = सरसः अच्छोदसरोवरस्य तीरस्य तटस्य समीपवर्तिनि निकटस्थिते, **शिशिरसीकरासारस्राविणि** = शिशिराः शीतलाः ये शीकराः जलकणाः तेषाम् आसारः धारासम्पातः तं स्रवति क्षरति इति तादृशे, **शशिमणिशिलातले** = चन्द्रकान्तमणिप्रस्तरतले, **विरचितं** = (कपिञ्जलेन) निर्मितं **कुमुदकुवलकमलविविधवनकुसुमसुकुमारमालामयमिव** = कुमुदानां कैरवाणां कुवलयानां नीलकमलानां कमलानां सामान्यपङ्कजानां—विविधानाम् अनेकप्रकारकाणां वनकुसुमानां काननोद्भवपुष्पाणां च सुकुमारा कोमला या माला स्रक् तन्मयम्, इव, **मृणालमयं** = बिसमयम्, (अतः) **कुसुमशरसायकमयमिव** = अनङ्गबाणमयम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), **शयनम्** = शय्याम्, **अधिशयानम्** = शयनं कुर्वन्तम्, **अतिनिस्पन्दतया** = अतिनिश्चलतया, **मत्पदशब्दम्**=मम चरणध्वनिम्, **आकर्णयन्तम्** =

बातचीत कहाँ गई !" इस प्रकार तथा अन्य प्रकार से विलाप कर रहा था।

उस (रोदन) को सुनकर मैं दूर से ऊँचे स्वर में क्रन्दन करने लगी। (व्यग्रता के कारण जाते समय) सरोवर की तीरवर्तिनी लताओं में उलझ जाने से मेरा रेशमी उत्तरीय फटा जा रहा था। यथाशक्ति शीघ्रता करने से मेरे पग अज्ञात ऊँची-नीची धरती पर पड़ रहे थे, (ऐसा लगता था) मानो बाहर निकले हुए प्राणों से ही मैं पग-पग पर फिसल रही थी। जैसे कोई उखाड़ कर (मुझे) उस स्थान पर ले जा रहा

अन्तःकोपशमितमदनसंतापतया तत्क्षणलब्धसुखप्रसुप्तमिव, मनः क्षोभप्रायश्चित्तप्राणायामावस्थितमिव अतिप्रस्फुरितप्रभेण त्वत्कृते ममेयमवस्थेति कथयन्तमिवाधरेण, इन्दुद्वेषपरिवर्तितदेहतया पृष्ठभागनिपतितैर्मदनदहनविह्वलहृदयन्यस्तहस्तनखमयूखच्छलेन छिद्रितमिव शशिकिरणैः, उच्छुष्कपाण्डुरया स्वविनाशोत्पातोत्पन्नया मदनचन्द्रकलयेव चन्दनलेखिकया रचितल-

शृण्वन्तम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), अन्तःकोपशमितमदनसंतापतया = अन्तः कोपः 'इयंनागता' इति ममोपरि अन्तः क्रोधः तेन शमितः शान्तः मदनसंतापः कामज्वरः यस्य तस्य भावः तया, तत्क्षणलब्धसुखप्रसुप्तमिव = तस्मिन् क्षणे काले लब्धं प्राप्तं यत् सुखं हर्षः तेन प्रसुप्तं निद्रितम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), मनःक्षोभप्रायश्चित्तप्राणायामावस्थितमिव = मनसः चेतसः यः क्षोभः उद्वेलनं (चञ्चलता) तस्य प्रायश्चित्तरूपा यः प्राणायामः तस्मिन् अवस्थितम् स्थितम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा) "प्रायो नाम तपः प्रोक्तं चित्तं निश्चय उच्यते । तपो निश्चयसंयोगात् प्रायश्चित्तमितीर्यते ॥" इति हेमाद्रिः, अतिप्रस्फुरितप्रभेण = अतिस्फुरिता देदीप्यमाना प्रभा कान्तिः यस्य तादृशेन, अधरेण = ओष्ठेन "त्वत्कृते = त्वदर्थम् (एव), मम = पुण्डरीकस्य, इयम् = मृत्युरूपा, अवस्था = दशा" इति = इत्थं कथयन्तमिव = वदन्तम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), इन्दुद्वेषपरिवर्तितदेहतया = इन्दुः चन्द्रः तस्य द्वेषेण शत्रुतया परिवर्तितः अधोमुखीकृतः यः देहः शरीरं तस्य भावः तत्ता तया, पृष्ठभागनिपतितैः = पृष्ठभागे देहपश्चाद्भागे निपतितैः पतनशीलैः, शशिकिरणैः = चन्द्ररश्मिभिः मदनदहनविह्वलहृदयन्यस्तहस्तनखमयूखच्छलेन = मदनः कामः एव दहनः अग्निः तेन विह्वलं व्याकुलं यत् हृदयम् अन्तःकरणं तत्र न्यस्तः स्थापितः यः हस्तः तस्य नखमयूखानां पुनर्भवकिरणानां छलेन मिषेण, छिद्रितमिव = संजातविवरम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), उच्छुष्कपाण्डुरया = उच्छुष्का अक्लिन्ना च असौ पाण्डुरा श्वेता तया, चन्दनलेखिकया = मलयजरेखया, स्वविनाशोत्पातोत्पन्नया = स्वस्य आत्मनः यः विनाशलक्षणः उत्पातः तेन उत्पन्नया जातया, मदनचन्द्रकलयेव = मदनः कामः एव चन्द्रः शशी तस्य कलया, इव (द्रव्योत्प्रेक्षा), रचितललाटिकम् =

था। (ऐसी स्थिति में) पाप कारिणी एवं अभागिनी मैंने वहाँ जाकर उस समय प्राणहीन उस महाभाग (पुण्डरीक) को देखा। वह सरतीर के निकटवर्ती, शीतल जलकणों को बरसाने वाली चन्द्रकान्तमणि के शिलातल पर विरचित शय्या पर, (जो) श्वेतकमल, उत्पल, नलिन आदि वन-कुसुमों की सुकुमार माला के समान मृणालमय थी (और इसीलिए) मानो कामदेव के बाणों के समान लग रही थी, सो रहा था। अत्यन्त निश्चल होने के कारण मानो वह (चुपचाप) मेरी पदध्वनि सुन रहा था; आन्तरिक क्रोध के कारण काम-सन्ताप के शान्त हो जाने से उस क्षण प्राप्त होने वाले सुख से मानो वह सो रहा था; (मुनिजन के लिए अनुचित) मनः

लाटिकम्, ईषदालक्ष्यपरिवृत्ततारकेणानवरतरोदनाताम्रेण प्राणोत्सर्गोपजाताश्रुक्षयतया रुधिरमिव क्षरता मदनशरशल्यवेदनाकूणितत्रिभागेण नातिमीलितेन लोचनयुगलेन मामसूययेव विलोकयन्तम्, 'मत्तः प्रियतरस्तवापरो जनो जात इति कुपितेनेव जीवितेन परित्यक्तम्, मन्मथव्यथया सहैतानसून्स्वयमिवोत्सृज्य निश्चेतनतासुखमनुभवन्तम्, अनङ्गयोगविद्यामिव ध्यायन्तम्,अपूर्व-

कृततिलकविशेषम्, **ईषदालक्ष्यपरिवृत्ततारकेण** = ईषत् स्वल्पम् आलक्ष्ये दृश्ये परिवृत्ते भ्रमन्त्यो तारकेकनीनिके यस्मिन् (लोचनयुगले) तेन, (तथा) **अनवरतरोदनताम्रेण** = अनवरतं निरन्तरं यत् रोदनम् अश्रुविमोचनं तेन ताम्रेण आरक्तेन, **प्राणोत्सर्गोपजाताश्रुक्षयतया** = प्राणानाम् असूनाम् उत्सर्गः त्यागः तेन उपजातः समुत्पन्नः यः अश्रुक्षयः नेत्रजलसमाप्तिः तस्य भावः तत्ता तया, **रुधिरम्** = रक्तम्, **क्षरता** = स्रवता, इव (उत्प्रेक्षा), **मदनशरशल्यवेदनाकूणितत्रिभागेण** = मदनस्य कामस्य शराणां बाणानां शल्यम् (अन्तःप्रविष्टं) बाणाग्रं तस्य वेदनया पीडया कूणितः ईषद्वक्रीकृतः त्रिभागः यस्मिन् तेन, **नातिमीलितेन** = किञ्चित् मुद्रितेन, **लोचनयुगलेन** = नेत्रद्वयेन, **माम** = महाश्वेताम्, **असूयया** = ईर्ष्यया, **विलोकयन्तम्** = पश्यन्तम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), **'मत्तः** = ममापेक्षया, **तव** = पुण्डरीकस्य, **प्रियतरः** = अधिकवल्लभः, **अपरः** = द्वितीयः (महाश्वेतारूपः), **जनः**, **जातः** = **भूतः' इति** = हेतोः, **कुपितेन** = क्रुद्धेन, **जीवितेन** = प्राणितेन, परित्यक्तम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), **मन्मथव्यथया** = कामवेदनया, **सह** = साकम्, **एतान्**, **असून्** = प्राणान्, **स्वयम्** = स्वतः (एव), **उत्सृज्य** = विमुच्य, **निश्चेतनतासुखम्** = निश्चेतनतया यत् सुखम् आनन्दः तत्, **अनुभवन्तम्** = अनुभवविषयीकुर्वन्तम्, इव (सहोक्ति क्रियोत्प्रेक्षा), **अनङ्गयोगविद्याम्**—अनङ्गः कामः तस्य जयाय या योगविद्या चित्तवृत्तिनिरोध विद्या ताम, **ध्यायन्तम्** = चिन्तयन्तम् इव (क्रियोत्पेक्षा) अपूर्व-

क्षोभ (चपलता) के प्रायश्चित के लिए मानो प्राणायाम में स्थित था। देदीप्यमान प्रभा से समन्वित अधर से 'तुम्हारे लिए (ही) मेरी यह अवस्था (हुई है)' मानो यह कह रहा था। चंद्रमा के द्वेष से शरीर को दूसरी ओर कर लेने से पीठ पर पड़ने वाली चन्द्रकिरणें मानो कामाग्नि से व्याकुल हृदय पर रखे हाथ की किरणों के बहाने उसे छेद रही थीं। अपने विनाश रूप उत्पात से उत्पन्न कामरूपी चन्द्रमा की कला के समान शुष्क एवं पाण्डुर चन्दन की रेखा से वह (अपने माथे पर) तिलक लगाये था। उसके दोनों नेत्रों की पुतलियां कुछ-कुछ घूमती दिखलाई देती थीं तथा वे (नेत्र) लगातार रोने के कारण कुछ लाल हो गये थे; (जिससे) प्राण-परित्याग के कारण अश्रुओं के समाप्त हो जाने से मानो वे रक्त को टपका रहे थे; काम-बाण की अन्तःप्रविष्ट नोक के कारण होने वाली वेदना से वे कुछ तिरछे कटाक्ष से युक्त तथा थोड़े मुँदे थे, ऐसे नेत्रों से वह मानो मुझे ईर्ष्यापूर्वक देख रहा था। तुम्हारा मुझसे

प्राणायाममिवाभ्यस्यन्तम्, उपपादितास्मदागमनेन प्रणयादिवापहृतप्राणपूर्णपात्रमनङ्गेन, रचितललाटिकात्रिपुण्ड्रकम्, धृतसरसबिससूत्रयज्ञोपवीतम्, अंसावसक्तकदलीगर्भपत्रचारुचीरम्, एकावली विशालाक्षमालम्। अविरलामलकर्पूरक्षोदभस्मधवलम्, आबद्धमृणालरक्षाप्रतिसरमनोहरम्, मनोभवव्रतवेषमास्थाय मत्समागममन्त्रमिव साधयन्तम्, 'कठिनहृदये दर्शनमात्रकेणापि न पुनरनु-

त्राणायामम = अपूर्वः अद्भुतः यः प्राणनियमनम् तम्, अभ्यसन्तम् = वारम्वारं कुर्वन्तम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), उपपादितास्मदागमनेन = उपपादितम् निष्पादितम् अस्मदागमनम् अस्माकम् आगमनं येन तेन, अनङ्गेन = कामेन, प्रणयादिव = स्नेहात्, इव, अपहृतप्राणपूर्णपात्रम् = अपहृतम् बलात् आकृष्टं प्राणाः असव, एव पूर्णपात्रम् पारितोषिकवस्तु यस्मात् (पुण्डरीकात्) तम् (हेतूत्प्रेक्षा, निरङ्गकेवलरूपकं, सङ्करः च), रचितललाटिकात्रिपुण्ड्रकम् = रचितं—(कपिञ्जलेन) निर्मितं ललाटिकायाः चन्दनतिलकविशेषस्य उपरि त्रिपुण्ड्रकं यस्य तम्, धृतसरसबिससूत्रयज्ञोपवीतम्—धृतं (कामज्वरशान्तये) गृहीतं सरस सजलं बिससूत्र मृणालतन्तुम् एव यज्ञोपवीतं, येन तम् (निरङ्ग केवलरूपकम्, अंसावसक्तकदलीगर्भपत्रचारुचीरम् = अंसे स्कन्धदेशे अवसक्तं न्यस्तं कदलीगर्भपत्रम् एव रम्भान्तरदलम् एव चारु सुन्दरं चीरं वस्त्रं येन यस्य वा तम् (निरङ्ग केवलरूपकम्), एकावलीविशालाक्षमालम् = एकावली (मया पूर्वप्रदत्तः) एकपंक्तिकः हारः एव विशाला महती अक्षमाला जपमाला यस्य सः तम् (निरङ्ग केवलरूपकम्), अविरलामलकर्पूरक्षोदभस्मधवलम् = अविरलः घनः अमलः स्वच्छः (च) कर्पूरस्य घनसारस्य क्षोदः चूर्णः सः एव भस्मविभूतिः तेन धवलम् सितवर्णम् (निरङ्ग केवल रूपकम्), आबद्धमृणालरक्षाप्रतिसरमनोहरम् = आबद्धेन धृतेन मृणालरूपेण बिसतन्तुरूपेण रक्षाप्रतिसरेण (कामपीडायाः) त्राणार्थं हस्तसूत्रेण मनोहरम् नयनाभिरामम् (निरङ्गकेवलरूपकम्), मनोभवतव्रतवेषम् = मनोभवः कामदेवः तस्य व्रताय (पूजनरूपाय) नियमाय वेषम्, आस्थाय = धृत्वा, मत्समागममन्त्रम् = मम महाश्वेतायाः यः समागमः संयोगः तस्य कृते यः मन्त्रः तम्, साधयन्तम् = आराधयन्तम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा) कठिनहृदये = निष्ठुरचित्ते ! दर्शनमात्रकेणापि = केवलं दृष्टिपातेन, अपि, अयम् = एषः, अनुगतः = अनुरक्तः, जनः = पुण्डरीकरूपः न पुनः = न भूयः, अनुगृहीतः =

भी अधिक प्रिय (कोई) दूसरा प्राणी हो गया' यह कह क्रुद्ध हो मानो प्राणों ने उसको छोड़ दिया था। वह काम-व्यथा के साथ-साथ मानो स्वयं ही इन प्राणों को छोड़कर निश्चेतनता के सुख का अनुभव कर रहा था। वह मानो काम-विजय के लिए योग विद्या का ध्यान तथा अपूर्व प्राणायाम का अभ्यास कर रहा था। मेरे आगमन (के कार्य) का सम्पादन कर मानो कामदेव ने स्नेह पूर्वक उसका प्राणरूपी पूर्णपात्र ही छीन लिया था। वह (चन्दन की) ललाटिका के ऊपर त्रिपुण्ड्र

गृहीतोऽयमनुगतो जनः' इति सप्रणयं मामुपालभमानमिव चक्षुषा, किंचिद्विवृताधरतया जीवितमपहर्तुमन्तःप्रविष्टैरिवेन्दुकिरणैर्निर्गच्छद्भिर्दशनांशुभिर्धवलितपुरोभागम्,मन्मथव्यथाविघटमानहृदयनिहितेन वामेन पाणिना 'प्रसीद प्राणैः समं प्राणसमे न गन्तव्यम्', इति हृदयस्थितां मामिव धारयन्तम, इतरेण च नखमयूखदन्तुरया चन्दनमिव स्रवतोत्तानीकृतेन चन्द्रातपमिव

(त्वया) स्वीकृतः' इति = एवम्, माम् = महाश्वेताम्, सप्रणयं = सप्रेम, चक्षुषा = नेत्रेण, उपालभमानमिव = उपालम्भं ददानम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा, काव्यलिङ्गम्, एतयोः अङ्गाङ्गिभावरूपसङ्करः च), किंचिद्विवृताधरतया = किंचित् ईषत् विवृतः विवृतिं प्राप्तः अधरः ओष्ठः यस्य तस्य भावः तत्ता तया, जीवितम् = प्राणान्, अपहर्तुम् = निःसारयितुम्, अन्तःप्रविष्टैः = अभ्यन्तरगतैः, निर्ग-च्छद्भिः = (प्राणैः सह) वहिः आगदच्छद्भिः, इन्दुकिरणैः = चन्द्ररश्मिभिः इव, दशनांशुभिः = दन्तकिरणैः, धवलितपुरोभागम् = धवलितः श्वेततां नीतः पुरोभागः (शरीरस्य) अग्रप्रदेशः यस्य तम् (जात्युत्प्रेक्षा), मन्मथव्यथाविघटमानहृदयनिहितेन = मन्मथस्य कामस्य व्यथया वेदनया विघटमानं भिद्यमानं यत् हृदयं स्वान्तं तत्र निहितेन न्यस्तेन, वामेन = सव्येन, पाणिना = हस्तेन, ''प्राणसमे = प्राणतुल्ये ! (प्रिये !), प्रसीद = प्रसन्ना भव, प्राणैः = असुभिः, समं = साकं, (त्वया, मां विहाय) न गन्तव्यम् = न गमनीयम्' इति = एवं कथयन्, हृदयस्थितां = मनसि विराजिताम् माम = महाश्वेताम्, धारयन्तम् = (बलात्) दधानम्, इव (प्राणमहाश्वेतयोः तुल्यत्वात् तयोः सहगमन् माशङ्क्य केवलं महाश्वेतागमननिवारणेन सा (महाश्वेता) तत्कृते प्राणेभ्योऽपि गरीयसी, इति व्यज्यते—अत्र क्रियोत्प्रेक्षा), नखमयूखदन्तरतया = नखानां पुनर्भवाणां मयूखाः किरणाः तैः दन्तुरतया उच्चावचतया, चन्दनम् = मलयजम्, स्रवता = क्षरता, इव, उत्तानीकृतेन = ऊर्ध्वीकृतेन, इतरेण = दक्षिणेन (पाणिना), चन्द्रातपम् = चन्द्रिकाम्, निवारयन्तम् = निषेध-

लगाये था सरस मृणालसूत्ररूपी यज्ञोपवीत को धारण किये था, केले के भीतरी कोमल पत्र रूपी सुन्दर चीर को कन्धे पर रखे था, एकावलीरूपी विशाल अक्षमाला लिए था, घने कर्पूर-चूर्णरूपी भस्म से धवल (हो गया) था तथा मृणाल रूप रक्षा-सूत्र को हाथ में बाँधने से (वह) मनोहर दीखता था। (इस प्रकार ऐसा लगता था) मानो वह काम व्रत के (लिए) उपयुक्त वेष को धारण कर मेरे समागत मंत्र की साधना कर रहा हो, "अरी कठिन हृदये ! तूने (अपने) दर्शन मात्र से भी इस अनुरक्तजन को अनुगृहीत नहीं किया,' इस प्रकार मानो वह प्रेमपूर्वक नयन द्वारा मुझे उपालम्भ दे रहा था। अधरों के कुछ खुले रहने से मानो प्राण लेने के लिए भीतर धुसकर बाहर निकलती हुई चन्द्रकिरणों के समान दन्त किरणों से उसका अग्रभाग धवल हो गया था। कामवेदना से विदीर्ण होते (हुए)

निवारयन्तम्, अन्तिकस्थितेन चाचिरोद्गतजीवितमार्गमिवोद्ग्रीवेण विलोकयता तपःसुहृदा कमण्डलुना समुपेतम्, कण्ठाभरणीकृतेन च मृणालवलयेन रजनीकरकिरणपाशेनेव संयम्य लोकान्तरमुपनीयमानम्, कपिञ्जलेन मद्दर्शनादब्रह्मण्यमित्यूर्ध्वहस्तेन द्विगुणीभूतबाष्पोद्गमेनाक्रोशता कण्ठे परिष्वक्तं तत्क्षणविगतजीवितं तमहं पापकारिणी मन्दभाग्या महाभागमद्राक्षम्।

यन्तम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), अन्तिकस्थितेन = निकटवर्तिना, उद्ग्रीवेण = उन्नतकन्धरेण; (अतएव) अचिरोद्गतजीवितमार्गम् = अचिरम् तत्कालम् उद्गतम् प्रयातं यत् जीवितं प्राणाः तस्य मार्गम् गमनपथम्, विलोकयता = पश्यता, इव, तपःसुहृदा = तपसः तपस्यायाः सुहृदामित्रेण, कमण्डलुना = कुण्डिकया, समुपेतम् = युक्तम् (पदार्थहेतुकं काव्यलिङ्गम्, क्रियोत्प्रेक्षा, अङ्गाङ्गितया चोभयोः सङ्करः च), कण्ठाभरणीकृतेन = कण्ठे गले आभरणीकृतेन, विभूषणी कृतेन मृणालवलयेन = विसकटकेन, च, उपलक्षितम्, (अत एव) रजनीकरकिरणपाशेन = रजनीकरस्य निशाकरस्य किरणाः रश्मयः एव पाशः बन्धनरज्जुः तेन, संयम्य = आबध्य, लोकान्तरम् = परलोकम्, उपनीयमानम् = प्राप्यमाणम्, इव (निरङ्गकेवलरूपकम्, क्रियोत्प्रेक्षा उभयोः अङ्गाङ्गितया सङ्करः च), मद्दर्शनात् = (तदा) मम अवलोकनात्, "अब्रह्मण्यम् = अवध्यः (अयं पुण्डरीकः) 'अब्रह्मण्यमवध्योक्तौ' इत्यमरः, इति, आक्रोशता = आक्षिपता, ऊर्ध्वहस्तेन = उपरिकृतकरेण, द्विगुणीभूतबाष्पोद्गमेन = (ममावलोकनात्) द्विगुणीभूतः पूर्वस्मात् प्रवृद्धः बाष्पाणाम् अश्रूणाम् उद्गमः उद्भवः यस्य सः तेन, कपिञ्जलेन = तदाख्यमित्रेण, कण्ठे = गले परिष्वक्तम् = आलिङ्ग्यमानं, तत्क्षणविगतजीवितम् = तत्क्षणे तत्काले विगतं समाप्तं जीवितं प्राणितं यस्य सः तम्, महाभागम् = अतिभाग्यशालिनं, तम् = पुण्डरीकम्, पापकारिणी = दुष्कृतकारिणी, मन्दभाग्या = हतभाग्या, अहम् = महाश्वेता, अद्राक्षम् = अपश्यम्।

हृदय पर रखे बायें हाथ से मानो वह 'प्राणोपमे प्रिये ! प्रसन्न होओ, प्राणों के साथ तू न (मुझे छोड़कर) चली जाना, यह कह कर हृदय में स्थित मुझको धारण किये था। नखों की किरणों के विषम तथा उन्नत होने के कारण मानो चन्दन-रस को झरते (एवं) ऊपर उठे हुए दूसरे (दाहिने) हाथ से जैसे वह चन्द्रमा के प्रकाश का निवारण कर रहा था। (वह कमण्डलु) मानो गर्दन ऊपर उठाकर शीघ्र ही निकले) प्राणों का मार्ग देख रहा था। कंठ में आभूषण स्वरूप पहिने मृणाल-वलय के कारण (ऐसा प्रतीत होता था) मानो चन्द्रकिरणों के पाश से बाँधकर वह दूसरे लोक को ले जाया जा रहा था। मुझे देखते ही हाथ उठाकर 'यह (पुण्डरीक) अवध्य है' (ऐसा कहकर) दुगुने आँसू गिराकर (वेग से) रोता हुआ कपिञ्जल उसके कंठ में लिपट रहा था।

उद्भूतमूर्च्छान्धकारा च पातालतलमिवावतीर्णा तदा क्वाहमगमं किमकरवं किं व्यलपमिति सर्वमेव नाज्ञासिषम्। असवश्च मे तस्मिन्क्षणे किमतिकठिनतयास्य मूढहृदयस्य, किमनेकदुःखसहस्रसहिष्णुतया हतशरीरकस्य, किं विहिततया दीर्घशोकस्य किं भाजनतया जन्मान्तरोपात्तस्य दुष्कृतस्य, किं दुःखदाननिपुणतया दग्धदैवस्य, किमेकान्तवामतया दुरात्मनो मन्मथहतकस्य, केन हेतुना नोदगच्छन्ति स्म तदपि न ज्ञातवती। केवलमतिचिराल्लब्धचेतना दुःखभागिनी वह्नाविव पतितमसह्यशोकदह्यमानमात्मानमवनौ विचेष्टमान-

---

च = किञ्च, उद्भूतमूर्च्छान्धकारा = उद्भूतः समुत्पन्नः मूर्च्छारूपः अन्धकारः तमः यस्याः सा तथाभूता, पातालतल = रसातलम्, अवतीर्णा = कृतावतरणा, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), अहम् = महाश्वेता, तदा = तस्मिन् काले, क्व = कुत्र, अगमम् = अगच्छम्, किमकरवं = किं कृतवती, किं व्यलपम् = किं विलपनं कृतवती, इति, सर्वम्, एव नाज्ञासिषम् = न ज्ञातवती। तस्मिन् क्षणे = तदानीम्, मे = मम, असवः = प्राणाः, च, किम्, अस्य = अद्यापि वर्तमानस्य, मूढहृदयस्य = अज्ञमनसः, अतिकठिनतया = अतिकठोरतया, किं, हतशरीरकस्य = अधमदेहस्य, अनेकदुःखसहस्रसहिष्णुतया = बहुविधक्लेशसमूहसहनशीलतया, किम्, दीर्घशोकस्य = चिरकालिकशोकस्य, विहिततया = विधिना निर्दिष्टतया, किं, जन्मान्तरोपात्तस्य = अन्यत् जन्म इति जन्मान्तरं तस्मिन् उपात्तस्य अर्जितस्य, दुष्कृतस्य = पापस्य, भाजनतया = पात्रतया ('अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्' इति नियमात्), किं, दग्धदैवस्य = ज्वलितभाग्यस्य, दुःखदाननिपुणतया = दुःखानां कष्टानां दाने अर्पणे कुशलः तस्य भावः तत्ता तया, किं दुरात्मनः = दुष्टस्य, मन्मथहतकस्य = नीचकामस्य, एकान्तवामतया = अत्यन्तप्रतिकूलतया, (एतेषां मध्ये) केन हेतुना = केन कारणेन, नोदगच्छन्ति स्म = न प्रयान्ति स्म, तदपि = कारणमपि, न ज्ञातवती। अतिचिरात् = अतिकालानन्तरं, लब्धचेतना = अधिगतचेतना (सती), दुःखभागिनी = क्लेशभागिनी (अहम्). असह्यशोकदह्यमानम् = असह्यः सोढुम् अशक्यः यः शोकः मानसिककष्टं तेन दह्यमानम् ज्वल्यमानम्, (अतएव) वह्नौ = अग्नौ, पतितम्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), अवनौ = पृथिव्याम्, विचेष्टमानम् =

(उसको देखते ही) मैं उत्पन्न मूर्च्छा रूपी अन्धकार से (ग्रस्त) हो मानो पाताल-लोक में अवतीर्ण हो गई। (उस समय) मैं कहाँ गई, (मैंने) क्या किया, क्या विलाप किया, यह सब न जान पाई। उस क्षण मेरे प्राण मूढ़ हृदय के अत्यन्त कठिन होने से, (या) अधम शरीर के सहस्रों दुःखों को सहन करने (की शक्ति) से; (या) महान् शोक के विधान से, अथवा पूर्व जन्म में किये पापों (को भोगने के लिए उनका) पात्र होने से, (अथवा) दग्ध-दैव के दुःख देने में निपुण होने से, (अथवा) दुरात्मा, पापी कामदेव के पूर्ण रूप से प्रतिकूल होने के कारण–(इनमें से) किस कारण

पमश्यम्। अश्रद्दधाना चासंभावनीयं तत्तस्य मरणमात्मनश्च जीवितमुत्थाय, 'हा हा किमिदमुपनतम्' इति मुक्तार्तनादा, 'हा अम्ब, 'हा तात, हा सख्यः' इति व्याहरन्ती, 'हा नाथ जीवितनिबन्धन, आचक्ष्व क मामेकाकिनीमशरणामकरुण, विमुच्य यासि, पृच्छ तरलिकां त्वत्कृते मया यानुभूतावस्था, युगसहस्रायमाणः कृच्छ्रेण नीतो दिवसः, प्रसीद सकृदप्यालप, दर्शय भक्तवत्सलताम्, ईषदपि विलोकय, पूरय मे मनोरथम्, आर्तास्मि, भक्तास्म्यनुरक्ता-

---

लुठन्तम् (एव), आत्मानम् = स्वम्, केवलम्, अपश्यम् = अवालोकयम्। तस्य = (प्राणवल्लभस्य) मुनिकुमारस्य, तत् = जातम्, असम्भावनीयं = अतर्क्यमाणम् (आकस्मिकम्), मरणं = प्राणत्यागम्, आत्मनः = स्वस्य, जीवितम् = प्राणितम्, च, अश्रद्दधाना = विश्वासम् अकुर्वाणा, उत्थाय = उत्थानं विधाय, 'हा हा = खेदातिशये, इदं किम्, उपनतम् = आपतितम्, इति = इवं, मुक्तार्तनादा = मुक्तः आर्तनादः आक्रन्दशब्दः यया सा तथाभूताः 'हा अम्ब = हा मातः !, हा तात = हा पितः ! हा सख्या = हा वयस्याः ! इति, व्याहरन्ती = कथयन्ती हा नाथ = हा स्वामिन् ! जीवितनिबन्धन ! = जीवितं जीवनं तस्य निबन्धनं कारणं तत्सम्बुद्धौ, आचक्ष्व = वद, अकरुण = निर्दय ! माम् = महाश्वेताम्, एकाकिनीम् = असहायाम् अशरणाम् = रक्षकविहीनाम्, विमुच्य, = परित्यज्य, क्व = कुत्र, यासि = गच्छसि ? तरलिका = पृच्छ, त्वत्कृते = त्वदर्थे, मया = महाश्वेतया, या, = अवस्था = दशा, अनुभूता = अनुभवविषयीकृता, युगसहस्रायमाणः = युगानां कृतादीनाम् सहस्रम् तद्वत् आचरमाणः, दिवसः = वासरः, कृच्छ्रेण = कष्टेन, नीतः = यापितः ! प्रसीद = प्रसन्नः भव, सकृत् = एकवारम्, अपि, आलप = संलप, भक्तवत्सलतां = भक्तजनं प्रति स्नेहभावं, दर्शय = प्रकटय, ईषदपि = मनाक्, अपि, विलोकय = पश्य, मे = मम, मनोरथम् = अभीष्टं, पूरय = पूर्णतां नय, आर्ता = व्यथिता, अस्मि = भवामि, भक्ता = तवसेविका, अस्मि, अनुरक्ता = अनुरागवती, अस्मि, अनाथा = असहाया, अस्मि, बाला =

से, (बाहर) नहीं निकले, उसको भी मैं न जान पाई। बहुत देर बाद जब मुझे होश आया, तब दुःखभागिनी मैंने केवल इतना देखा कि जैसे मैं अग्नि में गिरी पड़ी हूँ, असह्य शोक से झुलस रही हूँ, (दुःख के कारण) पृथिवी पर छटपटा रही हूँ। उसके असंभावनीय (आकस्मिक) मरण और अपने जीवनधारण पर अविश्वास करती हुई मैं उठकर—'हाय-हाय, यह क्या हो गया,' इस प्रकार आर्तनाद करती; 'हाय माता ! हाय पिता। हाय सखियो,' यह कहती, 'हाय स्वामी ! जीवन धारण के हेतु ! बोलो, निष्ठुर बन मुझ शरणहीना को अकेली छोड़कर कहाँ जा रहे हो ! तुम्हारे लिये मैंने जिस अवस्था की अनुभूति की, वह तरलिका से पूछो। हजारों युग के

स्म्यनाथास्मि बालास्म्यगतिकास्मि, दुःखितास्म्यनन्यशरणास्मि, मदनपरिभूतास्मि, किमिति न करोषि दयाम्, कथय किमपराद्धम्, किं वा नानुष्ठितं मया, कस्यां वा नाज्ञायामादृतम्, कस्मिन्वा त्वदनुकूले नाभिरतम्, येनं कुपितो दासीजनमकारणात्परित्यज्य व्रजन्न बिभेषि कौलीनात्, अलीकानुरागप्रतारणकुशलया किं वा मया वामया पापया याहमद्यापि प्राणिमि, हा हतास्मि, मन्दभागिनी, कथं न त्वं जातो न विनयो न वन्धुवर्गो न परलोकः,

---

बालिका, अस्मि, अगतिका = आश्रयविहीना, अस्मि, दुःखिता = कष्टयुक्ता, अस्मि, अनन्यशरणा = न विद्यते अन्यत् अपरं शरणं त्राणं यस्याः सा, अस्मि, मदनपरिभूता = मदनः कामः तेन परिभूता पराजिता, अस्मि, किमिति = कस्मात् हेतोः, दयाम् = कृपां न करोषि = नाचरसि, कथय = ब्रूहि, मया, (मयेतिपदस्य अग्रेऽपि सम्बन्धः) किम अपराद्धम् = कः अपराधः कृतः, किं वा, नानुष्ठितं = न आचरितम् कस्याम्, आज्ञायाम् = आदेशे, वा = अथवा, न आहतम् = न आदरः कृतः। त्वदनुकूले = तव इष्टे, कस्मिन् = कर्मणि, न अभिरतम् = न आसक्तम्, येन = कारणेन, कुपितः = क्रुद्धः, अकारणात् = अविद्यमानात् हेतोः विना, दासीजनं = स्वसेविकां, मां, परित्यज्य = त्यक्त्वा, व्रजन् = (परलोकं) गच्छन्, कौलीनात् = जनापवादात्, न बिभेषि = न भीतः भवसि, अलीकानुरागप्रतारणकुशलया = अलीकः मिथ्या यः अनुरागः प्रेम तेन यत् प्रतारणं वञ्चनं तत्र कुशलया प्रवीणया, मया = कृतापराधया महाश्वेतया, वामया = (प्रियतमात् अपि) प्रतिकूलया, पापया = दुष्कृतकारिण्या किम् (प्रयोजनं स्यात् ?) या = एतादृशी, अहम्, अद्यापि = एतावत्कालम् अपि, प्राणिमि = जीवामि, हा = खेदे, हता = नष्टा, अस्मि, मन्दभागिनी = हतभाग्या, कथं = कस्मात्, न, त्वं, (मम) जातः (मरणात), न, विनयः = सदाचारः, न, वन्धुवर्गः = स्वजनवृन्दम्, न, परलोकः, (मम जातः

समान (प्रतीत होते) उस दिन को मैंने कठिनता से बिताया। प्रसन्न होओ। एक बार तो बोलो। भक्तवत्सलता (तो) दिखाओ। थोड़ा सा तो देखो। मेरा मनोरथ पूर्ण करो। मैं आर्त हूँ। (तुम्हारी) भक्त हूँ। (तुम पर) अनुरक्त हूँ। अनाथ हूँ। बाला हूँ। मेरी कोई गति नहीं। दुःखिनी हूँ। और कोई शरण नहीं है। कामदेव से पराजित हूँ। क्यों दया नहीं करते ? कहो, मैंने क्या अपराध किया ? अथवा क्या नहीं किया ? किस आदेश का आदर नहीं किया ? तुम्हारे (लिए) अनुकूल किस (कर्म) में मैंने अनुराग नहीं किया ? जिससे कुपित हो और इस दासी को अकारण छोड़कर जाते (तुम) जनापवाद से नहीं डरते ! अथवा मिथ्यानुराग (दिखलाकर) प्रतारण में कुशल, प्रतिकूल एवं पापिनी मुझ जैसी (नारी) से (तुम्हारा) क्या प्रयोजन ! जो मैं आज भी जी रही हूँ ! हाय मैं अभागिन मारी गई ! न तुम मेरे हुये, न मर्यादा रही, न बंधु-वर्ग रहा, (और) न परलोक ही

धिङ्मां दुष्कृतकारिणीं यस्याः कृते तवेयमीदृशी दशा वर्तते। नास्ति मत्सदृशी नृशंसहृदया याहमेवंविधं भवन्तमुत्सृज्य गृहं गतवती। किं मे गृहेण, किमम्बया, किं वा तातेन, किं बन्धुभिः, किं परिजनेन, हा कमुपयामि शरणम्, अयि दैव, दर्शय दयां विज्ञापयामि त्वां 'देहि दयितदक्षिणाम्', भगवति भवितव्यते, कुरु कृपां, पाहि वनितामनाथाम्, भगवत्यो वनदेवता', प्रसीदत प्रयच्छतास्य प्राणान्, अव वसुंधरे, सकललोकानुग्रहजननि, रजनि, किमर्थं नानुकम्पसे, तात कैलाश, शरणगतास्मि ते दर्शय दयालुताम्'

अनुचितकार्यकरणात्), दुष्कृतकारिणीं = दुष्कर्मविधायिनीं, माम् = महाश्वेतां, धिक यस्याः कृते, तव = भवतः, ईदृशी = एवंविधा, दशा=अवस्था, वर्तते, मत्सदृशी नृशंसहृदया = नृशंसं क्रूरं हृदयं चेतः यस्याः सा, नास्ति = न कुत्रापि वर्तते, या, अहम्, एवंविधं = प्रेमानुरक्त, भवन्तम् = त्वाम्, उत्सृज्य = विहाय, गृहं गतवती = गेहम् अगच्छम्। (त्वयि उपरते) मे = मम, गृहेण किं = गेहेन, न किमपि प्रयोजनम् (एवं सर्वत्र), अम्बया = जनन्या, किं, तातेन = जनकेन, वा किं. बन्धुभिः = स्वजनैः, किं, परिजनेन = सेवकवर्गेण (वा), किम् हा, कं, शरणम् = त्राणम्, उपयामि = व्रजामि, अयि, दैव = विधे ! दर्शय दयां = कृपां कुरु, त्वां विज्ञापयामि = भवन्तं निवेदयामि, दयितदक्षिणाम् = दयितः प्रियः (मुनिकुमारः) एव दक्षिणा दातव्यं वस्तु ताम् देहि = प्रयच्छ। भगवति = देवि, भवितव्यतेः कृपा = दयां, कुरु = विधेहि, अनाथाम् = अशरणां, वनितां = नारीं (मां) पाहि = रक्ष, भगवत्यः, वनदेवताः = वनदेव्यः, प्रसीदत = प्रसन्नाः भवत अस्य = मे वल्लभस्य, प्राणान् = असून प्रयच्छत = दत्त, सकललोकानुग्रहजननि सकलेषु सर्वेषु लोकेषु प्राणिषु अनुग्रहं कृपां जनयति उत्पादयति इति तत्सम्बुद्धौ, वसुन्धरे = पृथिवि, अव = रक्ष, रजनि = देवि रात्रि ? किमर्थं, नानुकम्पसे = न कृपा करोषि, तात = पितृभूत ! कैलाश, ते = तव, शरणागतास्मि = शरणं प्राप्ता, अस्मि, दयालुताम् = कृपालुतां, दर्शय = प्रकटय,' इत्येतानि = पूर्वोक्तानि

रहा। दुष्कर्म करने वाली मुझको धिक्कार है, जिसके लिये तुम्हारी ऐसी दशा हो गई। मुझ जैसी क्रूरहृदया (दूसरी कोई) नहीं होगी, जो ऐसे एक (प्रेमानुरक्त) आपको छोड़कर घर चली गई। मुझे घर से क्या ? माता से क्या ? पिता से क्या ? बन्धुओं से क्या ? और परिजनों से क्यां (मतलब) ? हाय ! अब मैं किसकी शरण जाऊँ ? दैव ! मुझपर दया दिखाओ। तुमसे निवेदन करती हूँ, मुझे पति-दक्षिणा दो। भगवति भवितव्यते ! कृपा करो। अनाथ स्त्री की रक्षा करो भगवती वनदेवियो ! प्रसन्न होओ। इसके प्राणों को दो। सकल लोक पर कृपा करने वाली वसुन्धरे ! रक्षा करो। हे देवि जननी ! क्यों नहीं (मुझपर) अनुकम्पा करती ? पिता कैलाश ! तेरी शरण आई हूँ। दयालुता दिखाओ' इस प्रकार तथा अन्य प्रकार से व्याक्रोश (विलाप) करती मैं

इत्येतानि चान्यानि च व्याक्रोशन्ती, कियद्वा स्मरामि ग्रहगृहीतेवाविष्टेवोन्मत्तेव भूतोपहतेव व्यलपम्। उपर्युपरिपतितनयनजलधारानिकरच्छलेन विलीयमानेव द्रवतामिव नीयमाना जलाकारेणेवात्मीक्रियमाणा, प्रलापाक्षरैरपि दशनमयूखशिखानुगततया साश्रुधारैरिव निष्पतद्भिः शिरोरुहैरप्यविरलविगलितकुसुमतया मुक्तबाष्पजलविन्दुभिरिवाभरणैरपि प्रसृतविमलमणिकिरणाश्रुतया प्ररुदितैरिवोपेता, तज्जीवितायेवात्ममरणाय स्पृहयन्ती, मृतस्यापि सर्वात्मना

अन्यानि = (एवं विधानि) अपराणि, च, व्याक्रोशन्ती = तारस्वरेण विलपन्ती कियत् = कियन्मात्रं वा, (विलपनं) स्मरामि = स्मरणं करोमि, ग्रहगृहीतेव = दुष्टग्रहधृता, इव, आविष्टेव = आवेश युक्ता, इव उन्मत्तेव = प्रमत्ता, इव, भूतोपहतेव = भूताः वेतालाः तैः उपहता विकृता, इव व्यलपम् = विलापं कृतवती। 'ग्रहगृहीतेव' इत्यादिस्थलचतुष्टये क्रियोत्प्रेक्षा अनपेक्षतया संसृष्टिः च। अश्रुपातं वर्णयति उपर्युपरिपतिनयनजलधारानिकरच्छलेन = ऊर्ध्वोर्ध्वं पतितानां च्युतानां नयनजलानाम् अश्रूणांयः धारानिकरः प्रवाह समूहः तस्य छलेन व्याजेन विलीयमानेव = पृथिव्यां विलयं प्राप्ता, इव, (तेनैव नयनधलधारानिकरेण) द्रवतां = तरलतां, नीयमाना = प्राप्यमाणा इव, जलाकारेण = जलस्य आकारेण, स्वरूपेण, आत्मीक्रियमाणा = निजरूपता (वारिरूपतां) प्राप्यमाणा इव (क्रियोत्प्रेक्षा), प्रलापा क्षरैः = विलापवर्णैः अपि, दशनमयूखशिखानुगततया = दशनमयूखाः दन्तकिरणाः तेषां शिखाः अग्रभागः तैः अनुगततया अनुसृततला, साश्रुधारैरिव वाष्पप्रवाह सहितैः, इव, निष्पतद्भिः = निर्गच्छद्भिः, उपेता = समन्विता (गुणोत्प्रेक्षा) शिरोरुहैरपि = केशैः, अपि, अविरलविगलितकुसुमतया = अविरलं निरन्तरं विगलितानि स्रस्तानि कुसुमानि पुष्पाणि येभ्यः तेषां भावः तत्ता तया, मुक्ता वाष्पजलबिन्दुभिरिव = मुक्ताः त्यक्ताः वाष्पजलस्य अश्रुसलिलस्य बिन्दवः कणाः यैः तादृशैः इव (उपेता) (क्रियोत्प्रेक्षा,) आभरणैरपि = विभूषणैः, अपि, प्रसृतविमलमणिकिरणश्रुतया = प्रसृताः इतस्ततः पर्यस्ताः विमलाः स्वच्छाः मणिकिरणाः रत्नरश्मयः एव अश्रूणि वाष्पाणि येभ्यः तेषां भावः तत्ता तया, प्ररुदितैरिव = कृताश्रुपातैः, इव, (क्रियोत्प्रेक्षा), उपेता, (अहं) तज्जीवितायेव = तस्य प्राणवल्लभस्य जीविताय जीवनाय, इव, आत्ममरणाय = स्वप्राणत्यागाय, स्पृहयन्ती = अभिलषन्ती, मृतस्यापि = दिवङ्गतस्य, अपि, (पुण्डरीकस्य), हृदयं = स्वान्तं, सर्वात्मना = सर्वतोभावेन, प्रवेष्टुमिच्छन्तीव = प्रवेशं

कहाँ तक (रोने को) स्मरण करूँ—मानो दुष्टग्रह से पकड़ी गई (के समान) आवेश में आई हुई (के सदृश), उन्मत्त एवं भूत से पीड़ित की भाँति विलाप करती रही। उस समय एक-पर एक (लगातार) गिरते अश्रु धारा-समूह के बहाने जैसे मैं विलीन हो रही थी, तरलता को प्राप्त कर रही थी तथा जलाकाररूप में परिणत (पानी-पानी)

हृदयं प्रवेष्टुमिवेच्छन्ती, करतलेन कपोलयोराश्यानचन्दनश्वेतजटामूले च ललाटे निहितसरसविसयोश्चांसयोर्मलयजरसलवलुलितकमलिनीपलाशाव-गुण्ठिते च हृदये परामृशन्ती, 'पुण्डरीक निष्ठुरोऽस्येवमप्यार्तां न गणयसि माम्' इत्युपालभमाना मुहुर्मुहुरेनमन्वनयं मुहुर्मुहुः पर्यचुम्बं मुहुर्मुहुः कण्ठे गृहीत्वा व्याक्रोशम् । 'आः पापे, त्वयापि मत्प्रत्यागमनकालं यावदस्यासवो

वाञ्छन्ती, इव (क्रियोत्प्रेक्षा), करतलेन = स्वपाणितलेन, कपोलयोः = तस्य गण्ड-स्थलयोः, परामृशन्ती = स्पर्शं कुर्वन्ती, आश्यानचन्दनश्वेतजटामूले = आश्यानं शुष्कं यत् चन्दनम् मलयजम् तेन श्वेतानि शुभ्राणि जटामूलानि सटापीठानि यत्र तथा भूते, ललाटे = तस्य मस्तके, च. (परामृशन्ती), निहितसरसबिसयोः = निहितानि न्यस्तानि सरसानि सजलानि बिसानि मृणालानि ययोः तयोः, अंसयोः = तस्य स्कन्धदेशयोः, च, (परामृशन्ती) मलयजरसलवलुलितकमलिनीपलाशावगुण्ठिते = मलयजस्य चन्दनस्य यः रसः द्रवः तस्य लवैः कणैः लुलितानि चिह्नितानि यानि कमलिनीनां नलिनीनां पलाशानि पत्राणि तैः अवगुण्ठिते आच्छन्ने, हृदये = (तस्य) उरःस्थले, च, (परामृशन्ती) 'पुण्डरीक, निष्ठुरः = निर्दयः, असि = भवसि, एवमपि = इत्थमपि, आर्तां = व्याकुलितां, माम् = महाश्वेतां, न गणयसि = गणनां न करोषि' इति = एवम् , उपालभमाना = उपालम्भं ददाना, मुहुर्मुहुः = पुनः पुनः, एनम् = पुण्डरीकम् , अन्वनयम् = अनुनीतवती, मुहुर्मुहुः, पर्यचुम्बम्=चुम्बितवती, मुहुर्मुहुः, कण्ठे = गले, गृहीत्वा = धृत्वा, व्याक्रोशम् = तारस्वरेण व्यलपम् । आ = आक्रोशे, पापे = पापिनि, त्वयापि = एकावल्या, अपि.. मत्प्रत्यागमनकालं यावत् मम आगमनसमयं यावत् , अस्य = पुण्डरीकस्य, असवः = प्राणाः, न रक्षिताः = न

हो रही थी।' दन्त किरणों के अग्रभाग पर आ जाने के कारण (मेरे) प्रलापाक्षर भी मानो अश्रुधारा बहाते निकल रहे थे; निरन्तर फूलों के गिरने के कारण (मेरे) शिर के केश भी मानो आँसू की बूँदें टपका रहे थे; निर्मलमणि की किरणरूपी आँसू गिराते हुये मानो आभूषण भी रो रहे थे। (अब) मैं उसके जीवन के लिये अपने मरण की स्पृहा करती थी। मर जाने पर भी (पुण्डरीक के) हृदय में सर्वतोभावेन प्रवेश करना चाहती थी। मैं (अपने) करतल से (उसके) दोनों कपोल, सूखे चन्दन के (लेप के) कारण शुभ्र जटामूल से युक्त ललाट, सरस मृणाल-नाल से आवृत दोनों कन्धों तथा चन्दन के रसकण से युक्त, कमलिनी के पत्तों से ढके हृदय पर स्पर्श कर रही थी। 'पुण्डरीक !, (तुम) निष्ठुर हो, इस प्रकार मुझे आर्त देख कर भी (मेरी) गणना नहीं करते', इस प्रकार उलाहना देती हुई मैं बार-बार उसका अनुनय करने लगी, बार-बार (उसका) चुम्बन करने लगी (तथा) बार-बार उसे गले लगाकर विलाप करने लगी। 'अरी पापिनी ! तुमने भी मेरे आने के समय तक इसके प्राणों की रक्षा नहीं की', ऐसा कहकर उस एकावली निन्दा की।

न रक्षिताः' इति तामेकावलीमगर्हयम्। 'अयि भगवन्प्रसीद, प्रत्युज्जीवयैनम्' इति मुहुर्मुहुः कपिञ्जलस्य पादयोरपतम्। मुहुर्मुहुश्च तरलिकां कण्ठे गृहीत्वा प्रारुदम्। अद्यापि चिन्तयन्ती न जानामि तस्मिन्काले कुतस्तान्यचिन्तितान्यशिक्षितान्यनुपदिष्टान्यदृष्टपूर्वाणि मे हतपुण्यायाः कृपणानि चाटुसहस्राणि प्रादुरभवन्। कुतस्ते संलापाः कुतस्तान्यतिकरुणानि वैक्लव्यरुदितानी। अन्य एव स प्रकारः। प्रलयोर्मय इवोदतिष्ठन्नन्तर्बाष्पवेगानाम्। जलयन्त्राणीवामुच्यन्ताश्रुप्रवाहाणाम्। प्ररोहा इव निरगच्छन्प्रलापानाम्। शिखरशतानीवावर्धन्त दुःखानाम्। प्रसूतय इवोदपाद्यन्त मूर्च्छानाम्'' ।

जाताः'' इति = एवम्, ताम् = प्रियकण्ठस्थिताम्, एकावलीम् = एकपङ्क्तिकां मणिमालाम् अगर्हयम् = निन्दितवती। अयि = कोमलामन्त्रणे, भगवन् = कपिञ्जल, प्रसीद = प्रसन्नो भव, एनं = मत्प्रियं, प्रत्युज्जीवय = पुनर्जीवितं कुरु' इति = एवं (कथयन्ती), मुहुर्मुहुः, कपिञ्जलस्य, पादयोः = चरणयोः, अपतम् = पतितवती। मुहुर्मुहुश्च, तरलिकां = स्वसेविकां, कण्ठे गृहीत्वा = गले संगृह्य, प्रारुदम् = रुदितवती, अद्यापि = एतद्दिनपर्यन्तं, चिन्तयन्ती = ध्यायन्ती, न जानामि = न सम्यक् अवकलयामि, (यत्) तस्मिन् काले = तदानीम्, अचिन्तितानि = अविचारितानि, अशिक्षितानि = अपठितानि, अनुपदिष्टानि = केनापि नोपदेशीकृतानि, अदृष्टपूर्वाणि = अनवलोकितपूर्वाणि, कृपणानि = दीनानि, तानि, चाटुसहस्राणि = सहस्रशः चाटुवचनानि, हतपुण्यायाः = नष्ट सुकृतायाः, मे = मम (महाश्वेतायाः) कुतः = कस्मात्, प्रादुरभूवन् = प्रादुरासन्। कुतः, ते, संलापाः = विलापवचनानि, कुतः, तानि, अतिकरुणानि = दैन्ययुक्तानि, वैक्लव्यरुदितानि = विह्वलताप्रयुक्त रोदनानि। सः प्रकारः = पूर्वोक्तः (शोक प्रकाशरूपः) भेदः, अन्य एव = भिन्नरूपः एव। (तदा) अन्तर्बाष्पवेगानाम् = अभ्यन्तराश्रुप्रवाहाणाम्, प्रलयोर्मय इव = प्रलयस्य कल्पान्तस्य ऊर्मयः तरङ्गाः, इव, उदतिष्ठन् = उद्भूताः आसन्। अश्रुप्रवाहाणाम् = नेत्रजलधाराणां, जलयन्त्राणीव = जलनिःसारणयन्त्राणि, इव, अमुच्यन्त = मुक्ताः जाताः। प्रलापानाम् = विलापानाम्, प्ररोहाइव = अङ्कुराः इव, निरगच्छन् = निसृताः (बभूवुः)। दुःखानाम् = कष्टानां, शिखरशतानीव = श्रृङ्गशतानि, इव, अवर्धत = ऐधन्त। मूर्च्छानाम् = मोहानां, प्रसूतय इव = परम्पराः इव उदपाद्यन्त = अजायन्त। 'प्रलयोर्मय इव इत्यारभ्य प्रसूतय इव इति यावत् पञ्च जात्युत्प्रेक्षाः, नैरपेक्ष्येण संसृष्टिः च।

'हे भगवन्! प्रसन्न होइये, इसे (पुण्डरीक को) जीवित करिये', इस प्रकार (कहती) बार-बार कपिञ्जल के पैरों पड़ने लगी और बार-बार तरलिका को गले लगाकर रोई। आज भी सोचती हुई (मैं यह) नहीं पाती कि उस समय अचिन्तित, अशिक्षित, अनुपदिष्ट, अदृष्टपूर्व, दैन्यसूचक सहस्रों चाटु-वचन कहाँ से प्रादुर्भूत हो गये! कहाँ

इत्येवमात्मवृत्तान्तमावेदयन्त्या एव तस्याः समतिक्रान्तं कथमप्यतिकष्टम-वस्थान्तरमनुभवन्त्य इव चेतनां जहार मूर्च्छा। वेगान्निष्पतन्तीं च शिलातले तां ससंभ्रमं प्रसारितकरः परिजन इव जातपीडश्चन्द्रापीडो विधृतवान्। अश्रुजलार्द्रेण च तदीयेनैवोत्तरीयवल्कलप्रान्तेन शनैः शनैर्वीजयन्संज्ञां ग्राहितवान्। उपजातकारुण्यश्च बाष्पसलिलोत्पीडेन प्रक्षाल्यमानकपोलयुगलो लब्धचेतनामवादीत्। 'भगवति! मया पापेन तवायं पुनरभिनवतामुपनीतः

इत्येवम् = पूर्वोक्त प्रकारेण, आत्मवृत्तान्तम् = स्वोदन्तम्, आवेदयन्त्याः = चन्द्रापीड कथयन्त्याः, एव = अवधारणे, कथमपि = महता कष्टेन, समतिक्रान्तम् = व्यतीतम्, अतिकष्टम् = नितान्तक्लेशकरम्, अवस्थान्तरम् = (पुण्डरीकमरणरूपं) दशान्तरम्, अनुभवन्त्याः = अनुभवविषयीकुर्वन्त्याः, तस्याः = महाश्वेतायाः, चेतनां = संज्ञां, मूर्च्छा = मोहः, जहार = हृतवती (सामूर्च्छिता जाता, इतिभावः)। वेगात् = मूर्च्छावेगवशात्, च, शिलातले = आसनीभूते पाषाणतले, निष्पतन्तीं = अधः पतन्तीं, तां = महाश्वेतां, परिजनइव = सेवकः, इव, ससम्भ्रमं = सत्वरं, प्रसारितकरः = प्रसारितौ विस्तारितौ करौ हस्तौ येन सः; जातपीडः = जाता, उत्पन्ना पीडा कष्टं यस्य तादृशः, चन्द्रापीडः, विधृतवान् = (हस्ताभ्याम्) धारितवान्। अश्रुजलार्द्रेण = बाष्पक्लिन्नेन, च, तदीयेनैव = तया धृतेन, एव, उत्तरीयवल्कलप्रान्तेन = उत्तरीयं यत् वल्कलं तरुत्वक् तस्य प्रान्तेन एकदेशेन, शनैः शनैः = मन्दं मन्दं, वीजयन् = वातंकुर्वन्, संज्ञां = चेतनतां, ग्राहितवान् = प्रापितवान्। उपजातकारुण्यश्च = उपजातः उत्पन्नं कारुण्यं करुणाभावः यस्य तथाभूतः, च, बाष्पसलिलोत्पीडेन = बाष्पसलिलनाम् अश्रुजलानाम्, उत्पीडेन स्थूलप्रवाहेण, प्रक्षाल्यमानकपोलयुगलः = प्रक्षाल्यमानं प्रक्षालितं क्रियमाणं कपोलयुगलं यस्य तादृशः (चन्द्रापीडः), लब्धचेतनां – प्राप्तसंज्ञाम् (महाश्वेताम्), अवादीत् = अवोचत्— भगवतिं ! = देवि, पापेन = पापकारिणा, मया = चन्द्रापीडेन, तव = भवत्याः, अयं = हृद्गतः, शोकः = दुःखं, पुनः = भूयः, अभिनवतान् = नवीनताम्, उपनीतः = प्रापितः, येन = कारणेन, ईदृशीं = कारुण्यपूर्णां, दशाम् = अवस्थाम्,

---

वे सन्ताप, कहाँ वे अति दीन एवं विकलता से पूर्ण रोने ? (शोक-प्रकाश का) यह प्रकार और ही था। (उस समय) भीतर के अश्रु-वेग की मानों तरङ्गे उठने लगीं; नेत्रों से अश्रु धाराओं के जैसे फौव्वारे छूटने लगे; प्रलापों के मानो अंकुर निकल आये; दुःखों के मानो सैकड़ों शिखर ही बढ़ने लगे तथा मूर्च्छाओं की मानो परम्परा (क्रम) ही बन गई।

इस प्रकार आत्मवृत्तान्त कहती हुई ही महाश्वेता, किसी प्रकार अत्यन्त कष्ट से बीती उस अवस्था (पुण्डरीक के मरण की अवस्था) का जैसे अनुभव करती, चेतना खोकर बेहोश हो गई। मूर्च्छा-वेग से शिला-तलपर गिरती हुई उसको, परिजन

शोको येनेदृशीं दशामुपनीतासि। तदलमनया कथया। संह्रियतामियम्। अहमप्यसमर्थः श्रोतुम्। अतिक्रान्तान्यपि हि संकीर्त्यमानानि प्रियजनविश्वासवचनान्यनुभवसमां वेदनामुपजनयन्ति सुहृज्जनस्य दुःखानि। तन्नार्हसि कथं कथमपि विधृतानिमानसुलभानसून्पुनः स्मरणशोकानलेन्धनतामुपनेतुम्'।

इत्येवमुक्ता दीर्घमुष्णं च निःश्वस्य बाष्पायमाणलोचना सनिर्वेदमवादीत्—

(त्वम्) उपनीतासि = गमिता, असि। तत् = तस्मात्, अनया = एतया, कथया स्ववृत्तान्तेन, अलम् = व्यर्थम्। इयम् = एवाकथा, संह्रियताम् = समाप्यताम्। अहमपि = चन्द्रापीडः अपि, श्रोतुम्, असमर्थः = अक्षमः। हि = यतः, अतिक्रान्तान्यपि = व्यतीतानि, अपि, प्रयजनविश्वासवचनानि = प्रियाः इष्टाः येजनाः लोकाः तेषां विश्वासवचनानिविस्रम्भभाषितानि येषु तथाभूतानि, सुहृज्जनस्य = आत्मीयजनस्य, दुःखानि = कष्टानि, संकीर्त्यमानानि = कथ्यमानानि (सन्ति) अनुभवसमाम् = स्वानुभूतितुल्यां, वेदनाम् = व्यथाम्, उपजनयन्ति = प्रकटयन्ति। तत् = तस्यात् कथं कथमपि = महता आयासेन, विधृतान् = शरीरे गृहीतान्, इमान् = वर्तमानान्, असुलभान् = दुर्लभान्, असून् = प्राणान्, पुनः पुनः = भूयः भूयः, स्मरणशोकानलेन्धनताम् = स्मरणम् स्मृतिः तेनयः शोकः वेदना सः एव अनलः अग्निः तस्यः इन्धनम्, तस्य भावः तत्ता ताम्, उपनेतुं = प्रापयितुं, नार्हसि = न योग्या असि (कष्टदायिन्याकथयानकिमपिप्रयोजनमितिभावः)। परम्परितरूपकम्।

इत्येवम् = पूर्वोक्तरीत्या, उक्ता = (चन्द्रापीडेन) कथिता (महाश्वेता), दीर्घम् = आयतम्, उष्णं, च, निःश्वस्य—उच्छ्वस्य, बाष्पायमाणलोचना = बाष्पायमाणे अश्रुजलभरिते लोचने नयने यस्याः तादृशी। सनिर्वेदम् = निर्वेदः, अवमाननं तत्सहितं यथा स्यात् तथा अवादीत् = अवदत् = "राजपुत्र = राजकुमार। या = अहं

की भांति शीघ्रता से हाथ फैलाकर, दुःखी चन्द्रापीड ने पकड़ लिया और अश्रुजल से गीले उसी के (महाश्वेता के) उत्तरीय-वल्कल के छोर से धीरे-धीरे हवा झलकर (उसे) होश में ले आया। अश्रु-धारा के प्रवाह से (उसके) कपोल प्रक्षालित हो रहे थे ऐसा करुणापूर्ण होकर होश में आई महाश्वेता से बोला—'भगवती! मुझ पापी ने तुम्हारा यह शोक फिर से नया कर दिया, जिससे आप इस दशा को प्राप्त हो गई। इसलिये इस कथा को कहना व्यर्थ है। इसको (अब) समाप्त करिए। (आगे) मैं भी सुनने में असमर्थ हूँ। क्योंकि बीते हुये भी, प्रियजनों के विश्वास-वचनों से युक्त, मित्रों के दुःख (जब) कहे जाते हैं (तब वे) अनुभव की भांति ही वेदना को उत्पन्न करते हैं। इसलिए किसी प्रकार धारण किये गये इन दुर्लभ प्राणों को फिर से स्मरणरूपी शोकाग्नि का इन्धन बनाना आपको उचित नहीं है।'

ऐसा कहे जाने पर लम्बी और गर्म साँस छोड़कर, आँखों में आँसू भरे, वह

"राजपुत्र, या तदा तस्यामतिदारुणायां हतनिशायामेभिरतिनृशंसैरसुभिर्न परित्यक्ता, ते मामिदानीं परित्यजन्तीति दूरापेतम्। नूनमपुण्योपहतायाः पापाया मम भगवानन्तकोऽपि परिहरति दर्शनम्। कुतश्च मे कठिनहृदयायाः शोकः। सर्वमिदमलीकमस्य दुरात्मनः शठहृदयस्य। सर्वथाहमनेन त्यक्तत्रपेण निरपत्रपाणामग्रेसरीकृता। यया चाविष्कृतमदनया वज्रमय्येवेदमनुभूतं तस्याः का गणना कथनं प्रति। किं वा परमतः कष्टतरमाख्येयमन्यद्भविष्यति यत्र

(महाश्वेता) तदा = तस्मिन्काले, तस्याम्, अतिदारुणाम् = अतीव भीषणायां, हतनिशायम् = अशुभरजन्याम्, एभिः = एतैः, अतिनृशंसैः = नितान्तनिष्ठुरैः, असुभिः = प्राणैः, न परित्यक्ता = ननिर्मुक्ता, ते = कठिनाः, प्राणाः = असवः, इदानीम् = सम्प्रति, माम् = महाश्वेताम्, परित्यजन्ति = मुञ्चन्ति, इति, दूरापेतम् = दूरे स्थितम् (अत्यन्तम् असम्भाव्यम् इति भावः)। नूनम् = निश्चितम्, अपुण्योपहतयाः = अपुण्येन असुकृतेन उपहतायाः सर्वथा विनष्टायाः, पापायाः = दुष्कृतकारिण्याः, मम = महाश्वेतायाः दर्शनम् = अवलोकनम्, भगवान्, अन्तकोऽपि = यमः, अपि, परिहरति = संत्यजति, 'नूनमिति शब्द प्रयोगेण वाच्याक्रियोत्प्रेक्षा। कठिनहृदयायाः = कठिनम् अकरुणं हृदयं मनः यस्याः सा तस्याः, मे = मम, शोकः = वेदना, च, कुतः ? अस्य = अद्यापि वर्तमानस्य, दुरात्मनः = नीचस्य, शठहृदयस्य = अधमचित्तस्य, इदं सर्वम् = एतत् अखिलम् (अनर्थजातम्), अलीकम् = मिथ्या। त्यक्तत्रपेण = त्यक्त्वा परिहृता त्रपा लज्जा येन तत् तेन, अनेन हृदयेन, निरपत्रपाणाम् = निर्लज्जनाम्, अहम् = महाश्वेता, अग्रेसरीकृता = पुरोगामिनी विहिता। आविष्कृतमदनया = आविष्कृतः उद्भूतः मदनः, कन्दर्पः यस्याः सा तया, यया = मया, वज्रमय्येव = वज्रविरचितया, इव, इदम् = पूर्वोक्तकष्टजातम्, अनुभूतम् = अनुभवविषयीकृतम्, तस्याः = मम, कथनं प्रति = अनुभूतस्य कष्टस्य वर्णनं प्रति, का गणना = का कठिनता (न कापि इति भावः)। अतः परम् = अस्मात् अधिकं, किं वा, कष्टतरम् = दुःखतरम्, अन्यत् = अपरम्

(महाश्वेता) विरागपूर्वकबोली—'राजपुत्र! उस समय (पुण्डरीक के मरण के समय) अति भयानक एवं अशुभ रात्रि में (भी) जिस मुझ को इन अति क्रूर प्राणों ने नहीं छोड़ा, वे मुझे अब छोड़ देंगे, यह बात तो दूर गई (अर्थात् असंभव है)। निश्चय ही अधर्म से हत मुझ पापिनी को भगवान् यमराज भी नहीं देखना चाहते। मुझ कठोर हृदया को शोक कहाँ? इस दुष्ट हृदय (के लिये) यह सब मिथ्या है। इस लज्जाहीन (हृदय) ने मुझे सब प्रकार से निर्लज्जों में अग्रणी बना दिया। काम के प्रगट हो जाने से वज्र-जैसी बनी जिसने यह (पूर्वोक्त दुःख) अनुभव किया, उसको कहने में क्या कठिनाई है? इससे अधिक कष्टकर कथन दूसरा क्या होगा, जो सुना या कहा न जा सके? इस वज्रपात के उपरान्त जो आश्चर्य हुआ, उसी को केवल

शक्यते श्रोतुमाख्यातुं वा। केवलमस्य वज्रपातस्यानन्तरमाश्चर्यं यदभूत्तदावेदयामि। आत्मनश्च प्राणधारणकारणलव इवाव्यक्तो यः समुत्पन्नस्तं च कथयामि। यया दुराशामृगतृष्णिकया गृहीताहमिदमुपरतकल्पं परकीयमिव भारतभूतमप्रयोजनमकृतज्ञं च हतशरीरं वहामि तदलं श्रूयताम्। ततश्च तथाभूते तस्मिन्नवस्थान्तरे मरणैकनिश्चया तत्तद्बहु विलप्य तरलिकामब्रवम्—'अय्युत्तिष्ठ निष्ठुरहृदये, कियद्रोदिषि। काष्ठान्याहृत्य विरचय चिताम्। अनुसरामि जीवितेश्वरम्' इति।

आख्येयं = कथनीयं, भविष्यति, यत्, श्रोतुम् = आकर्णयितुम्, आख्यातुं = वक्तुं, वा = पक्षान्तरे, न शक्यते = न पार्यते। अस्य = वर्णितस्य, वज्रपातस्य = वज्रपात-तुलस्य, (वृत्तस्य), अनन्तरम् = पश्चात्, यद् आश्चर्यम् = चित्रम्, अभूत् = आसीत्, केवलं तत् = तन्मात्रम्, आवेदयामि = कथयामि। आत्मनः = स्वस्य, च, प्राणधारणकारणलवः = स्वस्य प्राणानाम् असूनां तस्य यत् कारणं हेतुः तस्य लवः, लेशः इव, अव्यक्तः = अस्पष्टः, यः = समाचारः, समुत्पन्नः = संजातः, तं च = समाचारं, च, कथयामि = निवेदयामि। यया = वक्ष्यमाणया, दुराशामृग-तृष्णिकया = दुराशा एव मृगतृष्णिकामृगमरीचिका तया, गृहीता = स्वीकृता, अहम्, उपरतकल्पम् = मृतप्रायं, परकीयामेव = अन्यदीयम्, इव, भारभूतम् = भारस्वरूपं, अप्रयोजनम् = निरर्थकम्, अकृतज्ञं = कृतघ्नं, च, इदं = वर्तमानं, हतशरीरं = दुष्टकायं, वहामि = धारयामि, तत् अलं = पूर्णतः, 'अलम्' इत्यस्य अत्र प्रतिपादिते अर्थे प्रयोगः मेघदूते यथा—अलंस्येनं शमयितुमालं वारिधारासहस्रैः' श्रूयताम् = आकर्ण्यताम्, भवता इति शेषः। ततश्च = तदनन्तरं, च, तथाभूते = तादृशे, तस्मिन् = मया उक्ते, अवस्थान्तरे = दशान्तरे (जाते), मरणैकनि- = श्चया = मरणेप्राणत्यागे एव एकः केवलः निश्चयः निर्णयः यस्याः सा तथाभूता (अहं), तत्तत् = पूर्वोक्तम्, बहु = अधिकम्, विलप्य = विलापं कृत्वा, तरलिकाम्, अब्रवम् = अवोचम्—'अयि = कोमलामन्त्रणे, निष्ठुरहृदये = कठोरचित्ते, उत्तिष्ठ = उत्थानं कुरु, कियत् = कियत्कालं यावत्, रोदिषि काष्ठानि = इन्धनानि, आहृत्य = आनीय, चिताम् = चित्यां, विरचय = निष्पादय। जीवितेश्वरम् = प्राणनाथम्, अनुसरामि = अनुगच्छामि' इति।

कहती हूँ और अपने प्राण धारण किये रहने के छोटे से कारण के समान जो (एक) अस्पष्ट (घटना) हुई, उसी को कहती हूँ। जिस दुराशारूपी मृगतृष्णा से गृहीत होकर मैं इस मृतप्राय, पराये जैसे, भारस्वरूप, निरर्थक, कृतघ्न एवं पापी शरीर को धारण कर रही हूँ, उसको (पूर्वोक्त से अतिरिक्त को) भी पूर्णतः सुनिये। तदनन्तर उस प्रकार की अवस्था के हो जाने पर, मरने के लिये कृत संकल्प हो मैं नानाविध विलाप कर तरलिका से बोली—'अरी निष्ठुर हृदये! उठ, कब तक

अत्रान्तरे झटिति चन्द्रमण्डलविनिर्गतो गगनादवतीर्य केयूरकोटिलग्नम-मृतफेनपिण्डपाण्डुरं पवनतरलमंशुकोत्तरीयमाकर्षन्, उभयकर्णान्दोलितकुण्डल-मणिप्रभानुरक्तगण्डस्थलः, स्थूलमुक्ताफलतया तारागणमिव ग्रथितमतितारं हारमुरसा दधानः, धवलदुकूलपल्लवकल्पितोष्णीषग्रन्थिः, अलिकुलनीलकुटि-लकुन्तलनिकरविकटमौलिः, उत्फुल्लकुमुदकर्णपूरः, कामिनीकुचकुङ्कुमपत्रलता-

अत्रान्तरे = तस्मिन् समये, झटिति = सहसा, चन्द्रमण्डलविनिर्गत = चन्द्रस्य-शशिनः मण्डलात् बिम्बात् विनिर्गतः बहिर्भूतः, गगनात् = आकाशात्, अवतीर्य = अवतरणंकृत्वा, "...महाप्रमाणः पुरुषः ...तमुपरतमुपक्षिपन्...वितेवाभिधाय सहैवानेन गगनतलमुदपतत्" इति वाक्यम्—केयूरकोटिलग्नम् = केयूरस्य अङ्गदस्य "अङ्गदः कपिभेदे ना, केयूरे तु नपुंसकम्" इति मेदिनी, कोटौ अग्रभागे लग्नं सक्तम्, अमृत-फेनपिण्डपाण्डुरम् = अमृतं सुधा तस्य फेनाः डिण्डीराः तेषां पिण्डवत् समूहवत् पाण्डुरं श्वेतं, पवनतरलम् = पवनेन तरलं चञ्चलम्, अंशुकोत्तरीयम् = क्षौमवस्त्रोत्तरीयम्, आकर्षन = आकर्षणं कुर्वन्, उभयकर्णान्दोलितकुण्डलमणिप्रभानुरक्तगण्डस्थलः = उभौ च तौ कर्णौइति उभयकर्णौतयोः आन्दोलिते स्पन्दिते ये कुण्डले कर्णाभूषणे तयोः मणीनां रत्नानां प्रभया कान्त्या अनुरक्तं लोहितं गण्डस्थलं कपोलस्थलं यस्य तादृशः, स्थूलमुक्ताफलतया = स्थूलानि बृहदाकाराणि मुक्ताफलानिमौक्तिकानि यत्र तस्य भावः तत्ता तया, ग्रथितम् = गुम्फतम्, तारागणमिव = नक्षत्रचक्रम्, इव (जात्युत्प्रेक्षा), अतितारम् = अतिमनोहरं, हारम् = मुक्ताप्रालम्बम्, उरसा = वक्षसा, दधानः = धारयन्, धवलदुकूलपल्लवकल्पितोष्णीषग्रन्थिः = धवलं श्वेतं यत् दुकूलं सूक्ष्मवस्त्रं तस्य पल्लवेन प्रान्तेन कल्पितः रचितः उष्णीषस्य शिरोवेष्टनस्य ग्रन्थिः बन्धनं येन सः, अलिकुलनीलकुटिलकुन्तलनिकरविकटमौलिः = अलीनां द्विरेफाणां कुलवत् निका-यवत् नीलाः श्यामवर्णाः कुटिलाः वक्राः (च) ये कुन्तलाः केशाः तेषां निकरेण राशिना विकटः विपुलः मौलिः शिरः यस्य सः (लुप्तोपमा), उत्फुल्लकुमुदकर्णपूरः = उत्फुल्लयोः विकसितयोः कुमुदयोः कैरवयोः कर्णपूरौ कर्णाभूषणे यस्य सः, कामिनीकुच-कुङ्कुमपत्रलतालाञ्छितांसदेशः = कामिनीनां रमणीनांकुचेषुस्तनेषु कुङ्कुमेन कुङ्कुमरसेन

रोयेगी? लकड़ी लाकर चिता बनाओ। मै (अपने) प्राणेश्वर का अनुगमन करूँगी।'

इसी बीच झट से चन्द्रमण्डल से निकला हुआ एक पुरुष गगन से (धरती पर) उतरा। (उतरते समय) वह (अपने) बाजूबन्द की कोर में लगे, अमृत-फेन के पिण्ड सदृश उज्ज्वल, तथा वायु से चंचल (फहराते) दुपट्टे को खींच रहा था। दोनों कानों में झूलते हुये कुण्डलों में जड़ी मणियों की कान्ति से (उसके) गण्डस्थल रक्त-वर्ण हो रहे थे। बड़े-बड़े मोतियों के (दाने के) कारण मानो तारागण से गूँथे गये मनोहर हार को (वह) वक्षस्थल पर धारण किये था। धवल सूक्ष्म वस्त्र

लाञ्छितासदेशः, कुमुदधवलदेहः, महाप्रमाणः पुरुषः, महापुरुषलक्षणोपेतः, दिव्याकृतिः, स्वच्छवारिधवलेन देहप्रभावितानेन क्षालयन्निव दिगन्तराणि, आमोदिना च शरीरतः क्षरता शिशिरेण शीतज्वरमिव जनयतामृतसीकरनिकरवर्षेण तुषारपटलेनेवानुलिम्पन्, गोशीर्षचन्दनरसच्छटाभिरिवासिञ्चन्, ऐरावतकरपींवराभ्यां बाहुभ्यां मृणालधवलाङ्गुलिभ्यामतिशीतलस्पर्शाभ्यां

(निर्मिताभिः) पत्रलताभिः लाञ्छितौचिह्नितौ अंसदेशौ स्कन्धौ यस्य सः, कुमुद धवलदेहः = कुमुदवत् कैरववत् धवलः देहः शरीरं यस्यसः महाप्रमाणः = बृहदाकारः, महापुरुषलक्षणोपेतः = महापुरुषाणां महामानवानां लक्षणैः सामुद्रिकशास्त्रप्रतिपादितध्वजादिचिह्नैः उपेतः युक्तः, दिव्याकृतिः = अलौकिकाकारः पुरुषः, स्वच्छवारिधवलेन = स्वच्छंनिर्मलं यत् वारिजलं तद्वत् धवलेतश्वेतेन, देहप्रभावितानेन = शरीर कान्तिविस्तारेण, दिगन्तराणि = दिग्विवराणि, क्षालयन्निव = निर्मलतांनयन्, इव (उपमा, उत्प्रेक्षातयोः सङ्करश्च), शरीरतः = (स्वीयात्) देहात्, क्षरता = स्रवता, आमोदिना = सुगन्धपूर्णेन, शिशिरेण = शीतलेन, अमृतसीकरनिकरवर्षेण = अमृतस्यपीयूषस्य सीकराणां विन्दूनां निकरस्य राशेः वर्षेण वृष्ट्या, शीतज्वरम् = शैत्यतापम् जनयता = उत्पादयता, इव, तुषारपटलेन = हिमसमूहेन, (दिगन्तराणि) अनुलिम्पन् = विलेपयन् ,–इव(श्रौतिउपमा, क्रियोत्प्रेक्षा, उभयोः निरपेक्षतया संसृष्टिःच), गोशीर्षचन्दनरसच्छटाभिः = गोशीर्षं तन्नामकं यत् चन्दनं तस्य रसस्य छटाभिः राशिभिः (दिगन्तराणि) आसिञ्चन् = सेकं कुर्वन्, इव (क्रियोत्प्रेक्षा) ऐरावतकरपीवराभ्याम् = ऐरावतः सुरगजः तस्यकरवत् शुण्डादण्डवत् पीवराभ्यां स्थूलाभ्याम्, बाहुभ्यां = हस्ताभ्यां, मृणालधवलाङ्गुलिभ्याम् = मृणालं बिसं तद्वत् धवलाः शुभ्राः अङ्गुल्यः ययोः ताभ्याम्, अतिशीतलस्पर्शाभ्याम् = अतिशीतलः स्पर्शः ययोः

के छोर से (अपनी) पगड़ी की गाँठ बाँधे था। भौंरों के समान काले तथा घुँघराले केशों के समूह से (उसका) सिर विपुल सा (बड़ा-सा) दीखता था। (वह) विकसित कुमुदों का कर्णपूर (पहने) था। कामिनियों के कुचों (पर बनाई गई) केसर की पत्रलता से उसका स्कन्ध-देश चिह्नित था। उसका शरीर कुमुद की भांति धवल था (तथा वह) बृहदाकार महापुरुष के लक्षण से युक्त एवं दिव्य आकार वाला था। स्वच्छ जल की भाँति धवल (अपनी) शारीरिक-प्रभा के समूह से मानो (वह) दिगन्तरों को प्रक्षालित कर रहा था। अपने शरीर से निकलती शीतल, सुगन्धपूर्ण एवं शीतल अमृत-कणों की वर्षा से, जो मानो शीतल-ज्वर उत्पन्न कर रही थी, (वह) जैसे कुहरे से (समस्त दिशाओं का) लेप कर रहा था। गोशीर्ष नामक चन्दन-रस की राशि से मानो वह (दिशाओं का) सिंचन कर रहा था। (वह) ऐरावत हाथी के सूँड़ के समान मोटी, मृणाल की भाँति धवल अँगुलियों से युक्त, शीतल-स्पर्श वाली (अपनी) बाहों से उस मृतक (पुण्डरीक के मृत शरीर)

तमुपरतमुत्क्षिपन्, दुन्दुभिनादगम्भीरेण स्वरेण 'वत्से महाश्वेते, न परित्याज्यास्त्वया प्राणाः, पुनरपि तवानेन सह भविष्यति समागमः' इत्येवंपितेवाभिधाय सहैवानेन गगनतलमुदपतत् । अहं तु तेन व्यतिकरेण सभया सविस्मया सकौतुका चोन्मुखी किमिदमिति कपिञ्जलमपृच्छम् । असौ तु ससंभ्रममदत्त्वैवोत्तरमुदतिष्ठत्—'दुरात्मन्, क्व मे वयस्यमपहृत्य गच्छसि' इत्यभिधायोन्मुखः संजातकोपो बध्नन्सवेगमुत्तरीयवल्कलेन परिकरमुत्पतन्तं तमेवानुसरन्नन्तरिक्षमुदगात् । पश्यन्त्या एव च मे सर्व एव ते तारागणमध्यमविशन् ।

ताभ्याम्, उपरतम् = मृतं, तम् = पुण्डरीकम्, उत्क्षिपन् = उत्तोलयन् (लुप्तोपमा), दुन्दुभिनादगम्भीरेण = पटहशब्दवत्गम्भीरेण, स्वरेण = ध्वनिना, "वत्से ! = जाते ! महाश्वेते ! त्वया, प्राणाः = 'असवः, नत्याज्याः = न परिहर्तव्याः । पुनरपि = भूयः, अपि, तव, अनेन = पुण्डरीकेण, सह, समागमः=सङ्गमः, भविष्यति ।" इत्येवम् = इत्थम्, पितेव = जनकः, इव, अभिधाय = उक्त्वा, अनेन = पुण्डरीकेण (तस्य मृत शरीरेण) सहैव = साकम्, एव, गगनतलम् = आकाशतलम्, उदपतत् = उत्पपात । अहंतु = महाश्वेतातु, तेन = अपूर्वेण, व्यतिकरेण = वृत्तान्तेन, सभया = भयान्विता, सविस्मया = आश्चर्यान्विता, सकौतुका = कौतूहलसहिता, च, उन्मुखी = ऊर्ध्ववदना, 'किमिदम्' इति, कपिञ्जलम्, अपृच्छम् = पृष्टवती । असौ = कपिञ्जलः, तु, ससम्भ्रम् = सत्वरम्, उत्तरम् = प्रतिवचनम् अदत्त्वैव = अनुक्त्वा, एव उदतिष्ठत् = उत्थितः अभूत् "दुरात्मन् = दुष्टात्मन्, मे = मम, वयस्यम् = मित्रम्, अपहृत्य = बलात् नीत्वा, क्वगच्छसि = कुत्र यासि ?" इत्यभिधाय = एवम्, उक्त्वा, उन्मुखः ऊर्ध्वमुखः संजातकोपः = क्रुद्धः, सवेगम् = वेग पूर्वकम्, उत्तरीयवल्कलेन = उत्तरीयतरुत्वचा, परिकरम् = कटिभागं, बध्नन् = बन्धनंकुर्वन्, उत्पतन्तम् = उद्गच्छन्तं, तमेव = दिव्यपुरुषम्, एव, अनुसरन् = अनुगच्छन्, = आन्तरिक्षम् = आकाशम्, उदगात् = ऊर्ध्वगतवान् । मे = महाश्वेतायाः, पश्यन्त्याएव = (प्रत्यक्षं) विलोकयन्त्याः एव, च, ते सर्वऽएव = दिव्यपुरुषपुण्डरीककपिञ्जलाः, तारागणमध्यम् = नक्षत्र समूहमध्यम्, आविशन् = प्रवेशम् अकुर्वन् ।

को उठाता हुआ, दुन्दुभिनाद के समान गम्भीर स्वर से 'वत्से महाश्वेते ! तुम प्राणों का परित्याग न करो; तुम्हारा इसके साथ पुनर्मिलन होगा' इस प्रकार पिता की भांति कहकर उसके (मृत पुण्डरीक के) साथ ही आकाश में उड़ गया । मैं तो उस वृत्तान्त से भयभीत एवं आश्चर्यान्वित हो गई तथा कौतुक-वश ऊपर देखती हुई (मैंने) 'यह क्या है !' (इस प्रकार) कपिञ्जल से पूछा । किन्तु वह तो उत्तर दिये बिना ही वेग-पूर्वक उठ खड़ा हुआ और 'दुरात्मन् ! मेरे मित्र को हर

मम तु तेन द्वितीयेनेव प्रियतममरणेन कपिञ्जलगमनेन द्विगुणीकृत-शोकायाः सुतरामदीर्यत हृदयम्। किंकर्तव्यतामूढा च तरलिकामब्रवम्—'अयि, न जानासि किमेतत्' इति। सा तु तदवलोक्य स्त्रीस्वभावकातरा तस्मिन्क्षणे शोकाभिभाविना भयेनाभिभूता वेपमानाङ्गयष्टिर्मम मरणशङ्कया च वराकी विषण्णहृदया सकरुणमवादीत्—'भर्तृदारिके,' न जानामि पापकारिणी। किं तु महदिदमाश्चर्यम्। अमानुषाकृतिरेष पुरुषः। समाश्वासिता चानेन गच्छता

द्वितीयेन = अपरेण (पुनः जातेन), प्रियतममरणेनैव = प्राणेश्वरमृत्युना, इव (प्रतीयमानेन) तेन, कपिञ्जलगमनेन = कपिञ्जलस्य प्रयाणेन, द्विगुणीकृतशोकाया = द्विगुणीकृतः द्विगुणी भूतः शोकः वेदनायस्याः सातस्याः, मम = महाश्वेतायाः, हृदयं = स्वान्तं, सुतराम् = नितान्तम्, अदीर्यत् = विदीर्णम् अभूत्। किंकर्त्तव्यता-मूढा = करणीयाकरणीय विवेकशून्या, च, (अहं) तरलिकाम = स्वसेविकाम्, अब्र, वम = अवोचम्—"अयि ! = प्रियसखि, नजानासि = नावगच्छसि, किमतत् = दृश्यमानम् इदं किम्।" सा = तरलिका तु, तदवलोक्य = तद्दृश्यं दृष्ट्वा, स्त्रीस्व-भावकातरा = स्त्रीस्वभावेन नारीप्रकृत्या कातराः, तस्मिन्क्षणे = तदानीं, शोकाभि-भाविना = शोकं दुखम् अभभवति तिरस्करोति इति एवं शीलेन, भयेन = भीत्या, अभिभूता = पराजिता, वेपमानाङ्गयष्टिः = वेपमाना कम्पमाना अङ्गयष्टिः अङ्गलता यस्याः सा, मम = महाश्वेतायाः, मरणशङ्कया = मृत्युशङ्कया, वराकी = दीना, विषण्णहृदया = विषण्णं खिन्नं हृदयं मनः यस्याः सा च (सती), सकरुणम = करुणापूर्वकम्, अवादीत् = अवदत् "भर्तृदारिके = राजकुमारि !, पापकारिणी = दुष्कृत कारिणी (अहं), न जानामि = न वेद्मि। किन्तु = परन्तु इदं = दृश्यमानम् महर्यदाश्च = अतिविचित्रम्। एषः = अस्माभिः पूर्वदृष्टः, पुरुषः = जनः, अमानुषाकृतिः = दिव्यस्वरूपः (आसीत्) गच्छता = व्रजता, च, अनेन = दिव्य-

कर तू कहाँ जा रहे हो?' यह कहकर क्रोध के साथ ऊपर की ओर मुँह उठाकर; वेग सहित उत्तरीय-वल्कल से कमर कसता, उड़ते हुये उसी का (दिव्यपुरुष का) अनुसरण करता हुआ आकाश में उड़ गया। फिर मेरे देखते देखते वे सभी ताराओं के बीच में प्रविष्ट हो गये।

द्वितीय प्रियतम-मरण के समान कपिञ्जल के उस गमन से शोक दुगुना हो जाने के कारण मेरा हृदय तो नितान्त विदीर्ण हो गया। किंकर्त्तव्यविमूढ़ बनी मैं तरलिका से बोली—"अरी! तुम नहीं जानती कि यह (पूर्वोक्त) क्या है" यह देखकर स्त्री स्वभाव से कातर, उस क्षण शोक से भी अधिक प्रबल भय से पराजित, काँपते हुये अङ्गों से युक्त एवं मेरे मरण की शङ्का से खिन्न-हृदय (हो) वह बेचारी करुणापूर्वक बोली—"स्वामिपुत्री! मैं पापकारिणी क्या जानूँ, किन्तु यह बहुत बड़ा आश्चर्य है। यह पुरुष मनुष्यों जैसे आकार

सानुकम्पं पित्रेव भर्तृदारिका। प्रायेण चैवंविधा दिव्याः स्वप्नेऽप्यविसंवादिन्यो भवन्त्याकृतयः। किमुत साक्षात्। न चाल्पमपि विचारयन्ती कारणमस्य मिथ्याभिधाने पश्यामि। अतो युक्तं विचार्यात्मानमस्मात्प्राणपरित्यागव्यवसायान्निवर्तयितुम्। अतिमहत्खल्विदमाश्वासस्थानमस्यामवस्थायाम्। अपि च तमनुसरन् गत एव कपिञ्जलः। तस्मात् 'कुतोऽयं, को वायं, किमर्थं वानेनायमपगतासुरुत्क्षिप्यनीतः, क्व वा नीतः, कस्माच्चासंभावनीयेनामुना

पुरुषेण, पित्रेव = जनकेन, इव, सानुकम्पं = कृपापूर्वकम्, भर्तृदारिका = राजकुमारी (भवती), समाश्वासिता = "पुनरपि तवानेन सह भविष्यतिसमागमः" इत्यादिवचनैः आश्वासनं प्रापिता। प्रायेण = बाहुल्येन, एवंविधाः = एतादृश्यः, आकृतयः = मूर्तयः. स्वप्ने, अपि, अविसंवादिन्यः = अव्यभिचारिण्यः अमिथ्याभाषिण्यः इति यावत् भवन्ति = सन्ति, किमुतसाक्षात् = प्रत्यक्षदशायां तु वार्तैव का (एतादृशाः दिव्यपुरुषाः न कदापि मिथ्या वदन्ति इति भावः) विचारयन्ती = विमर्शं कुर्वाणां (सती, अहम्), अस्य = दिव्यपुरुषस्य, मिथ्याभिधाने = असत्यभाषणे, अल्पमपि = स्तोकमपि, कारणम् = हेतुं, च, न पश्यामि = न अवलोकयामि। अतः = अस्मात् हेतोः, विचार्य = विमृश्य, अस्मात् = क्रियमाणात्, प्राणपरित्यागव्यवसायात् = प्राणानाम् असूनाम् परित्यागः विसर्जनम् तद्रूपः व्यवसायः उद्योगः तस्मात्, आत्मानम् = स्वं, निवर्तयितुम् = वारयितुं, युक्तम् = सङ्गतम्। अस्याम् = एतादृश्याम्, अवस्थायाम् = दशायाम्, खलु = निश्चयेन. इदम् = दिव्यपुरुषोक्तम्, अतिमहत् = अत्यधिकम्, आश्वासस्थानम् = आश्वासस्य सान्त्वनायाः स्थानम् पदम्। अपि च = किञ्च, तम् = दिव्यपुरुषम्, अनुसरन् = अनुगच्छन्, कपिञ्जलः, गतएव = यातः एव। तस्मात् = कारणात् कुतः = कस्मात्, स्थानात्, अयम् = एषः (आगतः), कः, वा, अयं दिव्यपुरुषः किमर्थं = कस्मै प्रयोजनाय, वा, अनेन = दिव्यपुरुषेण, अपगतासुः = गतप्राणः, अयम् = पुण्डरीकः, उत्क्षिप्य = उत्तोल्य, नीतः ? क्व वा = कुत्र, वा, नीतः, कस्माच्च = कस्मात् कारणात् च, अमुना =

का नहीं था। जाते हुये इसने पिता की भांति आपको कृपापूर्वक आश्वासन (भी) दिया है। प्रायः ऐसे दिव्यजन स्वप्न में भी असत्य नहीं बोलते, प्रत्यक्ष की तो बात ही क्या है। विचार करती हुई मैं इसके असत्य-भाषण (के विषय में) छोटा भी कारण नहीं देखती। इसलिये विचार कर इस प्राण परित्याग के व्यापार सेे (अपने को) विरत कर लेना युक्ति सङ्गत है। इस अवस्था में निश्चय ही यह बहुत बड़ा आश्वासन का स्थान (कारण) है। और उसका अनुसरण करता हुआ कपिञ्जल गया ही है। अतः 'यह कहाँ से (आया) अथवा यह कौन है अथवा किस कारण से यह उस मृतक को उठाकर ले गया, कहाँ ले गया और किस कारण से उसने अचिन्तनीय पुनर्मिलन (पुण्डरीक के

पुनः समागमाशाप्रदानेन, 'भर्तृदारिका समाश्वासिता' इति सर्वमुपलभ्य जीवितं वा मरणं वा समाचरिष्यसि । अदुर्लभं हि मरणमध्यवसितम् । पश्चादप्येतद्भविष्यति । न च जीवन् कपिञ्जलो भर्तृदारिकामदृष्ट्वा स्थास्यति । तेन तत्प्रत्यागमनकालावधयोऽपि ताबद्धियन्ताममी प्राणाः'। इत्यभिदधाना पादयोर्मे न्यपतत् । अहं तु सकललोकदुर्लंघ्यतया जीविततृष्णायाः, क्षुद्रतया च स्त्रीस्वभावस्य, तया च तद्वचनोपनीतया दुराशामृगतृष्णिकया, कपिञ्जलप्रत्यागमनकांक्षया च तस्मिन्काले तदेव युक्तं मन्यमाना नोत्सृष्टवती जीवितम् । आशया

एतेन दिव्यपुरुषेण, असंभावनीयेन = अचिन्तनीयेन, पुनः, समागमाशाप्रदानेन = सम्मिलनस्य आशादानेन, भर्तृदारिका = राजकुमारी, समाश्वासिता = आश्वस्ता कृता — इति सर्वम् = पूर्वोक्तम् एतत् अखिलम् , उपलभ्य = कपिञ्जल द्वारा ज्ञात्वा, जीवितं वा, समाचरिष्यसि = विधास्यसि । हि = यतः, अध्यवसितम् = कर्तुम् अभिलषितम् , मरणम् = मृत्युः, अदुर्लभम् = सर्वथा सुलभम् (तस्य स्वाधीनत्वात्)। पश्चादपि = अनन्तरम् , अपि, एतत् = मरणं, भविष्यति = विधातु शक्यते इति भावः । जीवन् = श्वसन् , कपिञ्जलः, च, भर्तृदारिकाम् = राजकुमारीम् भवतीम् अदृष्ट्वा = न विलोक्य, न स्थास्यति = न जीविष्यति । तेन = हेतुना, तत्प्रत्यागमनकालावधयोऽपि = तस्य कपिञ्जलस्य प्रत्यागमनकालः परावर्तनसमयः एव अवधिः सीमा येषां तादृशाः, अपि, अमी = दुर्लभाः, प्राणाः = असवः ध्रियन्ताम् = (भवत्या) धार्यन्ताम्' इत्यभिदधाना = एवं कथयन्ती, मे = मम, पादयोः = चरणयोः, न्यपतत् = पपात । अहंतु = महाश्वेता, तु, जीविततृष्णायाः = जीवनलालसायाः, सकललोकदुर्लंघ्यतया = अखिलजनदुरतिक्रमणीयतया, स्त्रीस्वभावस्य = नारीप्रकृतेः क्षुद्रतया = नीचतया, च, तद्वचनोपनीतया = तस्य दिव्यपुरुषस्य (तस्याः तरलिकायाः वा) पूर्वोक्तेन वचनेन कथनेन उपनीतया लब्धयातया, दुराशामृगतृष्णिकया = दुराशा दुष्टास्पृहा एव मृगतृष्णिका मृगमरीचिका तया (निरङ्गकेवलरूपकम्) च, कपिञ्जल प्रत्यागमनकांक्षया = कपिञ्जलस्य प्रत्यागमनं परावर्तनं तस्य कांक्षया वाञ्छया, च = समुच्चये, तस्मिन् काले = तदानीं, तदेव = तरलिकावचनम्, एव, युक्तम् = उचितं, मन्यमाना = जानाना, जीवितम् = प्राणान्, नोत्सृष्टवती = न त्यक्तवती । हि = यतः, आशयाः = तृष्णया, किमिव, न क्रियते = न विधीयते (आशया सर्वमेव क्रियते इति भावः)।

मिलन) की आशा देकर स्वामिपुत्री (आपको) आश्वासन दिया है' यह सब समझ कर ही जीने या मरने का विधान करिये । सुनिश्चित (अभलषिता मरण तो सर्वथा) सुलभ है । वह (मरण) तो बाद में भी (पूरा वृत्तान्त जान लेने पर भी) हो सकता है । जीते जी कपिञ्जल स्वामिपुत्री (आपको) बिना देखे (जीवित) न रह सकेगा । इसलिये उसके लौटने के समय तक इन प्राणों को धारण

हि किमिव न क्रियते। तां च पापकारिणीं कालरात्रिप्रतिमां वर्षसहस्रायमाणां यातनामयीमिव दुःखमयीमिव नरकमयीमिवाग्निमयीमिवोत्सन्ननिद्रा तथैव क्षितितले विचेष्टमाना रेणुकणधूसरैरश्रुजलार्द्रकपोलसंदानितैर्विमुक्तव्याकुलैः शिरोरुहैरुपरुद्धमुखी निर्दयाक्रन्दजर्जरस्वरक्षयक्षामेण कण्ठेन तस्मिन्नेव सरस्तीरे तरलिकाद्वितीया क्षपां क्षपितवती।

च = किंच, तां = प्राणेशप्राणापहारिणीं, पापकारिणीं = दुष्कृतकारिणीं, कालरात्रिप्रतिमां = कालरात्रिसदृशां, वर्षसहस्रायमाणां = वर्षाणां सहस्रं तद्वत् आचरतिइतितां, यातनामयीमिव = तीव्रवेदनामयीम् इव। दुःखमयीमिव = कष्टमयीम्, = इव नरकमयीमिव = दुर्गतिमयीम्, इव, अग्निमयीमिव = वह्निमयीम्, इव, क्षपां = रात्रिम्, क्षपितवती, इति क्रियया सम्बन्धः, उत्सन्ननिद्रा = उत्सन्ना मूलतः अच्छिन्ना (अपगता) निद्रा यस्याः तादृशी, तथैव = तेनैव प्रकारेण, क्षितितले = पृथिवीतले, विचेष्टमाना = विलुठमाना, रेणुकणधूसरैः = रेणूनां धूलीनाम् कणाः अणवः तैः = धूसरैः ईषत्पाण्डुरैः, अश्रुजलार्द्रकपोलसंदानितैः = अश्रुजलैः बाष्पसलिलैः आर्द्रयोः सिक्तयो कपोलयोः गण्डस्थलयोः संदानितै संलग्नैः, विमुक्तव्याकुलैः = विमुक्ताः शिथिलाः अतः व्याकुलाः इतस्ततः विकीर्णाः तैः, शिरोरुहैः = मूर्धजैः, उपरुद्धमुखी = आच्छादितवदना, निर्दयाक्रन्दजर्जरस्वरक्षयक्षामेण = निर्दयः निष्करुणः (अत्युचः) यः आक्रन्दः रोदनं तेन जर्जरः जीर्णः यः स्वरः तस्य क्षयेण ह्रासेन क्षामः क्षीणः तेन, कण्ठेन = गलेन (उपलक्षिता) तस्मिन्नेव = पूर्वोक्ते एव, सरस्तीरे = अच्छोदतटे, तरलिकाद्वितीया = तरलिका द्वितीया यस्याः सा (अहं), क्षपितवती = यापितवती अत्राद्येविशेषणे आर्थी, द्वितीये क्यङ्प्रत्ययगता उपमा, चतुर्षु च विशेषणेषु क्रियोत्प्रेक्षाः तासां निरपेक्षतया संसृष्टिः च।

कीजिये", यह कहती हुई वह (तरलिका) मेरे पैरों पर गिर पड़ी। मैंने तो, समस्त जनों के लिये प्राणों की तृष्णा के दुरतिक्रमणीय होने से, स्त्री-स्वभाव के क्षुद्र होने से, उसके (दिव्याकृति के) आश्वासन-वचन से प्राप्त दुराशारूपी मृगमरीचिका (तथा) कपिञ्जल के लौट आने की आकांक्षा से, उस समय उसी को (तरलिका के वचन को) ठीक मानकर अपने प्राण नहीं छोड़े। आशा से क्या नहीं किया जाता? पापकारिणी मैंने तो उसी सरोवर को तट पर तरलिका के साथ, कालरात्रि के सदृश एवं सहस्रों वर्षों जैसी प्रतीत होने वाली उस रात्रि को बिताया, (वह रात मेरे लिये) मानो तीव्र वेदनामयी, (मानो) दुःखमयी, (मानो) नरकमयी एवं अग्निमयी-सी थी। (उस समय) मेरी नींद मूलतः उच्छिन्न हो गई थी (अर्थात् नींद नहीं आती थी)। मैं भूतल पर उसी तरह छटपटा रही थी। मेरा मुख, धूलि-कणों से धूसरित, अश्रु-जल से गीले कपोलों पर संलग्न, खुले होने से बिखरे हुये बालों से, ढँक गया था तथा अत्युच्च क्रन्दन (विलाप) के कारण शिथिल हुये

प्रत्युषसि तूत्थाय तस्मिन्नेव सरसि स्नात्वा, कृतनिश्चया, तत्प्रीत्या तमेव कमण्डलुमादाय तान्येव च वल्कलानि तामेवाक्षमालां गृहीत्वा, बुद्ध्वा निःसारतां संसारस्य, ज्ञात्वा च मन्दपुण्यतामात्मनः, निरूप्य चाप्रतीकारदारुणतां व्यसनोपनिपातानाम्, आकलय्य दुर्निवारतां शोकस्य, दृष्ट्वा च निष्ठुरतां दैवस्य, चिन्तयित्वा चातिबहुलदुःखतां स्नेहस्य, भावयित्वा चानित्यतां सर्वभावानाम्, अवधार्य चाकाण्डभङ्गुरतां सर्वसुखानाम्, अविगणय्य तातमम्बां च परित्यज्य सह परिजनेन सकलबन्धुवर्गम्, निवर्त्य विषयसुखेभ्यो मनः, संयम्येन्द्रियाणि, गृहीतब्रह्मचर्या, देवं त्रैलोक्यनाथमनाथशरणमिमं,

---

प्रत्युषसि = प्रभाते, तु, उत्थाय, तस्मिन्नेव सरसि = अच्छोद सरोवरे एव, स्नात्वा = स्नानंकृत्वा, कृतनिश्चया = विहितनिर्णया, तत्प्रीत्या = तस्यपुण्डरीकस्य-प्रीत्याप्रेम्णा, तमेव = तेन (पुण्डरीकेण) धृतम्, एव, कमण्डलुम् = कुण्डिकाम्, आदाय = गृहीत्वा, तान्येव = प्रियेण प्रयुक्तानि, एव, वल्कलानि = वृक्षत्वचः, तामेवअक्षमालां = तदीयाम् एव जपमालां, च. गृहीत्वा, संसारस्य = मर्त्यलोकस्य निःसारतां = मिथ्यात्वं, बुद्ध्वा = ज्ञात्वा, आत्मनः = स्वस्य, च, मन्दपुण्यताम् = स्वल्पसुकृततां, ज्ञात्वा = अवगम्य, व्यसनोपनिपातानाम् = व्यसनानि दुःखानि तेषाम्उपनिपाताः सहसा उपस्थितयः सहसाउपस्थितया तेषाम्, अप्रतीकारदारुणताम्, = अप्रतीकारं प्रतिविधानरहितं च तत् = दारुणंकठोरं च अप्रतीकारदारुणं तस्य भावः तत्ता ताम्, निरूप्य = विचार्य, शोकस्य = वेदनायाः, दुर्निवारताम् = दुर्निवार्यताम्, आकलय्य, = विचिन्त्य, दैवस्य = भाग्यस्य, निष्ठुरतां = कठोरतां, च, दृष्ट्वा = अवलोक्य, स्नेहस्य = अनुरागस्य, च, अतिबहुलदुःखताम् = अत्यधिककष्टताम्, चिन्तयित्वा = विचार्य, सर्वभावानाम् = समस्तपदार्थानाम्, च, अनित्यतां = क्षणभङ्गुरतां, भावयित्वा = भावनाविषयीकृत्य, सर्वसुखानाम् = अखिलभौतिकानन्दानां, च, अकाण्डभङ्गुरताम् = असमयविनाशित्वम् च, अवधार्य = विनिश्चित्य, तातम् = पितरम्, अम्बां = मातरं, च, अविगणय्य = अवगणनां कृत्वा, परिजनेन = अनुचरवर्गेण, सह, सकलबन्धुवर्गम् = समस्तबान्धवान्, परित्यज्य = विमुच्य, विषयसुखेभ्यः = भौतिकसुखेभ्यः, मनः = मानसं, निवर्त्य = पराङ्मुखीकृत्य, इन्द्रियाणि = चक्षुरादीनि, संयम्य = नियम्य, गृहीतब्रह्मचर्या = गृहीतं स्वीकृतं ब्रह्मचर्यंया सा, त्रैलोक्यनाथम् = त्रिभुवनपतिम्, अनाथशरणम् = अनाथानाम् असहायानां शरणंरक्षकम्, इमम् = पुरतः विलोक्यमानं, देवं स्थाणुं = शिवं, शरणा-

---

स्वर (कण्ठ-ध्वनि) के नष्ट हो जाने से (मेरा) कंठ क्षीण हो गया था।

प्रातःकाल उठ कर एवं उसी सरोवर में स्नान कर मैंने (शङ्कर की आराधना के लिए) निश्चय किया। (तदनुसार) उसके प्रेम से उसी कमण्डलु, उन्हीं वल्कलों तथा उसी अक्षमाला को लेकर, संसार की असारता एवं अपने पुण्य की स्वल्पता

शरणार्थिनी स्थाणुमाश्रिता।' अपरेद्युश्च कुतोऽपि समुपलब्धवृत्तान्तस्तातः सहाम्बया सह बन्धुवर्गेणागत्य सुचिरं कृताक्रन्दस्तैस्तैरुपायैरभ्यर्थनाभिश्च बह्वीभिरुपदेशैश्चानेकप्रकारैः परिसान्त्वनैश्च नानाविधैर्गृहागमनाय मे महान्तं यत्नमकरोत्। यदा च नेयमस्माद्व्यवसायात्कथंचिदपि शक्यते व्यावर्तयितुमिति निश्चयमधिगतवाँस्तदा निराशोऽपि दुस्त्यजतया दुहितृस्नेहस्य पुनः पुनर्मया विसृज्यमानोऽपि बहून्दिवसान्स्थित्वा सशोक एवान्तर्दह्यमानहृदयो गृहानयासीत्। गते च ताते ततः प्रभृति तस्य जनस्याश्रुमोक्षमात्रेण किल

र्थिनी = त्राणिभिलाषिणी (अहम्), आश्रिता = अवलम्बिता अपरेद्युः = अन्येद्युः, च, कुतोऽपि = कस्मात् अपि जनात्, समुपलब्धवृत्तान्तः = समुपलब्धः प्राप्तः वृत्तान्तः समाचारः येन सः, तातः = जनकः, अम्बया = मात्रा, सह, बन्धुवर्गेण = स्वजनलोकेन, सह, आगत्य = समेत्य सुचिरं = दीर्घकालं, कृताक्रन्द = कृतः विहितः आक्रन्दनं येन सः, तैः तैः उपायैः, बह्वीभिः, अभ्यर्थनाभिः = प्रार्थनाभिः, च, अनेकप्रकारैः = बहुविधैः, उपदेशैः = हितवाक्यैः, नानाविधैः—परिसान्त्वनैः = आश्वासनैः, च, मे = मम (महाश्वेतायाः), गृहागमनाय = गृहम् आगन्तुं, महान्तम् = अत्यधिकं, यत्नम् = उद्योगम्, अकरोत् = कृतवान्। यदा = यस्मिन् काले च, इयम् = मे तनया, अस्मात्, व्यवसायात् = उद्योगात्, कथंचिदपी = कष्टेन, अपि, व्यावर्तयितुं = निवर्तयितुं, न शक्यते = नपार्यते इति, निश्चयम् = निर्णयम्, अधिगतवान् = ज्ञातवान्, तदा = तदानीम्, निराशः = आशारहितः, अपि, दुहितृस्नेहस्य = पुत्रीप्रेम्णः, दुस्त्यजतया = दुर्निवारतया, पुनः पुनः = वारम्वारं, मया = महाश्वेतया, विसृज्यमानोऽपि = गृहगमनाय अनुरुध्यमानः, अपि, बहून् = अनेकान्, दिवसान् = वासरान्, स्थित्वा, सशोकएव = शोकसहितः, एव, अन्तर्दह्यमानहृदयः = अन्तः मध्येदह्यमानं हृदयंस्वान्तः यस्य स, गृहान् = गेहानि "गृहाः पुंसि च भूम्न्येव" इत्यमरः, अयासीत् = अगमत्। ताते = पितरि, गते, च = गेहं प्रतियाते च, ततः प्रभृति = तत्कालात् आरम्य, अश्रुमोक्षमात्रेण =

समझकर, सहसा आपड़ने वाली विपत्तियों की अनिवारणीय कठोरता को सोचकर, शोक की दुर्निवारता का ध्यानकर, भाग्य की निष्ठुरता को देखकर, स्नेह में अनेक दुःखों की (स्थिति का) विचारकर, सब पदार्थों की अनित्यता को समझकर, सभी सुखों की, असमय में ही, भंगुरता को निश्चय कर, पिता एवं माता की अवगणना कर तथा परिजनों के साथ सकल बन्धुओं का परित्याग कर, विषय-सुख से (अपने) मन को हटाकर, इन्द्रियों का नियन्त्रण कर तथा ब्रह्मचर्य-व्रत धारणकर मैंने त्रिलोक के स्वामी, अनाथों के शरण दाता, इन्हीं शिव की शरणार्थिनी बनकर, (इनका) आश्रय ग्रहण किया। दूसरे दिन कहीं से समाचार पाकर माता तथा अन्य बन्धु-वर्ग के साथ पिता ने आकर बहुत देर तक विलाप किया और विविध उपायों, बहुत सी प्रार्थ-

कृतज्ञतां दर्शयन्ती, तदनुरागकृशमिदमपुण्यबहुलमस्तमितलज्जममङ्गलभूतमनेकक्लेशायाससहस्रनिवासं दग्धशरीरकं बहुविधैर्नियमशतैः शोषयन्ती, वन्यैश्च फलमूलवारिभिर्वर्तमाना, जपव्याजेन तद्गुणगणानिव गणयन्ती, त्रिसंध्यमत्र सरसि स्नानमुपस्पृशन्ती, प्रतिदिनमर्चयन्ती देवं त्र्यम्बकम्, अस्यामेव गुहायां तरलिकया सह दीर्घशोकमनुभवन्ती चिरमवसम्, साहमेवंविधा पापकारिणी निर्लक्षणा निर्लज्जा क्रूरा च निःस्नेहा च नृशंसा च

केवलाश्रुपातेन, किल, तस्य जनस्य = पुण्डरीकस्यकृते, कृतज्ञतां = कृतं जानाति इति कृतज्ञः तस्य भावः कृतज्ञताताम्, दर्शयन्ती = प्रकटयन्ती, तदनुरागकृशम = तस्मिन् पुण्डरीके यः अनुरागः प्रेम तेन कृशं दुर्बलम्, अपुण्यबहुलम् = अतिपापमयम्, अस्तमितलज्जम् = अस्तमिता नष्टा लज्जा व्रीडा यस्य, तम्, अमङ्गलभूतम् = अशुभरूपम्, अनेकक्लेशायाससहस्रनिवासम् = अनेके अगणिताः ये क्लेशाः कष्टानि तेषाम् आयासाः परिश्रमाः तेषां सहस्रं तस्यनिवासम्' इदम् = एतत्, दग्धशरीरकं = ज्वलितम्देहं, बहुविधैः = अनेकप्रकारैः, नियमशतैः = अनेकैः नियमैः शोषयन्ती = क्षीणतांनयन्ती, वन्यैः = वनोत्पन्नैः, फलमूलवारिभिः, च, वर्तमाना = वृत्तिं कुर्वाणा, जपव्याजेन = जपच्छलेन, तद्गुणगणान् = तस्य प्रियस्य गुणगणान् गुणसमूहान्, गणयन्ती = गणनां कुर्वन्ती, इव (सापह्नवाक्रियोत्प्रेक्षा), त्रिसन्ध्यम् = त्रिसायम्, अत्र = अस्मिन् सरसि = तडागे, स्नानम् = मज्जनम्, उपस्पृशन्ती = आचरन्ती प्रतिदिनम् = अनुदिवसं, देवं = भगवन्तं, त्र्यम्बकम् = शिवम्, अर्चयन्ती = पूजयन्ती, अस्यामेव = एतस्याम्, एव, गुहायां = कन्दरायां, तरलिकया, सह, दीर्घशोकम् = निरवधिकवेदनाम्, अनुभवन्ती = अनुभवविषयीकुर्वन्ती, चिरम् = बहुकालात् अवसम् = निवासम् अकरवम्। सा, अहम् = महाश्वेता, एवंविधा = एतादृशी, पापकारिणी = पापंदुष्कृतं करोति इति एवंशीला, निर्लक्षणा = शुभलक्षणाहीना (कुलक्षणा), निर्लज्जा = लज्जारहिता, क्रूरा = निष्ठुरा च, निःस्नेहा = = प्रेमहीना, च, नृशंसा = कठोरा च, गर्हणीया = निन्दनीया, निष्प्रयोजनोत्पन्ना =

नाओं, अनेक उपदेशों तथा नानाविध सान्त्वनाओं के द्वारा मुझे घर ले जाने के लिये महान् प्रयत्न किया। जब उन्हें यह निश्चय हो गया कि 'यह (महाश्वेता) अपने इस उद्योग से किसी प्रकार विरत नहीं की जा सकती' तब वे निराश होकर एवं मेरे द्वारा बार-बार घर जाने के लिए कहे जाने पर भी, पुत्री-प्रेम के दुर्निवार होने से, बहुत दिनों तक रुके। रहे (अन्त में) भीतर जैसे जलता हृदय लिये शोकसहित घर चले गये। पिता के जाने पर, तब से उसके (पुण्डरीक के) प्रति आँसू गिराकर ही कृतज्ञता प्रकट करती, उसके प्रेम-वश कृश, अधिक पापमय, निर्लज्ज अमङ्गलरूप, हजारों क्लेश (के) परिश्रमों के निवासस्थान एवं जले इस शरीर को नाना प्रकार के सैकड़ों व्रतों से सुखाती, जङ्गली फल-मूल एवं जल से

गर्हणीया निष्प्रयोजनोत्पन्ना निष्फलजीविता निरवलम्बना निःसुखा च। किं मया दृष्टया पृष्टया वा कृतब्राह्मणवधमहापातकया करोति महाभागः।" इत्युक्त्वा पाण्डुना वल्कलोपान्तेन शशिनमिव शरन्मेघशकलेनाच्छाद्य वदनं दुर्निवारबाष्पवेगमपारयन्ती निवारयितुमुन्मुक्तकण्ठमतिचिरमुच्चैः प्रारोदीत्।

चन्द्रापीडस्तु प्रथममेव तस्या रूपेण विनयेन दाक्षिण्येन मधुरालापतया निःसङ्गतया चातितपस्वितया च प्रशान्तत्वेन च निरभिमानतया च

निरर्थकं जाता, निष्फलजीविता = निष्फलं, निरर्थकं जीवितं जीवनं यस्याः सा। निरवलम्बना = निराश्रया, निःसुखा = सुखरहिता, च। मया = महाश्वेतया, दृष्टया = अवलोकितया, पृष्टया = पृच्छाविषयीकृतया, वा, कृतब्राह्मणवधमहापातकतया = कृतं, विहितं ब्राह्मणवधलक्षणं महापातकं यया तथाभूतया, महाभागः = महानुभावः (भवान्), किंकरोति = किंकरिष्यति इत्युक्त्वा = एवम् अभिधाय, पाण्डुना = शुभ्रवर्णेन, वल्कलोपान्तेन = वल्कलाञ्चलेन, शरन्मेघशकलेन = शरन्मेघस्यशरत्कालिकजलदस्य शकलेन खण्डेन, शशिनमिव = चन्द्रमसम् इव, वदनम् = मुखम्, आच्छाद्य = आवृत्य (उपमा), दुर्निवारबाष्पवेगम् = दुर्निवारः दुष्प्रतिषेध्यः बाष्पः अश्रुजलम् तस्य वेगः प्रवाहः तम्, निवारयितुम् = दूरीकर्तुम्, अपारयन्ती = शक्नुवन्ती, उन्मुक्तकण्ठम् यथा स्यात् तथा, अतिचिरम् = दीर्घकालम्, उच्चैः = तारस्वरेण, प्रारोदीत् = रोदनम् अकरोत्।

चन्द्रापीडः तु, प्रथममेव = आदौ, एव, तस्याः = महाश्वेतायाः, रूपेण = लावण्येन, विनयेन = नम्रताभावेन, दाक्षिण्येन = शिष्टाचारेण, मधुरालापतया = मिष्टसंतापतया, निःसङ्गतया = अनासक्ततया, च अतितपस्वितया, च, प्रशान्तत्वेन = सौम्यप्रकृतित्वेन, च निरभिमानतया = निरहङ्कारतया च, महानुभावत्वेन =

जीवन-धारण करती, जप के बहाने (जैसे) उसके गुणों को गिनती, इस सरोवर में तीनों समय (प्रातः, मध्याह्न एवं सायं) स्नान करती, प्रतिदिन भगवान् शिव की अर्चना करती, इसी गुहा में तरलिका के साथ दीर्घशोक का अनुभव करती मैं चिरकाल से रह रही हूँ! अतः मैं ऐसी पापिनी, कुलक्षणा, निर्लज्ज, क्रूर, प्रेमहीन, कठोर, निन्दनीय, निष्प्रयोजन उत्पन्न (हुई), निष्फल जीवनधारिणी, निराधार एवं सुख से वञ्चित (दुःखी) हूँ। ब्राह्मण-वधरूपी महापातक को करने वाली मुझको देखकर अथवा (मुझ से मेरा वृत्तान्त) पूछकर आप क्या करेंगे?' यह कह- कर शरदृतु के मेघ-खंड से (आच्छादित चन्द्रमा की भांति (अपने) मुख को धवल वल्कल के छोर से ढँककर वह, दुर्निवारणीय अश्रुवेग को रोकने में असमर्थ होती हुई, उच्चस्वर से बहुत देर तक मुक्तकंठ रोती रही।

चन्द्रापीड तो पहले ही उसके (महाश्वेताके) रूप, विनय, शिष्टाचार, मधुर-

महानुभावत्वेन च शुचितया चोपारूढगौरवोऽभूत्। तदानीं तु तेनापरेण दर्शितसद्भावेन स्ववृत्तान्तकथनेन तया च कृतज्ञतया हृतहृदयः सुतरामरोपितप्रीतिरभवत्। आर्द्रीकृतहृदयश्च शनैः शनैरेनामभाषत। "भगवति, क्लेशभीरुरकृतज्ञः सुखासङ्गलुब्धो लोकः स्नेहसदृशं कर्मानुष्ठातुमशक्तो निष्फलेनाश्रुपातमात्रेण स्नेहमुपदर्शयन्रोदिति। त्वया तु कर्मणैव सर्वमाचरन्त्या किमिव न प्रेमोचितमाचेष्टितं येन रोदिषि। तदर्थमाजन्मनः प्रभृति समुपचित-

अतिप्रभावतया, च शुचितया = पवित्रतया, च, उपारूढगौरवः = उपारूढं संजातं गौरवं (महाश्वेतां प्रति) महत्वं यस्मिन् सः अभूत् आसीत्। तदानीं = तस्मिन् कालेतु, अपरेण = अन्येन, दर्शितसद्भावेन = दर्शितः प्रकटितः सद्भावः साधुत्वं येन तथा भूतेन, तेन, स्ववृत्तान्तकथनेन = स्वस्य आत्मनः वृत्तान्तस्य उदन्तस्य कथनेन निवेदनेन, तया = दर्शितया, कृतज्ञतया = कृतं जानाति इति कृतज्ञः तस्य-भावः तत्ता तया, च, हृतहृदयः = हृतम् आवर्जितं हृदयं चेतः यस्य तादृशः, सुतराम् = नितान्तम्, आरोपितप्रीतिः = आरोपिता स्थापिता प्रीतिः अनुरागः यस्मिन् तथा भूतः, अभवत् = आसीत्। आर्द्रीकृतहृदयः = आर्द्रीकृतं (प्रीत्या) क्लिन्नतां नीतं हृदयं चेतः यस्यसः च, शनैः शनैः = मन्दंमन्दम्, एनाम् = महाश्वेताम्, अभाषत = अवोचत्,—"भगवति = देवि, क्लेशभीरुः = दुःखत्रस्तः अकृतज्ञः = कृतघ्नः, सुखासङ्गलुब्धः = सुखाय यः आसङ्गः (प्रियादिषु) आसक्तिः तत्र लुब्धः लोलुपः, लोकः = जनः, स्नेहसदृशं = प्रेमानुरूपं, कर्म = कृत्यम् अनुष्ठातुम् = आचरितुम्, अशक्तः = असमर्थः, (सन्) निष्फलेन = निरर्थकेन, अश्रुपातमात्रेण = केवलेन अश्रुमोचनेन, स्नेहम् = प्रीतिम्, उपदर्शयन् = प्रकटयन्, रोदिति = रोदनंकरोति। त्वया = भवत्या, तु, कर्मणैव = कर्त्तव्यरूपेण, एव, सर्वम् = अखिलम्, आचरन्त्या = कुर्वन्त्या, प्रेमोचितम् = स्नेहानुरूपं, किमिव = किं कर्त्तव्यं, न, आचेष्टितं = विहितं, येन = कारणेन रोदिषि = अश्रूणि मुञ्चसि। तदर्थम् = पुण्डरीकस्य कृते, आजन्मनः प्रभृति = जन्ममर्यादीकृत्य, समुपचितपरिचयः = समुपचितः

संलाप, अनासक्ति, अतितपस्विता, शान्तभाव, निरहंकारता, महाप्रभाव तथा पवित्रता से (उसके प्रति) गौरवयुक्त (श्रद्धालु) बन गया था। किन्तु उस समय सद्भाव को प्रदर्शित करने वाले उस दूसरे अपने वृत्तान्त के कथन से तथा प्रकाशित कृतज्ञता से उसने (महाश्वेता ने) उसका (चन्द्रापीडका) हृदय हरलिया और (वह) (उसके प्रति) अत्यधिक प्रीतियुक्त हो गया। उसका हृदय पिघल गया और (वह) धीरे-धीरे उससे कहने लगा—"देवि! दुःखसे त्रस्त, अकृतज्ञ, आसक्ति का लोभी व्यक्ति (ही) स्नेह के अनुरूप कर्मानुष्ठान करने में असमर्थ (होकर) निष्फल अश्रुपात मात्र से स्नेह दिखलाता हुआ रोता है। आपने तो कर्त्तव्य-रूप से ही सब कुछ करते हुये कौन सा प्रेमोचित (कार्य) नहीं किया जिसके कारण रो रही हैं?

परिचयः प्रेयानसंस्तुत इव परित्यक्तो बान्धवजनः संनिहिता अपि तृणावज्ञया-वधीरिता विषयाः। मुक्तान्यतिशयितशुनासीरसमृद्धीन्यैश्वर्यसुखानि। मृणालिनीवातितनीयस्यपि नितरां तनिमानमनुचितैः संक्लेशैरुपनीता तनुः। गृहीतं ब्रह्मचर्यम्। आयोजितस्तपसि महत्यात्मा। वनिताजनदुष्करमप्यङ्गीकृतमरण्यावस्थानम्। अपि चानायासेनैवात्मा दुःखाभिहतैः परित्यज्यते। महीयसा तु यत्नेन गरीयसि क्लेशे निक्षिप्यते केवलम्। यदेतदनुमरणं नाम

वर्धितः परिचयः यस्य सः (अतः) प्रेयान् = अतिप्रियः, बान्धवजनः = स्वजनवर्गः (अपि), असंस्तुतः इव = अपरिचितः, इव, परित्यक्तः = सर्वथा त्यक्तः। संनिहिता अपि = समीपस्थाः, अपि, विषयाः = भोग्यपदार्थाः, तृणावज्ञया = तृणवत् अवहेलनया, अवधीरिता = तिरस्कृताः। अतिशयितशुनासीरसमृद्धीनि = अतिशयिताः तिरस्कृताः शुनासीरस्य इन्द्रस्य समृद्धयः सम्पत्तयः, यैः तानि, ऐश्वर्यसुखानि = विभवसौख्यानि, मुक्तानि = परित्यक्तानि। मृणालिनीव = कमलिनी, इव, अतितनीयस्यपि = अतिकृशा, अपि, तनुः = शरीरम् (उपमा) अनुचितैः = असमीचीनैः, संक्लेशैः = तपोऽनुष्ठानादिरूपः कष्टैः, नितरां = सुतरां तनिमानं = कृशताम्, उपनीता = प्रापिता। ब्रह्मचर्यं = ब्रह्मचर्यव्रतं, गृहीतम् = स्वीकृतम्। महति = गुरुतरे, तपसि = तपः कर्मणि, आत्मा, आयोजितः = नियोजितः = वनिताजनदुष्करमपि = नारीजनस्य दुष्करम् दुःसाध्यम्, अपि, अरण्यावस्थानम् = वनेनिवसनम्, अङ्गीकृतम् = स्वीकृतम्। अपि च, दुःखाभिहतैः = क्लेशप्रताडितैः (जनैः), अनायासेनैव = परिश्रमात् ऋते, एव, आत्मा = जीवनं, परित्यज्यते = त्यक्तुं शक्यते। तु = किन्तु, गरीयसि = महीयसि, क्लेशे = तपश्चर्यादिरूपकष्टे, केवलम्, महीयसा = महता, यत्नेन = प्रयासेन, निक्षिप्यते = नियोज्यते (आत्मघातस्तु साधारणजनैः अपि कर्तुं शक्यते, परन्तु तपश्चरणादिकं महत् कठिनं कर्मतु भवादृशैः एवं जनैः विधातुं पार्यते इति भावः) यत्, एतत्, अनुमरणं = पश्चात्मरणं (मृतस्य अनुगमनम्), नाम, तत्, अतिनिष्फलम् =

(आपने) उसके लिये (पुण्डरीक के लिये) जन्मकाल से ही सुपरिचित (अपने) प्रियबन्धुजनों को भी अपरिचित की भाँति त्याग दिया। समीपवर्ती (सुलभ) भोग्य पदार्थों को भी, तृण के समान अवहेलनाकर, तिरस्कृत कर दिया। इन्द्रकी सम्पत्ति को (भी) तिरस्कृत करनेवाले ऐश्वर्य-सुखों को त्याग दिया। कमलिनी की भाँति (अपने) अतिक्षीण शरीर को अनुपयुक्त (व्रतग्रहणादिरूप) कष्टों से और अधिक क्षीण बना डाला। ब्रह्मचर्यव्रत को धारण किया। (अपनी) आत्मा को महान् (कठोर) तप में लगा दिया। (यही नहीं) स्त्रियों के लिये सर्वथा दुष्कर वनवास को भी (स्वीकार) किया। दुःख से पीड़ित लोग तो अनायास ही (अपनी) आत्मा का परित्याग (आत्महत्या) कर सकते हैं। किन्तु (तपस्या जैसे) गुरुतर कष्ट में

तदतिनिष्फलम् । अविद्वज्जनाचरित एष मार्गः, मोहविलसितमेत्, अज्ञानपद्धतिरियम्, रभसाचरितमिदम्, क्षुद्रदृष्टिरेषा, अतिप्रमादोयम्, मौर्ख्यस्खलितमिदं यदुपरते पितरि भ्रातरि सुहृदि भर्तरि वा प्राणाः परित्यज्यन्ते । स्वयं चेन्न जहति न परित्याज्याः । अत्र हि विचार्यमाणे स्वार्थ एव प्राणपरित्यागोयमसह्यशोकवेदनाप्रतीकारत्वादात्मनः । उपरतस्य तु न कमपि गुणमावहति । न तावत्तस्यायं प्रत्युजीवनोपायः । न धर्मोपचयकारणम् । न शुभलोकोपार्जनहेतुः । न निरयपातप्रतीकारः । न दर्शनोपायः । न परस्परसमागम-

---

निरर्थकम् । एषः = अनुमरणरूपः, मार्गः = पन्थाः, अविद्वज्जनाचरितः = अपण्डितलोकसेवितः (न विद्वज्जनसम्मतः) । एतत् = इदम्, मोहविलसितम् = अज्ञानविजृम्भितम्, इयम् = एषा, अज्ञानपद्धतिः = अज्ञानसरणिः, इदम् = एतत . रभसाचरितम् = अविमर्शकारित्वम्, एषा = इयं, क्षुद्रदृष्टिः = क्षुद्राः तुच्छबुद्धयः तेषां दृष्टिः ज्ञानम्, अयम् = एषः, अतिप्रमादः = अतिशयेन अनवधानता, इदं, मौर्ख्यस्खलितम् = मोढ्यात्विहिताच्युतिः, यत्, पतरि = जनके, भ्रातरि = सहोदरे. सुहृदि = मित्रे, भर्तरि = स्वामिनी, वा, उपरते = मृते (सहि), प्राणाः = असवः, परित्यज्यते = विमुच्यन्ते । चेद् = यदि, (प्राणाः), स्वयं = स्वतः, न जहति = नत्यजन्तिः, प्राणिनमिति शेषः, (तदा) न परित्याज्याः = बलात् न त्याज्याः अत्र = अनुमरणविषये, हि, विचार्यमाणे = विचारे क्रियमाणे, अयम् = एषः, प्राणपरित्यागः = आत्मघातः, आत्मनः = स्वस्य, असह्यशोकवेदना प्रतीकारत्वात् = असह्या सोढुम् अशक्या या शोकस्य क्लेशस्य, वेदना पीडा तस्याः प्रतीकारः निवृत्त्युपायः तस्य भावः तत्त्वं तस्मात्, स्वार्थः एव । (अनुमरणं हि) उपरतस्य = मृतस्य, कमपि, गुणम् = उपकारं, न, आवहति = आदधाति । तावत् = आदौ, अयं = प्राणपरित्यागः, तस्य = उपरतस्य, प्रत्युज्जीवनोपायः = पुनर्जीवनस्य उपायः, न, (वर्तते इति शेषः, एवं सर्वत्र), धर्मोपचयकारणम् = धर्मस्य पुण्यस्य, उपचयः वृद्धिः, तस्यकालम् हेतुः, न । शुभलोकोपार्जनहेतुः = शुभाः ये लोकाःस्वर्गादयः तेषाम उपार्जनस्य प्राप्तेः हेतुः कारणम्, न । निरयपातप्रतीकारः = निरये नरके पातः पतनं, तस्य प्रतीकारः निवृत्त्युपायः, न । दर्शनोपायः = (उपरतस्य) दर्शनस्य अवलोकनस्य उपायः, न । परस्परसमागमनिमित्तम् = अन्योन्यमिलन हेतुः, न । असौ=मृतकजनः, अवशः =

(अपने को) केवल अत्यधिक प्रयत्न से ही डाला जा सकता है । यह जो (दिवंगत व्यक्ति) के पश्चात् मरना (सती होना) है, वह तो बिल्कुल व्यर्थ है । पिता, भ्राता, मित्र अथवा पति के दिवंगत होनेपर जो प्राणों का परित्याग किया जाता है, वह वस्तुतः मूर्खों द्वारा अवलम्बित मार्ग है, वह मोह का विलास (मात्र) है, वह अज्ञान की पद्धति है, वह उतावलेपन का आचरण है, वह संकुचित दृष्टि है, वह अत्यधिक प्रमाद है, यह मूर्खतावश की गई त्रुटि है ! यदि (प्राण) स्वयं न

निमित्तम्। अन्यामेव स्वकर्मफलपरिपाकोपचितामसाववशो नीयते कर्मभूमिम्। असावप्यात्मघातिनः केवलमेनसा संयुज्यते। जीवंस्तु जलाञ्जलिदानादिना बहूपकरोत्युपरतस्यात्मनश्च। मृतस्तु नोभयस्यापि। स्मर तावत्प्रियामेकपत्नीं रतिं भगवति भर्तरि मकरकेतौ सकलाबलाजनहृदयहारिणि हरहुतभुग्दग्धेऽप्यविरहितामसुभिः, पृथां च वार्ष्णेयीं शूरसेनसुतामभिरूपे सावज्ञविजितसकलराजकमौलिकुसुमवासिताशेषपादपीठे पत्यावखिलभुवन-

पराधीनः, स्वार्थफलपरिपाकोपचिताम्=स्वस्य आत्मनः कर्मणोः पापपुण्यरूपयोः यः फलपरिपाकः तेन उपचिताम्=निर्धारिताम् इतिभावः, अन्यामेव=अपराम्, एव, कर्मभूमिं=कर्मक्षेत्रं नीयते=प्राप्यते। असावपि=असौउपरतः, अपि, केवलम् आत्मघातिनः=अनुमृतस्य, एनसा=पापेन, संयुज्यते=संयुक्तः भवति। जीवन=प्राणान् धारयन्, तु (सः) जलाञ्जलिदानादिना=जलाञ्जलिदानादिरूप पितृकर्मणा, उपरतस्य=मृतस्य, आत्मनः=स्वस्य, च, बहु=अधिकम्, उपकरोति=उपकारं करोति जीवन्नरो भद्रशतानि पश्येत्''—इति न्यायात्? मृतः=अनुमृतः इति भावः, तु, उभयस्यापि=मृतस्य जनस्य, आत्मघातिनः स्वस्य च, अपि, न, उपकरोति इति शेषः। दृष्टांतद्वारा उक्तम् अर्थं समर्थयन् आह ''तावत्, सकलाबलाजनहृदयहारिणी=सकलः समस्तः यः अबलाजनः नारीलोकः तस्य हृदयं चेतः हरतिइति तस्मिन्, भर्तरि=स्वस्वामिनि, भगवति, मकरकेतौ=मीनकेतने, हरहुतभुग्दग्धे=हरस्य शिवस्य हुतभुजा नेत्रजन्मना अग्निना, दग्धे भस्मीभूते, अपि, प्रियाम्=(स्वभर्तरि अनुरक्ताम्, एकपत्नीम्=एकः एवः पतिः भर्ता यस्याः ताम्, असुभिः=प्राणैः, अविरहिताम्=अवियुक्तां, रतिम्=कामपत्नीं, स्मर=स्मरणं कुरु परिकरः। अभिरूपे सावज्ञविजितसकलराजकमौलिकुसुमवासिताशेषपादपीठे=सावज्ञम् अवज्ञया सहितं (अनायासेनइतिभावः) विजितं स्ववशीकृतं यत् सकलं सम्पूर्णं राजकम् नृपसमूहः तस्य मौलिकुसुमैः मुकुटगुम्फितपुष्पैः वासितं प्रणतिकाले सुगन्धीकृतं पादपीठं चरणासनं यस्य तस्मिन् (अतएव) अखिलभुवनबलिभागभुजि=अखिल-

छोड़े तो उनका परित्याग नहीं करना चाहिये। इस विषय में विचार करने पर स्वतः स्पष्ट हो जाता है कि प्राणों का इस प्रकार परित्याग, अपनी असह्य शोकवेदना से मुक्ति पाने का उपाय होनेके कारण (एक प्रकार से) स्वार्थ ही है। क्योंकि (इस प्रकार का प्राणपरित्याग) मृत व्यक्ति का कोई हित नहीं कर सकता। यह (प्राणपरित्याग) न तो उसके (मृतव्यक्ति के) पुनर्जीवित होने का उपाय है, न धर्मवृद्धि का कारण है, न पुण्यलोकों (स्वर्गादि) की प्राप्ति का हेतु है, न नरकपात का निवारक (अर्थात् नरकपात से बचने का उपाय) है, न (मृतव्यक्ति के) दर्शन का उपाय है और न परस्पर मिलन का कारण है। वह (मृत व्यक्ति) अपने (शुभ अशुभ) कर्म के फल परिपाक के अनुसार निर्धारित अन्य ही कर्म

बलिभागभुजि पाण्डौ किंदमुनिशापानलेन्धनतामुपागतेऽप्यपरित्यक्त-जीविताम्, उत्तरांचविराटदुहितरं बालां बालशशिनीव नयनानन्दहेतौ विनयवति विक्रान्ते च पञ्चत्वमभिमन्यावागतेपि धृतदेहाम्, दुःशलांच धृतराष्ट्रदुहितरं भ्रातृशतोत्सङ्गलालितामतिमनोहरे हरवरप्रदानवर्धितमहिम्नि सिन्धुराजे जयद्रथेऽर्जुनेन लोकान्तरमुपनीतेऽप्यकृतप्राणपरित्यागाम्। अन्याश्च

स्य अशेषस्य भुवनस्य, जगतः बलिभागं राजग्राह्यं करं भुनक्ति गृह्णाति इति तस्मिन्, पत्यौ = स्वामिनि, पाण्डौ = पाण्डुसंज्ञके, किंदमुनिशपनलेन्धनताम् = किंदमस्य तदाख्यस्य मुनेः ऋषेः शापः अभिशंपातः एव अनलः तस्मिन् इन्धनताम् इन्धनविषय-ताम् उपगतेपि = प्राप्ते, अपि, शापवशात् मृते सत्यपि इति भावः (रूपकम्), अपरित्यक्तजीविताम् = अपरित्यक्तम् जीवितं जीवनं यया तां, वार्ष्णेयीम् = वृष्णेः अपत्यं स्त्री वार्ष्णेयी ताम् वृष्णिकुलोत्पन्नां, शूरसेनसुतां = शूरसेनस्य पुत्रीं, पृथां = कुन्तीं च (स्मर)। परिकरः बालशशिनीव = नवोदितचन्द्रे, इव, नयना-नन्दहेतौ = नेत्राह्लादकारणे (उपमा), विनयवति = विनीते, विक्रान्ते = पराक्रम-शालिनि च अभिमन्यौ = तदाख्येपत्यौ, = पञ्चत्वम् = निधनत्वम्, आगतेपि = प्राप्ते, अपि, धृतदेहाम् = धृतम् देहं यया सा ताम्, विराटदुहितरं = विराटनृपस्य पुत्रीं, बालाम् = अप्रौढाम्, उत्तरा = अभिमन्यु पत्नीं च (स्मर)। परिकरः। अतिमनोहरे = अतिसुन्दरे, हरवरप्रदानवर्धितमहिम्नि = हरस्य शिवस्य वरप्रदानेन वर्धितः प्रवृद्धः महिमा महत्त्वं यस्य तस्मिन, सिन्धुराजे = सिन्धु-देशनृपे, जयद्रथे = दुःशलायाः पत्यौ, अर्जुनेन = पार्थेन, लोकान्तरम् = परलोकम्, उपनीतेति = प्रापिते, अपि, अकृतप्राणपरित्यागाम् = न कृतः प्राणानाम् परित्यागः यया सा तां भ्रातृशतोत्सङ्गलालिताम् = भ्रातॄणांसहोदराणांयत्शतं तस्य उत्सङ्गेनक्रोडेन लालितां पालितां, दुःशलां = जयद्रथपत्नींच, (स्मर)। परिकरः अन्याश्च = अपराः च, सहस्रशः, रक्षःसुरासुरमुनिमनुजसिद्धगन्धर्वकन्यकाः

भूमि (कर्मक्षेत्र) को विवश होकर ले जाया जाता है। वह (मृत व्यक्ति) भी केवल आत्मघाती के पाप से संयुक्त होता है। जीवित रह कर तो (वह) जलांजलि दानादि के द्वारा मृतक (व्यक्ति) का तथा (साथ ही) अपना भी बहुत उपकार कर सकता है किन्तु मरकर तो दोनों का (अपना तथा मृतक का उपकार) नहीं (कर सकता)। सर्वप्रथम (आप) एक पति वाली, (अपने पति कामदेव में) अनुरक्त रति को स्मरण करें, जो समस्त स्त्रियों के हृदय का हरण करने वाले, अपने पति भगवान् कामदेव के, शंकर के (नेत्र की) अग्नि से जलाये जाने पर भी, प्राणों से वियुक्त नहीं हुई। वृष्णि वंश में उत्पन्न शूरसेन की पुत्री पृथा (कुन्ती) को याद करिये जिसने, (अपने) सुन्दररूपवाले पति पाण्डु के; जिनका समस्त पादपीठ अना-यास ही जीते गये सकल राजाओं के मुकुटों में (गुम्फित) पुष्पों से सुगंधित था

रक्षःसुरासुरमुनिमनुजसिद्धगन्धर्वकन्यका भर्तृरहिताः श्रूयन्ते सहस्रशो विधृतजीविताः।

प्रोन्मुच्येतापि जीवितं संदिग्धोऽप्यस्य समागमोऽद्य यदि स्यात्। भगवत्या तु ततः पुनः स्वयमेव समागमसरस्वती समाकर्णिता। अनुभवे च को विकल्पः। कथं च तादृशानामप्राकृताकृतीनां महात्मनामवितथगिरां गरीय-

---

रक्षांसि राक्षसाः सुराः देवाः असुराः दैत्याः मुनयः ऋषयः मनुजाः, मानवाः सिद्धाः देवयोनिविशेषाः गन्धर्वाः देवगायकाः च तेषां कन्यकाः पुत्र्यः, भर्तृरहिताः =विधवाः (सत्यः अपि) विधृतजीविताः = धृतप्राणाः, श्रूयन्ते = आकर्ण्यन्ते, इतिहासादिभ्यः इति शेषः।

यदि = पक्षान्तरे, अस्य = उपरतस्य पुण्डरीकस्य, समागमः = संगमः संदिग्धोऽपि = संशयितः, अपि, स्यात् = भवेत्, (तदा) जीवितं = प्राणितं, प्रोन्मुच्येत = परित्यज्येत (मृतस्य पुण्डरीकस्य मिलने सन्देहस्य अवसरः अपि नास्ति अतः तदर्थम् अनुमरणं व्यर्थमेव इति भावः)। तु = किन्तु भगवत्या = देव्या (भवत्या) ततः = तस्मात् दिव्यपुरुषात् पुनः, समागमसरस्वती = पुनर्मिलनसम्बन्धिनीवाणी स्वयमेव समाकर्णिता = श्रुता। अनुभवे = साक्षात्अनुभूतौ च, कः, विकल्प = सन्देहः। तादृशानाम् = तथाविधानाम्, अप्राकृताकृतीनाम् = अप्राकृताः अलौकिकाः आकृतयः आकाराः येषां तेषां, अवितथगिरां = सत्यवादिनां, महात्मनां = महापुरुषाणाम्, गिरि = वचने, गरीयसापि = महता, अपि, कारणेन

(और) जो समस्त संसार के राजकर का भोग करने वाले थे—किंदम नामक मुनि की शापाग्नि में ईंधन बन जाने पर (भस्मीभूत हो जाने पर) भी जीवन का परित्याग नहीं किया। (स्मरण करें) विराट की पुत्री बालिका उत्तरा को, जिसने बालचन्द्र के समान नयनाभिराम, विनयशील तथा पराक्रमी (अपने पति) अभिमन्यु के (युद्ध भूमि में) वीरगति को प्राप्त होने पर भी शरीर धारण कर रखा था, स्मरण करें (अपने) सौ भाइयों की गोद में लालित धृतराष्ट्र की पुत्री दुःशला को जिसने अति मनोहर, शंकर के वरप्रदान से अत्यन्त महिमा-शाली (अपने पति) सिन्धुराज जयद्रथ के अर्जुन द्वारा मारे जाने पर भी (अपने) प्राणों का परित्याग नहीं किया। (इसी प्रकार) राक्षसों, सुरों, असुरों, मुनियों, मनुष्यों, सिद्धों और गन्धर्वों की अन्य सहस्रों कन्यायें भी पतिविहीन होने पर जीवन धारण करती हुई सुनी जाती हैं।

यदि उसका (पुण्डरीक का) मिलन संदिग्ध भी होता (अर्थात् उसके मिलन में यदि किसी प्रकार का सन्देह भी होता) तो भी जीवन का त्याग किया जा सकता था, किन्तु (आपने) तो उस दिव्य पुरुष से (प्रिय के साथ) पुनर्मिलन की वाणी स्वयं ही सुनी है। (साक्षात्) अनुभव के विषय में कौन सा सन्देह हो सकता है?

सापि कारणेनगिरिवैतथ्यमास्पदं कुर्यात्। उपरतेन च सह जीवन्त्याः कीदृशी समागतिः। अतो निःसंशयममावुपजातकारुण्योमहात्मा पुनः प्रत्युज्जीवनार्थमेवैनमुत्क्षिप्य सुरलोकं नीतवान्। अचिन्त्यो हि महात्मनां प्रभावः। बहुप्रकाराश्च संसारवृत्तयः। चित्रं च दैवम्। आश्चर्यातिशययुक्ताश्च तपःसिद्धयः। अनेकविधाश्च कर्मणां शक्तयः। अपि च सुनिपुणमपि विमृशद्भिः किमिवान्यत्तदपहरणे कारणमाशङ्क्येत जीवितप्रदानादृते। न चासंभाव्य-

= हेतुना, वैतथ्यम् = असत्यत्वं, कथम् = केनकारणेन, आस्पदं = स्थानं, कुर्यात् = विदध्यात्? उपरतेन = मृतेन (पुण्डरीकेण, च, सह = साकं, जीवन्त्याः जीवनं धारयन्त्याः (भवत्याः), कीदृशी = कथंविधा, समागतिःसङ्गतिः? अतः = अस्मातद्धेतोः निः संशयम् = निश्चतम् उपजातकारुण्य = उत्पन्नदयः, असौ, महात्मा = महापुरुषः, पुनः = भूयः, प्रत्युज्जीवनार्थमेव = पुनर्जीवनाय, एव एनम् = पुण्डरीकम्, उत्क्षिप्य = उत्तोल्य, सुरलोकं = स्वर्गं नीतवान् = प्रापितवान्। हि यतः, महात्मनां = महानुभावानां, प्रभावः = महिमा, अचिन्त्यः = अनाकलनीयः (अज्ञेयः), अस्तीतिशेष। संसारवृत्तयः = जगद्व्यापाराः च, बहुप्रकाराः = अनेकविधाः (सन्ति)? दैवं = भाग्यं, च, चित्रम् = विचित्रम् (भवति)। तपः सिद्धयः, आश्चर्यादिशययुक्ताः = आश्चर्याणाम् अद्भुतानाम् अतिशयेन आधिक्येन युक्ताः समन्विताः, च, कर्मणां = पूर्वोपार्जितशुभाशुभानां, शक्तयः = सामर्थ्यानि अनेकविधाः = बहुप्रकाराः, (सन्ति)। अपि च = पक्षान्तरे, सुनिपुणं = सम्यक् विमृशद्भिः = विचार यद्भिः (अस्माभिः), तदपहरणे = पुण्डरीकस्य बालात् नयने, जीवितप्रदानात् = प्राणदानात्, ऋते = विना, अन्यत् = द्वितीयं, किमिव, कारणम् निमित्तम्, आशङ्क्येत = आशङ्काविषयी क्रियेत। इदं = मृतस्य पुनरुज्जीवनं च, भगवत्या = श्रीमत्या (भवत्या), असम्भाव्यम् = असम्भवं न = नहिं, अवगन्तव्यम्

और उस प्रकार की अलौकिक आकृति वाले सत्यवादी महात्माओं की वाणी में गुरुतर कारण के होने पर भी असत्यता के लिये स्थान (ही) कैसे हो सकता है? और दिवंगत (पुण्डरीक) के साथ जीवन-धारण करने वाली (आपका) कैसा मिलन? अतः दया से ओत-प्रोत वह महात्मा निःसन्देह पुनः जिलाने के लिये ही, उसे (पुण्डरीक को) उठाकर देवलोक ले गया है। क्योंकि महात्माओं का प्रभाव अज्ञेय (होता है)। संसार की वृत्तियाँ अनेक प्रकार की (होती हैं)। दैव (भी) विचित्र (है)। तप की सिद्धियाँ अतिशय आश्चर्यजनक (होती हैं)। कर्मों की शक्तियाँ अनेक प्रकार की होती हैं। भली भाँति विचार करने पर भी (हम लोग) उसके (पुण्डरीक के) अपहरण में जीवन-दान के अतिरिक्त, और किस कारण की आशङ्का कर सकते हैं? और देवी को (आपको) इसे (पुनर्जीवन को) असम्भव (भी) नहीं समझना चाहिये। (पुनर्जीवनरूप) यह मार्ग चिरकाल से प्रवृत्त (रहा है)।

मिदमगन्तव्यं भगवत्या। चिरप्रवृत्त एष पन्थाः। तथा हि विश्वावसुना गन्धर्वराजेन मेनकायामुत्पन्नां प्रमद्वरां नाम कन्यामाशीविषविलुप्तजीवितां स्थूलकेशाश्रमे भार्गवस्य च्यवनस्य नप्ता प्रमतितनयो मुनिकुमारको रुरुर्नाम स्वायुषोऽर्धेन योजितवान्। अर्जुनं चाश्वमेधतुरगानुसारिणमात्मजेन बभ्रुवाहननाम्ना समरशिरसि शरापहृतप्राणमुलूपी नाम नागकन्यका सोच्छ्वासमकरोत्। अभिमन्युतनयं च परीक्षितमश्वत्थामास्त्रपावकपरिप्लुष्टमुदरादुपरतमेव निर्गतमुत्तराप्रलापोपजनितकृपो भगवान्वासुदेवो दुर्लभानसून्प्रा-

---

=ज्ञातव्यम्। हेतुं दर्शयति एषः=पुनरुज्जीवनरूपः, पन्थाः = मार्गः, चिरप्रवृत्तः=बहुकालप्रचलितः, अस्ति, इति शेषः। तथाहि, गन्धर्वराजेन = गन्धर्वस्वामिना, विश्वावसुना = तन्नाम्ना, मेनकायाम् = तदाख्यायाम्, उत्पन्नाम् = जाताम्, आशीविषविलुप्तजीवितां = आशीविषेण सर्पेण विलुप्तं विनाशितं जीवितं जीवनं यस्याः ताम्, प्रमद्वरांनाम् = प्रमद्वरा नाम्नीं, कन्याम् = मेनकासुतां, स्थूलकेशाश्रमे = स्थूलकेशसंज्ञकमुनेः आश्रमे, भार्गवस्य = भृगुवंशोत्पन्नस्य, च्यवनस्य = तत्संज्ञकस्य मुनेः नप्ता = पौत्रः, प्रमतितनयः = प्रमतेः सुतः, मुनिकुमारकः, रुरुः = रुरु नामकः ऋषिपुत्रः, स्वायुषः = स्वस्य वयसः, अर्धेन = अर्धभागेन, योजितवान् = संयोज्य जीवितां कृतवान्। अश्वमेधतुरगानुसारिणम्=अश्वमेधीयस्य अश्वस्य (रक्षार्थम्) तदनुगामिनम्, बभ्रुवाहननाम्ना, आत्मजेन = स्वपुत्रेण, समरशिरसि = युद्धाग्रे, शरापहृतप्राणम् = शरेण बाणेन अपहृताः। वियोजिताः प्राणाः असवः यस्य सः तम्, अर्जुनम् = पार्थम्, नागकन्यका, उलूपीनाम = उलूपी नाम्नी अर्जुनस्य पत्नी, सोच्छ्वासम् = सप्राणम, अकरोत् = कृतवती। अश्वथामापावकपरिप्लुष्टम् = अश्वत्थाम्नः द्रोणपुत्रस्य, अस्त्रपावकेन शस्त्राग्निना परिप्लुष्टं संदग्धं उदरात् = गर्भात्, उपरतमेव = मृतम्, एव, निर्गतम् = उत्पन्नम् अभिमन्युतनय परीक्षितम् च उत्तराप्रलापोपजनितकृपः = उत्तरापरीक्षितस्यमाता तस्याः प्रलापेन करुणविलापेन उपजनिता समुत्पादिता कृपा अनुकम्पायस्य तथाभूतः, भगवान्, वासुदेवः = कृष्णः दुर्लभान्,

---

जैसे—गन्धर्वराज विश्वावसु के द्वारा मेनका से उत्पन्न प्रेमद्वारा नामक कन्या को, जिसका जीवन सर्प के द्वारा नष्ट हो गया था, स्थूलकेश के आश्रम में भृगुवंशी च्यवन के पौत्र प्रमति के पुत्र रुरु नामक मुनिकुमार ने, अपनी आयु के अर्ध (भाग) से संयुक्त कर दिया था (अर्थात् अपनी आयु का अर्ध भाग देकर उसे जीवित कर दिया था)। अश्वमेध के घोड़े का अनुगमन करने वाले अर्जुन को, जिसे समराङ्गण में (उन्हीं के) पुत्र बभ्रुवाहन ने बाणोंद्वारा निष्प्राण बना दिया था, (अर्जुन की पत्नी) उलूपी नामक नागकन्या ने प्राणयुक्त (जीवित) कर दिया था। अभिमन्यु के पुत्र परीक्षित को, जो अश्वत्थामा के अस्त्राग्नि से पूर्णतः दग्ध (होने के कारण) उदर से मृतावस्था में ही उत्पन्न हुये थे, उत्तरा के प्रलाप से दयार्द्र होकर भगवान् कृष्ण ने दुर्लभ प्राणों की

पितवान्। उज्जयिन्यां च सांदीपनिद्विजतनयमन्तकपुरादपहृत्य त्रिभुवनवन्दितचरणः स एवानीतवान्। अत्रापि कथंचिदेवमेवभविष्यति। तथापि किं क्रियते। क उपालभ्यते। प्रभवति हि भगवान्विधिः। बलवती च नियतिः। आत्मेच्छया न शक्यमुच्छ्वसितुमपि। अतिपिशुनानि चास्यैकान्तनिष्ठुरस्य दैवहतकस्यविलसितानि न क्षमन्ते दीर्घकालमव्याजरमणीयं प्रेम। प्रायेण च निसर्गत एवा—नायतस्वभावभङ्गुराणि सुखान्यायतस्वभावानि च दुःखानि। तथा हि कथमप्येकस्मिञ्जन्मनि समागमो जन्मान्तरसहस्राणि च विरहः

असुन्=प्राणान्, प्रापितवान्=समर्पितवान्। उज्जयिन्याम्=उज्जयिनीनगर्यां, सांदीपनिद्विजतनयम्=तत्संज्ञकब्राह्मणस्य पुत्रम्, अन्तकपुरात्=यमलोकात्, अपहृत्य=अपहरणंकृत्वा, त्रिभुवनवन्दितचरणः=त्रिभुवनेन त्रैलोक्येन वन्दितौ नमस्कृतौ चरणौ पादौ यस्य सथाविधः, स एव=श्री कृष्णः, एव, आनीतवान्=प्रापितवान्। अत्रापि=पुण्डरीक विषये, अपि, कथंचित्=केनापिविधिना, एवमेव=इत्थमेव, भविष्यति, पुण्डरीकस्य पुनर्जीवनं सम्पत्स्यते इतिभावः। तथापि=एवम्, असति, अपि, किं क्रियते=किं कर्तुं शक्यते, अस्माभिः इति शेषः। कः, उपालभ्यते=उपालम्भविषयीक्रियते। हि=यतः, भगवान्=ऐश्वर्यवान्, विधिः=विधाता, प्रभवति=सर्वंकर्तुं शक्नोति। नियतिः=भाग्यं च, बलवती=समर्थवती (अस्ति)। आत्मेच्छया=स्वेच्छया, उच्छ्वसितुमपि=श्वासं ग्रहीतुमपि, न शक्यम्=न शक्यते। एकान्तनिष्ठुरस्य=नितान्तनिर्दयस्य, दैवहतकस्य=दुर्भाग्यस्य, च, अतिपिशुनानि=अत्यन्तदुष्टानि, विलसितानि=क्रीडाः (कार्याणि), अव्याजरमणीयं=अव्याजं निश्छलम् तेन रमणीयं मनोहरं, प्रेम=अनुरागः,दीर्घकालं=चिरकालं यावत्,न क्षमन्ते=न सहन्ते। प्रायेण च=बहुधा च, निसर्गत एव=स्वभावतः एव, सुखानि, अनायतस्वभावभङ्गुराणि=अनायतस्वभावनि अदीर्घप्रकृतिकानि (संक्षिप्तानि) च, तानिभङ्गुराणि विनाशशीलानि च तानि दुःखानि=कष्टानि, च, (निसर्गतः), आयतस्वभावानि=दीर्घप्रकृतिकानि (असंक्षिप्तानि) भवन्ति इति शेषः। तथाहि, प्राणिनाम्=जीवधारिणां, कथमपि=केनापि प्रकारेण च, एकस्मिन, जन्मनि, समागमः=सम्बन्धः, जन्मान्तरसहस्राणि=अनेकजन्मान्तराणि इतिभावः, विरहः=वियोगः=अतः=अस्मात् हेतोः, अनिन्द्यम्=अनिन्द्य-

---

प्राप्ति करायी थी और त्रैलोक्य द्वारा पूजित चरण वाले वे ही (भगवान् कृष्ण) उज्जयिनी में सान्दीपनि (नामक) ब्राह्मण के पुत्र को यमपुर से हरकर ले आये थे। यहाँ भी (पुण्डरीक के विषय में भी) कुछ ऐसा ही होगा। ऐसा न होने पर भी क्या किया जा सकता है? किसे उलाहना दिया जा सकता है? क्योंकि भगवान् विधाता (सब कुछ करने में) समर्थ हैं और भाग्य प्रबल है। अपनी इच्छा से (तो) साँस भी नहीं ली जा सकती। अत्यन्त निष्ठुर दुष्ट दैव की अतिक्रूर कीड़ायें, निसर्ग

प्राणिनाम् । अतोनार्हस्यनिन्द्यमात्मानं निन्दितुम् । आपतन्ति हि संसारपथमतिगहनमवतीर्णानामेते वृत्तान्ताः धीरा हि तरन्त्यापदम्" इत्येवंविधैरन्यैश्च मृदुभिरुपसान्त्वनैः संस्थाप्य तां पुनरपि निर्झरजलेनाञ्जलिपुटोपनीतेनानिच्छन्तीमपि बलात्प्रक्षालितमुखीमकारयत् ।

॥ इति महाकवि बाणभट्ट विरचितायां कादम्बर्यां महाश्वेतावृत्तान्तः समाप्तः ॥

नीयम्, आत्मानं=स्वम्, निन्दितुम्=गर्हितुं, नार्हसि=न योग्या भवसि । हि यतः, अतिगहनम्=अतिभयावहं, संसारपथम्=संसृतेः मार्गम्, अवतीर्णानाम्=आरूढानाम् (संसारिणाम् इतिभावः), एते, वृत्तान्ताः=सुखदुःखमयोदन्ताः, आपतन्ति=बलात् आगच्छन्ति । (तत्र) धीरा हि=धैर्यवन्तः, एव, आपदं=विपत्ति (विपत्तिसागरम् (इति यावत्) तरन्ति=तत्पारं प्राप्नुवन्ति, (नपुनः अधीराः) सामान्येन विशेषसमर्थनात् अर्थान्तरन्यासः इति=पूर्वोक्त प्रकारेण, एवंविधैः=एतादृशैः अन्यैश्च=अपरैः च, मृदुभिः=कोमलैः उपसान्त्वनैः=आश्वासनपरकवचनैः, तां=महाश्वेतां, संस्थाप्य=प्रकृतिस्थां कृत्वा पुनरपि=भूयः, अपि, अञ्जलिपुटोपनीतेन=अञ्जलिपुटेन उपनीतम् आनीतं, तेन तथाविधेन, निर्झरकलेन=प्रस्रवणवारिणा, अनिच्छन्तीमपि=अनभिलषन्तीम्, अपि, बलात्=हठात्, प्रक्षालितमुखीम्=धौत-वदनाम्, अकारयत्=कारितवान् चन्द्रापीडः इतिशेषः ।

॥ इतिआचार्यराजदेवमिश्रविरचिताकादम्बरी-महाश्वेतावृत्तान्तस्य
शारदाभिधाना संस्कृत-व्याख्या समाप्ता ॥

सुन्दर प्रेम को सुदीर्घ काल तक सहन नहीं कर सकतीं । प्रायः सुख स्वाभाविक रूप से अदीर्घ स्वभाव वाले (संक्षिप्तक्षण स्थायी) तथा नश्वर एवं दुःख दीर्घस्वभाव वाले (विस्तृत=चिरस्थायी) होते हैं । उदाहरणार्थ—प्राणियों का किसी प्रकार एक जन्म में (तो) मिलन हो पाता है और (उनका) विरह (तो) सहस्रों जन्मों तक बना रहता है । अतः अनिन्दनीय होते हुये भी अपनी निन्दा करना आपके लिए उचित नहीं है । क्योंकि अति घोर संसार-मार्ग पर आरूढ़ लोगों के (समक्ष) इस प्रकार की (सुखःदुखमय) घटनायें घटती ही रहती हैं । धीर (व्यक्ति) ही आपत्ति (के सागर) को पार करते हैं ।" इस प्रकार के तथा अन्य मधुर सान्त्वनापूर्ण वचनों से उसको प्रकृतिस्थ करके (चन्द्रापीडने) पुनः अञ्जलिपुट में लाये गये निर्झर के जल से (महाश्वेता की) इच्छा के विरुद्ध भी हठपूर्वक उसके मुख का प्रक्षालन कराया ।

परिशिष्ट

प्रश्नसंग्रहः

(गोरखपुर वि० वि०, बी० ए०, प्र० व०)

१–कादम्बरी कलासौष्ठवमय प्रबन्धकाव्य है अथवा दिव्य प्रेम-कथा? कथा और आख्यायिका का पारस्परिक भेद क्या है? (१९६०)

२–महाकवि बाणभट्ट के जीवन एवं उनकी कृतियों पर एक निबन्ध लिखें तथा संस्कृत के अमर कवियों में उनके स्थान का मूल्यांकन करें। (१९६१)

३–बाणविरचित 'कादम्बरी' में उपवर्णित महाश्वेता के चरित्र की समीक्षा कीजिये। (१९६२)

४–बाण की गद्यशैली की समीक्षा कीजिये। इस सम्बन्ध में आप 'पाञ्चालीरीति' तथा 'वक्रोक्ति-मार्ग' से क्या समझते हैं, यह भी लिखिये। (१९६२)

५–कादम्बरी की साहित्यिक महत्ता पर प्रकाश डालिये तथा इस संबंध में यह भी बताइये कि आप कथा और आख्यायिका से क्या समझते हैं। (१९६३)

६–बाणविरचित कादम्बरी में वर्णित पुण्डरीक के चरित्र की समीक्षा कीजिये। (१९६३)

७–बाणभट्ट की उत्प्रेक्षा पर एक छोटी टिप्पणी लिखिये। (१९६४)

८–महाश्वेता के चरित्र का आकलन कीजिये। (१९६४)

९–गद्य लेखन की दृष्टि से बाणभट्ट का मूल्याङ्कन कीजिये तथा इस प्रसङ्ग में यह भी बताइये कि कथा और आख्यायिका से आप क्या समझते हैं? (१९६५)

१०–'बाणोच्छिष्ठ जगत्सर्वम्' इस उक्ति में निहित भाव को सोदाहरण विस्तृत कीजिए। (१९६५)

११–कादम्बरी का जितना अंश आपने पढ़ा है उसके आधार पर महाश्वेता का चरित्र चित्रण कीजिये। (१९६६)

१२–'कादम्बरीरसज्ञानामाहारोऽपि न रोचते' इस पर एक लघु निबन्ध लिखिये (१९६६)

१३–निम्नलिखित सन्दर्भों में से किन्हीं दो का भाव सप्रसङ्ग सुस्पष्ट कीजिये— (१९६२)

(i) नास्ति खल्वसाध्यं नाम तपसाम्।

(ii) जनयति हि प्रभुप्रसादलवोऽपि प्रागल्भ्यमधीरप्रकृतेः।

(iii) सततमतिगर्हितेनाकृत्येनापि रक्षणीयान्मन्यन्ते सुहृदसून्साधवः।

१४–निम्नलिखित में से किन्हीं दो का भाव सप्रसङ्ग सुस्पष्ट कीजिए। (१९६३)

(i) आकृतिरेवानुमापयत्यमानुषताम् (ii) अदूरकोपा हि मुनिजनप्रकृतिः

(iii) सर्वथा दुर्लभं यौवनमस्खलितम्।

१५–निम्नलिखित में से किन्हीं दो की व्याख्या सप्रसङ्ग कीजिए। (१९६४)

(a) सुखमुपदिश्यते परस्य। (b) बलवती हि द्वन्द्वानां प्रवृत्तिः।

१६–निम्नलिखित सन्दर्भों में से किन्हीं दो का भाव सप्रसङ्ग स्पष्ट कीजिए (१९६५)

(a) नास्ति खल्वसाध्यं नाम उपसाम्। (b) अणुरप्युपचारपरिग्रहः प्रणयमारोपयति।

(c) दूर मुक्तालतया...मानसजन्मा त्वया नीतः।

१७–निम्नलिखित में से किसी एक का भाव सप्रसङ्ग सुस्पष्ट कीजिए (१९६६)

(i) उपजनयति हि प्रभुप्रसादलवोऽपि प्रागल्भ्यमधीरप्रकृतेः।

(ii) नास्ति खल्वसाध्यं नाम तपसाम्।

१८–निम्नलिखित गद्य खंडों का हिन्दी अथवा अंग्रेजी में अनुवाद करें—

(i) "राजपुत्रि, किं ब्रवीमि!...अपूर्वेयं विडम्बना"। (१९६०)

(ii) "अहं तु सकललोकदुर्लङ्घ्यतया जीविततृष्णायाः...तस्मिन्नेव सरस्वतीरे तु तरलिकाद्वितीया क्षपां क्षपितवती"। (१९६०)

(i)...अनेकविद्यापगासङ्गमावर्तनिभया...मुनिकुमारकमपश्यम् (१९६१)

(ii) "हा नाथ! जीवितनिबन्धन!...येन कुपितोऽसि?" (१९६१)

(i) इयं च सुरासुरैर्मथ्यमानात्...तत्सर्वमावेदितम्। (१९६२)

(ii) ततः शशिकेसरकरविदार्यमाणतमः...शक्यते सोढुम्। (१९६२)

(i) एवं च कृतमतिः...गुहामद्राक्षीत्। (१९६३)

(ii) अथ मदीयेनेव..."चाक्षमालमुपयाचितुमागतोऽस्मि" (१९६३)

(a) आसीच्च तस्य चेतसि-नास्ति खल्वसाध्यं नाम तपसाम्।...जलफलमूलमयेष्वाहारेषु प्रणयः। (१९६४)

(b) अयि तरलिके! कथं न पश्यसि गुरुजनातिक्रमादधर्मो महान् (१९६४)

(a) अहो दुर्निवारता...चलति वसुधा। (b) एवं नामायं...यौवनमस्खलितम्। (१९६५)

(a) अथ गीतावसाने...चन्द्रापीडमावभाषे। (b) सखे पुण्डरीक,...सर्वविषयनिरुत्सुकता। (१९६६)



अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद

१. कथा और आख्यायिका में भेद प्रदर्शित कर कादम्बरी की कथा की दृष्टि से समीक्षा कीजिये । १९७७

अथवा

संस्कृत गद्य लेखकों में बाणभट्ट का स्थान निर्धारित कीजिये ।

२. महाकवि बाणभट्ट की शैली का निरूपण कीजिये । १९७८

अथवा

'बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्' इस कथन की समीक्षा कीजिये ।

३. निम्नांकित गद्यांश का हिन्दी में अनुवाद कीजिये— १९७७

"दीक्षितवाचमिवाप्राकृताम्·········कन्यकां ददर्श ।"

अथवा

"अथ मदीयेनेव·········सा छत्रग्राहिणी समागत्याकथयत् ।"

४. "नास्ति खल्वसाध्यं नाम तपसाम् । ·········कुतो जलफलमूलमयेष्वाहारेषु प्रणयः ।" १९७८

अथवा

"अनन्तरं च मे·········हृदयमविशद्रागः"